मुकम्मल व मुदल्लल

मसाइले नमाज़

कुरआन व हदीस की रौशनी में

हज़रत मुफ़्तियाने किराम दारूलउलूम देवबंद की तस्दीक़ व ताईद करदा

मुअल्लिफ़

मौलाना क़ारी मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी

(मुदर्रिस दारूलउलूम देवबंद)

मुकम्मल व मुदल्लल

मसाइले नमाज़

कुरआन व हदीस की रौशनी में

हज़रत मुफ़्तियाने किराम दारुलउलूम देवबंद की तस्दीक़ व ताईद करदा

मुअल्लिफ़

मौलाना क़ारी मुहम्मद रफ़अत क़ासमी
(मुदर्रिस दारुलउलूम देवबंद)

लिप्यान्तर:
मो० मोकर्रम ज़हीर

नाशिर

अन्जुम बुक डिपो
मटिया महल, जामा मस्जिद (दिल्ली)

किताब का नामः... मुकम्मल व मुदल्लल मसाइले नमाज़

मुसन्निफ़ः.......... मौलाना कारी मुहम्मद रफ़अत कासमी

लिप्यान्तरः......... मो० मोफर्रम ज़हीर

ज़ेरे निगरानीः...... शकील अन्जुम देहलवी

तादादः........... 1100

Masaile Namaz

By:Maulana Qari Md. Rafat Qasami

Published by

Anjum Book Depot

Matia Mahal, Jama Masjid, Delhi - 6

फ़ेहरिस्ते उन्वानात मुकम्मल व मुदल्लल मसाइले नमाज़

उन्वानात सफ़्हात

इज़ाफ़ा फ़ेहरिस्ते उनवानात

इंतिसाब

मैं अपनी इस काविश को अपने ख़ुसर मुहतरम हज़रत मौलाना वहीदुज़्ज़माँ साहब कैरानवी नौवरल्लाहु मरक़दहू, उस्ताज़े अदब व हदीस व मुआविन मोहतमिम दारुलउलूम देवबंद के नाम मन्सूब करने की सआदत हासिल कर रहा हूँ। जिनकी ईमा पर ये काम शुरू किया था। मगर अफ़सोस कि मौसूफ़ मुअर्रख़ा 15 अप्रैल 1995 को रेहलत फ़रमा गए।

"اِنَّا لِلّٰهِ وَاِنَّا اِلَيْهِ رَاجِعُوْنَ"

या अल्लाह! इस अज़ीम मुरब्बी, दीदावर मुन्तज़िम, बुलंद पाया अदीब व ख़तीब और बा-कमाल मुसन्निफ़ की मग़फ़िरत फ़रमा कर मरहूम की क़ब्र को अपने अनवार से भर दे।

(आमीन या रब्बलआलमीन)

मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी मुदर्रिस दारुलउलूम देवबंद

❖❖❖

अर्ज़े मुअल्लिफ़

"الحمد لله رب العلمين والصلوٰة والسلام على
سيد المرسلين وعلى آله واصحابه اجمعين"

अम्माबअ़द! अल्लाह तआ़लात का एहसाने अज़ीम है कि मसाइल के इंतिख़ाब का जो सिलसिला शुरू किया गया था उसको अवाम व ख़्वास ने न सिर्फ़ पसंद किया बल्कि अपने मुफ़ीद और बेश क़ीमत मशवरों से भी नवाज़ा, जिनकी बदौलत मुख़्तलिफ़ मौज़ूआत के इंतिख़ाब में मदद मिलती रहती है।

"فجزاهم الله خير الجزاء"

बनामे ख़ुदा तेरहवीं किताब मुकम्मल व मुदल्लल मसाइले नमाज़ पेश है, जिसमें नमाज़ से मुतअ़ल्लिक़ तकबीरे तहरीमा से लेकर दुआ़ तक तमाम ही ज़रूरी मसाइल शामिल हैं जिनकी मजमूई तादाद तक़रीबन पन्द्रह सौ है।

ये सब अल्लाह तआ़ला का फ़ज़्ल व करम और असातिज़ा व मुफ़्तियाने किराम की तवज्जोह और उनकी दुआवों का तुफ़ैल है बिलखुसूस जामेअ़ए शरीअ़त व तरीक़त, फ़क़ीहुलउम्मत सैयदी व शैख़ी हज़रत मौलाना मुफ़्ती महमूद हसन साहब दामत बरकातुहुम चिश्ती, क़ादरी, सुहरवर्दी, नक़्शबंदी, मुफ़्तीए आज़म दारुलउलूम देवबंद की शफ़्क़त व मुहब्बत व जज़्बए अमल और इख़लास का नतीजा है।

या अल्लाह! इन हज़रात का सायए आतिफ़त सेहत व आफ़ियत के साथ ता देर हम पर क़ाइम व दाइम रहे। आमीन!

बशरी भूल चूक से कौन बचा है कि ये हक़ीर बचने का दावा करे, लेकिन अपनी जद्दोजेहद व काविश की हद तक जो कुछ भी इख़्लास के साथ कर सकता था किया, कामियाबी अल्लाह के हाथ में है, हज़ार एहतियात के बाद भी अगर कोई ग़लती किताबत व तबाअत, सेहत वग़ैरा की नज़र से गुज़रे तो क़ारिईन किराम मुत्तला फ़रमा कर इनदल्लाह माजूर हों।

मुहम्मत रफ़अत क़ासमी ख़ादिमुत्तदरीस दारुलउलूम देवबंद
मुअर्रख़ा 27 रमज़ानुलमुबारक 1416 हिजरी
मुताबिक़ 17 फ़रवरी 1996 ई०

तस्दीक़

जामेअ़ए शरीअ़त व तरीक़त फ़क़ीहउलउम्मत सैयदी हज़रत मौलाना मुफ़्ती महमूद हसन साहब दामत बरकातुहू चिश्ती, क़ादिरी, सुहरवर्दी नक़्शबंदी। मुफ़्तीए आज़म दारुलउलूम देवबंद

"الحمد لله وحده والصلوٰة والسلام على من لا نبى بعده"

अम्माबअ़्दु!

ज़ेरे नज़र किताब "मुकम्मल व मुदल्लल मसाइले नमाज़" मुरत्तब अज़ीज़म मौलाना मुहम्मद रफ़अ़त साहब मुदर्रिस दारुलउलूम देवबंद अपने मौज़ूअ़ पर निहायत मुफ़ीद और जामेअ़ किताब है। मौसूफ़ ने बहुत से मुस्तनद फ़तावा और दीगर मुतअ़ल्लिक़ा कुतुब का निहायत अर्क़ रेज़ी के साथ मुतालआ कर के नमाज़ से मुतअ़ल्लिक़ ज़रूरी मसाइल बहुत ही सलीक़े से मअ़ हवालाजात जमा फ़रमा कर उम्मत पर एहसाने अज़ीम फ़रमाया है और इख़्तिलाफ़ी मसाइल के अन्दर क़ौले राजेह व मुफ़्ता बिही को इख़्तियार करने की कोशिश की है। ये किताब अवाम और ख़्वास दोनों के लिए यक्साँ तौर पर मुफ़ीद और नाफ़ेअ़ है। हक़ तआ़ला शानहु जज़ाए

ख़ैर अता फरमाए और मुअल्लिफ़ सल्लमहू को दारैन
की तरक़्क़ियात से नवाज़े।

और नजात का ज़रीआ बना कर आइंदा भी दीनी ख़िदमत का मौक़ा इनायत फरमाए। (आमीन)

अलअब्द महमूद छत्ता मस्जिद दारुलउलूम, देवबंद 25 शैवाल 1426 हिजरी।

❑❑❑

इरशाद गिरामी

हज़रत मौलाना मुफ़्ती निज़ामुद्दीन साहब दामत बरकातुहुम सदर मुफ़्ती दारुलउलूम, देवबंद

باسمہ سبحانہ

نحمدہ و نصلی علی رسولہ الکریم..... وبعد

पेशे नज़र किताब (मसाइले नमाज़ कुरआन व सुन्नत की रौशनी में) बिलइस्तीआब हरफ़न हरफ़न मुतालआ करने का मौक़ा तो नसीब न हुआ, अलबत्ता जा-ब-जा अहम अहम मक़ामात को देखा, सहीह पाया और मुअल्लिफ़ मौसूफ़ की बहुत सी किताबें नाफ़ेअ़ होकर मक़बूलियत हासिल कर चुकी हैं। इसलिए ज़न्ने ग़ालिब है कि ये किताब भी इन्दलअवाम व ख़्वास सब के यहाँ हसबे साबिक़ मक़बूल व मुफ़ीद होगी।

दुआ है कि अल्लाह तआला ऐसा ही करें और सब के लिए नाफ़ेअ़ बनाएँ। अमीन!

कतबहू
अलअब्द निज़ामुद्दीन
1417/11/5 हिजरी

❑❑❑

राए गिरामी क़द्र

हज़रत मौलाना मुफ़्ती ज़फ़ीरुद्दीन साहब दामत बरकातुहुम मुरत्तिब फ़तावा दारुलउलूम व मुफ़्ती दारुलउलूम, देवबंद

الحمد لله وكفى وسلام على عباده الذين اصطفى۔ امّا بعد

अम्माबअ़्दु! अल्लाह तआ़ला का फ़ज़्ल व करम है कि आ़म मुसलमानों में अहकामे शरीअ़त पर अमल करने का जज़्बा उभर रहा है और दीन की तरफ़ हर मुसलमान दिल व जान से माइल है उसी का नतीजा है कि हमारी सारी मस्जिदें काफ़ी आबाद हैं। और जहाँ जहाँ मस्जिदें हैं उस आबादी के सारे लोग पाबंदी से मस्जिदों में आते हैं और जमाअ़त के साथ एक इमाम की इक़्तिदा में अपनी नमाज़ें अदा करते हैं। जिसकी वजह से माशा अल्लाह मस्जिदों की रौनक दोबाला है।

नमाज़ियों को दिन रात नमाज़ के मसाइल व अहकाम जानने की ज़रूरत पेश आती रहती है, और ये एक हक़ीक़त है कि नमा[ज़] के मसाइल काफ़ी फैले हुए हैं। हमारे फ़ुक़हाए किराम ने इ[स] सिलसिले में बड़ी मेहनत व काविश से उन तमाम मसाइल क[ो] मुख़्तलिफ़ किताबों में जमा कर दिया है, ज़रूरत थी कि मसाइ[ले] नमाज़ को यकजा कर दिया जाए और हवाला जात के साथ मुख़्तलिफ़ किताबों में जो बिखरे हुए हैं एक किताब में जमा कर दिए जाएँ।

रब्बुलइज़्ज़त क़ारी रफ़अ़त साहब को जज़ाए ख़ैर दे कि आप

ने ये फ़रीज़ा अंजाम दिया और नमाज़ के बेशतर मस्अले इस किताब में जमा कर दिए हैं। मौसूफ़ की इससे पहले भी मुतअद्दद किताबें शाए होकर मक़बूल हो चुकी हैं। रब्बेक़दीर उनकी इस ख़िदमत को भी क़बूल फ़रमाए और मज़ीद इल्मी कामों की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए।

मुहताजे दुआ
मुहम्मद ज़फ़ीरुद्दीन ग़ुफ़िरलहू, मुफ़्तीए दारुलउलूम, देवबंद
9 रबिउस्सानी 1417 हिजरी

❑❑❑

तक़रीज़

फ़कीहुन्नफ़्स हज़रत मौलाना मुफ़्ती सईद अहमद साहब मद्दज़िल्लहुल आली

पालनपूरी, मुहद्दिसे कबीर दारुलउलूम, देवबंद

بسم الله الرحمٰن الرحيم

الحمد لله رب العالمين والصلوٰة والسلام على عبده ورسوله
محمد رحمة للعالمين، وعلى اله واصحابه اجمعين ۔ اما بعد

नमाज़ उम्मुलआमाल है, तक़र्रुबे इलाही के तमाम आमाल का मरकज़ और मजमा है, दीन की इमारत का बुनयादी सुतून है, फिर ये कि नमाज़ मोमिन की मेराज है जो इंसान को तजल्लियाते उख़रवी के क़ाबिल बनाती है, इरशादे नबवी (स.अ.व.) है कि: "अन्क़रीब तुम अपने परवरदिगार को देखोगे, पस अगर तुम पर मशाग़िल ग़लबा न पाएँ तो तुम तुलूए आफ़ताब से क़ब्ल और गुरूबे आफ़ताब से क़ब्ल की नमाज़ों का पूरा एहतिमाम करो।" नमाज़ मुहब्बते इलाही और रहमते ख़ुदावंदी का अज़ीम तरीन सबब भी है और जब कोई बंदा नमाज़ का दिलदादा हो जाता है तो तजल्लियाते ख़ुदावंदी और अनवारे इलाही उसको ढाँक लेती हैं। नमाज़ गुनाहों का कफ़्फ़ारा भी है। इरशादे ख़ुदावंदी है कि: "नेकियाँ गुनाहों को ख़त्म कर देती हैं।" और इरशादे नबवी (स.अ.व.) है कि: "बतलाओ अगर तुम में से किसी के दरवाज़े

पर नहर जारी हो, जिसमें रोज़ाना पाँच दफ़ा वह नहाता हो, तो क्या उसके जिस्म पर कुछ मैल कुचैल बाक़ी रहेगा? सहाबा (रज़ि.) ने अर्ज़ किया कि कुछ भी बाक़ी नहीं रहेगा। आप (स.अ.व.) ने इरशाद फ़रमाया कि बिल्कुल यही मिसाल पाँच नमाज़ों की है, अल्लाह तआला उनके ज़रीए से ख़ताओं को धोते और मिटाते हैं।

(मुत्तफ़क़ अलैहि)

मगर हर काम का फ़ाएदा उसी वक़्त मुतसव्वर है जबकि उस काम को ढंग से किया जाए। दुनिया के मामूली काम भी उसके मुतक़ाज़ी हैं कि उनको सहीह अंदाज़ पर किया जाए जब ही नफ़ा हो सकता है, दीन के काम और वह भी नमाज़ जैसी अहम इबादत क्यों न उसका तक़ाज़ा करेगी? इसलिए उलमाए किराम ने हर ज़माना में ख़ास नमाज़ को मौज़ूअ़ बना कर मसाइल जमा किए हैं ताकि उन किताबों के ज़रीए अपनी नमाज़ों की इस्लाह कर सके। हमारी उर्दु में भी मुतअ़द्दद अच्छी अच्छी छोटी बड़ किताबें मुतदाविल हैं, मगर कहते हैं कि "हर गुलेरा रंग व बूए दीगर अस्त" हर किताब में कोई न कोई ख़ूबी ऐसी ज़रूर होती है जो दूसरी किताबों में नहीं होती। इसलिए अब हमारे भाई, फ़ाज़िले दारुलउलूम देवबंद और उस्ताज़ दारुलउलूम देवबंद मौलाना मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी साहब ने एक जामेअ़ किताब नमाज़ के मौज़ूअ़ पर मुरत्तब की है, मैंने अभी उससे इस्तिफ़ादा नहीं किया है, इनशाअल्लाह ज़ेवरे तबा से आरास्ता होने के बाद देखूँगा। मगर चूँकि मौसूफ़ एक दरजन किताबें दीनियात के मौज़ूअ़ ही पर उम्मत के सामने पेश कर चुके हैं और वह क़बूले आ़म हासिल कर चुकी हैं, इसलिए उम्मीदे कामिल है कि ये किताब भी उसी अंदाज़ की होगी बल्कि उनसे बेहतर होगी, क्योंकि आदमी हर आने वाले दिन में तरक़्क़ी की मनाज़िल तय करता है और ख़ूबियों की तरफ़ बढ़ता

है।

मैं दुआ करता हूँ कि अल्लाह तआला हमारे भाई मौलाना मुहम्मद रफ़अत साहब ज़ीदा मज्दहू की ये मेहनत कबूल फरमाएँ और उम्मत को इस काम से और उनके दूसरे कामों से ख़ूब फ़ैज़ पहुंचाएँ और उनको मज़ीद हसनात की तौफ़ीक़ अता फ़रमाएँ।

وصلى الله على النبي الكريم وعلى اله وصحبه اجمعين
و آخر دعوانا ان الحمد لله رب العالمين -

कतबहू
सईद अहमद अफ़ल्लाहु अन्हु पालनपूरी
ख़ादिमे दारुलउलूम देवबंद
9 रबीउस्सानी 1417 हिजरी

❑❑❑

नमाज़ क्या है?

بسم الله الرحمن الرحيم

اَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ وَلَا تَكُوْنُوْا مِنَ الْمُشْرِكِيْنَ

काइम रखो नमाज़ और मत हो शिर्क करने वालों में से

नमाज़ एक ऐसी पसंदीदा इबादत है जिससे किसी नबी की शरीअ़त ख़ाली नहीं। हज़रत आदम अला नबीयिना व अलैहिस्सलातु वस्सलामु से उस वक़ तमाम रसूलों की उम्मत पर नमाज़ फ़र्ज़ थी, हाँ उसकी कैफ़ियत और तअ़ैयुनात में अलबत्ता तग़ैयुर होता रहा।

हमारे नबी (स.अ.व.) की उम्मत पर इब्तिदाए रिसालत में दो वक़्त की नमाज़ फ़र्ज़ थी, एक क़ब्ले आफ़ताब निकलने के और एक क़ब्ले आफ़ताब डूबने के।

हिजरत से डेढ़ बरस पहले जब नबी करीम (स.अ.व.) को मेराज से नवाज़ा गया तो नमाज़ इन पाँच वक़्तों में फ़र्ज़ की गई।

फ़ज्र, ज़ुहर, अस्र, मग़रिब, इशा। इन पाँचों वक़्तों की नमाज़ सिर्फ़ इसी उम्मत के साथ ख़ास है। पहली उम्मतों पर किसी पर सिर्फ़ फ़ज्र की नमाज़ फ़र्ज़ थी, किसी पर ज़ुहर की, किसी पर अस्र की।

(इल्मुल फ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–1)

नमाज़ इस्लाम का रुक्ने आज़म है, बल्कि अगर यूँ कहा जाए तो इस्लाम का दारोमदार इसी पर है तब भी बिल्कुल मुबालग़ा नहीं, हर मुसलमान आक़िल, बालिग़ पर हर रोज़ पाँच वक़्त नमाज़ फ़र्ज़े ऐन है। अमीर हो या फ़क़ीर, तंदुरुस्त हो या मरीज़, मुसाफ़िर हो या मुक़ीम, यहाँ तक कि दुश्मन के मुक़ाबले में जब लड़ाई की आग भड़क रही हो उस वक़्त भी उसका छोड़ना जाइज़ नहीं है। औरत को जब वह दर्देज़ेह में मुब्तला हो, जो एक सख़्त मुसीबत का वक़्त है तब भी नमाज़ का छोड़ना जाइज़ नहीं है।

जो शख़्स नमाज़ की फ़रज़ीयत का इनकार करे वह यक़ीनन काफ़िर है। नमाज़ की ताकीद और फ़ज़ाइल से क़ुरआन मजीद और अहादीस के मुबारक सफ़्हात लबरेज़ हैं किसी और इबादत की इस क़दर सख़्त ताकीद शरीअत में नहीं।

नबी करीम (स.अ.व.) के जलीलुलक़द्र सहाबा (रज़ि.) नमाज़ छोड़ने वाले को काफ़िर फ़रमाते हैं। अमीरुलमुमिनीन हज़रत फ़ारूक़े आज़म (रज़ि.) जैसे जलीलुश्शान फ़क़ीह सहाबी का भी यही क़ौल है और इमाम अहमद (रह.) का भी यही मसलक है। इमाम शाफ़ई (रह.) भी उसके क़त्ल का फ़तवा देते हैं, हमारे इमाम आज़म (रह.) अगरचे उसके कुफ़्र के क़ाएल नहीं हैं मगर उनके नज़दीक भी नमाज़ छोड़ने वाले के लिए सख़्त तअज़ीर है।

तमाम वह अहादीस जिनसे नमाज़ की ताकीद और फ़ज़ीलत निकलती है अगर एक जगह जमा की जाएँ तो

क़तई तौर पर उससे ये नतीजा निकलता है कि नमाज़ का तर्क करना तमाम गुनाहों में एक बड़े दर्जा का गुनाह है।

(इल्मुल फ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–3, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–9, किताबुस्सलात)

सलात के मअ़ना

लुग़त में "सलात" के मअ़ना दुआ के हैं, और शरई इस्तिलाह में सलात उस ख़ास इबादत का नाम है जो अरकान व शराइत के साथ चंद मख़सूस अक़वाल व अफ़आल की सूरत में अदा की जाती है, जिसकी इब्तिदा तकबीर से होती है और इख़्तिताम सलाम पर होता है। फ़ारसी और उर्दू में भी उसको "नमाज़" कहते हैं।

(मज़ाहिरे हक़ जिल्द–1 सफ़्हा–105)

पाँच नमाज़ों का सुबूत

अल्लाह तआ़ला जल्लेशानहू का फ़रमान है–

إِنَّ الصَّلٰوةَ كَانَتْ عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ كِتٰبًا مَّوْقُوْتًا

यानी बिलाशुब्हा नमाज़ ईमानदारों पर फ़र्ज़ है जिनके औक़ात मुक़र्रर हैं। इस आयत में "किताबन" बमअ़ना मक्तूबे मफ़रूज़ के हैं। यानी वह अम्र जिसको फ़र्ज़ क़रार दिया गया है, और लफ़्ज़ मौक़ूत के मअ़ना ये हैं कि उनमें से हर एक के लिए औक़ात की हद मुक़र्रर है। इस आयते शरीफ़ा में बता दिया गया है कि नमाज़ मुसलमानों पर फ़र्ज़ की गई है और उनके औक़ात का इल्म रसूलुल्लाह

(स.अ.व.) को है और अल्लाह तआ़ला ने उन्हें हुक्म दिया है कि (इस बाब में) अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से जो कुछ उन पर नाज़िल हुआ है वह लोगों को बता दें।

मुमकिन है कि बाज़ लोग कहें कि कुरआन करीम से तो सिर्फ़ नमाज़ की फ़रज़ीयत साबित है, और उसकी तादाद के पाँच होने और ख़ास तरीक़े से अदा किए जाने की बाबत कुरआन करीम में कोई रहनुमाई नहीं मिलती है?

उसका जवाब ये है कि कुरआन करीम में नबीए अकरम (स.अ.व.) को ये हुक्म है कि जो कुछ भी उन पर अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से नाज़िल हुआ है वह सब लोगों को बता दें। साथ ही लोगों को ये हुक्म है कि रसूल (स.अ.व.) जिस तरह फ़रमाएँ उसकी पैरवी करो। अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

وَمَاآتٰکُمُ الرَّسُوْلُ فَخُذُوْهُ ، وَمَانَهٰکُمْ عَنْهُ فَانْتَهُوْا (پاره ۲۸ سورة الحشر)

जो कुछ रसूल (स.अ.व.) का इरशाद है उस पर अमल करो और जिस बात से मना किया गया है उससे बाज़ रहो।

लिहाज़ा रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने जो कुछ भी अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से फ़रमाया वह गोया कुरआन ही से साबित है। बकसरत सहीह इहादीस ऐसी हैं जिन से साबित होता है कि नमाज़ों की तादाद पाँच है। ये हदीसें तवातुर के दर्जो को पहुंची हुई हैं जिनसे साबित है कि नमाज़ें पाँच हैं।

(किताबुलफ़िक़्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ़ सफ़्हा–286, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–6, फतावा दारुलउलूम जिल्द–2

सफ़्हा–33)

नमाज़ें सब से पहले किसने पढ़ीं?

ऐनी शरह हिदाया में है कि फ़ज्र की नमाज़ सब से पहले हज़रत आदम अलैहिस्सलाम ने उस वक़्त पढ़ी जब आप जन्नत से निकल कर बाहर आए और रात की तारीकी के बाद सुब्ह हुई। और ज़ुहर की नमाज़ सब से पहले ज़वाले आफ़ताब के बाद हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने पढ़ी और ये उस वक़्त पढ़ी थी जब आपको अपने लख़्ते जिगर हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम के ज़िब्ह करने का हुक्म मिला था, और अस्र की नमाज़ सब से पहले हज़रत यूनुस अलैहिस्सलाम ने पढ़ी जिस वक़्त आप मछली के पेट से सहीह व सालिम निकले और दोबारा ज़िन्दगी पाई, और मग़रिब की नमाज़ बतौरे शुक्रिया हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम ने सब से पहले अदा की, और इशा की नमाज़ हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने उस वक़्त अदा की जब आप मदयन से निकले थे, और अब हम सब मुसलमानों पर ये पाँचों नमाज़ें फ़र्ज़ हैं।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द औवल किताबुस्सलात)

नमाज़ की फ़ज़ीलत

नबी करीम (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि इस्लाम की बुनियाद पाँच चीज़ों पर है। (1) तौहीद और रिसालत का इक़रार करना। (2) नमाज़ पढ़ना (3) ज़कात देना (4)

रमज़ानुलमुबारक के रोज़े रखना (5) बशर्ते क़ुदरत हज करना। (बुख़ारी व मुस्लिम)

नबी करीम (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि ईमान और कुफ़्र के दरमियान में नमाज़ हद्देफ़ासिल है। (मुस्लिम) नबी करीम (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि जिसने जान बूझ कर नमाज़ छोड़ दी वह काफ़िर हो गया। (मिशकात)

हज़रत अबूज़र (रज़ि.) फ़रमाते हैं कि एक दिन नबी करीम (स.अ.व.) जाड़ों के ज़माने में जबकि पतझड़ (मौसमे ख़िज़ाँ) हो रहा था बाहर तशरीफ़ लाए और एक दरख़्त की दो शाख़ें पकड़ कर हिलाईं उससे बकसरत पत्ते गिरने लगे। फिर आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि ऐ अबू ज़र! जब कोई ख़ुलूसे दिल से नमाज़ पढ़ता है तो उसके गुनाह भी इसी तरह झड़ते हैं जैसे इस दरख़्त के पत्ते झड़ रहे हैं। (मुसन्नदे इमाम अहमद (रह.))

हज़रत इब्ने मसऊद (रज़ि.) फ़रमाते हैं कि मैंने एक मरतबा नबी करीम (स.अ.व.) से पूछा कि अल्लाह तआला को तमाम इबादतों में कौन इबादत ज़्यादा पसंद है? आप (स.अ.व.) ने इरशाद फ़रमाया कि नमाज़।

(बुख़ारी व मुस्लिम, इल्मुल फ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–5)

अल्लाह तआला के नज़दीक नमाज़ का बहुत बड़ा रुतबा है, कोई इबादत अल्लाह तआला के नज़दीक नमाज़ से ज़्यादा प्यारी नहीं है, अल्लाह तआला ने अपने बंदों पर पाँच वक़्त की नमाज़ें फ़र्ज़ कर दी हैं, उनके पढ़ने का बड़ा सवाब है और उनके छोड़ देने से बड़ा गुनाह होता है। हदीस शरीफ़ में आया है कि जो कोई अच्छी तरह से वुज़ू किया करे और ख़ूब दिल लगा कर अच्छी तरह

नमाज़ पढ़ा करे, कयामत के दिन अल्लाह तआला उसके छोटे बड़े गुनाह सब बख़्श देगा और जन्नत अता फ़रमाएगा, और आँहज़रत (स.अ.व.) ने फ़रमाया नमाज़ दीन का सुतून है, सो जिसने नमाज़ को अच्छी तरह पढ़ा उसने दीन को ठीक रखा और जिसने इस सुतून को गिर दिया (यानी नमाज़ न पढ़ी) उसने दीन बरबाद कर दिया, और आँहज़रत (स.अ.व.) ने फ़रमाया है कि कयामत में सब से पहले नमाज़ ही की पूछ होगी और नमाज़ियों के हाथ और पाँव और मुंह कयामत में आफ़ताब की तरह चमकते होंगे और बेनमाज़ी इस दौलत से महरूम रहेंगे और नमाज़ियों का हश्र कयामत के दिन नबियों और शहीदों और वलियों के साथ होगा और बेनमाज़ियों का हश्र फ़िरऔन और हामान और क़ारून वग़ैरा बड़े बड़े काफ़िरों के साथ होगा। इसलिए नमाज़ पढ़ना बहुत ज़रूरी हैं, और न पढ़ने से दीन और दुनिया दोनों का बहुत नुक़सान होता है, इससे बढ़ कर क्या होगा कि बे नमाज़ी का हश्र काफ़िरों के साथ किया गया।

(बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–2 सफ़्हा–9, बहवाला मुस्लिम)

नमाज़ का हक़ीक़ी मक़सद

नमाज़ का अस्ल मक़सद ये है कि ख़ालिके काएनात की अज़मत का नक़्श मुरतसिम हो जाए, यहाँ-तक कि (अज़ाबे इलाही से) डरते हुए उसके अहकामात की तामील और ममनूआत से परहेज़ किया जाए।

इसमें तमाम बनी नौए इंसान का फ़ाएदा है, क्योंकि जो शख़्स नेकियों पर अमल पैरा हो और बुराईयों से

किनारा कश हो उससे भलाई और नफ़ा के सिवा और कोई बात सरज़द नहीं हो सकती, और वह शख़्स जो नमाज़ पढ़ लेता हो लेकिन उसका दिल ख़ुदा से ग़ाफ़िल हो और ख़्वाहिशाते नफ़्सानी व लज़्ज़ाते जिस्मानी में लगा हुआ हो, उसकी नमाज़ से गो बक़ौल बाज़ अइम्मा अदाए फ़र्ज़ तो हो जाएगा लेकिन दरहक़ीक़त मतलूबा मक़्सद हासिल न होगा। नमाज़े कामिल (दरअस्ल) वह है जिसकी शान में अल्लाह तआला ने फ़रमाया है:

"قَدْ اَفْلَحَ الْمُؤْمِنُوْنَ الَّذِيْنَ هُمْ فِيْ صَلٰوتِهِمْ خٰشِعُوْنَ"

(यानी वह मुसलमान जो नमाज़ में ख़ुशूअ़
से काम लेते हैं फ़लाह पा गए।)

नमाज़ का हक़ीक़ी मक़्सद नियाज़मंदी के साथ ख़ुदाए ख़ालिके ज़मीन व आसमान की बरतरी का एतेराफ़ और उसकी लाज़वाल अज़मत और गैरफ़ानी इज़्ज़त के आगे सर निगूँ होना है। लिहाज़ा हक़ीक़ी मानों में कोई शख़्स नमाज़ी नहीं हो सकता जब तक कि उसका दिल हाज़िर, ख़ुदाए वाहिद के ख़ौफ़ से पुर, बातिल वसवसों और ज़रर रसाँ ख़्यालात से ख़ाली हो कर तालिबे नजात न हो। पस अगर इंसान अपने परवरदिगार के सामने खड़ा हो और इस हाल में उसका दिल ख़ुशूअ़ व ख़ुज़ूअ़ से पुर हो और अपने परवरदिगार, क़ादिर व क़ाहिर, साहबे सतवत लामुतनाही व मालिके कुदरते बेपनाह के सामने आजिज़ी व फ़रोतनी से हाज़िर हो वही शख़्स अपने गुनाहों से ताइब और अपने रब की जानिब माएल होगा, तब ही उसके ज़ाहिरी व बातिनी आमाल की इसलाह हो सकेगी। उसका राबिता उसके परवरदिगार के साथ मज़बूत होगा,

और वही बंदगाने हक़ तआला के ज़ुमरा में शामिल और दीन के क़ाइम कर्दा हुदूद पर क़ाइम होगा और वही उन उमूर से बाज़ रहेगा जिनसे रब्बुलआलमीन ने मना फ़रमाया। चुनांचे इरशादे खुदावंदी है: "إن الصلوة تنهى عن الفحشاء والمنكر" (यानी बिलाशुब्हा नमाज़ बेहयाई की बातों और नापसंदीदा कामों से बाज़ रखती है) और हक़ीक़ी मानों में मुसलमान होने की यही सूरत है।

ग़रज़ जो नमाज़ बेहयाई की बातों और नापसंदीदा उमूर से मानेअ है वही नमाज़ है जिसमें बंदा अपने रब की अज़मत का एतेराफ़ करे, उसके अज़ाब से डरे और उसकी रहमत का उम्मीदवार हो, और हर शख़्स को नमाज़ से उसी क़द्र फ़ैज़ मिलता है जितना कि उसके दिल में अल्लाह का ख़ौफ़ हो और उसका क़ल्ब अल्लाह की जानिब माएल हो। क्योंकि अल्लाह पाक अपने बंदों के दिलों को देखता है, उनकी ज़ाहिरी सूरत पर नहीं जाता। इसीलिए इरशादे बारी है: "وَاَقِمِ الصَّلٰوةَ لِذِكْرِىْ" (यानी नमाज़ को ज़िक्रे इलाही में मुनहमिक हो कर पूरी तरह अदा करना चाहिए) जिसका दिल अपने रब की याद से ग़ाफ़िल हो वह अल्लाह का इबादत गुज़ार नहीं है, लिहाज़ा हक़ीक़ी मानों में ऐसा शख़्स नमाज़ी नहीं है। हुज़ूर अनवर (स.अ.व.) का इरशाद है: "لا ينظر الله الى صلوة لايحضر الرجل فيها قلبه مع بدنه" (यानी जब तक कोई शख़्स तन मन के साथ हाज़िर न हो अल्लाह रबुलइज़्ज़त उसकी नमाज़ की तरफ़ न देखेगा) दीन की निगाह में नमाज़ यही है, और इसी नमाज़ को नुफ़ूसे इंसानी के संवारने और अख़लाक़ के दुरुस्त करने में दख़ल है, क्यों कि नमाज़ के हर जुज़्व

में इंसानी फ़ितरी फ़ज़ाइल की बरतरी का दुस्तूरुलअमल और इंसानी पसंदीदा ख़साइल में से किसी न किसी ख़सलत की मश्क़ है।

अब हम किसी क़द्र आमाले सलात का ज़िक्र करते हैं कि नुफ़ूसे इंसानी के संवारने में उनका क्या असर है।

नमाज़ के अजज़ा

(इन अजज़ा में से) एक जुज़्व नीयत है। इससे मुराद अल्लाह तआला के हुक्म अदाए नमाज़ की पूरी पूरी बजा आवरी का तिहिदिल से इरादा करना, यानी उस तरह जैसा कि अल्लाह तबारक व तआला ने हुक्म दिया, और चाहिए कि वह महज़ खुशनूदिए मौला के लिए हो। अब अगर कोई शख़्स ये अमल दिन रात में पाँच बार अंजाम दे तो इसमें कोई शब्हा नहीं कि ये कैफ़ियत उसकी तबीअत में जम जाएगी और ये उसकी सिफ़ाते फ़ाज़िला में से हो जाएगी जिसका बेहतरीन असर उसकी इंफ़िरादी और इजतिमाई ज़िन्दगी पर पड़ेगा।

इंसानी मुआशरे के लिए कौल व फ़ेल में खुलूसे नीयत से ज़्यादा सूद मंद कोई दूसरी चीज़ नहीं है। अगर लोग अपने कौल व फ़ेल में बाहम पुरखुलूस हों तो यक़ीनन उनकी ज़िन्दगी निहायत दिल पसंद और खुशगवार होगी। उनके हालात दुनिया व आख़िरत में बेहतर होंगे और कामियाबी से हमकिनार होंगे।

(नमाज़ का) दूसरा जुज़्व अल्लाह तआला के हुज़ूर खड़ा होना है। नमाज़ पढ़ने वाला तन-मन से अपने

परवरदिगार के सामने आँखें झुकाए खड़े होकर, नजात का तालिब होता है। अल्लाह तआला (बंदा की) रगे जान से ज़्यादा क़रीब है, लिहाज़ा जो कुछ बंदा कहता है परवदिगार उसको सुनता है और जो कुछ उसके दिल में है उसको जानता है। इसमें कोई शुब्हा नहीं कि अगर कोई शख़्स इस अमल को रात दिन में मुतअद्दद बार करता रहे तो यक़ीनन उसके दिल में अपने परवरदिगार की जगह होगी और अल्लाह तआला के हुक्म की फ़रमाँबरदारी करेगा और जिन उमूर से अल्लाह तआला ने मना फ़रमाया है उनसे बाज़ रहेगा। नतीजा ये होगा कि उस शख़्स से इंसानियत के ख़िलाफ़ कोई अम्र सरज़द न होगा, किसी की जान पर तअद्दी और किसी के माल पर ज़ुल्म न करेगा और किसी के दीन और आबरू को उससे ईज़ा न पहुंचेगी।

(तीसरा जुज़्व) क़िराअत (यानी नमाज़ में क़ुरआन का पढ़ना) अइम्मा के नज़्दीक इसके मुतअल्लक़ा अहकाम की तफ़सील आगे आएगी। क़ुरआन पढ़ने वाले को न चाहिए कि ज़बान पढ़े और दिल ग़ाफ़िल हो, बल्कि लाज़िम है कि जो कुछ पढ़े उसके मतालिब पर ग़ौर व फ़िक्र करे, और जो कुछ कहता है उससे ख़ुद भी नसीहत पकड़े। पस जब ज़बान पर अल्लाह तआला परवरदिगारे आलम का ज़िक्र जारी हो तो उसकी अज़मत और क़ुदरत की हैबत उसके क़ल्ब पर तारी होना चाहिए, जैसा कि अल्लाह तआला फ़रमाता है:

"اِنَّمَا الْمُؤْمِنُوْنَ الَّذِيْنَ اِذَا ذُكِرَ اللّٰهُ وَجِلَتْ
قُلُوْبُهُمْ وَاِذَا تُلِيَتْ عَلَيْهِمْ اٰيٰتُهٗ زَادَتْهُمْ اِيْمَانًا"

यानी ईमान वालों की निशानी ये है कि जब अल्लाह तआ़ला का ज़िक्र किया जाए तो उनके दिलों पर उसकी हैबत तारी हो, और जब आयाते कुरआ़नी उनके सामने पढ़ी जाएँ तो उनके ईमान में और पुख़्तगी पैदा हो।

इसी तरह जब अल्लहा तआ़ला की सिफ़ाते रहमत व एहसान का बयान हो तो वाजिब है कि इंसान दिल में सोचे कि इन सफ़ाते करीमा से वह किस तरह ख़ुद को आरास्ता कर सकता है। आँहज़रत (स.अ.व.) ने फ़रमाया है कि:

"تخلقوا با خلاق اللہ فھو سبحانہ کریم
عفو غفور عادل لایظلم الناس شیئا"

(यानी लोगो! तुम अपने अन्दर ख़ुल्के इलाही पैदा करो, वह ज़ाते पाक बख़शिश करने वाली, मआ़फ़ करने वाली, मग़फ़िरत करने वाली और आदिल है, और किसी पर मुतलक़ ज़ुल्म नहीं करती।)

लिहाज़ा इंसान मुकल्लफ़ है कि अपने आप में ये अख़लाक़ पैदा करे, अब अगर कोई शख़्स कुरआ़न हकीम की ऐसी आयात पढ़ेगा जिनमें अल्लाह तआ़ला की सिफ़ाते करीमा का बयान है, और उसके मतालिब को समझेगा, और ये अमल दिन रात में बकसरत बार बार किया जाएगा तो लामुहाला उसकी तबीअ़त उससे मुतअस्सिर होगी, और जब तबीअ़त पर इन सिफ़ाते जमीला का असर होगा तो उसकी तबीअ़त इन सिफ़ात से ख़ुद मुत्तसिफ़ होने की जानिब माएल होगी। ग़रज़ तहज़ीबे नफ़्स व अख़लाक़ के लिए ये अमल सब से ज़्यादा कारगर है।

(चौथा जुज़्व) "रुकूअ़ व सुजूद, (यानी अल्लाह के

आगे झुकना और सज्दा करना) है, ये आमाल उस मालिकुलमुल्क, ख़ालिके अर्ज़ व समा व माफ़ीहा की ताज़ीम का निशान हैं, लेकिन नमाज़ पढ़ने वाला जो अपने रब के हुज़ूर (नमाज़ में) झुकता है, उसके लिए सिर्फ़ ये काफ़ी नहीं है कि ख़ास कैफ़ियत के साथ अपनी पीठ को दुहरी कर ले, बल्कि ज़रूरी है कि उसका दिल इस अम्र से आगाह हो कि वह एक अदना बंदा है, अपने ख़ुदाए बुज़ुर्ग व बरतर के आगे झुकता है, जिसकी कुदरतों का कुछ शुमार नहीं, और उसकी अज़मतों की कोई इंतिहा नहीं। नमाज़ी के दिल में जब ये तसव्वुर दिन रात के अन्दर मुतअ़द्दद बार पैदा होगा, तो उसका क़ल्ब हमेशा अपने परवरदिगार के अज़ाब से ख़ाइफ़ रहेगा और कोई ऐसा काम जो रज़ाए इलाही के ख़िलाफ़ हो, उससे सरज़द न होगा। इसी तरह नमाज़ी जो अपने ख़ालिक़ के आगे सर–ब–सुजूद हो कर अपनी पेशानी को ज़मीन पर रखता है तो गोया अपने परवरदिगार की बंदगी का इज़हार करता है, लिहाज़ा उसका दिल बंदगी की बेचारगी और ख़ालिक़ व परवरदिगारे आलम की अज़मत से आगाह होता है। इससे लाज़िम है कि उसके दिल में ख़ौफ़ व ख़शीयते इलाही पैदा हो, और उसके नफ़्स की तहज़ीब हो, और गुनाहों और नापसंदीदा बातों से बाज़ रहे।

इन उमूर के अलावा नमाज़ में और भी अज़ीमुश्शान इजतिमाई मुफ़ीद बातें हैं, मिन्जुमला उनके एक "जमाअ़त" है। इस्लाम में नमाज़े बाजमाअ़त का हुक्म है और नबीए अकरम (स.अ.व.) ने तरग़ीब फ़रमाई है कि:

"صلوٰة الجماعة افضل من الصلوٰة الفذ بسبع و عشرين درجة."

(यानी जमाअत के साथ नमाज़ पढ़ने में अलग अलग नमाज़ पढ़ने से सत्तर दर्जा ज़्यादा फ़ज़ीलत है।)

सीधी और पैवस्त सफ़ों में इकट्ठा हो कर नमाज़ पढ़ने से इस अम्र का इज़हार है कि उनके जुदा जुदा कुलूब बाहम एक दूसरे के क़रीब हैं और कीना व हसद से दूर हैं। इत्तिहाद व इत्तिफ़ाक़ के लिए, जिसका हुक्म अल्लाह तआला ने अपनी किताबे अज़ीज़ में दिया है, ये अमल सब से ज़्यादा कारगर है। अल्लाह तआला का इरशाद है:

"وَاعْتَصِمُوْا بِحَبْلِ اللّٰهِ جَمِيْعاً وَّلَا تَفَرَّقُوْا"

(यानी लोगो! अल्लाह की रस्सी को मज़बूती से पकड़ लो और बाहम फूट न डालो)

नीज़ नमाज़े बाजमाअत उस उख़ूवत की याद दिलाती है जिसके मुतअल्लिक़ अल्लाह ने फ़रमाया है:

"اِنَّمَا الْمُؤْمِنُوْنَ اِخْوَةٌ"

(यानी तमाम मुसलमान भाई भाई हैं।)

पस वह मुसलमान जो परवरदिगारे वाहिद की इबादत के लिए जमा होते हैं उन्हें ये बात फ़रामोश न करनी चाहिए कि वह बाहम भाई भाई हैं। लिहाज़ा लाज़िम है कि जो बड़े हैं वह छोटों पर रहम करें, और जो छोटे हैं वह अपने बड़ों की तौक़ीर करें। जो अमीर हैं वह ग़रीबों की हाजत रवाई, और जो क़वी हैं वह कमज़ोरों की एआनत करें, और सेहत मंद अशख़ास मरीज़ों की तीमारदारी करें, ताकि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) के इस इरशाद पर अमल हो कि:

"المسلم اخو المسلم لا يظلمه ولا يثلمه من كان فى
حاجة اخيه كان الله فى حاجته ومن فرج عن مسلم
كربة من كرب الدنيا فرج الله بما عنه كربة من كرب

يوم القيامة ومن ستر مسلما ستره الله يوم القيامة"

(यानी एक मुसलमान दूसरे मुसलमान का भाई है, पस चाहिए कि न उस पर जुल्म करे, न उसे नुक़सान पहुंचाए। जो शख़्स ज़रूरत पड़ने पर अपने भाई के काम आएगा, अल्लाह तआला उसकी ज़रूरत पर उसके काम आएगा। जिसने किसी मुसलमान की कोई मुश्किल हल कर दी अल्लाह तआला क़यामत की मुश्किलात में से उसकी मुश्किल को हल कर देगा, जिसने किसी मुसलमान की पर्दा पोशी की, अल्लाह तआला क़यामत के रोज़ उसकी पर्दा पोशी फ़रमाएगा।)

ग़रज़ कि अगर नमाज़ की तमाम ख़ूबियों को बयान किया जाए तो उसके लिए दफ़्तर के दफ़्तर दरकार होंगे, लिहाज़ा इस पर ही इक्तिफ़ा किया जाता है और अल्लाह तआला से दुआ है कि हम सब को दीने हनीफ़ पर अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए। अमीन!

(किताबुल फ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़हा–275 ता 278)

नमाज़ जामेअ़ इबादत क्यों?

अगरचे ईमान बिल्लाह के बाद इस्लाम का मदार इन पाँच इबादतों पर है। नमाज़, रोज़ा, हज, ज़कात, जिहाद मगर चूंकि हमारा नसबुलऐन और मौज़ूए बहस इस वक़्त इस सिलसिले में सिर्फ़ नमाज़ ही का बयान करना है इस वजह से उसी के फ़ज़ाइल सिपुर्दे क़लम किए जाते हैं।

नमाज़ ऐसे चंद मख़सूस अक़वाल और अफ़आल के मजमूआ का नाम है जो ख़ुदा तआला की अज़मत के

इज़हार यानी तकबीरे तहरीमा से शुरू हो कर इस्लाम पर ख़त्म हो जाते हैं। जिसमें गोया खुदा के सामने हाज़िर हो कर अपनी ख़ाकसारी, नियाज़ मंदी और फ़रोतनी का इज़हार और उस ज़ाते वाहिद की इज़्ज़त व रफ़अ़त और अज़मत व बरतरी का एतेराफ़ होता है, और जिसमें अपने क़ौल व फ़ेल और हर हरकत व सुकून से इस अम्र का सुबूत पेश किया जाता है कि ऐ मालिकुलमुल्क और ऐ मुरब्बीए हक़ीक़ी तेरे सिवा कोई इबादत के लाइक़ नहीं, हमारा सरे नियाज़ तेरी आलीशान चौखट पर ख़म है, हमारा हर अमल आप ही के लिए है और हमारा रुख़ आप ही की जानिब है और हर क़िस्म की एआनत की ख़्वास्गारी सिर्फ़ आप ही से है। हम गुरूब हो जाने वाली चीज़ों को दोस्त नहीं रखते।

इस इबादत को शरीअ़ते इस्लाम ने हर मुसलमान आक़िल, बालिग़ पर ख़्वाह मर्द हो या औरत और आज़ाद हो या गुलाम, सब पर फ़र्ज़ किया है। हर एक शख़्स अपने अपने दर्जा और इस्तेदाद के मुताबिक़ इससे नफ़ा उठा सकता है, यही वह अज़ीमुश्शान इबादत है जिसको अमदन छोड़ने वाले को इमाम अहमद इब्न हंबल अलैहिर्रहमा काफ़िर कहते हैं औ इमाम शाफ़ई अलैहिर्रहमा उसको क़त्ल करने का फ़तवा देते हैं और इमाम अबूहनीफ़ा रहमतुल्लाह अलैह ता तौबा उसको महबूस करने का फ़तवा फ़रमाते हैं।

यही मिल्लते इस्लाम का वह शिआ़र है जिसके जाते रहने से अगर इस्लाम के जाते रहने का हुक्म कर दिया जाए तो दुरुस्त और बजा है। यही वह इबादत है जो तहज़ीबे नफ़्स और इस्लाहे अख़लाक़ के लिए कामिल

मुअस्सिर और नाफ़ेअ है जो दिलों को ख़ताओं की नापाकियों से पाक व साफ़ कर के उख़रवी तजल्लियात के क़ाबिल बना देती है और बुराईयों को नेकियों से मुबद्दल कर देती है। चुनांचे हदीस शरीफ़ में आया है कि उस शफ़ीके उम्मत शफ़ीउलमुज़नबीन (रूही फ़िदाहु) के ज़माने में इत्तिफ़ाक़न एक मर्द ने एक अजनबी औरत का बोसा लिया। जब उस गुनाह ने उसके नूरानी क़ल्ब पर किसी क़द्र जुलमत का हिंजाब डाला तो तबीबे रूहानी की ख़िदमते अक़दस में निहायत नदामत और कामिल शरमिंदगी से हाज़िर हो कर उसके इज़ाला की तदबीर दरयाफ़्त करने की दरख़्वास्त पेश की, और इस गुनाह को नाक़ाबिले मआफ़ी समझ कर "हलकतु हलकतु" कहने लगा। आँहज़रत (स.अ.व.) ने उसकी फ़रयाद व बुका को सुन कर कुछ जवाब मरहमत न फ़रमाया। बल्कि अदाए नमाज़ तक आप ने सुकूत और तवक़्क़ुफ़ किया। जब उस साइल ने जमाअ़त में शामिल हो कर नमाज़ को अदा किया और उसकी ख़िजालत रहमते इलाही के दरिया को जोश में लाई यानी तो ये आयत नाज़िल हुई:

"وَاَقِمِ الصَّلٰوةَ طَرَفَيِ النَّهَارِ وَزُلَفًا مِّنَ الَّيْلِ
اِنَّ الْحَسَنٰتِ يُذْهِبْنَ السَّيِّاٰتِ"

(यानी दिन की दोनों तरफ़ों और रात की कुछ साअ़तों में नमाज़ को क़ाइम करो। क्योंकि नेकियाँ बुराइयों को दूर कर देते हैं।)

तो आँहज़रत (स.अ.व.) ने उसको ये मुज़दह सुनाया कि:

"ان اللہ قد غفرلک ذنبک"

(यानी यक़ीनन ख़ुदा तअ़ला ने तेरे गुनाह को बख़्श दिया।)

फिर जब उस साइल ने ये अर्ज़ किया कि ये हुक्मे ख़ास मेरे ही वास्ते है? तो आप (स.अ.व.) ने ये फ़रमाया कि मेरी तमाम उम्मत के वास्ते यही हुक्म है। अला हाज़ा आँहज़रत (स.अ.व.) का ये इरशाद है कि:

"لو ان نهرا بباب احد کم یغتسل فیه کل یوم خمساً
هل یبقٰی من درنه شیئ قالوا لا۔ قال فذا لک مثل
الصلوٰت الخمس یمحو اللّٰه بها الخطایا"

यानी आँहज़रत (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि अगर तुम में से किसी शख़्स के दरवाज़ा पर नहर जारी हो और उसमें रोज़ाना पाँच मरतबा वह ग़ुस्ल किया करे तो क्या उसके बदन पर कुछ मैल कुचैल बाक़ी रह सकता है? सहाबा (रज़ि.) ने अर्ज़ किया नहीं। आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया यही हाल पंजगाना नमाज़ों का है उनसे भी ख़ुदाए तआला ख़ताओं को बिल्कुल दूर कर देता है, और नीज़ आप (स.अ.व.) का ये फ़रमाना कि:

"الصلوٰت الخمس والجمعة الی الجمعة ورمضان
الٰی رمضان مکفرات لما بینهن اذا اجتنبت الکبائر"

(यानी अगर गुनाहे कबीरा से परहेज़ किया जाए तो पाँचों नमाज़ें और जुमा से जुमा और रमज़ान से रमज़ान तक अपने दरमियान के गुनाहों को दूर करने वाले हैं।)

और इसी तरह इल्हामी और मुक़द्दस किताब की ये आयत:

"اِنَّ الصَّلٰوةَ تَنْهٰی عَنِ الْفَحْشَآءِ وَالْمُنْكَرِ"

(यानी बेशक यकीनन नमाज़ बेहयाई और बुरी बात से रोक देती है।)

गुनहगाराने उम्मत को कामिल यकीन दिलाते हैं कि जिस शख़्स ने नमाज़ों को हुज़ूरे दिल और पाक नीयत से पूरे पूरे तौर पर अदा किया, और उनके रुकूअ व सुजूद और खुशूअ और उसके अज़कार व अशग़ाल को अच्छी तरह बजा लाया और वक़्त पर उनको पढ़ा तो बित्तबा उनका ये इक़्तिज़ा है कि वह शख़्स रहमते इलाही के लामुतनाही दरिया में पहुंच जाता है जिसके सबब से उसके छोटे छोटे गुनाह ख़स व ख़ासाक की तरह दूर हो जाते हैं और उसकी ख़ताऐं लौहे दिल से ऐसी झड़ जाती हैं जैसे मौसमे खिज़ाँ में दरख़्तों के पत्ते।

अलावा अज़ीं नमाज़ ही एक ऐसी इबादत है जो इस्लाम की बक़िया इबादात के अरकान को भी मुतज़म्मिन और जामेअ़ है चुनांचे देखिए जैसा कि सौम में रोज़ादार को सुब्ह से शाम तक नीयत के साथ खाने पीने और जिमाअ़ से बाज़ रहने का हुक्म है। इसी तरह नमाज़ी को भी ऐन नमाज़ की हालत में लाज़िमी तौर पर अशयाए मज़कूरा से एहतेराज़ वाजिब है और जैसा कि मज़कूरुस्सद्र चीज़ों के इस्तेमाल से रोज़ा टूट जाता है, ऐसे ही इन अफ़आल के इरतिकाब से नमाज़ी की नमाज़ बातिल हो जाती है, बल्कि ग़ौर से देखा जाए नफ़्स की बंदिश जिस क़दर उसके मरग़ूबात से नमाज़ में होती है रोज़ा में नहीं होती, देखो! नमाज़ पढ़ने वालों को हुक्म है कि नमाज़ की हालत में गोशए चश्म से भी ग़ैरुल्लाह की तरफ़ न देखो। बल्कि अपनी नज़रों को सज्दागाह पर रखो, ज़बान को भी तिलावत

और ज़िक्रे इलाही के सिवा और अज़कार से बचाओ। अगर हाथों से या पैरों से बेजा हरकत करोगे तो नमाज़ बातिल हो जाएगी। वग़ैरा! वग़ैरा!

ये सब उमूर ऐसे हैं कि उनका वजूद बसाऔक़ात रोज़ा में मुख़िल नहीं होता।

अलाहज़ा, हज के से अफ़आल भी नमाज़ में पाए जाते हैं, अगर हज्जे बैतुल्लाह में एहराम है तो यहाँ तकबीर तहरीमा उसके क़ाइम मक़ाम है। अगर वहाँ तवाफ़े कअ़बा और वक़ूफ़े अरफ़ात है तो यहाँ इस्तिक़बाले क़िब्ला और क़याम है। अगर वहाँ सई बैनस्सफ़ा वलमरवह है तो यहाँ रुकूअ़ व सुजूद के हरकात, और जिस तरह ज़कात में अपने कुल माले निसाबी में से एक मिक़्दारे मुअैयन का खुदा की राह में सर्फ़ करना ज़रूरी है, इसी तरह नमाज़ी को भी यही हुक्म है कि अपने रात दिन के औक़ात में से कुछ वक़्ते मुअैयन ख़ुदा की रज़ा मंदी और ख़ुशनूदी में सर्फ़ करे।

ग़रज़ यही वह इबादत है जो जमीअ़ इबादात को जामेअ़ है, तिलावते कुरआन, कलिमए शहादत, ज़िक्रे इलाही और दुआ़ व तस्बीह सब उसमें पाई जाती हैं।

इन्ही वुजूहे मुतज़क्किरा बाला के सबब नमाज़ से अफ़ज़ल कोई इबादत नहीं है, चुनांचे जब रसूलुल्लाह (स.अ.व.) से ये दरयाफ़्त किया गया कि:

"ای الاعمال افضل؟"

(यानी तमाम आमाल में कौन सा अमल अफ़ज़ल है?)

तो आप (स.अ.व.) ने ये इरशाद फ़रमाया कि:

"الصلوٰۃ لوقتها"

(यानी नमाज़ को अपने वक़्त पर अदा करना)

और जब सेहराए महशर में ख़लाइक़ के हाज़िर होने के लिए सूर फूंका जाएगा और वक़्ते मौऊद पर सब अगले पिछले जज़ा व सज़ा पाने के लिए जमा होंगे, तो उस वक़्त सब इबादतों से पहले नमाज़ ही का मुहासबा किया जाएगा। इसी वास्ते ईमान की दुरुस्ती और अक़ाएद की इस्लाह के बाद नमाज़ ही का मरतबा है और हुज़ूर सरवरे काएनात (स.अ.व.) ने इब्तिदाए उम्र ही से इस इबादत के ख़ूगर होने का हुक्म फ़रमाया। चुनांचे वालिदैन के लिए आँहज़रत (स.अ.व.) का इरशाद है कि:

"مروا اولادکم بالصلوٰة وهم ابناء سبع

سنين و اضربوهم عليها وهم ابناء عشر سنين"

(यानी अपनी औलाद को उस वक़्त नमाज़ का हुक्म करो जिस वक़्त वह सात बरस की उम्र के हो जाएँ और जब दस साल के हो जाएँ तो नमाज़ पढ़ने के लिए उनको मारा करो।)

ग़रज़ कुरआन व हदीस नमाज़ की फ़ज़ीलतों से लबरेज़ और पुर है और शारेअ़ अलैहिस्सलाम ने उसके औक़ात की तअ़यीन और उसके शुरूत व अरकान और आदाब के बयान करने में सब इबादतों से ज़्यादा एहतेमाम किया है। पस कामिल इंसान वही है जो शिर्क और मख़लूक़ परस्ती से बेज़ार होकर अपने परवरदिगारे हक़ीक़ी की इबादत अहसन व अकमल तरीक़ा पर करता रहे और अपने आराम व राहत से दस्त बरदार हो कर अपने ख़ालिक़ के अदाए शुक्र में तैयार व मुस्तइद रहे और उसके अवामिर व नवाही पर कारबंद हो कर हयात बाक़ी और अबदी आराम व

राहत की जुस्तुजू में सरगरदाँ व कोशाँ रहे।

हज़रत शाह अब्दुलअज़ीज़ साहब मुहद्दिस देहलवी अलैहिर्रहमा "फ़सल्ले लि रब्बिका" की तफ़सीर करते हुए तहरीर फ़रमाते हैं कि नमाज़ एक ऐसी इबादत है जो दुनिया में कौसर का नमूना है।

(माख़ूज़ अज़ रिसाला "अलरशीद" शौवाल 1332 हिजरी)

नमाज़ के सहीह होने की शर्तें

चूंकि नमाज़ का एहतेमाम सब इबादतों से ज़्यादा है इस वजह से उसकी शराइत भी बहुत हैं। इस मक़ाम पर सिर्फ़ उन शरतों को बयान करते हैं जिनकी ज़रूरत हर नमाज़ में पड़ती है। बाज़ शराइत जो किसी ख़ास नमाज़ से तअल्लुक रखती हैं जैसे जुमा की नमाज़ के शराइत उनका ज़िक्र उसी मक़ाम पर किया जाएगा जहाँ उन नमाज़ों का बयान होगा।

(उन शराइत का बयान अहक़र की मुरत्तब कर्दा किताब (मसाइले नमाज़े जुमा व ईदैन में मुलाहज़ा हो)

पहली शर्त

तहारतः (पाकी) नमाज़ पढ़ने वाले के जिस्म को नजास्ते हक़ीक़ीया से पाक होना चाहिए, ख़्वाह ग़लीज़ा हो या ख़फ़ीफ़ा, मरईया हो ग़ैर मरईया। हाँ अगर बक़द्रे मआफ़ी हो तो कुछ मुज़ाएक़ा नहीं, मगर अफ़ज़ल ये है कि उससे भी पाक हो, इसी तरह नजास्ते हुकमीया की

दोनों फ़र्दों (हदसे अकबर व हदसे असग़र) से भी पाक होना चाहिए।

नीज़ नमाज़ पढ़ने वाले के लिबास को नजासते हक़ीक़ीया से पाक होना चाहिए।

नीज़ नमाज़ पढ़ने की जगह नजासते हक़ीक़ीया से पाक होनी चाहिए, हाँ अगर बक़द्रे मआफ़ी हो तो कुछ हरज नहीं। नमाज़ पढ़ने की जगह से वह मक़ाम मुराद है जहाँ नमाज़ पढ़ने वाले के पाँव रहते हों और सज्दा करने की हालत में जहाँ उसके घुटने और हाथ और पेशानी और नाक रहती हो। (दुर्रेमुख़्तार)

मस्अला: अगर किसी नापाक जगह पर कोई कपड़ा बिछा कर नमाज़ पढ़ी जाए तो उसमें ये शर्त है कि वह कपड़ा इस क़दर बारीक न हो कि उसके नीचे की चीज़ साफ़ तौर पर उससे नज़र आए।

(बहरुर्राएक़, शरह वक़ाया, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–24, व हिदाया ज़िल्द–1 सफ़्हा–58, जिल्द औवल व शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–63 व कबीरी सफ़्हा–177 व नमाज़ मसनून सफ़्हा–265)

दूसरी शर्त

सत्रे औरत: यानी नमाज़ पढ़ने की हालत में उस हिस्सए जिस्म को छिपाना फ़र्ज़ है जिसका ज़ाहिर करना शरअन हराम है ख़्वाह तन्हा नमाज़ पढ़े या किसी के सामने।

अगर कोई शख़्स किसी तन्हा मकान में नमाज़ पढ़ता

हो या किसी अंधेरे मकाम में तो उस पर भी सत्रे औरत फ़र्ज़ है। (यानी जिस हिस्से का दूसरे शख़्स पर ज़ाहिर करना हराम हो) अगरचे किसी गै़र शख़्स के देखने का ख़ौफ़ (इमकान) नहीं, हाँ अपनी नज़र से छिपाना शर्त नहीं, अगर किसी की नज़र अपने (पोशीदा) जिस्म पर नमाज़ पढ़ने की हालत में पड़ जाए तो कुछ हरज नहीं है।

(बहरुर्राएक़, दुर्रेमुख़्तार, मराक़िलफ़लाह, इल्मुफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–26 व हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–58 व कबीरी सफ़्हा–208)

मस्अला: मर्द के लिए नाफ़ से लेकर घुटने के मक़ाम तक ढाँपना फ़र्ज़ है और औरत का कुल जिस्म सत्र है यानी तमाम बदन का छिपाना ज़रूरी है, अलावा चेहरा, हाथ और पाँव के।

(हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–58, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–64 व कबीरी सफ़्हा–210, किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–283)

तीसरी शर्त

इस्तिक़बाले क़िब्ला: यानी नमाज़ पढ़ने की हालत में अपना सीना कअ़बा मुकर्रमा की तरफ़ करना शर्त है, ख़्वाह हकीक़तन या हुक्मन और कअ़बा की तरफ़ मुंह करना शर्त नहीं, हाँ मसनून है, लिहाज़ा अगर कोई शख़्स कअ़बा से (सिर्फ़) मुंह फेर कर नमाज़ पढ़े तो नमाज़ हो जाएगी मगर ख़िलाफ़े सुन्नत की वजह से मकरूहे

तहरीमी है, और जिन लोगों को कअ़बा नज़र आता हो यानी कअ़बा के क़रीब हैं दरमियान में कोई रुकावट नहीं तो उन पर फ़र्ज़ है कि ख़ास कअ़बा की तरफ़ सीना कर के नमाज़ पढ़ें, जिस तरफ़ कअ़बा हो बिल्कुल सीध पर खड़ा होना फ़र्ज़ नहीं।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–28 व हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–61, शरह नक़ाया सफ़्हा–61, कबीरी सफ़्हा–217, किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–309)

मस्अला: क़िब्ला की तरफ़ रुख़ कर के नमाज़ पढ़ना वाजिब है लेकिन उसके लिए दो शर्तें हैं, औवल क़ुदरत, दूसरे तहफ़्फ़ुज़।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–324)

चौथी शर्त

नीयत: यानी दिल में नमाज़ पढ़ने का क़स्द करना, ज़बान से भी कहना बेहतर है, (नीयत तो फ़क़त इरादा का नाम है जिसका महल दिल है न कि ज़बान) अगर फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ना हो तो नीयत में उस फ़र्ज़ की तअ़यीन भी ज़रूरी है, मसलन अगर ज़ुहर की नमाज़ पढ़ना हो तो दिल में ये क़स्द करना कि मैं ज़ुहर की नमाज़ पढ़ता हूँ। वग़ैरा! वग़ैरा! और अगर वाजिब नमाज़ पढ़ता हो तो उसकी तख़्सीस भी ज़रूरी है कि ये कौन सा वाजिब है वित्र या ईदैन की नमाज़ है या नज़्र की नमाज़।

नीज़ मुक़्तदी को अपने इमाम की इक़्तिदा की नीयत करना भी शर्त है। इमाम को सिर्फ़ अपनी नमाज़ की

नीयत करना शर्त है, इमामत की नीयत करना शर्त नहीं, हाँ अगर कोई औरत उसके पीछे नमाज़ पढ़ना चाहे और मर्दों के बराबर खड़ी हो और नमाज़ जनाज़ा और जुमा और ईदैन की न हो तो उसकी इक़्तिदा सहीह होने के लिए उसकी इमामत की नीयत करना शर्त है। और अगर मर्दों के बराबर न खड़ी हो या नमाज़ जनाज़े या जुमे या ईदैन की हो तो फिर शर्त नहीं है। जनाज़ा की नमाज़ में ये नीयत करना चाहिए कि मैं ये नमाज़ अल्लाह तआ़ला की खुशनूदी और इस मैयत की दुआ के लिए पढ़ता हूँ। और अगर मुक़्तदी को ये न मालूम हो कि ये मैयत मर्द है या औरत तो उसको ये नीयत कर लेना काफ़ी है कि मेरा इमाम जिसकी नमाज़ पढ़ता है उसकी मैं भी पढ़ता हूँ।

(इल्मुल फ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–30)

मस्अला: नीयत को तकबीरे तहरीमा के साथ होना चाहिए और अगर तकबीरे तहरीमा से पहले नीयत कर ले तब भी दुरुस्त है, बशर्तेकि नीयत और तहरीमा के दरमियान कोई ऐसी चीज़ फ़ासिल न हो जो नमाज़ के मुनाफ़ी हो, मसलन खाने, पीने, बात चीत, वग़ैरा के और इसी शर्त से अगर वक़्त आने से पहले नीयत कर ले तब भी दुरुस्त है, बाद तहरीमा के नीयत करना सहीह नहीं और इस नीयम का कुछ एतेबार न होगा।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–31 व शरह वक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–139 व बहरुर्राइक़ जिल्द–1 सफ़्हा–277 व कबीरी सफ़्हा–454, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–67 किताबुल फ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–335)

अगर नमाज़ पढ़ने वाले ने दिल से इरादा कर लिया

और ज़बान से कुछ न कहा तो नमाज़ दुरुस्त है, अलबत्ता अवामुन्नास के लिए दिल के इरादे के साथ ज़बान से भी तलफ़्फ़ुज़ करना बेहतर है। और बाज़ हज़रात लम्बी चौड़ी नीयत के अलफ़ाज़ दुहराते रहते हैं, इसमें ख़राबी ये है कि इमाम क़िराअत शुरू कर देता है और ये नीयत के अलफ़ाज़ ही दुहराते रहते हैं। (रफ़अ़त क़ासमी)

नीयत कहते हैं खुदा के लिए नमाज़ का इरादा करने को, बई तौर कि इसमें उमूरे दुन्यवी में से कोई अम्र शामिल न हो। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़हा–343 व बहरुर्राइक़ जिल्द–1 सफ़हा–282)

पाँचवीं शर्त

तकबीरे तहरीमा: यानी नमाज़ शुरू करते वक़्त अल्लाहुअकबर कहना, या उसके हम माना और कोई लफ़्ज़ कहना, चूंकि इस तकबीर के बाद नमाज़ शुरू हो जाती है, खाना, पीना, चलना, फिरना, बात चीत करना, अक्सर चीज़ें जो ख़ारिजे नमाज़ में जाइज़ थीं वह हराम हो जाती है, इसलिए उसको तहरीमा कहते हैं।

तहरीमा के सहीह होने की आठ शर्तें हैं

(1) तहरीमा का नीयत के साथ मिला हुआ होना ख़्वाह हक़ीक़तन मिली हुई हो, यानी एक ही वक़्त में नीयत और तहरीमा दोनों हों, या हुकमन मिली हुई हो, यानी नीयत और तहरीमा के दरमियान कोई ऐसी चीज़

फ़ासिल न हो जो नमाज़ के मुनाफ़ी हो, मसलन बात वग़ैरा के, और नीयत करने के बाद नमाज़ के लिए चलना फिरना वुज़ू करना मुनाफ़ी न समझा जाएगा और उसके फ़ासिल होने से तहरीमा की सेहत में कुछ ख़लल न आएगा, मगर अफ़ज़ल यही है कि हक़ीक़तन मिला दे।

(मराक़ियुलफ़लाह)

(2) जिन नमाज़ों में खड़ा होना फ़र्ज़ है उनकी तकबीर तहरीमा खड़े हो कर कहे, और बाक़ी नमाज़ों की जिस तरह चाहे कहे, मगर इस बात का ज़रूर ख़्याल रहे कि हर नमाज़ में ज़रूरी है कि तकबीरे तहरीमा रुकूअ़ की हालत में या क़रीब रुकूअ़ के झुक कर न कही जाए, अगर कोई शख़्स झुक कर तकबीरे तहरीमा कहे तो अगर उसका झुकना रुकूअ के क़रीब न हो तो तहरीमा सहीह हो जाएगी और अगर रुकूअ़ के क़रीब हो तो सहीह न होगी। (मुराक़ियुलफ़लाह)

मस्अला: बाज़ ना वाक़िफ़ लोग जब मस्जिद में आकर इमाम को रुकूअ़ में पाते हैं तो जल्दी के ख़्याल से आते ही झुक जाते हैं और उसी हालत में तकबीरे तहरीमा कहते हैं, उनकी नमाज़ नहीं होती, इसलिए कि तकबीरे तहरीमा नमाज़ की सेहत की शर्त है, जब वह सहीह न हुई तो नमाज़ कैसे सहीह हो सकती है, यानी नमाज़ न होगी।

(3) तहरीमा का नीयत से पहले न होना, अगर तकबीरे तहरीमा पहले कह ली जाए और नीयत उसके बाद की जाए तो तकबीरे तहरीमा सहीह न होगी।

(मराक़ियुलफ़लाह)

(4) तकबीरे तहरीमा को इतनी आवाज़ से कहना कि ख़ुद सुन ले बशर्तेकि बहरा न हो। गूंगे को तकबीर तहरीमा के लिए ज़बान हिलाना ज़रूरी नहीं है, बल्कि उसको तकबीरे तहरीमा मआफ़ है।

(5) तकबीरे तहरीमा का ऐसी इबारत में अदा करना जिससे अल्लाह तआला की अज़मत और बुज़ुर्गी समझी जाती हो।

(6) अल्लाहुअकबर के "हमज़ा" या "बा" को न पढ़नाः अगर कोई शख़्स "آللّٰهُ اَكْبَار" कहे तो उसकी तकबीरे तहरीमा सहीह न होगी।

(7) अल्लाह में लाम के बाद अलिफ़ कहनाः अगर कोई शख़्स न कहे तो उसकी तहरीमा सहीह न होगी।

(8) तकबीरे तहरीमा का बिस्मिल्लाह वग़ैरा से न अदा करनाः अगर कोई बजाए तकबीरे तहरीमा के बिस्मिल्ला हिर्रहमानिर्रहीम वग़ैरा कहे तो उसकी तहरीमा सहीह न होगी। (दुर्रेमुख़्तार, मुराक़ियुलफ़हाल) और तकबीरे तहरीमा का क़िब्ला रू हो कर कहना, बशर्तेकि कोई उज़्र न हो।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–32)

रुकूअ में शामिल होते वक़्त तकबीरे तहरीमा का हुक्म

मसलाः अगर इमाम रुकूअ में है और उस वक़्त कोई शख़्स इमाम के साथ रुकूअ में शामिल होना चाहता है तो मसनून तरीक़ा ये है कि तकबीरे तहरीमा कहने के बाद फिर दूसरी तकबीर कह कर रुकूअ में जाए, और अगर सिर्फ़ तकबीरे तहरीमा कही और दूसरी तकबीर कहे

बग़ैर रुकूअ़ में चला गया और इमाम के साथ शरीक हो गया तो वह रकअ़त उसको मिल गई और नमाज़ भी सहीह हो गई।

(दुर्रेमुख़्तार बर हाशिया शामी जिल्द–1 सफ़्हा–443)

तकबीरे महरीमा रुकूअ़ की हालत में न कहे वरना नमाज़ सहीह न होगी। (रफ़अ़त कासमी)

नजासते ग़लीज़ा व ख़फ़ीफ़ा की तारीफ़

नजासते ग़लीज़ा इमाम साहब अलैहिर्रहमा के नज़दीक हर ऐसी नजासत को कहा जाता है जिसकी नजासत में दलाएल मुत्तफ़िक़ हों ख़्वाह उसमें उलमा का इख़्तिलाफ़ हो या न हो, इसी तरह उमूमे बलवा हो या न हो, और नजासते ख़फ़ीफ़ा हर ऐसी नजासत को कहा जाता है जिसकी नजासत में दलाएल मुतआ़रिज़ हों।

ان الامام قال توافقت على نجاسته الادلة فمغلظ سواء اختلفت فيه العلماء وكان فيه بلوى ام لاوالا فمخفف، طحطاوى على المراقى (ص/٢٨) هكذافى فتح القدير (ص/٢٠٣) جلد اول و بحرالرائق (ج/١، صفحه/٢٢٩) والشامى (ج/١، صفحه/٢١١)

साहिबैन (रह.) के नज़दीक नजासते ग़लीज़ हर ऐसी नजासत को कहा जाता है जिसकी नजासत में उलमा का इत्तिफ़ाक़ हो और उमूमे बलवा उसमें न हो, अगर उलमा का इख़्तिलाफ़ हो या उमूमे बलवा हो तो वह नजासत नजासते ख़फ़ीफ़ा कहलाएगी।

وقالا ما اتفق العلماء على نجاسة ولم يكن فيه بلوى فمغلظ والا فمخفف ولا نظر للادلة، طحطاوى على المراقى (ص/٨٢) فتح (ج/١،

ص/٢٠٢) بحر (ج/١، ص/٢٢٩) ش (ج/١، ص/٢١١)

नजासते ग़लीज़ा का हुक्म

नजासते ग़लीज़ा में से अगर पतली और बहने वाली चीज़ कपड़े या बदन में लग जावे तो अगर फैलाव में बक़द्रे दिरहम या उससे कम हो तो मआफ़ है, बग़ैर धोए नमाज़ पढ़ लेवे तो नमाज़ हो जाएगी, लेकिन न धोना और इसी तरह नमाज़ पढ़ते रहना मकरूह और बुरा है, और अगर क़द्रे दिरहम से ज़्यादा हो तो मआफ़ नहीं, बग़ैर उसको धोए नमाज़ न होगी, और अगर नजासते ग़लीज़ा में से गाढ़ी चीज़ लग जाए जैसे मुर्ग़ी वग़ैरा की बीट तो अगर वज़न में साढ़े चार माशा या उससे कम हो तो बग़ैर धोए नमाज़ दुरुस्त है, अगर ज़्यादा हो तो बग़ैर धोए नमाज़ न होगी।

(कमाफ़ित्तहतावी वलकबीरी वश्शामी व ऐज़न फ़िलबह्र)

नजासते ख़फ़ीफ़ा का हुक्म

अगर नजास्ते ख़फ़ीफ़ा कपड़े या बदन में लग जावे तो जिस हिस्सा में लगी है अगर उसके चौथाई से कम हो तो मआफ़ है और अगर पूरा चौथाई या उससे ज़्यादा हो तो मआफ़ नहीं, यानी अगर आस्तीन में लगी हो तो आस्तीन की चौथाई से कम हो, अगर कली में लगी हो तो उसके चौथाई से कम हो, ग़रज़ कि जिस अज़्व में लगे उसके चौथाई से कम हो, अगर पूरा चौथाई या

उससे ज़्यादा हो तो मआफ़ नहीं उसका धोना वाजिब है, और बग़ैर धोए नमाज़ न होगी।

(कमाफ़िततहतावी सफ़्हा–84 वश्शामी सफ़्हा–212 व ऐज़न फ़िलकबीरी सफ़्हा–145 व फ़ीबहरिर्राइक़ जिल्द–1 सफ़्हा–230, तबयीनुलहक़ाइक़ जिल्द–1 सफ़्हा–75) मुहम्मद ताहिर अफ़ल्लाहु अन्हु मुफ़्तीए दारुलउलूम देवबंद।

नमाज़ के औक़ात

चूंकि नमाज़ अल्लाह तआला की उन नेमतों के अदाए शुक्र के लिए है जो हर वक़्त व हर आन फ़ाइज़ होती रहती हैं, लिहाज़ा उसका मुक़्तज़ा ये था कि किसी भी वक़्त इंसान इस इबादत से ख़ाली न रहे मगर चूंकि इसमें तमाम ज़रूरी हवाइज में हरज होता इसलिए थोड़ी थोड़ी देर के बाद इन पाँच वक़्तों में नमाज़ फ़र्ज़ की गई:

(1) फ़ज्र (2) ज़ुहर (3) अस्र (4) मग़रिब (5) इशा

फ़ज्र का वक़्त

सुब्हे सादिक़ से शुरू होता है और तुलूए आफ़ताब तक रहता है। (बह्र, दुर्रेमुख़्तार, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–50, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–54 व कबीरी सफ़्हा–226) सब से पहले आख़िरे शब में एक सपेदी बीच आसमान के ज़ाहिर होती है, मगर ये सपेदी क़ाइम नहीं रहती बल्कि उसके बाद ही अंधेरा हो जाता है उसको सुब्हे काज़िब कहते हैं। उसके थोड़ी देर बाद एक सपेदी

आसमान के किनारे चारों तरफ़ ज़ाहिर होती है और वह बाक़ी रहती है, बल्कि वक़्तन फ़वक़्तन उसकी रौशनी बढ़ती चली जाती है उसको सुब्हे सादिक़ कहते हैं और उसी से सुब्ह का वक़्त शुरू होता है।

मर्दों के लिए मुस्तहब है कि फ़ज्र की नमाज़ ऐसे वक़्त शुरू करें कि रौशनी ख़ूब फैल जाए और इस क़दर बाक़ी हो कि अगर नमाज़ पढ़ी जाए और उसमें चालीस पच्चास आयतों की तिलावत अच्छी तरह की जाए, और नमाज़ के बाद अगर किसी वजह से नमाज़ को लौटाना चाहें तो उसी तरह चालीस पच्चास आयतें उसमें पढ़ सकें। और औरतों को हमेशा और मर्दों को हालते हज में मुज़दलिफ़ा में फ़ज्र की नमाज़ अंधेरे में पढ़ना मुस्तहब है।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–8, दुर्रेमुख़्तार, मराक़ियुलफ़लाह व शरह वक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–130, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–54 व नसाई शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–50)

ज़ुहर का वक़्त

ज़ुहर का वक़्त आफ़ताब ढलने के बाद शुरू होता है और जब तक हर चीज़ का साया सिवा असली साया के दो मिस्ल न हो जाए ज़ुहर का वक़्त रहता है मगर एहतियात ये है कि एक मिस्ल के अन्दर अन्दर ज़ुहर की नमाज़ पढ़ ली जाए। नीज़ जुमा की नमाज़ का वक़्त भी यही है सिर्फ़ इस क़दर फ़र्क़ है कि ज़ुहर की नमाज़ गर्मियों में कुछ ताख़ीर कर के पढ़ना बेहतर है, ख़्वाह

गर्मी की शिद्दत हो या नहीं, और सर्दीयों में ज़ुहर की नमाज़ जल्द पढ़ना मुस्तहब है।

(शामी, बह्र, इल्मुलफ़िक्ह जिल्द–1 सफ़हा–9)

मस्अला: साया असली को छोड़ कर हर चीज़ का साया जब दो मिस्ल हो जाए तो ज़ुहर का वक़्त ख़त्म हो जाताहै। (हिदाया जिल्द–1 सफ़हा–49, कबीरी सफ़हा–227)

अस्र का वक़्त

अस्र का वक़्त बाद दो मिस्ल के शुरू होता है और आफ़ताब डूबने तक रहता है, अस्र का मुस्तहब वक़्त उस वक़्त तक है जब तक आफ़ताब में ज़रदी न आ जाए और उसकी रौशनी ऐसी कम हो जाए कि नज़र उस पर ठहरने लगे, उसके बाद मकरूह है। और अस्र की नमाज़ हर ज़माना में ख़्वाह गर्मी हो या सर्दी देर कर के पढ़ना मुस्तहब है, मगर न इस क़दर देर कि आफ़ताब में ज़रदी आ जाए और उसकी रौशनी कम हो जाए, हाँ जिस दिन बादल हो उस दिन अस्र की नमाज़ जल्द पढ़ना मुस्तहब है। (दुर्रेमुख़्तार) जबकि घड़ी के औक़ात मुतऐयन न हों।

(इल्मुलफ़िक्ह जिल्द–2 सफ़हा–9 व हिदाया जिल्द–1 सफ़हा–49 व कबीरी सफ़हा–247 व किताबुलफ़िक्ह जिल्द–1 सफ़हा–291)

मग़रिब का वक़्त

मग़रिब का वक़्त आफ़ताब डूबने के बाद शुरू होता है

और जब तक शफ़क़ की सपेदी आसमान के किनारों में क़ाइम रहे। (बहर, तहतावी, हाशिया मराक़ियुलफ़लाह) मग़रिब की नमाज़ वक़्त शुरू होते ही पढ़ना मुस्तहब है, सितारों के अच्छी तरह निकल आने के बाद मकरूह है, हाँ जिस रोज़ बादल हो उस दिन इस क़दर ताख़ीर कर के नामज़ पढ़ना कि जिसमें वक़्त आ जाने का अच्छी तरह यक़ीन हो जाए॰ मुस्तहब है। मग़रिब का वक़्त बिल्कुल फ़ज्र का अक्स है, फ़ज्र के वक़्त पहले सपेदी ज़ाहिर होती है उसके बाद सुर्ख़ी, और मग़रिब में पहले सुर्ख़ी ज़ाहिर होती है फिर सपेदी।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–10)

मस्अलाः नमाज़े मग़रिब का वक़्त ग़ुरूबे आफ़ताब से ग़ुरूबे शफ़क़ तक है। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–292, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–49, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–52, कबीरी सफ़्हा–228)

मस्अलाः ग़ुरूब से शफ़के अबयज़ के ग़ाइब होने तक इमाम अबूहनीफ़ा रहमतुल्लाह अलैह के नज़दीक मग़रिब का वक़्त रहता है जिसकी मिक़्दार तक़रीबन सवा घन्टा या कुछ मिनट ज़्यादा है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–47, बहवाला हिदाया सफ़्हा–78, बाबुलमवाक़ीत तफ़सील इमदादुलअहकाम अज़ जिल्द–1 सफ़्हा–401 ता 416)

मस्अलाः मग़रिब की नमाज़ के अलावा चार रक्अत की नमाज़ों में अज़ान व तकबीर में इतना फ़ासिला मसनून वं मुस्तहब है कि खाना खाने वाला खा पी कर फ़राग़त कर ले और क़ज़ाए हाजत करने वाला अपनी ज़रूरियात

पूरी कर ले।

(अलजवाबुलमतीन सफ़हा–10 अज़ मियाँ असगर हुसैन साहब अलैहिर्रहमा)

मग़रिब की नमाज़ में वक़्त तो रहता है लेकिन बिला वजह ताख़ीर करना मुनासिब नहीं हाँ, रमज़ानुलमुबारक में इफ़्तार की वजह से कुछ देर करना जाइज़ है, इसमें कुछ हरज नहीं है, क्योंकि जब वक़्त में गुंजाइश है और एक ज़रूरी अम्र की वजह से ज़रा ताख़ीर की जाती है तो क़तअन इसमें कोई मुज़ाएका नहीं।

मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू

(माख़ूज़ फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़हा–45, बहवाला आलमगीरी जिल्द–1 सफ़हा–16)

इशा का वक़्त

इशा का वक़्त शफ़क़ की सपेदी ज़ाएल हो जाने के बाद शुरू होता है और जब तक सुब्ह सादिक़ न निकले बाक़ी रहता है। (बह्र, फ़तहुलक़दीर)

मस्अला: इशा की नमाज़ बाद तिहाई रात गुज़र जाने के और क़ब्ल निस्फ़ शब के मुस्तहब है और बाद निस्फ़ शब के मकरूह है। (शामी)

जिस दिन अब्र हो उस दिन इशा की नमाज़ जल्द पढ़ना मुस्तहब है।

(दुर्रेमुख़्तार, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़हा–10 व हिदाया जिल्द–1 सफ़हा–51 व शरह नक़ाया सफ़हा–55, किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़हा–293)

मस्अलाः इशा की नमाज़ से पहले सोना और नमाज़े इशा के बाद गैर ज़रूरी गुफ़्तगु मकरूह है।

(शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–55)

(क्योंकि उससे इशा और फ़ज्र की नमाज़ पर असर पड़ सकता है। रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

वित्र का वक़्त

वित्र का वक़्त बाद नमाज़े इशा के है, जो शख़्स आख़िरे शब में उठता हो उसको मुस्तहब है कि वित्र आख़िरे शब में पढ़े और अगर उठने में शक हो तो फिर इशा की नमाज़ के बाद ही पढ़ लेना चाहिए।

(मराक़ियुलफ़लाह, दुर्रेमुख़्तार, इल्मुलफ़िक्ह जिल्द–2 सफ़्हा–10 व हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–50 व शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–53 व कबीरी सफ़्हा–229)

वित्र का वक़्त इशा के बाद से सुब्ह सादिक़ तक है।

ईदैन का वक़्त

ईदैन की नमाज़ का वक़्त आफ़ताब के अच्छी तरह निकल आने के बाद शुरू होता है और ज़वाले आफ़ताब तक रहता है। आफ़ताब के अच्छी तरह निकल आने से मक़्सूद है कि आफ़ताब की ज़रदी जाती रहे और रौशनी ऐसी तेज़ हो जाए कि नज़र न ठहर सके। उसकी तअयीन के लिए फ़ुक़हा ने लिखा है कि बक़द्र एक नेज़े बुलंद हो जाए, ईदैन की नमाज़ का जल्द पढ़ना मुस्तहब है।

(मराक़ियुलफ़लाह शामी, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–10 व हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–119 व शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–128)

नमाज़े जुमा का वक़्त

नमाज़े जुमा का वक़्त जुहर का वक़्त ही है।

(नमाज़ मसनून सफ़्हा–204)

मस्अला: हनफ़ीया (रह.) के नज़दीक नमाज़े जुमा और इदैन में जमाअ़त शर्त है और नमाज़े तरावीह और नमाज़े जनाज़ा में सुन्नते किफ़ाया है और नफ़्ल नमाज़ों में मुतलक़न मकरूह है। और माहे रमज़ान के अलावा वित्र की जमाअ़त, नीज़ नफ़्ल नमाज़ों में तीन आदमियों से ज़्यादा हों तो जमाअ़त मकरूह होगी।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–650 व फ़तावा दारूलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–34)

तफ़सील देखिए अहक़र की मुरत्तब करदा (मसाइले तरावीह) व मसाइले नमाज़े जुमा, (रफ़अ़त)

औक़ाते मकरूह

(1) आफ़ताब निकलते वक़्त जब तक आफ़ताब की ज़रदी न ज़ाएल हो जाए और इस क़दर रौशनी उसमें न आ जाए कि नज़र न ठहर सके, उसका शुमार निकलने में होगा और ये कैफ़ियत आफ़ताब में बाद एक नेज़ा बुलंद होने के आती है।

(2) ठीक दोपहर के वक़्त जब तक आफ़ताब ढल न जाए।

(3) आफ़ताब में सुर्ख़ी आ जाने के बाद गुरूबे आफ़ताब तक।

(4) नमाज़े फ़ज्र पढ़ चुकने के बाद आफ़ताब के अच्छी तरह निकल आने तक।

(5) नमाज़े अस्र के बाद गुरूबे आफ़ताब तक।

(6) फ़ज्र के वक़्त सिवा उस की सुन्नत के।

(7) मग़रिब के वक़्त मग़रिब की नमाज़ से पहले।

(8) जब इमाम ख़ुत्बा के लिए अपनी जगह से उठ खड़ा हो, ख़्वाह वह ख़ुत्बा जुमा का हो या ईदैन का या निकाह का या हज वग़ैरा का।

(9) जब फ़र्ज़ नमाज़ की तकबीर कही जाती हो, हाँ अगर फ़ज्र की सुन्नत न पढ़ी हो और किसी तरह ये यक़ीन हो जाए कि एक रकअ़त जमाअ़त से मिल जाएगी तो फ़ज्र की सुन्नतों का पढ़ लेना मकरूह नहीं।

(10) नमाज़े ईदैन के क़ब्ल ख़्वाह घर में या ईद गाह में।

(11) नमाज़े ईदैन के बाद ईद गाह में।

(12) अरफ़ा में अस्र और ज़ुहर की नमाज़ के दरमियान में और उनके बाद।

(13) मुज़दलिफ़ा में मग़रिब और इशा की नमाज़ के दरमियान में और उनके बाद।

(14) नमाज़ का वक़्त तंग हो जाने के बाद सिवा फ़र्ज़ वक़्त के और किसी नमाज़ का पढ़ना ख़्वाह वह क़ज़ाए वाजिबुत्तरतीब ही क्यों न हो।

(15) पाख़ाना, पेशाब मालूम होते वक़्त या ख़ुरूजे रीह की ज़रूरत के वक़्त।

(16) खाना आ जाने के बाद अगर उसकी तबीअत खाना खाने को चाहती हो, और ख़्याल हो कि अगर नमाज़ पढ़ेगा तो उसमें जी नहीं लगेगा और यही हुक्म है तमाम उन चीज़ों का जिनको छोड़ कर नमाज़ पढ़ने में जी न लगने का ख़ौफ़ हो, हाँ अगर नमाज़ का वक़्त तंग हो तो फिर पहले नमाज़ पढ़ने में कुछ कराहत नहीं।

(तहतावी)

(17) आधी रात के बाद इशा की नमाज़ पढ़ना।

(18) सितारों के बकसरत निकल आने के बाद मग़रिब की नमाज़ पढ़ना।

इन तमाम औक़ात में नमाज़ मकरूह है सिर्फ़ इस क़दर तफ़सील है कि पहले, दूसरे तीसरे, पन्द्रहवें, सोलहवें वक़्त में सब नमाज़ें मकरूह हैं, फ़र्ज़ हों या वाजिब या नफ़्ल और सज्दा तिलावत का हो या सह्व का और पहले तीन वक़्तों में कोई नमाज़ शुरू की जाए तो उसका शुरू करना भी सहीह नहीं, और अगर नमाज़ पढ़ते पढ़ते उनमें से कोई वक़्त आ जाए तो नमाज़ बातिल हो जाती है। मगर हाँ छः चीज़ों का शुरू करना इन तीन वक़्तों में भी सहीह है:

(1) जनाज़ा की नमाज़: बशर्तेकि जनाज़ा उन्हीं तीन वक़्तों में से किसी वक़्त आया हो।

(2) सज्दए तिलावत: बशर्तेकि सज्दा की आयत उन्ही तीन वक़्तों में से किसी वक़्त में पढ़ी गई हो।

(3) उसी दिन की अस्र (4) नफ़्ल नमाज़ (5) वह

नमाज़ जिसके अदा करने की नज़्र उन्हीं तीन वक़्तों में से किसी वक़्त में की गई हो।

(6) उस नमाज़ की क़ज़ा जो उन्हीं वक्तों में से शुरू कर के फ़ासिद कद दी गई हो, जनाज़ा की नमाज़ का शुरू करना बग़ैर कराहत के सहीह बल्कि अफ़ज़ल है और सज्दए तिलावत का शुरू करना कराहते तन्ज़ीही के साथ सहीह है, बाक़ी तीन का शुरू करना कराहते तहरीमा के साथ सहीह है मगर उनको बातिल कर के अच्छे वक़्त में अदा करना वाजिब है। दो वक़्तों में सिर्फ़ नमाज़ों का अदा करना मकरूह है। बाक़ी औक़ात में सिर्फ़ नवाफ़िल का अदा करना मकरूह है, फ़र्ज़ और वाजिब का अदा करना मकरूह नहीं है। दो वक़्तों की नमाज़ों का एक ही वक़्त में पढ़ना जाइज़ नहीं, मगर दो वक़्तों में (1) अरफ़ा में अस्र और जुहर की नमाज़ का जुहर के वक़्त में (2) मुज़दलिफ़ा में मग़रिब और इशा की नमाज़ का इशा के वक़्त में। (शामी, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–14 व हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–53 व शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–57 व कबीरी सफ़्हा–228 किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–296)

मस्अला: अगर फ़ज्र की नमाज़ में आफ़ताब तुलूअ़ हो जाए तो वह फ़ासिद हो गई, और सूरज निकलने और बुलंद होने के बाद फिर सुब्ह की नमाज़ पढ़नी चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–47 रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–346, किताबुस्सलात)

मस्अला: नमाज़े अस्र उस दिन की अगर न पढ़ी हो तो ग़ुरूब के वक़्त अदा हो जाती है। मगर क़सदन ऐसा वक़्त न करना चाहिए कि ये मासियत है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–34, बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–28, किताबुस्सलात)

क्योंकि हदीस शरीफ़ में आया है कि तुलूअ़ व गुरूब के औक़ात में कुफ़्फ़ार सूरज की परस्तिश करते हैं, इसलिए इन वक़्तों में नमाज़ न पढ़ें।

(मिश्कात जिल्द–1 सफ़्हा–94)

चंद इस्तिलाही अलफ़ाज़ के माना

(1) ज़वालः आफ़ताब (सूरज) का ढल जाना जिसे हमारी उर्फ़ में दोपहर ढलना कहते हैं।

(2) साया असलीः वह साया जो ज़वाल के वक़्त बाक़ी रहता है, ये साया हर शहर के एतेबार से मुख़्तलिफ़ होता है, किसी में बड़ा होता है किसी में छोटा और कहीं बिल्कुल नहीं होता, जैसे मक्का मुअज़्ज़मा और मदीना मुनव्वरा में। ज़वाल और साया असली के पहचानने की सहल तदबीर ये है कि एक सीधी लकड़ी हमवार ज़मीन पर गाड़ दें और जहाँ तक उसका साया पहुंचे, उस मक़ाम पर एक निशान बना दें फिर देखें कि वह साया उस निशान के आगे बढ़ता है या पीछे हटता है, अगर आगे बढ़ता है तो समझ लेना चाहिए कि अभी ज़वाल नहीं हुआ और अगर पीछे हटे तो ज़वाल हो गया, अगर यकसाँ यानी बराबर रहे न पीछे हटे और न आगे बढ़े तो ठीक ज़वाल दोपहर का वक़्त है, उसको इस्तवा कहते हैं।

(3) एक मिस्लः साया असली के सिवा जब हर चीज़ का साया उसके बराबर हो जाए।

(4) दो मिस्ल: साया असली के सिवा जब हर चीज़ का साया उससे दोगुना हो जाए।

(5) मुदरिक: वह शख़्स जिसको शुरू से आख़िर तक किसी के पीछे जमाअ़त से नमाज़ मिले उसको मुक़्तदी और मुतम भी कहते हैं।

(6) मसबूक़: वह शख़्स जो एक रकअ़त या उससे ज़्यादा हो जाने के बाद जमाअ़त में आकर शरीक हुआ हो।

(7) लाहिक़: वह शख़्स जो किसी इमाम के पीछे नमाज़ में शरीक हुआ हो, शरीक हो जाने के बाद उसकी सब रकअ़तें या कुछ रकअ़तें जाती रहें ख़्वाह इस वजह से कि वह नमाज़ में सो गया हो या उसका वुज़ू टूट गया हो।

(8) अमले कसीर: वह फ़ेल यानी नमाज़ में वह काम जिसको नमाज़ पढ़ने वाला बहुत समझे, ख़्वाह दोनों हाथों से किया जाए या एक हाथ से और ख़्वाह देखने वाला उस फ़ेल के करने वाले को नमाज़ में समझे या नहीं। एक तारीफ़ ये भी है कि अमले कसीर वह है जिसके करने वाले को देख कर लोग ये समझें कि ये शख़्स नमाज़ में नहीं है।

(9) अमले क़लील: वह फ़ेल जिसको नमाज़ पढ़ने वाला बहुत न समझे।

(10) अदा: वह नमाज़ जो अपने वक़्त पर पढ़ी जाए।

(11) क़ज़ा: वह नमाज़ जो अपने वक़्त में न पढ़ी जाए मसलन ज़ुहर की नमाज़ अस्र के वक़्त पढ़ी जाए।

(इल्मुलफ़िक़्ह अज़ जिल्द–2 सफ़हा–6 ता 8)

जमाअ़त का बयान

चूंकि जमाअ़त से नमाज़ पढ़ना वाजिब या सुन्नते मुअक्कदा है इसलिए उसका ज़िक्र भी नमाज़ के वाजिबात व सुनन के बाद और मकरूहात वग़ैरा से पहले मुनासिब मालूम होता है। जमाअ़त कम से कम दो आदमियों के साथ मिल कर नमाज़ पढ़ने को कहते हैं इस तरह कि एक शख़्स उनमें ताबेअ़ हो और दूसरा मतबूअ़, और ताबेअ़ अपनी नमाज़ के सेहत व फ़साद (सही व ख़राब होने) को इमाम की नमाज़ पर महमूल कर दे, यूँ समझना चाहिए कि जब कुछ लोग किसी बादशाह के दरबार में हाज़िर होते हैं और सब का मतलब एक होता है तो किसी एक को अपनी तरफ़ से वकील कर देते हैं। उस वकील की गुफ़्तगू उन सब की गुफ़्तगू समझी जाती है। मतबूअ़ को इमाम और ताबेअ़ को मुक़्तदी कहते हैं। इमाम के सिवा एक आदमी के नमाज़ में शरीक हो जाने से जमाअ़त हो जाती है, ख़्वाह वह आदमी मर्द हो या औरत, ग़ुलाम हो या आज़ाद हो या नाबालिग़ बच्चा, हाँ जुमा वग़ैरा की नमाज़ में कम अज़ कम इमाम के अलावा दो आदमियों के बग़ैर जमाअ़त नहीं होती।

(बहरुर्राइक़, दुर्रेमुख़्तार, शामी, तफ़सील के लिए देखिए मुकम्मल व मुदल्लल मसाइले नमाज़े जुमा)

जमाअ़त के सहीह होने के लिए ये भी ज़रूरी नहीं कि फ़र्ज़ नमाज़ हो बल्कि अगर नफ़्ल भी दो आदमी उसी तरह एक दूसरे के ताबेअ़ होकर पढ़ें तो जमाअ़त हो

जाएगी ख़्वाह इमाम और मुक़्तदी दोनों नफ़्ल पढ़ते हों या मुक़्तदी नफ़्ल पढ़ता हो।

(शामी, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–73, किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–649)

लेकिन हनफ़ीया (रह.) के नज़दीक नफ़्ल की जमाअ़त दो तीन अफ़राद के साथ तो जाइज़ है तीन से ज़ाइद हों तो मकरूहे तहरीमी है। (रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

जमाअ़त की मुख़्तसर फ़ज़ीलत

जमाअ़त की फ़ज़ीलत और ताकीद में सहीह अहादीस इस कसरत से वारिद हुई हैं कि अगर सब को एक जगह जमा किया जाए तो एक बहुत बड़ी किताब तैयार हो सकती है। उनके देखने से क़तअ़न ये नतीजा निकलता है कि जमाअ़त नमाज़ की तकमील में एक आला दर्जा की शर्त है। नबी करीम (स.अ.व.) ने उसको कभी भी तर्क नहीं फ़रमाया, यहाँ तक कि हालते मरज़ में जब आप (स.अ.व.) को ख़ुद चलने की क़ूवत नहीं थी तो दो आदमियों के सहारे से मस्जिद में तशरीफ़ ले गए और जमाअ़त से नमाज़ पढ़ी। तारिके जमाअ़त पर आप (स.अ.व.) को सख़्त ग़ुस्सा आता था और जमाअ़त के छोड़ देने पर सख़्त से सख़्त सज़ा देने को आप (स.अ.व.) का जी चाहता था।

बेशुब्हा शरीअ़ते मुहम्मदीया (स.अ.व.) में जमाअ़त का बहुत बड़ा एहतिमाम किया गया है और होना भी चाहिए था। नमाज़ जैसी इबादत की शान भी इसी को चाहती

थी कि जिस चीज़ से उसकी तकमील हो वह भी आला दर्जा पर पहुंचा दी जाए।

(1) नबी करीम (स.अ.व.) का फ़रमान कि जमाअत की नमाज़ तन्हा नमाज़ से सत्ताईस दर्जे ज़्यादा सवाब रखती है। (सहीह बुख़ारी, सहीह मुस्लिम)

(2) आँ हज़रत (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि तन्हा नमाज़ पढ़ने से एक आदमी के साथ नमाज़ पढ़ना बहुत बेहतर है और दो आदमियों के हमराह और भी बेहतर है और जिस क़दर जमाअत ज़्यादा होगी उसी क़दर अल्लाह तआला को पसंद है। (अबूदाऊद)

(3) आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि जितना वक़्त नमाज़ के इंतिज़ार में गुज़रता है वह सब नमाज़ में शुमार होता है। (सही बुख़ारी)

अक्सर हनफ़ीया (रह.) के नज़दीक जमाअत सुन्नते मुअक्कदा है, मगर वाजिब के हुक्म में। दरहक़ीक़त हनफ़ीया (रह.) के इन दोनों क़ौलों में कुछ मुख़ालफ़त नहीं है।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–74, मज़ाहिरे हक़ जिल्द–2 सफ़्हा–52, हज्जतुल्लाहिल बालिग़ा सफ़्हा–294)

(4) आप (स.अ.व.) का इरशादे मुबारक है "जमाअत तर्क करना छोड़ दो, वरना अल्लाह तआला दिलों पर मुहर लगा देगा और तुम उनमें से हो जाओगे जिनको अल्लाह तआला ने ग़ाफ़िल क़रार दिया है।

(इब्न माजा मिस्री जिल्द–1 सफ़्हा–260)

(5) एक हदीस में रसूले अकरम (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि "मेरा दिल चाहता है कि जवानों को हुक्म दूँ कि

लकड़ियाँ जमा करें फिर मैं उनके यहाँ पहुंचूँ जो बिला उज़्र अपने घरों में नमाज़ पढ़ते हैं, उन्हें मअ घर वालों के जला दूँ। (अबूदाऊद शरीफ जिल्द–1 सफ्हा–88)

गौर कीजिए! रहमते दो आलम (स.अ.व.) आग लगा देने की सजा उन लोगों के लिए तजवीज़ फ़रमाते हैं जो नमाज़ तो पढ़ते हैं मगर मस्जिद में नहीं आते, घर में पढ़ते हैं। अब गौर फ़रमाईए कि उनकी सज़ा क्या होगी जो नमाज़ ही नहीं पढ़ते।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ्हा–212)

पहले ज़माने के बुजुर्ग एक वक़्त की जमाअत छूट जाने पर इतनी दीनी मुसीबत समझते थे कि सात दिन तक मातम और सोग करते थे और अगर तकबीरे ऊला फ़ौत होती तो तीन दिन तक मामत करते।

(अहयाउलउलूम जिल्द–1 सफ्हा–151)

लिहाज़ा मुसलमानों पर लाज़िम है कि पाँचों वक़्त नमाज़ें जमाअत ही से अदा करें और तकबीर ऊला का सवाब न छोड़ें।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–214)

जमाअत का निज़ाम क्यों है

रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने नमाज़ बा जमाअत का निज़ाम क़ाइम फ़रमाया और हर मुसलमान के लिए जो बीमार या किसी वजह से माज़ूर न हो जमाअत से नमाज़ अदा करना लाज़मी क़रार दिया हैं। इस निज़ामे जमाअत का ख़ास राज़ और उसकी ख़ासुलख़ास हिकमत यही है कि

उसके ज़रीए अफ़रादे उम्मत का रोज़ाना बल्कि हर रोज़ पाँच मरतबा एहतिसाब हो जाता है।

नीज़ तजरबा और मुशहदा है कि इस जमाअ़ती निज़ाम के तुफ़ैल बहुत से वह लोग भी पाँचों वक़्त की नमाज़ पाबंदी से अदा करते हैं जो अज़ीमत की कमी और जज़्बे की कमज़ोरी की वजह से इन्फ़िरादी तौर पर भी कभी ऐसी पाबंदी न कर सकते।

अलावा अज़ीं बा जमाअ़त का ये निज़ाम बजाए ख़ुद अफ़रादे उम्मत उम्मत की दीनी तालीम व तरबियत का और दूसरे के अहवाल से बाख़बरी का एक ऐसा ग़ैर रस्मी और बे तकल्लुफ़ इंतिज़ाम भी है जिसका बदल सोचा भी नहीं जा सकता।

नीज़ नमाज़े जमाअ़त की वजह से मस्जिद में इबादत व इनाबत और तवज्जोह इलल्लाह व दावते सालिहा की जो फ़ज़ा क़ाइम होती है औ ज़िन्दा क़ुलूब पर उसके जो असरात पड़ते हैं और अल्लाह तआला की तरफ़ उसके मुख़्तलिफ़ुलहाल बंदों के क़ुलूब एक साथ मुतवज्जेह होने की वजह से आसमानी रहमतों का जो नुज़ूल होता है और जमाअ़त में अल्लाह तआ़ला के मुक़र्रब फ़रिश्तों की शिकरत की वजह से (जिसकी इत्तिला आँहज़रत (स.अ.व.) ने बहुत सी अहादीस में दी है) नमाज़ जैसी इबादत में फ़रिश्तों की जो मईयत और रिफ़ाक़त नसीब होती है ये सब इसी निज़ामे जमाअ़त के बरकात हैं।

फिर इसके अलावा इस निज़ामे जमाअ़त के ज़रीए उम्मत में जो इजतिमाइयत पैदा की जा सकती है और मुहल्ला की मस्जिद के रोज़ाना पंज वक़्ती इज्तिमाइयत

और पूरी बस्ती की जामा मस्जिद के हफ़्तावार वसीअ़ इज्तिमा और साल में दो दफ़ा ईद गाह के, इससे भी वसीअ़ तर इज्तिमा से जो अज़ीम (हज का) इज्तिमा मिल्ली फ़ाएदे उठाए जा सकते हैं उनका समझना तो आज के हर आदमी के लिए बहुत आसान है। बहरहाल निज़ामे जमाअ़त के इन्ही बरकात और उसके इसी क़िस्म के मसालेह और मनाफ़ेअ़ की वजह से उम्मत के हर शख़्स को उसका पाबंद किया गया है कि जब तक कोई वाक़ई मजबूरी और माज़ूरी न हो तो वह नमाज़ जमाअ़त से अदा करे और जब तक रसूलुल्लाह (स.अ.व.) की हिदायत व तालीमात पर इसी तरह अमल होता था जैसा कि उनका हक़ है, उस वक़्त सिवाए मुनफ़िक़ों या माज़ूरों के हर शख़्स जमाअ़त ही से नमाज़ अदा करता था और इसमें कोताही को निफ़ाक़ की अलामत समझा जाता था।

(मआ़रिफ़ुलहदीस जिल्द–3 सफ़्हा–192 व हज्जतुल्लाहिलबालिग़ा जिल्द–1 सफ़्हा–315 व अरकाने अरबआ़ सफ़्हा–73)

जमाअ़त में ये फ़ाएदा भी है कि तमाम मुसलमानों को एक दूसरे के हाल पर इत्तिला होती रहेगी, और एक दूसरे के दर्द व मुसीबत में शरीक हो सकेंगे, जिससे दीनी उख़ूवत और ईमानी मुहब्बत का पूरा इज़हार व इस्तेहकाम होगा जो इस शरीअ़त का एक बड़ा मक़सूद है और जिसकी ताकीद व फ़ज़ीलत जा बजा क़ुरआन अज़ीम और अहादीसे नबी करीम अलैहिस्सलात वत्तसलीम में बयान फ़रमाई गई है।

(मज़ाहिरे हक़ जिल्द–2 सफ़्हा–52)

जमाअत के वाजिब होने की शर्तें

(1) इस्लाम: काफ़िर पर जमाअत वाजिब नहीं।

(2) मर्द होना: औरतों पर जमाअत वाजिब नहीं।
(बहरुर्राइक, दुर्रेमुख़्तार)

(3) बालिग़ होना: नाबालिग़ बच्चों पर जमाअत वाजिब नहीं। (बहरुर्राइक़)

(4) आक़िल होना: मस्त, बेहोश, दीवाने पर जमाअत वाजिब नहीं। (बहर, दुर्रेमुख़्तार)

(5) आज़ाद होना: गुलाम पर जमाअत वाजिब नहीं।

(6) तमाम उज़रों से ख़ाली होना: उन उज़रों की हालत में जमाअत वाजिब नहीं, मगर अदा करे तो बेहतर है, न अदा करने में सवाबे जमाअत से महरूम रहेगा। (शामी)

तर्के जमाअत के उज़्र पन्द्रह हैं:

(1) नमाज़ के सहीह होने की किसी शर्त का मिस्ल तहारत या सत्रे औरत वग़ैरा के न पाया जाना।

(2) पानी बहुत ज़ोर से बरसता हो। (अगरचे न जाना जाइज़ है मगर बेहतर यही है कि जमाअत में जाकर नमाज़ पढ़े। (रफ़अत कासमी)

(3) मस्जिद में जाने के रास्ता में सख़्त कीचड़ हो। सर्दी सख़्त हो कि बाहर निकलने में या मस्जिद तक जाने में किसी बीमरी के पैदा हो जाने या बढ़ जाने का ख़ौफ़ हो।

(4) मस्जिद जाने में माल व असबाब के चोरी हो जाने का ख़ौफ़ हो।

(5) मस्जिद जाने में किसी दुश्मन के मिल जाने का ख़ौफ़ हो।

(6) मस्जिद जाने में किसी कर्ज़ख़्वाह के मिलने का और उससे तकलीफ़ पहुंचने का ख़ौफ़ हो। बशर्तेकि उसका कर्ज़ अदा करने पर क़ादिर न हो, अगर क़ादिर हो तो वह ज़ालिम समझा जाएगा, और उसको जमाअ़त छोड़ने की इजाज़त न होगी।

(7) अंधेरी रात हो कि रास्ता न दिखाई देता हो।

(8) रात का वक़्त हो, और आँधी बहुत चल रही हो।

(9) किसी मरीज़ की तीमारदारी करता हो कि उसके जाने से मरीज़ की तकलीफ़ बढ़ जाने या वहशत का ख़ौफ़ हो और कोई दूसरा भी न हो तो।

(10) खाना तैयार है और भूक सख़्त लगी हो तो नमाज़ में तबीअ़त न लगने का ख़ौफ़ हो।

(11) पेशाब या पाख़ाना मालूम होता हो।

(12) सफ़र का इरादा रखता हो और ख़ौफ़ हो कि जमाअ़त से नमाज़ पढ़ने में देर हो जाएगी और क़ाफ़िला निकल जाएगा। (रेल के मस्अला को इस पर क़यास न करेंगे जबकि ज़्यादा मजबूरी हो, वरना दूसरी रेल से भी जा सकता है।)

(13) फ़िक़्ह वग़ैरा के पढ़ने पढ़ाने में ऐसा मशग़ूल रहता हो कि बिल्कुल फ़ुरसत न मिलती हो, बशर्तेकि कभी कभी बिला क़स्द जमाअ़त तर्क हो जाए।

(14) कोई ऐसी बीमारी हो जिसकी वजह से चल फिर न सके, या नाबीना हो।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द-2 सफ़्हा-82, किताबुलफ़िक़्ह

जिल्द–1 सफ़हा–684 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़हा–58, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़हा–488)

मस्अला: हर आकिल, बालिग़, गैर माजूर पर जमाअत वाजिब है, लेकिन अगर कोई शख़्स माजूर हो, यानी ऐसा उज़्र लाहिक़ हो जिसकी वजह से वह मस्जिद में जाकर जमाअत में शरीक नहीं हो सकता तो उसके लिए जमाअत वाजिब नहीं रहती, चुनांचे फुक़हाए किराम (रह.) ने तर्के जमाअत के ये उज़्र बयान किए हैं।

(मज़ाहिरे हक़ जिल्द–2 सफ़हा–52)

जमाअत के अह्काम

जमाअत शर्त है, जुमा और ईदैन की नमाज़ों में।

(बह्रुर्राइक़, दुर्रेमुख़्तार)

जमाअत वाजिब है पंज वक़्ती नमाज़ों में ख़्वाह घर में पढ़ी जाऐं या मस्जिद में बशर्तेकि कोई उज़्र न हो, और तर्के जमाअत के उज़्र पन्द्रह हैं जो बयान किए जा चुके हैं। जमाअत सुन्नते मुअक्दा है, नमाज़े तरावीह में अगरचे एक कुरआन करीम जमाअत के साथ हो चुका हो और नमाज़े कुसूफ़ (सूरज गहन) के लिए भी। (बह्रुर्राइक़) जमाअत मुस्तहब है रमज़ानुलमुबारक में वित्र में।

जमाअत मकरूह तंज़ीही है सिवा रमज़ान के और किसी और ज़माना में वित्र में, उसके मकरूह होने में ये शर्त है कि मुवाज़बत (पाबंदी) की जाए और अगर मुवाज़बत न की जाए बल्कि कभी कभी दो तीन आदमी मिल कर जमाअत से पढ़ लें तो ये मकरूह नहीं है।

(तफ़सील देखिए मुकम्मल मुदल्लल मसाइले तरावीह बाबुल वित्र)

जमाअत मकरूहे तहरीमी है नमाज़े ख़ुसूफ़ (चांद गहन) में और तमाम नवाफ़िल में बशर्तेकि इस एहतेमाम से अदा की जाऐं जिस एहतेमाम से फ़राइज़ की जमाअत होती है, यानी अज़ान व इक़ामत के साथ या और किसी तरीक़े से लोगों को जमा कर के, हाँ अगर बग़ैर बुलाए हुए दो तीन आदमी जमा होकर किसी नफ़्ल को जमाअत से पढ़ लें तो कुछ हरज नहीं है, और ऐसा ही मकरूहे तहरीमी है हर फ़र्ज़ को दूसरी जमाअत से मस्जिद में इन चार शर्तों से:

(1) मस्जिद मुहल्ला की हो आ़म रह गुज़र पर न हो।

(2) पहली जमाअ़त बुलंद आवाज़ से अज़ान और इक़ामत कह कर पढ़ी गई हो।

(3) पहली जमाअ़त उन लोगों ने पढ़ी हो जो उस मुहल्ले में रहते हों और जिनको उस मस्जिद के इंतिज़ामात का इख़्तियार हासिल है।

(4) दूसरी जमाअ़त उसी हैअत और एहतेमाम से अदा की जाए जिस हैअत और एहतेमाम से पहली जमाअ़त अदा की गई है। अगर दूसरी जमाअ़त मस्जिद में अदा न की जाए बल्कि घर में, तो फिर मकरूह नहीं है। इसी तरह अगर कोई शर्त इन चार शर्तों में से न पाई जाए मसलन मस्जिद आ़म रह गुज़र पर हो मुहल्ले की न हो तो उसमें दूसरी बल्कि तीसरी चौथी जमाअ़त भी मकरूह नहीं है। या पहली जमाअ़त बुलंद आवाज़ से अज़ान और इक़ामत कह कर न पढ़ी गई हो तो दूसरी जमाअ़त

मकरूह नहीं है। या पहली जमाअ़त उन लोगों ने पढ़ी हो जो उस मुहल्ले में नहीं रहते न उनको मस्जिद के इंतिज़ामात का इख़्तियार हासिल है, या दूसरी जमाअ़त उस हैअत से न अदा की जाए जिस हैअत से पहली जमाअ़त का इमाम वहाँ से हट कर खड़ा हो तो हैअत बदल जाएगी और ये जमाअ़त मकरूह न होगी।

(रद्दुलमुहतार, इल्मुलफ़िक्ह जिल्द–2 सफ़्हा–90 ता 91)

मस्अला: कअ़बा के अन्दर और उसकी सतह पर नमाज़ पढ़ना क़तअ़न सही है, अलबत्ता कअ़बा के ऊपर छत पर नमाज़ पढ़ना मकरूह है क्योंकि इसमें बेअदबी है।

(किताबुलफ़िक्ह जिल्द–1 सफ़्हा–326)

मस्अला: अगर मुक़्तदी इमाम के साथ किसी भी हिस्सा में शरीक हो जाए, तो जमाअ़त मिल गई, अगरचे वह सिर्फ़ क़अ़दए अख़ीरा में इमाम के सलाम फेरने से पहले शामिले जमाअ़त हुआ हो, यानी अगर इमाम के सलाम फेरने से पहले किसी ने तकबीर तहरीमा कह ली तो उसको जमाअ़त मिल गई, अगरचे इमाम के साथ खड़े होने का मौक़ा न मिला हो।

जमाअ़त का सवाब तो मिल जाएगा लेकिन जितना सवाब तकबीरे ऊला में शरीक होने का है वह नहीं मिलेगा।

(किताबुलफ़िक्ह जिल्द–1 सफ़्हा–298)

मस्अला: पहला सलाम फेरने से पहले जो इमाम के साथ शामिले जमाअ़त हो गया तो वह जमाअ़त का पाने वाला क़रार दिया जाएगा लेकिन जब तक इमाम के साथ रुकूअ़ में (तकबीर पूरे तौर पर खड़े होकर कह कर) शामिल न हो वह रकअ़त नहीं पाएगा।

(किताबुलफ़िक्ह जिल्द–1 सफ़हा–709)

जमाअत के हासिल करने का तरीक़ा

(1) अगर कोई शख़्स अपने मुहल्ले या मकान के क़रीब मस्जिद में ऐसे वक़्त पहुंचा कि वहाँ जमाअत हो चुकी हो तो उसको मुस्तहब है कि दूसरी मस्जिद में बतलाशे जमाअत जाए और ये भी इख़्तियार है कि अपने घर में वापस आकर घर के आदमियों को जमा कर के जमाअत करे। (शामी, वग़ैरा)

(2) अगर कोई शख़्स अपने घर में फ़र्ज़ नमाज़ तन्हा पढ़ चुका हो उसके बाद देखे कि वही फ़र्ज़ जमाअत से हो रहा है तो उसको चाहिए कि जमाअत में शरीक हो जाए बशर्तेकि ज़ुहर या इशा का वक़्त हो, फ़ज्र, अस्र, मग़रिब के वक़्त शरीके जमाअत न हो, इसलिए कि फ़ज्र, अस्र की नमाज़ के बाद नमाज़ मकरूह है चुनांचे औक़ाते नमाज़ के बयान में ये मस्अला गुज़र चुका और मग़रिब के वक़्त इसलिए कि ये दूसरी नमाज़ नफ़्ल होगी और नफ़्ल में तीन रकअत मनकूल नहीं। (शरह वक़ाया वग़ैरा)

(3) अगर कोई शख़्स फ़र्ज़ नमाज़ शुरू कर चुका हो और ऐसी हालत में वह फ़र्ज़ जमाअत से होने लगे तो उसको चाहिए कि फ़ौरन नमाज़ तोड़ कर जमाअत में शरीक हो जाए बशर्तेकि अगर फ़ज्र की नमाज़ हो तो दूसरी रकअत का सज्दा न किया हो, और अगर किसी और वक़्त की नमाज़ हो तो तीसरी रकअत का सज्दा न किया हो, अगर फ़ज्र के वक़्त दूसरी रकअत का सज्दा

कर चुका हो या और किसी वक़्त तीसरी रकअ़त का सज्दा कर चुका हो तो फिर उसको नमाज़ तमाम कर देना चाहिए, नमाज़ तमाम कर देने के बाद अगर जमाअ़त बाक़ी हो और जुहर इशा का वक़्त हो तो शरीके जमाअ़त हो जाए।

अगर अस्र, मग़रिब के वक़्त सिर्फ़ पहली या दूसरी रकअ़त का भी सज्दा कर चुका हो तो दो रकअ़त पढ़ कर सलाम फेर देना चाहिए नमाज़ न तोड़ना चाहिए।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–98)

मस्अला: मुहल्ला की मस्जिद में नमाज़ पढ़ना उस मस्जिद से अफ़ज़ल है जिसमें लोग ज़्यादा जमा होते हों क्योंकि मुहल्ला की मस्जिद का वहाँ के रहने वालों पर हक़ होता है, लिहाज़ा चाहिए कि उसका हक़ अदा किया जाए और उसको आबाद किया जाए (नमाज़ें पढ़ कर।)

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–14 सफ़्हा–105)

नमाज़ के पाबंद बनने का तरीक़ा

मस्अला: तारिके नमाज़ की वईदों में ग़ौर किया करे। रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने ऐसे शख़्स (नमाज़ छोड़ने वाले) को काफ़िर फ़रमाया है, ख़्वाह तावील ही से फ़रमाया हो और ऐसे शख़्स का दोज़ख़ में जाना, फिर फ़िरऔन, हामान, क़ारून के साथ जाना, इरशाद फ़रमाया है। और क़यामत में सब से पहले नमाज़ ही की पूछ होगी, दोज़ख़ के हालात पढ़ा और सुना करे, इंशाअल्लाह नमाज़ से बेपरवाही जाती रहेगी। नमाज़ छूटने पर कुछ (माली व

बदनी) जुरमाना अपने नफ़्स पर मुक़र्रर कर लें, न तो बहुत कम हो कि नफ़्स को कुछ नागवार ही न हो, और न बहुत ज़्यादा कि उसका अदा करना मुश्किल हो जाए, जब नमाज़ तर्क हो जाए तो वह जुरमाना मसाकीन को दे दिया करें और ये सूरत जुरमाना की सुन्नत के मुवाफ़िक़ है। या बदनी जुरमाना मुक़र्रर कर लें कि अगर एक नमाज़ फ़ौत हो जाए तो उसको क़ज़ा पढ़ने के साथ और बीस रकआत नफ़्ल पढ़ लें, उससे नफ़्स दो या तीन दफ़ा में ही ठीक हो जाएगा। या एक नमाज़ अगर क़ज़ा हो तो एक वक़्त का खाना न खाएँ और अगर दो क़ज़ा हों तो दो वक़्त का न खाएँ, चूंकि नफ़्स पर ये बहुत शाक़ होगा और बहुत जल्दी नमाज़ का पाबंद हो जाएगा।

(अगलातुलअवाम सफ़्हा—66)

कैसी टोपी से नमाज़ पढ़ना चाहिए

मस्अला: जिस टोपी को पहन कर आदमी शुरफ़ा की महफ़िल में जा सके, उसके साथ नमाज़ पढ़ना और पढ़ाना जाइज़ है।

मस्अला: चमड़े की टोपी ओढ़ना मुबाह है और उसमें नमाज़ पढ़ना जाइज़ है।

मस्अला: मस्जिदों में जो टोपियाँ रखी जाती हैं अगर वह साफ़ सुथरी और उमदा हों तो उनको पहन कर नमाज़ पढ़ना सहीह है और अगर वह फटी पुरानी या मैली कुचैली हों जिनको पहन कर आदमी कारटून नज़र आने लगे तो उनके साथ नमाज़ मकरूह है, क्योंकि

उनको पहन कर आदमी किसी संजीदा महफ़िल में नहीं जा सकता। लिहाज़ा अहकमुलहाकिमीन के दरबार में उनको पहन का हाज़िरी देना ख़िलाफ़े अदब है।

मस्अला: जुराबें (मोज़े) पहन कर नमाज़ अदा करना सहीह है। (आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़हा–311) (अगर मोज़ों में टख़ने भी छिप जाऐं तो कोई हरज नहीं)

(रफ़अत क़ासमी)

मस्अला: कागज़ की टोपी से नमाज़ सहीह है, लेकिन अगर ये टोपी ऐसी है कि जिसको ओढ़ कर बिरादरी व ख़ानदान और बाज़ार वग़ैरा में जाते हुए उसको शर्म आती हो तो मकरूह है।

(फ़तावा दारुलउलूम क़दीम जिल्द–1 सफ़हा–57)

मस्अला: तौलिया व रूमाल टोपी पर बाँधना मकरूह नहीं है। यानी अमामा के तौर पर बाँधना और नमाज़ उससे मकरूह न होगी बल्कि इतलाक़ उसका अमामा पर आएगा और बाँधने वाला मुस्तहिक़्क़े सवाब होगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–95)

मस्अला: टोपी से इमामत दुरुस्त है कुछ कराहत नहीं है, अलबत्ता अमामा के साथ नमाज़ पढ़ना और इमामत करना अफ़ज़ल है और सवाब ज़्यादा है लेकिन टोपी भी मकरूह नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–97, गुनिया सफ़हा–337)

मस्अला: पगड़ी का पेंच अगर माथे पर आ जाए तो उससे सज्दा अदा हो जाएगा, लेकिन अगर माथे के ऊपर पगड़ी का पेंच हो और पेशानी को ज़मीन पर टिकने न दे,

पेशानी ऊपर उठी रहे तो सज्दा अदा न होगा।

(कबीरी सफ़्हा–287)

मस्अला: जालीदार टोपी से अगर छोटे छोटे सूराख़ों से सर नज़र आता हो तो उस से नमाज़ में कोई ख़राबी नहीं। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–10 सफ़्हा–259)

मस्अला: फ़ौजी टोपी पहन कर नमाज़ हो जाती है। लिबास और टोपी में कोई ख़ास तरीक़ और वज़ा मामूर बिही नहीं है बल्कि जैसे जिस मुल्क की आदत और रिवाज हो उसके मुवाफ़िक़ लिबास और टोपी वग़ैरा पहनना दुरुस्त है। हदीस शरीफ़ में है जो चाहो खाओ और जो चाहो पहनो मगर हराम से बचो और तकब्बुर व इसराफ़ न करो। फ़ौजी टोपी पर जानदार की तस्वीर न होनी चाहिए। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–102)

मस्अला: जालीदार टोपी के साथ नमाज़ पढ़ना मकरूह नहीं है, जो कपड़ा मर्दों को पहनना मुबाह है अगर वह जालीदार हो तो उसकी टोपी से नमाज़ पढ़ना दुरुस्त है और इस्तेमाल उसका इस तरीक़ा पर कि कश्फ़े औरत न हो दुरुस्त है, यानी जालीदार कपड़े से नमाज़ दुरुस्त है, लेकिन जो हिस्सा छिपाना ज़रूरी है वह न ज़ाहिर हो।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–109)

मस्अला: कसीफ़ और बारीक कपड़े में नमाज़ दुरुस्त है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–128)

मर्दों की नमाज़ जब कि सत्रे औरत न नज़र आए, दुरुस्त है। (रफ़अ़त क़ासमी)

मस्अला: आजिज़ी के तौर पर नंगे सर नमाज़ पढ़ने से कोई कराहत नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–94, रद्दुलमुहतार सफ़हा–599)

मस्अला: बग़ैर टोपी के बरहना सर अगर काहिली या लापरवाही से नमाज़ पढ़ेगा तो मकरूह (तंज़ीही) होगी, अगर टोपी मुयस्सर न आए या इज्ज़ व इन्किसारी, नियाज़ मंदी व तज़र्रोअ़ से पढ़ेगा तो दुरुस्त होगी।

(नमाज़ मसनून सफ़हा–269, बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–11 सफ़हा–66, आलमगीरी जिल्द–1 सफ़हा–105)

नमाज़ में टोपी गिर जाए तो क्या करे?

मस्अला: नमाज़ में क़याम या रुकूअ़ की हालत में गिरी हुई टोपी उठा कर पहनना जाइज़ नहीं है। अमले कसीर शुमार होगा जिसकी वजह से नमाज़ टूट जाएगी, अलबत्ता सज्दा की हालत में सर के सामने गिरी हुई टोपी अमले क़लील के साथ मसलन एक हाथ से लेकर पहन ली तो इजाज़त है, बल्कि अफ़ज़ल है, इससे नमाज़ में ख़राबी नहीं आएगी।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़हा–378, शामी जिल्द–1 सफ़हा–600, कबीरी सफ़हा–419)

कौन से लिबास में नमाज़ जाइज़ है?

मस्अला: जिस लिबास में बाहर निकलना, बाज़ार जाना, शादी व ग़मी की मजालिस में शिरकत करना पसंद न करता हो, मायूब समझता हो, उस लिबास को पहन कर

नमाज़ पढ़ना मकरूह है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–375, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–599, फ़तावा महमूदिया जिल्द–4 सफ़्हा–268)

मस्अला: बदन के जिस हिस्सा को छिपाना फ़र्ज़ है, अगर वह छिपा रहे तब भी ऐसा लिबास पहन कर नमाज़ पढ़ना जिसको पहन कर आदमी मुअ़ज़्ज़ज़ मजलिस में न जा सकता हो वह मकरूह है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–14 सफ़्हा–206, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–585)

मस्अला: तन्हाई में भी बरहना यानी नंगे होकर बग़ैर कपड़ों के लिबास होते हुए नमाज़ जाइज़ नहीं है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–10 सफ़्हा–464)

मस्अला: सिर्फ़ तहबंद में कुरते के बग़ैर, सिर्फ़ बनयान या सदरी वग़ैरा से मर्दों के लिए नमाज़ दुरुस्त है, बशर्तेकि नाफ़ से घुटने तक का हिस्सा बरहना न हो वरना नमाज़ नहीं होगी। (नमाज़ मसनून सफ़्हा–268)

मस्अला: अबा, जुब्बा के अन्दर असतीन में बग़ैर हाथ डाले हुए नमाज़ मकरूह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–123, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–598)

मस्अला: चोरी के कपड़े जो क़ीमतन लिए गए हैं, उनमें सहीह है, मगर जान बूझ कर चोरी के कपड़े ख़रीदना न चाहिए, और चोरी के कपड़ों से नमाज़ नहीं पढ़नी चाहिए और अगर नमाज़ पढ़ी तो नमाज़ हो गई।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–36, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–180)

मस्अला: रिश्वत के पकड़ों से नमाज़ हो जाती है मगर वह शख़्स गुनहगार और फ़ासिक़ है, यानी हराम की कमाई के कपड़ों से नमाज़ पढ़ना मकरूह है, लेकिन नमाज़ अदा हो जाती है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–48, बहवाला रद्दुलतुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–354)

मस्अला: जेब में नापाक चीज़ रख कर नमाज़ नहीं होती, अगर पढ़ ली तो उस नमाज़ को दोबारा पढ़ना चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–42, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–292)

मस्अला: अगर नमाज़ की हालत में (मर्दों का) गिरेबान खूला रहे तो उससे नमाज़ मकरूह नहीं होती।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–10 सफ़्हा–278, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–430, इमदादुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–432)

मस्अला: औरतों को धोती (साड़ी वग़ैरा) बाँधना और धोती से नमाज़ पढ़ना दुरुस्त है ग़र्ज़े कि परदा पूरा होना चाहिए, धोती हो या पाजामा इसकी कुछ खुसूसियत नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–111)

सत्रे औरत यानी बदन का छिपाना ख़्वाह पाजामे से हो ख़्वाह साड़ी से दोनों बराबर हैं, ये समझना सहीह नहीं है कि ये ग़ैर मुस्लिमों का लिबास है, बल्कि मुल्क के बाज़ हिस्सों में मुसलमान औरतों का भी यही लिबास है जिस तरह पाजामा पहनने वाले एलाक़ों में मुसलमानों की तरह ग़ैर मुस्लिम भी बकसरत शलवार, पाजामा पहनते हैं ग़र्ज़े कि जिस क़पड़े से बदन छिप जाए और हर उस

लिबास से नामज़ हो जाती है जिसको पहन कर आम व ख़ास मजालिस में शिरकत कर सकता हो।

(रफ़अत क़ासमी)

मस्अलाः क़ौमे नसारा के मुस्तअमल कपड़ों में नमाज़ पढ़ने को जाइज़ लिखा है, फुक़हा ने सिवाए पाजामा और इज़ार के कि उसका नजिस होना बज़न्ने ग़ालिब है और धो लेना हर एक कपड़े का अहवत है, ख़ुसूसन इज़ार व पाजामा वग़ैरा का धोना ज़्यादा ज़रूरी है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–126, शामी जिल्द–1 सफ़हा–324)

मस्अलाः तस्वीर वाले कपड़ों में नमाज़ अगर जानदार की तस्वीर है तो न होगी, अगर ग़ैरजानदार की होगी तो नमाज़ हो जाएगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–1 सफ़हा–137, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़हा–605)

मस्अलाः नोट, करन्सी या पासपोर्ट, शनाख़्ती कार्ड वीज़ा पर तस्वीर मजबूरी और इज़तिरारी हालत में है, उसका गुनाह उन पर होगा जो ऐसा क़ानून बनाने के ज़िमादार हैं।

(शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़हा–196, कबीरी सफ़हा–354)

मस्अलाः मैले कपड़ों में नमाज़ मकरूह नहीं है बशर्ते कि वह पाक हों।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–139, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़हा–599)

मस्अलाः रुपये, नोट और पासपोर्ट, कार्ड वग़ैरा पर तस्वीर होती है, उससे नमाज़ में कोई ख़राबी नहीं आती,

जेब में रख कर नमाज़ पढ़ सकते हैं। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़हा–184, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–147, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़हा–607)

मस्अला: कुहनी तक आस्तीन चढ़ा कर नमाज़ पढ़ना और कुहनी तक आधी आस्तीन वाले कमीज़ व शर्ट वग़ैरा पहन कर नमाज़ पढ़ना मना है। इससे नमाज़ मकरूह होती है, अगर वुज़ू करते वक़्त आस्तीन चढ़ाई हुई हो और जमाअत में शिरकत करने के लिए जल्दी में आस्तीन चढ़ी हुई रह गई हों तो नमाज़ में एक हाथ से आहिस्ता आहिस्ता उतारे (थोड़ी थोड़ी) इस तरह न उतारे कि अमले कसरी हो जाए यानी दोनों हाथ इस्तेमाल न करे कि जिससे मालूम हो कि नमाज़ नहीं पढ़ रहा है तो इस सूरत में नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। ये भी ख़्याल रखिए कि गर्मी और पसीना की वजह से नमाज़ की हालत में आस्तीन चढ़ाना अमले कसीर है, इससे नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़हा–41, शामी जिल्द–1 सफ़हा–599, वफ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़हा–241 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–10 सफ़हा–262)

मस्अला: कुहनियाँ खुली हों तो नमाज़ हो जाती है मगर ये ख़िलाफ़े सुन्नत है और मकरूह है यानी जबकि कपड़ा मौजूद हो, और अगर न हो तो कुछ कराहत नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–100, आलमगीरी जिल्द–1 सफ़हा–105)

मस्अला: जेब में रिश्वत के पैसे रख कर नमजा तो हो जाती है और नमाज़ में कराहत इस वजह से नहीं है कि रिश्वत का गुनाह अलाहिदा है और अगर कपड़ा बदन

पर रिश्वत (हराम मकाई) के रूपये से बना हुआ है तो उससे नमाज़ मकरूह है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–102) जिस तरह मग़सूबा ज़मीन में नमाज़ मकरूह है। (रद्दुलमहतार जिल्द–1 सफ़्हा–384)

मस्अला: नमाज़ कोट पैंट में अगर ये कपड़े पाक हों तो नमाज़ हो जाती है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–34, बहवाला रद्दुलमूहतार जिल्द–1 सफ़्हा–273)

मस्अला: रेशमी कपड़ा और सोना बेशक मर्दों के लिए हराम है और नमाज़ जो उनसे पढ़ी गई वह सहीह है मगर ज़ाहिर है कि जबकि इस्तेमाल रेशम और सोने का मर्दों को हर वक़्त हराम है तो नमाज़ में भी हराम है मगर चूंकि वह दोनों नापाक नहीं हैं इसलिए नमाज़ हो गई।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–147, अलअशबाह जिल्द–1 सफ़्हा–197)

मस्अला: बाज़ारी लट्ठा व मलमल वग़ैरा से नमाज़ दुरुस्त है यानी नए कपड़ों से बग़ैर धोए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–133, बहलवाला अलअशबाह सफ़्हा–75)

मस्अला: अगर तम्बाकू में कोई नजिस चीज़ नहीं है तो उसके पास रखने से नमाज़ हो जाती है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–1 सफ़्हा–107)

मस्अला: मज़ी नजिस है, जिस कपड़े को मज़ी लगेगी वह नजिस है उससे नमाज़ पढ़ना दुरुस्त नहीं है और मिक़दारे दिरहम उसमें भी मआफ़ है लेकिन धोना उसका भी ज़रूरी है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–133, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–291)

मस्अला: नमाज़ में टख़नों से नीचे पाजामा (वग़ैरा) लटकाकर नमाज़ पढ़ना मकरूह है। सवाब से महरूम रहेगा, नमाज़ के अलावा भी टख़नों से ऊपर रखना ज़रूरी है। हदीस में ऐसे शख़्स के लिए बड़ी वईद आई है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–127, मिश्कात शरीफ़ किताबुललिबास)

मस्अला: नमाज़ में बिला ज़रूरत सज्दा में जाते हुए पाजामा ऊपर करना ख़िलाफ़े अदब है, ऐसा करना अच्छा नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–105, रद्दुलमुहतार सफ़्हा–598 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–7 सफ़्हा–282)

मस्अला: नमाज़ में बार बार पाजामा को उठाना अच्छा नहीं है मगर नमाज़ सहीह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–108 व हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–124)

मस्अला: अगर कोई शख़्स सज्दा में जाते वक़्त अपने पाजामे को ऊपर खींचता है और सज्दा से उठने के बाद अपने क़मीज़ के पीछे के दामन को नीचे करता है तो ऐसी हरकत और आदत यक़ीनन मकरूह है और बईद नहीं कि फ़ेले कसीर होकर मुफ़सिदे नमाज़ हो जाए, लिहाज़ा इस आदत से एहतेराज़ लाज़िम है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–379)

अगर कभी इत्तिफ़ाक़न हो जाए तो कोई हरज नहीं, आदत बनाना ग़लत है। और अगर अमले कसीर होगा तो

नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। (रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अला: नमाज़ की हालत में कुर्ता (शर्ट वग़ैरा) और टोपी का निकालना और पहनना अगर अमले यसीर से हो यानी एक हाथ से और इस तौर से हो कि देखने वाला उस नमाज़ी को ये ख़्याल न करे कि ये नमाज़ में नहीं है तो मकरूह है, और अगर अमले कसीर से हो तो मुफ़सिदे नमाज़ है। और इज़ार बंद और तहबंद वग़ैरा बाँधना बग़ैर दोनों हाथ के बज़ाहिर दुश्वार है। लिहाज़ा अमले क़सीर है और मुफ़सिदे नमाज़ होगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–100, रद्दुलमुहतार सफ़्हा–583)

मस्अला: अगर एक हाथ से दुरुस्त होना मुमकिन न हो तो नमाज़ को तोड़ कर दोनों हाथों से तहबंद बाँध कर फिर शरीके जमाअत हो जाए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–42)

मस्अला: जूता अगर पाक हो यानी उसको नजासत न लगी हो, या लगी हो तो पाक व साफ़ कर लिया गया हो, तो दोनों सूरतों में नमाज़ उसको पहन कर दुरुस्त है, लेकिन चूंकि इस ज़माने में मसाजिद में फ़र्श चटाईयाँ सफ़ें वग़ैरा होती हैं और जूता पहन पर मसाजिद में जाने से फ़र्श मिट्टी वग़ैरा के साथ मलौवस होने का एहतेमाल है और नीज़ उसमें बेअदबी भी मालूम होती है इसलिए मस्जिद में जूता पहन कर नमाज़ न पढ़े।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–120, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–615, बाबु अहकामिल मसाजिद)

मस्अला: अगर जूता पाक है तब भी ये एहतेरामे मस्जिद

के ख़िलाफ़ है, ईदगाह में अगर घास पर नमाज़ पढ़ी जाए तो वहाँ तवस्सोअ है मगर फ़ितना से बचना चाहिए।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–67)

नमाज़ में कपड़ों और दाढ़ी पर हाथ फेरना

सवाल: इमाम साहब नमाज़ शुरू करने के बाद अपना हाथ दाढ़ी और मुंह पर फेरते रहते हैं और बार बार अपना कुर्ता, पाजामा दुरुस्त करते हैं इसका क्या हुक्म है?

जवाब: इमाम को ऐसी फ़ुज़ूल हरकतों से एहतेराज़ करना चाहिए इनसे नमाज़ कमरूह होती है। और अमले कसीर होकर नमाज़ के फ़साद की भी नौबत आ जाती है, लिहाज़ा ऐसे अफ़आले अबस से इमाम और नमाज़ियों को बचना ज़रूरी है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–374 व कबीरी सफ़्हा–337)

मस्अला: नमाज़ निहायत खुशूअ व खुज़ूअ और तवज्जोह के साथ पढ़ना चाहिए, बिला ज़रूरत बदन खुजाना, बदन पर हाथ फेरते रहना मकरूहे तहरीमी है।

(फ़ताव रहीमिया जिल्द–7 सफ़्हा–290 व अग़लातुल अवाम सफ़्हा–59)

नमाज़ में सोने चाँदी का इस्तेमाल करना

मस्अला: मर्दों के लिए नमाज़ वग़ैरा में सोने चाँदी का इस्तेमाल नाजाइज़ और हराम है, सिर्फ़ साढ़े चार माशा चाँदी की अंगूठी पहनने की गुंजाईश है, सोने की

नाजाइज़ है, सोना, चाँदी और उससे बने हुए ज़ेवरात और रुपये सिक्के जेब में रख कर नमाज़ पढ़ने में हरज नहीं, जाइज़ है, और अगर घड़ी में एक दो पुर्ज़े चाँदी के हों और बाक़िया दूसरी धात के हों तो हरज नहीं है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–184, आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–310)

नापाक कपड़े का नमाज़ी से लग जाना?

सवालः एक शख़्स अपने घर में नमाज़ पढ़ रहा है उसके क़रीब एक कपड़ा नापाक पड़ा हुआ है, जब रुकूअ या सज्दा में जाता है तो वह कपड़ा उसके जिस्म के किसी हिस्सा से छू जाता है, ऐसी सूरत में उसकी नमाज़ दुरुस्त है या नहीं?

जवाबः "حامدًا ومصليًا" अगर एक रुक्न की मिक़्दार तक उसके बदन से मुत्तसिल (मिला हुआ) नहीं रहता है बल्कि छू कर फ़ौरन जुदा हो जाता है तो नमाज़ दुरुस्त है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–205)

मस्अलाः नमाज़ी के सामने जूते हों तो नमाज़ हो जाती है। जूतों पर अगर नजासत लगी हुई हो तो उनको साफ़ कर के मस्जिद में लाना चाहिए।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–183)

मस्अलाः अगर बदन या कपड़े पर इतनी नजासत लगी हो जो नमाज़ से मानेअ हो तो नमाज़ नहीं होगी। अगर भूले से नमाज़ शुरू कर दी और नमाज़ में याद आया तो फ़ौरन नमाज़ को छोड़ दे और नजासत को दूर

कर के दोबारा पढ़े। और अगर नमाज़ पढ़ने के बाद याद आया तब भी दोबारा नमाज़ पढ़े।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–308)

मस्अलाः मुलाज़िमे हस्पताल जबकि कपड़ों पर नापाकी छींटें आती रहती हों तो नापाक कपड़े बदल कर दूसरा पाक कपड़ा पहन कर नमाज़ पढ़े।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–141, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–373)

मस्अलाः बाज़ नादानों से जब नमाज़ पढ़ने के लिए कहा जाता है तो कहते हैं कि कपड़े धुलने गए हैं, जुमा के दिन आऐंगे तब से शुरू करेंगे, और बाज़ तो इससे भी बढ कर हैं, कहते हैं कि अब की ईद से शुरू करेंगे। शायद उनके पास कोई परवाना आ गया है कि जुमा या ईद तक ये ज़िन्दा भी रहेंगे?

(दवाउलउयूब सफ़्हा–23, अग़लातुलअवाम सफ़्हा–58)

मस्अलाः बाज़ लोग नमाज़ ऐसे पढ़ते हैं कि न कपड़े की ख़बर कि ऐसा छोटा कपड़ा तहबंद वग़ैरा बाँधते हैं कि रुकूअ व सज्दा में सत्र (वह हिस्सा जिसका छिपाना ज़रूरी होता है) खुल जाता है। अगर चौथाई घुटना ही खुल गया (और एक रुक्न की मिक़्दार खुला रहा) तो नमाज़ नहीं होगी, मगर इसकी कुछ परवाह नहीं करते।

(अग़लातुलअवाम सफ़्हा–59)

मुक़्तदी और इमाम के मुतअल्लिक़ मसाइल

(1) मुक़्तदियों को चाहिए कि तमाम हाज़िरीन में

इमामत के लाइक़ जिसमें औसाफ़ ज़्यादा हों उसको इमाम बनाएँ। और अगर कई शख़्स ऐसे हों जिनमें इमामत की लियाक़त हो तो ग़लबए राए पर अमल करें यानी जिस शख़्स की तरफ़ ज़्यादा लोगों की राये हो उसको इमाम बना दें। और अगर किसी ऐसे शख़्स के होते हुए जो इमामत के लाएक़ है, किसी नालाएक़ को इमाम कर देंगे तो तर्के सुन्नत की ख़राबी में मुब्तला होंगे। सब से ज़्यादा इस्तेहक़ाक़े इमामत उस शख़्स को है जो नमाज़ के मसाइल ख़ूब जानता हो बशर्तेकि ज़ाहिरन उसमें कोई फ़िस्क़ वग़ैरा न हो, और जिस क़दर किराअत मसनून है उसे याद हो।

(2) फिर वह शख़्स जो क़ुरआन मजीद अच्छा पढ़ता हो यानी उम्दा आवाज़ से और क़िराअत के क़वाएद के मुवफ़िक़।

(3) फिर वह शख़्स जो सब से ज़्यादा परहेज़गार हो।

(4) फिर वह शख़्स जो सब में ज़्यादा उम्र रखता हो।

(5) फिर वह शख़्स जो सब में ज़्यादा ख़लीक़ हो।

(6) फिर वह शख़्स जो सब में ज़्यादा ख़ूब सूरत हो।

(7) फिर वह शख़्स जो उम्दा लिबास पहने हो।

(8) फिर वह शख़्स जिसका सर सब से ज़्यादा बड़ा हो।

(9) फिर वह शख़्स जो मुक़ीम हो, बनिस्बत मुसाफ़िरों के।

(10) फिर वह शख़्स जो असली आज़ाद हो।

(11) फिर वह शख़्स जिसने हदसे असग़र से तयम्मुम किया हो बनिस्बत उसके जिसने हदसे अकबर से तयम्मुम किया हो, जिस शख़्स में दो वस्फ़ पाया जाता हो मसलन

वह शख़्स जो नमाज़ के मसाइल भी जानता हो और कुरआन मजीद भी अच्छा पढ़ता हो ज़्यादा मुस्तहिक़ है बनिस्बत उसके जो सिर्फ़ नमाज़ के मसाइल जानता हो कुरआन मजीद न अच्छा पढ़ता हो।

(12) अगर किसी के घर में जमाअत की जाए तो साहबे ख़ाना इमामत के लिए ज़्यादा मुस्तहिक़ है, उसके बाद वह शख़्स उसका इमाम बना दे, हाँ अगर साहबे ख़ाना बिल्कुल जाहिल हो और दूसरे लोग मसाइल से वाक़िफ़ हों तो फिर उन्हीं को इस्तेहक़ाक़ होगा।

(दुर्रेमुख़्तार, शामी वग़ैरा)

जिस मस्जिद में कोई इमाम मुक़र्रर हो उस मस्जिद में उसके होते हुए दूसरे को इमामत का इस्तेहक़ाक़ नहीं, हाँ अगर वह किसी दूसरे को इमाम बना दे तो फिर मुज़ाएक़ा नहीं। क़ाज़ी या बादशाह के होते हुए दूसरे को इमामत का इस्तेहक़ाक़ नहीं।

(दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

(13) बे रज़ा मंदी क़ौम की इमामत करना मकरूहे तहरीमी है। हाँ अगर वह शख़्स सब से ज़्यादा इस्तेहक़ाक़े इमामत रखता हो यानी इमामत के औसाफ़ उसके बराबर किसी में न पाए जाते हों तो फिर उसके ऊपर कुछ कराहत नहीं।

(दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

(14) फ़ासिक़ और बिदअती का इमाम बनाना मकरूहे तहरीमी है, हाँ अगर ख़ुदा न ख़्वास्ता सिवा ऐसे लोगों के कोई दूसरा शख़्स वहाँ मौजूद न हो तो फिर मकरूह नहीं।

(दुर्रेमुख़्तार, शामी वग़ैरा)

फ़ासिक़ वह शख़्स है जो ममनूआते शरईया का मुरतकिब होता हो, मिस्ल शराब ख़ोर, चुग़लख़ोर, ग़ीबत करने वाले वग़ैरा के, बिदअ़ती वह जो ऐसा फ़ेल इबादत समझ कर करे जिसकी अस्ल शरीअ़त में न हो, न कुरआन मजीद से उसका सुबूत हो, न अहादीस से न क़यास से न इजमा से। फ़ासिक़ और बिदअ़ती में फ़र्क़ ये है कि फ़ासिक़ गुनाह को गुनाह समझ कर करता है और बिदअ़ती गुनाह इबादत समझ कर करता है लिहाज़ा बिदअ़ती का मरतबा फ़ासिक़ से भी बदतर है और उसके पीछे नमाज़ पढ़ने में ज़्यादा कराहत है।

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

(15) गुलाम का अगरचे आज़ाद शुदा हो और गँवार यानी गाँव के रहने वाले का और नाबीना का या ऐसे शख़्स का जिसे रात को कम नज़र आता हो, और वलदुज़्ज़िना यानी हरामी का इमाम बनाना मकरूहे तंज़ीही है, इसी तरह किसी हसीन नौजवान को इमाम बनाना जिसकी दाढ़ी न निकली हो और बे अक़्ल को इमाम बनाना मकरूहे तंज़ीही है। अगर किसी को कोई ऐसा मरज़ हो जिस से लोगों को नफ़रत होती है मिस्ल सपेद दाग़, जुज़ाम वग़ैरा के तो उनका इमाम बनाना भी मकरूहे तंज़ीही है।

(दुर्रेमुख़्तार, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–93, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–77, कबीरी सफ़्हा–365, शरह नक़ाया सफ़्हा–86)

(इन लोगों का इमाम बनाना इसलिए मकरूह है कि

अक्सर गुलाम और गँवार और वलदुज़्ज़िना को इल्मे दीन हासिल करने का मौक़ा नहीं मिलता, गुलाम को अपने आक़ा की ख़िदमत से फ़ुरसत नहीं मिलती, गँवार को देहात में कोई ज़ी इल्म नहीं मिलता, वलदुज़्ज़िना का कोई तरबियत करने वाला नहीं होता, अलावा इसके इन लोगों की इमामत से बाज़ लोगों को तबई तनफ़्फ़ुर भी होता है। वल्लाहुआलम) (रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

(16) नमाज़ के फ़राइज़ और वाजिबात में तमाम मुक़्तदियों को इमाम की मुवाफ़क़त करना वाजिब है, हाँ सुनन वग़ैरा में मुवाफ़क़त करना वाजिब नहीं, पस अगर इमाम, शाफ़ई मज़हब हो और रुकूअ़ में जाते वक़्त और रुकूअ़ से उठते वक़्त हाथों को उठाए तो हनफ़ी मुक़्तदी का हाथों को उठाना ज़रूरी नहीं, इसलिए कि हाथों का उठाना उनके नज़दीक भी सुन्नत है। इसी तरह फ़ज्र की नमाज़ में शाफ़ई मज़हब कुनूत पढ़ेगा तो हनफ़ी मुक़्तदियों को ज़रूरी नहीं। हाँ वित्र में अलबत्ता चूंकि कुनूत पढ़ना वाजिब है, लिहाज़ा अगर शाफ़ई इमाम अपने मज़हब के मुवाफ़िक़ बाद रुकूअ़ के पढ़े तो हनफ़ी मुक़्तदियों को भी बाद रुकूअ़ के पढ़ना चाहिए।

(रद्दुलमुहतार वग़ैरा)

(17) इमाम को नमाज़ में ज़्यादा बड़ी बड़ी सूरतें पढ़ना जो मिक़्दारे मसनून से भी ज़्यादा हों या रुकूअ़ सज्दे वग़ैरा में ज़्यादा देर तक रहना मकरूहे तहरीमी है बल्कि इमाम को चाहिए कि अपने मुक़्तदियों की हाजत और ज़रूरत और ज़ोअ़फ़ वग़ैरा का ख़्याल रखे जो सब में ज़्यादा साहबे ज़रूरत हो उसकी रिआ़यत कर के क़िराअत

वग़ैरा करे, बल्कि ज़्यादा ज़रूरत के वक़्त मिक़्दारे मसनून से भी कम क़िराअत करना बेहतर है। ताकि लोगों का हरज न हो जो क़िल्लते जमाअ़त का सबब हो जाए।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–93, बुख़ारी सफ़्हा–97, मुस्लिम सफ़्हा–188)

हदीस में आया है कि इमाम को तख़फ़ीफ़ और आसानी करना चाहिए। हज़रत मआज़ इब्न जबल रज़िअल्लाहु अन्हु को एक मरतबा नबी करीम (स.अ.व.) ने बहुत डाँटा क्योंकि वह नमाज़ में बड़ी बड़ी सूरतें पढ़ते थे जिससे उनकी क़ौम को तकलीफ़ होती थी, एक मरतबा एक बच्चा के रोने की आवज़ सुन कर आँ हज़रत (स.अ.व.) ने फ़ज्र की नमाज़ में सिर्फ़ "قُلْ اَعُوْذُ بِرَبِّ الْفَلَقِ" और "قُلْ اَعُوْذُ بِرَبِّ النَّاسِ" पर इक्तिफ़ा की थी क्योंकि माँ उसकी नमाज़ में थी।

(हाशिया इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–93)

क्या इमामत के लिए नसब का लिहाज़ ज़रूरी है?

मस्अलाः इमामत के लिए ज़ात पात का कोई लिहाज़ नहीं, अफ़ज़लीयत का लिहाज़ है, और ये कि जमाअ़त में कमी न आए और नमाज़ी मुन्तशिर न हों, पस नमाज़ियों में से जो अफ़ज़ल हो वह इमामत का हक़दार है ताकि नमाज़ सहीह और कामिल अदा हो जाए और मुक़्तदी ज़्यादा से ज़्यादा नमाज़ में शरीक हों। पस किसी ऐसी क़ौम का आदमी जिसको लोग ज़लील समझते हैं, अगर इल्म और तक़वा में सब से बढ़ा हुआ है, और इस बिना

पर लोग उसका अदब करते हैं तो बिला शुब्हा उसके पीछे नमाज़ दुरुस्त है, किसी किस्म की कोई कराहत नहीं, अलबत्ता अगर उसके अफ़आल ऐसे हैं कि ज़िनकी बिना पर वह लोगों की निगाहों में ज़लील और बे वक्अत है तो उस बिना पर उसको इमाम बनाना मकरूह है कि लोग जब उसकी इज़्ज़त और वक्अत नहीं करते, तो उसके पीछे नमाज़ पढ़ना ही पसंद नहीं करेंगे और जमाअत में कमी आएगी।

अफ़ज़ल को इमाम बनाने में ये भी मसलेहत है कि लोग उसको पसंद कर के शिरकत करेंगे और जमाअत बढ़ेगी। और अफ़ज़ल इमाम वह है जो शरई अहकाम से सब से ज़्यादा वाकिफ़ हो, कुरआन शरीफ़ तजवीद व सेहत के साथ पढ़ता हो, परहेज़गार हो, सहीहुलअक़ीदा हो और आला नसब वाला हो, हसीन व जमील और मुअम्मर हो, नसबी शराफ़त, खुश अख़लाक़ और पाकीज़ा लिबास वाला, इमामत का ज़्यादा हक़दार है कि लोग रग़बत से उसकी इक्तिदा करें और जमाअत बड़ी हो।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़हा–28, बहवाला शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़हा–86, तकमीलुलईमान सफ़हा–78)

मस्अला: अगर एक मस्जिद में दो इमाम इसलिए हैं कि एक इमाम चंद लोगों को नमाज़ पढ़ाए फिर दूसरा इमाम उसी नमाज़ को दूसरे लोगों को पढ़ाए तो ये मकरूह है। और अगर मनशा ये है कि दोनों इमाम रख लिए जाएँ कभी एक इमाम नमाज़ पढ़ाए और कभी बज़रूरत दूसरा तो इसकी गुंजाईश है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़हा–369, आलमगीरी

जिल्द–1 सफ़हा–51)

मस्अला: बाज़ जगह इमाम ऐसे हैं कि लोगों की नमाज़ फ़ासिद या मकरूह होती है, और इसमें मुक़्तदी ही इस ख़राबी का सबब होते हैं यानी इमाम का तक़र्रुर करते वक़्त उसकी सलाहियत व अहलियत को नहीं देखते, बल्कि अक्सर देखा जाता है कि जो सब से निकम्मा होता है उसको अरज़ाँ समझ कर (कम तन्ख़्वाह पर) इमामत के लिए तजवीज़ किया जाता है, चाहे उसको कुरआन भी सहीह पढ़ना न आता हो, ख़्वाह उसको मसाइल भी याद न हों, कुछ भी हो मगर चूंकि सस्ता है इसलिए इमाम बना लेते हैं। (अग़लातुलअवाम सफ़्हा–69)

(हाँलाकि हर दुन्यवी काम के लिए ज़ी हुनर और ज़ी लियाक़त को तलाश किया जाता है और ख़ुदा के रूबरू जो सबकी तरफ़ से वकील व ज़ामिन बन कर खड़ा होता है, वह छाँट कर ऐसा सस्ता रखा जाता है जिसमें न कमाल और न जमाल, न इल्म व अमल, हाए अफ़सोस, ख़ुदा के यहाँ क्या जवाब दोगे?)

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

बक़िया रकअतें पूरी करने वाले की इक़्तिदा न की जाए

मस्अला: इमामत के सहीह होने की शराईत में से एक ये है कि जो शख़्स किसी दूसरे का मुक़्तदी हो वह ख़ुद इमामत न करे। उसकी सूरत ये है कि मसलन कोई शख़्स नमाज़े अस्र की जमाअत में उस वक़्त शरीक हुआ जब इमाम आख़िरी रकअतों के दो सज्दे कर रहा था,

इमाम ने सलाम फेर दिया और ये शख़्स अपनी बक़िया रकअतें पूरी करने के लिए खड़ा हुआ, इतने में एक और शख़्स आया और नमाज़े अस्र की नीयत कर के उस मुक़्तदी के साथ जो अपनी रही हुई रकअतें पूरी कर रहा था, खड़ा हो गया (उस मुक़्तदी को अपना इमाम बना लिया और उसकी इक़्तिदा में नमाज़ पढ़ने लगा) तो इस दूसरे शख़्स की नमाज़ दुरुस्त न होगी।

मस्अला: किसी भी मस्बूक़ (यानी कुछ रकअत होने के बाद शामिल होने वाले) की इक़्तिदा सहीह नहीं है, ख़्वाह इमाम के साथ एक रकअत में शरीक हुआ हो या उससे कम में, हाँ ये शक्ल तो हो सकती है कि मस्जिदों में नमाज़ियों का इज़्दिहाम (भेड़) है और कोई शख़्स आकर आख़िर सफ़ों में शामिले जमाअत हुआ, दूर होने की वजह से उसे इमाम की हरकात की ख़बर नहीं, लिहाज़ा वह मुक़्तदियों में से किसी की पैरवी करने लगा, ताकि जो रकअतें जाती रही हैं उनको याद कर ले, लेकिन ये पैरवी इक़्तिदा की नीयत से न हो तो दोनों की नमाज़ सहीह होगी क्योंकि वह दोनों अपने साबिक़ इमाम के साथ मुनसलिक मुतसौवर होंगे।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–659)

(और अगर ये पैरवी इक़्तिदा की नीयत से होगी तो नमाज़ न होगी) (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

इमाम रखने की गुंजाइश नहीं तो क्या करें?

सवाल: अगर किसी शहर में मस्जिदों की कसरत हो

और नमाज़ी कम हों, हर एक मस्जिद में इमाम मुक़र्रर करने की ताक़त न रखते हों, अगर मुत्तसिल मुहल्ला वाले मिल कर एक मस्जिद में इमाम मुक़र्रर कर लें और दीगर मसाजिद छोड़ कर एक मस्जिद में बा जमाअ़त इमाम मज़कूर के पीछे नमाज़ अदा करें तो क्या हुक्म हैं?

जवाबः बेहतर ये है कि हत्तलवुस्अ़ सब मस्जिदों को आबाद करें और थोड़े थोड़े नमाज़ी सब मस्जिदों में नमाज़ पढ़ें, बहालते मजबूरी जैसा मौक़ा हो करें।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–67, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–617 बाबुलमसाजिद)

जब कोई मुक़्तदी न पहुंचे तो इमाम के लिए हुक्म

मस्अलाः इमाम मुक़र्रर तन्हा मुक़्तदी के न आने की वजह से नमाज़ पढ़ सकता है और इस सूरत में तर्के जमाअ़त का गुनाह इमाम पर नहीं है बल्कि जब कोई न आए तो इमाम साहब अज़ान व इक़ामत कह कर तन्हा नमाज़ पढ़ लिया करें। इमसें जमाअ़त का सवाब उनको हासिल होगा और मस्जिद का भी हक़ अदा होगा।

मस्अलाः अज़ान कह कर उसी मस्जिद में उसको नमाज़ पढ़नी चाहिए। दूसरी मस्जिद में जमाअ़त के लिए न जाना चाहिए। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–33)

मस्जिद में दाख़िल होते वक़्त सलाम करना?

मस्अलाः मस्जिद में लोग नमाज़ और वज़ाइफ़ वग़ैरा

में मशगूल न हों तो सलाम करे और अगर मशगूल हों या मस्जिद में कोई न हो तो दाख़िल होते वक़्त ये कहे–

"اَلسَّلَامُ عَلَيْنَا مِنْ رَبِّنَا وَعَلٰى عِبَادِ اللّٰهِ الصَّالِحِيْن"

(फ़तावा आलमगीरी जिल्द–5)

और अगर बाज़ फ़ारिग़ होकर बैठे हों तो अगर फ़ारिग़ीन इतने दूर हों तो उनको सलाम करने से या उनके सलाम के जवाब से उन मशगूलीन को हरज न होता हो तो सलाम की इजाज़त है, वरना नहीं।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–413)

मस्जिद में दाख़िल होने और निकलने के वक़्त की दुआ

आँ हज़रत (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि तुम में से कोई भी जब मस्जिद में दाख़िल होने लगे तो उसको चाहिए कि ये दुआ पढ़े–

"اَللّٰهُمَّ افْتَحْ لِيْ اَبْوَابَ رَحْمَتِكَ مِنْ فَضْلِكَ"

और जब मस्जिद से निकले तो ये दुआ पढ़नी चाहिए–

"اَللّٰهُمَّ اِنِّيْ اَسْئَلُكَ مِنْ فَضْلِكَ"

(मज़ाहिरे हक़ जिल्द–1 सफ़्हा–604)

तारिके जमाअ़त का घर जलाना

मस्अला: हदीस शरीफ़ में तहदीदन बेशक ऐसा वारिद हुआ है कि आँ हज़रत (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि मैंने ऐसा इरादा किया था कि जो लोग नमाज़ में नहीं आते उनके घरों को आग लगा दूँ, लेकिन औरतों और

बच्चों की वजह से ऐसा न किया। इससे मालूम हुआ कि अब आग लगाना जाइज़ नहीं है। क्योंकि आप (स.अ.व.) ने भी आग नहीं लगाई।

तर्के जमाअत पर अमदन मुवाज़बत करना बिला उज़्र गुनाहे कबीरा और मूजिबे फ़िस्क़ है लेकिन एक दो मरतबा इत्तिफ़ाक़न अगर जमाअत छूट गई तो ये गुनाहे कबीरा नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–58, मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–95, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–515, बाबुलइमामत)

मस्अला: बिला उज़्रे शरई मस्जिद की नमाज़ छोड़ कर घर पर ही पढ़ना बहुत बड़ी महरूमी है और इस्लाम के बड़े शिआर का तर्क करना है। हदीस शरीफ़ में इस पर सख़्त वईद है, एक हदीस में उसकी नमाज़ को नाक़ाबिले एतेबार क़रार दिया गया है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–186, बहवाला अबूदाऊद शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–81)

इमाम की अदावत की वजह से तर्के जमाअत

सवाल: मुअज़्ज़िन जिसका ये एतेराज़ है कि पेश इमाम को मुझ से अदावत है, इसी वजह से इमाम के पीछे नमाज़ नहीं पढ़ता। उसकी नमाज़ हो जाती है या नहीं?

जवाब: ये उज़्र तर्के जमाअत का शरअन लग्व और ग़लत है और तर्के जमाअत की आदत कर लेना और

हमेशा तर्के जमाअत करना मूजिबे फ़िस्क़ है और फ़ासिक़ की अज़ान मकरूह है। और एआदा (लौटाना) उसका मुस्तहब है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–45, बहवाला शामी सफ़्हा–365)

(अगरचे उसकी नमाज़ जो अलाहिदा बग़ैर जमाअत के पढ़ता है जाइज़ होती है मगर जमाअत के सवाब से महरूम रहता है और जमाअत के छोड़ने का गुनाह अलग है) (रफ़अत क़ासमी)

मस्अला: कुतुबे फ़िक़्ह में है कि अगर इमाम बेक़ुसूर हो तो मुक़्तदियों की नाराज़गी का असर नमाज़ में कुछ नहीं, इमाम की नमाज़ बिला कराहत दुरुस्त है और गुनाह मुक़्तदियों पर है। और अगर इमाम क़ुसूरवार है और उसकी वजह से मुक़्तदी नाख़ुश हैं तो इमाम के ऊपर मुवाख़ज़ा है और उसको इमाम होना मकरूह है और मौरदे हदीस "مَن تقدم قوماً الخ" अगर वही इमाम है जिसके अन्दर ख़लल व नक़्स हो, वरना मुक़्तदी गुनाहगार हैं कि बे वजह नाराज़ हैं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–104, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–524)

नमाज़ कब तोड़ना जाइज़ है?

मस्अला: नमाज़ का तोड़ना कभी हराम होता है, कभी मुस्तहब और कभी मुबाह और कभी वाजिब, और अगर कोई उज़्र न हो तो नमाज़ तोड़ना हराम होगा और जमाअत

में मिलने के लिए तोड़ना मुस्तहब और माल ज़ाए हो रहा हो तो नमाज़ की नीयत तोड़ना मुबाह है और जान बचाने के लिए नमाज़ की नीयत तोड़ना वाजिब है।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–649)

मुहल्ला की मस्जिद में जमाअत न होती हो तो?

सवालः मुहल्ले की मस्जिद में जमाअत का इंतिज़ाम नहीं है तो दूसरे मुहल्ले की मस्जिद में नमाज़ बा जमाअत पढ़ना जाइज़ है या नहीं?

जवाबः अपने मुहल्ला की मस्जिद का हक़ ज़्यादा है। पस उस शख़्स को अपने मुहल्ले की मस्जिद को छोड़ कर दूसरी मस्जिद में न जाना चाहिए। शामी में है कि अपने मुहल्ले की मस्जिद में अगर तन्हा भी नमाज़ पढ़नी पड़े तो वहीं अज़ान कह कर नमाज़ पढ़े और उसको छोड़ कर दूसरी मस्जिद में न जाए।

"لان له' حقاعليه فهو يوديه الخ"

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–33, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–617)

(अपनी मस्जिद वीरान होने का अंदेशा न हो तो चला जाए) (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

मस्अलाः अगर पास पास दो मस्जिदें हों तो क़रीब की मस्जिद में नमाज़ पढ़ना चाहिए कि उस मस्जिद का (जो बिल्कुल क़रीब हो) उन पर हक़ है और सवाब भी इसमें ज़्यादा है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–151, बहवाला

रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–617, किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–462)

मस्जिद में जमाअत न मिल सके तो क्या करे

मस्अला: एक मस्जिद में अगर जमाअत हो चुकी हो तो अगर उम्मीद दूसरी मस्जिद में जमाअत मिलने की हो तो दूसरी मस्ज़िद में जाकर जमाअत से नमाज़ पढ़ना बेहतर और मूजिबे सवाब है, सलफ़ में अकाबिरे उम्मत ऐसा किया करते थे कि एक मस्जिद में जमाअत हो चुकी हो तो दूसरी मस्जिद में जमाअत की तलाश में जाते थे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–65, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–518, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–98 व इमदादुलअहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–500)

मस्अला: मस्जिद पहुंच कर मालूम हुआ कि जमाअत हो चुकी है तो दूसरी मस्जिद में जमाअत की तलाश में जाना वाजिब नहीं है। अगर जाना चाहे तो जा सकता है मना नहीं है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–322, बहवाला मसाइले अरकान सफ़्हा–55 व आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–233)

शीआ का सुन्नियों की जमाअत में शिरकत करना

मस्अला: जमाअत में अगर कोई शीआ दरमियान में खड़े होकर नमाज़ पढ़े तो सुन्नियों की नमाज़ में इस

सूरत में कुछ नुक़सान और ख़लल न होगा, लेकिन आइंदा उस राफ़िज़ी से कहें कि या तो वह अपने मज़हब से तौबा करे, वरना मुसलमानों की जमाअत में न आया करे, और उसको अपने क़ब्रस्तान में दफ़्न न करे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–62)

मस्अलाः सुन्नी, शीआ की मसाजिद में और शीआ सुन्नी की मसाजिद में नमाज़ अदा कर सकते हैं नमाज़ हो जाती है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–98, मिश्कात जिल्द–1 सफ़्हा–512)

मस्अलाः कूड़ा करकट फेंकने, या ज़िब्ह करने की जगह पर, नीज़ आम गुज़रगाह, नहाने की जगह, और ऊँटों (आम जानवरों) को पानी पिलाने की जगह पर नमाज़ पढ़ना मकरूह है, अगरचे नजासत से महफ़ूज़ रहे।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–440)

मस्जिद की जमाअत में कैसे लोग शरीक न हों

मस्अलाः जो शख़्स कि हिफ़्ज़े अम्न में ख़लल अंदाज़ हो और बाइसे शर व फ़साद हो और नमाज़ियों को तकलीफ़ देह और ईज़ा रसाँ हो और उसका फ़ेल मूजिबे इश्तियाल हो, उसको जमाअत से रोकना क़ानूने शरअ के मुताबिक़ है। हदीसें और आसार और अक़वाले फ़ुक़हा इस पर साफ़ दालालत करते हैं। रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने कच्चा लहसुन, प्याज़ खाने वालों को मस्जिद से रोक दिया, बल्कि मस्जिद से निकाल दिया। नीज़ आप (स.अ.व.) ने

उन औरतों को जो खुशबू लगाए हुए हों, मस्जिद में आने से ब ख़ौफ़े फ़ितना मना कर दिया। नीज़ आप (स.अ.व.) ने उन लोगों के हक़ में जो नमाज़ी के सामने से चले जाएँ जिससे नमाज़ी के खुशूअ़ व खुज़ूअ़ में फ़र्क़ आने का एहतेमाल है अगरचे नमाज़ नहीं जाती। फ़रमा दिया "रोको"।

नीज़ आप (स.अ.व.) ने उस शख़्स को जिसने मस्जिद में क़िबला की जानिब थूक दिया था, इमामत से माज़ूल कर दिया और उसको ख़ुदा व रसूल का मूज़ी क़रार दिया था।

फ़ुक़हा ने भी तसरीह की है कि कच्ची लहसुन व प्याज़ खाने वालों को और ऐसे ही गन्दा देहन (मुंह के मरीज़) और जुज़ामी और मबरूस और माही फ़रोश को और कुल (हर एक) मूज़ी को अगर वह ज़बान से ईज़ा पहुंचाता हो मस्जिद में आने से रोक देना चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–55, बहवाला मुस्लिम शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–209 व मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–96)

मस्अला: गन्दा देहनी का मरीज़ जमाअ़त में शरीक न हो, तन्हा अलाहिदा नमाज़ पढ़े।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–34, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–619)

मस्अला: जुज़ामी के लिए हुक्म यही है कि वह मस्जिद में न आए और जमाअ़त में शरीक न हो और घर में नमाज़ पढ़े, पस जमाअ़त के छोड़ने में उस पर कुछ गुनाह नहीं है, बल्कि उसको यही हुक्म है और जमाअ़त

में शरीक होना उसके लिए मकरूह है और गुनाह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–41, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–619)

मस्अला: जुज़ामी से जुमा व जमाअत साकित और मआफ़ है इसी वजह से वह मस्जिद में न आएं, पस जुज़ामी को चाहिए कि वह जमाअत में शरीक न हो, और जो लोग जुज़ामी शख़्स से अलाहिदा रहें और एहतेराज़ करें उन पर कुछ मलामत नहीं है कि जुज़ामी से भागने और बचने का हुक्म रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने फ़रमाया है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–65)

मस्अला: मजज़ूम को घर पर नमाज़ पढ़ने में भी जमाअत का सवाब मिलेगा जबकि वह जमाअत का शौक़ दिल में रखता हो।

(इमदादुलअहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–504)

मस्अला: मुसलमान हलाल ख़ोर (भंगी) मस्जिद में बा जमाअत नमाज़ अदा कर सकते हैं और मस्जिद की हौज़ से वुज़ू भी कर सकते हैं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–38)

(मस्जिद आते वक़्त इतना लिहाज़ रहे कि साफ़ सुथरा और पाक लिबास जिस्म पर और जिस्म भी पाक साफ़ हो, नजासत और बदबू न जिस्म पर हो और न लिबास पर हो, और ये सब ही के लिए ज़रूरी है। आम मुसलमान नमाज़ियों की तरह ये लोग भी हैं, जिस तरह और आक़िले, बालिग़ मुसलमानों पर जमाअत की शिरकत वाजिब है, इन नौमुस्लिम भंगियों वग़ैरा पर भी वाजिब है)

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

जिसको जमाअ़त न मिले वह नमाज़ कहाँ पढ़े?

सवाल: जिस शख़्स को नमाज़ जमाअ़त से नहीं मिली, उसको मस्जिद में अपने फ़र्ज़ पढ़ना अफ़ज़ल है या मकान में?

जवाब: अगर मस्जिद से बाहर जमाअ़त हो सके तो ये अफ़ज़ल है, वरना फ़राइज़ के लिए मस्जिद ही अफ़ज़ल है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–54, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–367)

मस्अला: अगर कभी इत्तिफ़ाक़ से मस्जिद में जमाअ़त न मिले, घर पर औरतों बच्चों को शामिल कर के जमाअ़त कर ले, जैसा कि हदीस से साबित है। मर्दों को घर पर जमाअ़त न करनी चाहिए। बल्कि मस्जिद में आएँ और शरीके जमाअ़त हों, अगर कभी इत्तिफ़ाक़ से जमाअ़त न मिली तो बसूरते मज़कूर घर पर करें, ये नहीं कि मस्जिद की जमाअ़त छोड़ कर घरों पर जमाअ़त करना सुन्नत है। ऐसा नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–44, बहवाला रद्दुलमुहतार सफ़्हा–518)

मस्अला: मकान में तन्हा नमाज़ पढ़ने वाले के लिए मुहल्ला की मस्जिद की अज़ान व इक़ामत काफ़ी है, लेकिन कहना बेहतर है, मगर औरतों के लिए मकरूह है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–16, नूरुलईज़ाह सफ़्हा–61)

जमाअत से अलग जो नमाज़ पढ़े?

सवालः जमाअ़त हो रही हो और कोई शख़्स बवज्हे मुख़ासमते (लड़ाई) इमाम, जमाअ़त में शामिल न हो और जमाअ़त के होते हुए अपनी नमाज़ अलग पढ़े तो नमाज़ उसकी होगी या नहीं?

जवाबः नमाज़ हो गई मगर वह शख़्स गुनहगार होगा और फ़ासिक़ हुआ।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–57, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–516, बाबुलइमामत)

तन्हा शख़्स नमाज़ घर में पढ़े या मस्जिद में?

सवालः ज़ैद मस्जिद में अकेला नमाज़ पढ़ता है और बकर घर में नमाज़ पढ़ता है। दोनों के सवाब में कुछ फ़र्क़ है या नहीं?

जवाबः जो शख़्स मस्जिद की जमाअ़त की नमाज़ छोड़ कर घर में नमाज़ पढ़ने का आदी है और तर्के जमाअ़त पर मुसिर है वह फ़ासिक़ है। अहादीस में है कि आँ हज़रत (स.अ.व.) ने फ़रमाया है कि "अगर बच्चों और औरतों का ख़्याल न होता तो मैं उन लोगों के घरों को आग लगा देता जो मस्जिद में आकर जमाअ़त से नमाज़ नहीं पढ़ते। पस जो शख़्स मस्जिद में आकर अकेला नमाज़ पढ़ा करे और जमाअ़त का ख़्याल न करे और अपनी आदत तर्के जमाअ़त की करे, या घर में अकेला

नमाज़ पढ़ने का आदी हो और तर्के जमाअत करता हो, दोनों फ़ासिक़ और दोनों मुरतकिबे अम्रे हराम के हैं। उनमें से किसी को कह दिया जाए कि ज़्यादा सवाब फ़लाँ को है और फ़लाँ को नहीं, दोनों ही गुनहगार हैं। दोनों को ये लाज़िम है कि जमाअत की पाबंदी करें, न घर में तन्हा नमाज़ पढ़ें और न मस्जिद में बग़ैर जमाअत के पढ़ें। मजबूरी से इत्तिफ़ाक़न जमाअत फ़ौत हो जाए (छूट जाए) तो ये दूसरी बात है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–71, बहवाला मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–97, बाबुलजमाअत व गुनया सफ़्हा–474)

घर पर मुस्तक़िल जमाअत करना?

मस्अला: दाएमी तौर पर मस्जिद को छोड़ कर अपने घर पर बा क़ाएदा जमाअत का इंतिज़ाम करना जाइज़ नहीं है और तर्के जमाअते मस्जिद दाएमी तौर से मईसत है और इसरार इस पर फ़िस्क़ है, ऐसे शख़्स की शहादत भी क़बूल नहीं होती है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–37, बहवाल रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–518)

नाजाइज़ कमाई से बनाई हुई मस्जिद में नमाज़ पढ़ना?

मस्अला: ज़ानिया की बनाई हुई मस्जिद हुक्मे मस्जिद में हो गई, यहाँ तक कि वरसा का हक़ उससे मुनक़तअ

हो गया और उसमें किसी का तसर्रुफ़ ख़िलाफ़े वक़्फ़ नाजाइज़ हो गया, न उसको ढा सकते हैं न उसको बेच कर दूसरी मस्जिद में उसकी क़ीमत लगा सकते हैं लेकिन उसमें नमाज़ पढ़ने से सवाब कामिल न मिलेगा, गो फ़र्ज़ ज़िम्मे से साक़ित हो जाएगा।

(इमदादुलअहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–441)

मस्अला: उस मस्जिद में नमाज़ हो जाती है और घर में तन्हा नमाज़ पढ़ने से जमाअ़त के साथ उस मस्जिद में नमाज़ पढ़ना बेहतर है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–75)

मस्अला: ग़सब की हुई ज़मीन में नमाज़ हो जाती है, मगर जानते हुए बग़ैर मजबूरी के उस जगह नमाज़ पढ़ना कराहत से ख़ाली नहीं है, इसलिए मालिक से इजाज़त हासिल कर ली जाए।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–375, आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–69, तहतावी जिल्द–1 सफ़्हा–209)

मस्जिद के दूर होने पर जमाअ़त का हुक्म

मस्अला: बाज़ार अगर एक मील की मिक़दार में वसीअ़ हो और उसमें सिर्फ़ एक मस्जिद हो तो सब पर नमाज़ जमाअ़त से पढ़ना सुन्नते मुअक्कदा है। मगर जिन को कोई उज़्र ऐसा हो जैसे बीमारी या बारिश या सर्दी शदीद वग़ैरा हो तो उनको तर्के जमाअ़त दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–36, बहवाला आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–77)

इफ़्तार की वजह से देर में जमाअत करना?

सवाल: मस्जिद में मग़रिब की अज़ान के साथ रोज़ा इफ़्तार कर के खाने पीने लगते हैं जिसमें अक्सर लोग तो नीचे बैठ कर रोज़ा इफ़्तार करते हैं, अज़ान होने के दस मिनट बाद का वक़्फ़ा कर के जमाअत खड़ी होती है, और बाज़ हज़रात छत पर इफ़्तार करते हैं, मगर छत वाले जमाअत में शरीक नहीं होते, जब नीचे जमाअत हो जाती है तब छत वाले दूसरी जमाअत करते हैं, ये जाइज़ है या नहीं?

जवाब: बेहतर ये है कि जमाअते ऊला में शामिल हों और जमाअत के होते हुए खाने पीने में मशगूल न हों, "إلا بضرورة شديدة" और नीचे वालों को चाहिए कि कुछ और वक़्फ़ा (मकरूह वक़्त न हो) कर दें ताकि सब लोग ब इतमीनान कुछ खा कर शामिले जमाअत हो जाएँ।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–47, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–516, बाबुलइमामत)

मस्अला: जमाअत में इस क़दर ताख़ीर हो जाए कि वक़्ते मकरूह न हो और दूसरे नमाज़ियों को तकलीफ़ न हो तो इसमें भी कोई हरज नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–47, बहवाला अलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–53)

मस्अला: फ़ुक़हा ने लिखा है कि बाज़ मवाक़ेअ़ में किसी शरीर शख़्स की भी इमाम ब रिआयत कर सकता है जब उससे किसी फ़साद का अंदेशा हो।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–68, रद्दुलमुहतार

जिल्द–1 सफ़्हा–372)

जिस मस्जिद में इमाम व मुअज़्ज़िन मुतऔयन न हों?

मस्अलाः ऐसी मस्जिद में जिसमें इमाम व मुअज़्ज़िन व जमाअ़त मुतऔयन न हो जमाअ़ते सानिया जाइज़ है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–51, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–516, व फ़तावा महमूदिया जिल्द–14 सफ़्हा–105)

मस्अलाः मस्जिद में जमाअ़त हो जाने के बाद मकान या जंगल में जमाअ़त से नमाज़ पढ़ना अफ़ज़ल है, जंगल में या मकान में अज़ान व तकबीर कहना अफ़ज़ल है, सिर्फ़ तकबीर कहना भी काफ़ी है। मकान में नमाज़ पढ़ें तो उस मुहल्ले की मस्जिद में जो अज़ान हो गई है वही काफ़ी है। (अगर जमाअ़त करनी हो तो) सिर्फ़ तकबीर कह ले। मस्जिद के फ़र्श के बीच में जो हौज़ है या मस्जिद की छत, सब मस्जिद के हुक्म में हैं, हाँ कोठरी वुज़ूख़ाना वग़ैरा जो मस्जिद से ख़ारिज हैं उनमें जमाअ़ते सानिया जाइज़ है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–52, बहवाला आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–52 व इमदादुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–362 व इमदादुलअहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–497)

जमाअ़त के लिए औरतों का जाना?

मस्अलाः इस ज़माने में बल्कि बहुत पहले से औरतों

का जमाअत में शरीक होने के लिए मस्जिद व ईदगाह में जाना ममनूअ़ व मकरूह है। सहाबा रज़िअल्लाहु अन्हुम के ज़माने ही में ये ममनूअ़ हो चुका था। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़हा–49, बहवाला मुस्लिम शरीफ़ जिल्द–1 सफ़हा–183, बाब खुरूजुन्निसा इललमसाजिद)

घर में औरतों के साथ जमाअ़त करना?

मस्अला: औरतों की जमाअ़त तन्हा मकरूहे तहरीमी है, लिहाज़ा औरतों की जमाअ़त न करें। यानी इस तरह कि इमाम भी औरत हो, जमाअ़त न करें, अगर कभी इत्तिफ़ाक़ से मस्जिद में जमाअ़त न मिले, घर पर औरतों बच्चों को शामिल कर के जमाअ़त कर लें, ये नहीं कि मस्जिद की जमाअ़त छोड़ कर घरों पर जमाअ़त करना सुन्नत हो, ऐसा नहीं है। चुनांचे अल्लामा शामी अलैहिर्रहमा ने ये वाक़िआ लिखा है कि एक बार आँ हज़रत (स.अ.व.) एक क़ौम में सुलह कराने के लिए तशरीफ़ ले गए थे, मस्जिद में आए तो जमाअ़त हो चुकी थी, उस वक़्त आप (स.अ.व.) ने अपने मकान में अह्ल व अयाल को जमा कर के नमाज़ बा जमाअ़त अदा फ़रमाई। इससे साबित हुआ कि घर में जमाअ़त करना ऐसी हालत में है कि मस्जिद में जमाअ़त न मिले। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़हा– 44, बहवाला मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़हा–95, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़हा–518)

मस्अला: शौहर और बीवी अगर अपनी अलग अलग नमाज़ पढ़ते हैं तो कोई कराहत नहीं, इसमे एक फ़िट का

या कम व बेश फ़ासिला भी कोई शर्त नहीं है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–224)

मस्अला: अपनी बीवी और महरम औरत के साथ जमाअत जाइज़ है, वह पीछे खड़ी हो जाए। महरम औरत को परदा में खड़ी होने की ज़रूरत नहीं, अगर जमाअत करनी हो तो औरत बराबर में खड़ी न हो, बल्कि उसका अलग सफ़ में पीछे खड़ा होना चाहिए।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–228)

तस्वीर वाले मुसल्ले पर नमाज़ पढ़ना?

मस्अला: जाए नमाज़ पर ख़ानए कअ़बा की तस्वीर है तो उन पर नमाज़ पढ़ने में शरअ़न कोई हरज नहीं है, न उन पर कपड़ा चढ़ाने की ज़रूरत है, न उनकी फ़रोख़्त करने की ज़रूरत है, इस तस्वीर से ख़ानए कअ़बा की ताज़ीम में भी कोई फ़र्क़ नहीं आता, क्योंकि तस्वीर का हुक्म ऐन शय का हुक्म नहीं होता। दूसरे ख़ानए कअ़बा में जब नमाज़ पढ़ी जाती है तो वहाँ भी ज़मीन का पैरों के नीचे होना ब तरीक़े औला ताज़ीम के मुनाफ़ी न होगा।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–111, बहवाला गुनया सफ़्हा–314)

जमाअ़त में सफ़ बंदी क्यों?

नमाज़ के लिए जो इजतेमाई निज़ाम "जमाअ़त" की शक्ल में तजवीज़ किया गया है, इसके लिए रसूलुल्लाह

(स.अ.व.) ने ये तरीक़ा तालीम फ़रमाया है कि "लोग सफ़ें बना कर बराबर बराबर खड़े हों।"

ज़ाहिर है कि नमाज़ जैसी इजतिमाई इबादत के लिए इससे ज़्यादा हसीन व संजीदा और इससे बेहतर कोई सूरत नहीं हो सकती, फिर इसकी तकमील के लिए आप (स.अ.व.) ने ताकीद फ़रमाई कि सफ़ें बिल्कुल सीधी हों, कोई शख़्स एक इंच न आगे हो और न पीछे, पहले अगली सफ़ को पूरी कर ली जाए, इसके बाद पीछे की सफ़ शुरू की जाए। बड़े और ज़िम्मादार और असहाबे इल्म व फ़हम अगली सफ़ों में और इमाम से क़रीब जगह हासिल करने की कोशिश करें। छोटे बच्चे पीछे खड़े हों और अगर औरतें जमाअत में शरीक हों तो उनकी सफ़ सब से पीछे हो। इमाम सब से आगे और सफ़ों के दरमियान में खड़ा हो।

ज़ाहिर है कि इन सब बातों का मक़सद जमाअत की तकमील और उसको ज़्यादा मुफ़ीद और मुअस्सिर बनाना है। रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ख़ुद भी इन बातों का अमलन एहतेमाम फ़रमाते और वक़्तन फ़वक़्तन उम्मत को भी इनकी हिदायत व तलक़ीन फ़रमाते और इनका सवाब ब्यान फ़रमा कर तरग़ीब देते, नीज़ इन उमूर में लापरवाही करने वालों को सख़्त तंबीह फ़रमाते और अल्लाह के अज़ाब से डराते थे।

(मआरिफ़ुल हदीस जिल्द–3 सफ़्हा–204)

रकअत छूटने की वजह से सफ़ से दूर नीयत बाँधना?

सवालः इमाम रुकूअ में हो, अब अगर बाद में आने

वाला शख़्स सफ़ तक पहुंच कर नमाज़ शुरू करता है तो रुकूअ़ नहीं मिलता तो ऐसी सूरत में सफ़ से दूर खड़े रह कर तकबीरे तहरीमा कह कर नीयत बाँध ले तो कोई हरज तो नहीं?

जवाबः सफ़ में जगह होने के बावजूद सफ़ से दूर अगल खड़े रहना मकरूह है। सफ़ तक पहुंच कर नमाज़ शुरू करे, चाहे रकअ़त निकल जाए, इसलिए कि फ़ज़ीलत हासिल करने की बनिस्बत मकरूह से बचना औला है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–206, कबीरी सफ़्हा–575)

मस्अलाः मस्जिदों में शीशा की खिड़कियाँ और दरवाज़े होते हैं कि जिनमें नमाज़ी को अपना अक्स नज़र आता है, अगर उससे नमाज़ी की तवज्जोह मुनतशिर हो तो मकरूह है वरना नहीं।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–312)

सफ़ में जगह न हो तो पीछे कहाँ खड़ा हो?

सवालः अगली सफ़ में जगह न हो तो पीछे कहाँ खड़ा हो? दरमियान में या कोने में?

जवाबः सफ़ में जगह न हो तो इमाम के रुकूअ़ करने तक इंतिज़ार करे, अगर कोई आ जाए तो उसके साथ इमाम की सीध में सफ़ के पीछे खड़ा हो जाए, अगर कोई न आए तो तन्हा ही इमाम की सीध में खड़ा हो जाए। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–206, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–531, इमदादुलअहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–542)

मस्अला: जो नमाज़ी दीवार के पास होता है तो जब रुकूअ में जाता है तो सुरीन (कूल्हे) दीवार से लगते हैं इसलिए थोड़ा सा आगे को बढ़ना पड़ता है और उठते वक़्त थोड़ा सा पीछे को हटना पड़ता है, जगह की तंगी की वजह से इतनी क़लील हरकत से नमाज़ फ़ासिद नहीं होती।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–10 सफ़्हा–258)

तिजारत की वजह से तर्के जमाअत?

सवाल: ज़ैद ताजिर है वह अपने नौकर या किसी साथी पर अपने कारोबार का एतेमाद नहीं कर कसता कि वह उन लोगों पर छोड़ कर मस्जिद में जमाअत से नमाज़ अदा करने जाए, अगर जाता है तो ख़्यालात मुन्तशिर होते हैं तो क्या हुक्म है कि वह दूकान पर नमाज़ पढ़े या मस्जिद में जाए, इसलिए कि मस्जिद जाने में बहुत तकल्लुफ़ात करने पड़ते हैं।

जवाब: अगर अंदेशा नुक़सान का है और दूकान बंद करना दुश्वार है तो वह शख़्स दूकान पर नमाज़ पढ़ ले।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–63, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–519)

मश्क़ के लिए बच्चों की जमाअत कराना?

मस्अला: बच्चों को अगर बतौर तालीम नमाज़ की मश्क़ कराई जाए और वह जमाअत करते हैं तो उनकी

जमाअत (इमाम के) मुसल्ले से (मेहराब से) अलाहिदा कराई जाए और वह तकबीर भी कहें।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–61)

सफ़े औवल किसको कहते हैं?

सवाल: सफ़े औवल किसको कहते हैं? अगर जगह की तंगी की वजह से एक सफ़ आगे बढ़ा दी जाए और वह मिम्मबर की वजह से मुन्क़ता हो जाए, और मुक़्तदी इमाम के क़रीब दाएँ बाएँ खड़े हों तो ये सफ़े औवल होगी या उसके पीछे वाली सफ़, सफ़े औवल होगी, और जगह की तंगी की वजह से इस तरह सफ़ बनाना दुरुस्त है या नहीं?

जवाब: सफ़े औवल वह है जो इमाम के क़रीब हो, मुअज़्ज़िन इक़ामत के लिए इमाम के पीछे खड़ा होता है, उसके साथ नमाज़ियों की जो सफ़ है वह सफ़े औवल ही शुमार होगी, पीछे जमाअत ख़ाना और सेहन में और ऊपर भी जगह न हो तो नमाज़ियों को इमाम के क़रीब हो जाना बिला कराहत दुरुस्त है (जबकि ऐड़ी इमाम की ऐड़ी क़े पीछे हो) जगह होते हुए इमाम के साथ सफ़ बना लेना मकरूहे तहरीमी है। (क्योंकि मस्अला ये है कि) एक से ज़ाएद मुक़्तदी हों तो वह इमाम के पीछे खड़े हों। लिहाज़ा अगर दो मुक़्तदी हों और इमाम उनके दरमियान खड़ा रहा तो मकरूहे तंज़ीही है और अगर दो से ज़ाएद हों तो मकरूहे तहरीमी है।

(दुर्रेमुख़्तार मअ़ शामी जिल्द–1 सफ़्हा–531)

नीज़ मुक़्तदियों के इमाम के साथ खड़े होने में जमाअ़ते निसा (औरतों की जमाअ़त) के साथ मुशाबहत लाज़िम आती है, ये भी एक वजहे कराहत है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–336)

ज़बरदस्ती सफ़े औवल में घुस जाना

मस्अला: जब नमाज़ी मस्जिद में नमाज़ पढ़ने के इरादे से जाए तो शुरू ही से पहली सफ़ में जहाँ जगह मिले बैठे। आगे की सफ़ों में जगह होते हुए पीछे बैठना और बाद में धक्के बाज़ी कर के पहली सफ़ में घुस जाना नमाज़ियों को तकलीफ़ पहुंचाना है, और ये हरकत नाज़ेबा और सख़्त मकरूह है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–334)

बालिग़, कम अक़्ल का सफ़े औवल में खड़ा होना?

मस्अला: जो बालिग़ लड़का पागल की तरह हो, नमाज़ी की अज़मत न समझता हो, नापाकी का ख़्याल न करता हो, और नमाज़ में बेजा हरकतें करता हो, जिसकी वजह से नमाज़ियों को तशवीश होती हो, तो उसको बालिग़ों की सफ़ में खड़े होने से रोका जाए। और अगर खड़ा हो गया हो तो उसको पीछे किया जा सकता है, फ़ुक़हा ने ऐसे शख़्स को बच्चे के हुक्म में दाख़िल किया है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–335, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–541,बाबुलइमामत)

तकबीरे ऊला का सवाब कब तक है?

मस्अला: पहली रकअत के रुकूअ तक शामिल हो जाने से तकबीरे ऊला का सवाब हासिल हो जाएगा। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़हा–50, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़हा–353, इमदादुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़हा–185)

मस्अला: तकबीरे ऊला की फ़ज़ीलत उस शख़्स के लिए है जो इमाम के तहरीमा के वक़्त मौजूद हो, बाज़ ने उसमें ज़्यादा वुसअ़त दी है कि जो शख़्स क़िराअत शुरू होने से पहले शरीक हो जाए, और बाज़ ने मज़ीद वुसअ़त दी है कि जो क़िराअत ख़त्म होने से पहले शरीक हो जाए उसको भी फ़ज़ीलत हासिल है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़हा–194)

नमाज़ में मोंढे नर्म करना

हज़रत इब्न अब्बास (रज़ि.) से रिवायत है कि नबी रकीम (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि तुम में से बेहतरीन लोग वह हैं जिनके मोंढे नमाज़ में नर्म रहें।

तशरीह: नमाज़ में नर्म मोंढे की तौज़ीह व तशरीह में उलमा ने बहुत कुछ लिखा है, मुख़्तसर ये है कि अगर कोई शख़्स जमाअ़त में इस तरह खड़ा हो कि सफ़ बराबर न हुई और पीछे से अगर कोई शख़्स आकर उसका मोंढा पकड़ कर उसे सीधा खड़ा हो जाने के लिए कहे तो वह ज़िद व हटधर्मी और तकब्बुर न करे

बल्कि उस शख़्स का कहना मान ले और सीधा खड़ा हो कर सफ़ बराबर कर ले।

दूसरे माना ये भी हैं कि अगर कोई शख़्स सफ़ में आकर खड़ा होना चाहे और जबकि सफ़ में जगह भी हो तो उसे मना न करे, बल्कि सफ़ में खड़ा हो जाने दे।

उसके तीसरे माना ये भी हो सकते हैं कि मोंढों को नर्म रखना, नमाज़ में खुशूअ व खुजूअ और सुकून व वक़ार के लिए ये किनाया है, यानी नमाज़ में सब से बेहतर वह शख़्स है जो निहायत ख़ातिर जमई और इत्मीनान व वक़ार के साथ नमाज़ पढ़ता रहे।

(मज़ाहिरे हक़ जिल्द–2 सफ़्हा–76)

पहले ज़माने में मसाजिद में सफ़ों का एहतेमाम नहीं हुआ करता था, बग़ैर मुसल्ले के जमाअत होती थी जिससे सफ़ें टेढ़ी हो जाया करती थीं। अब माशाअल्लाह छोटी से छोटी मस्जिद में सहीह सफ़ें बिछी हुई होती हैं, इसलिए अब इमाम और मुक़्तदियों पर ये ज़िम्मादारी है कि सफ़ों के सीधेपन को देखने के साथ साथ इसका ख़्याल रखें कि कंधे से कंधे मिलना ज़रूरी है, क्योंकि अगर ऐसा न किया जाए तो दरमियान में फ़स्ल व ख़ला रहेगा और ये मकरूह है और टख़ने के बराबर टख़ना रखना ज़रूरी है, उनका आपस में मिलाना ज़रूरी नहीं है।

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

सफ़ों से मुतअ़ल्लिक़ मसाइल

मस्अलाः नमाज़ में मुक़्तदियों का मिल कर खड़ा

होना और बीच में ख़ाली जगह न छोड़ना सुन्नत है। क़दम का क़दम से मिलाने का मतलब ये है कि एक सीध में और बराबर रहें आगे पीछे न हों।

मस्अला: टख़ना टख़ने की सीध में होना चाहिए और मोंढा मोंढे की सीध में होना चाहिए। इससे सफ़ सीधी हो जाएगी।

मस्अला: टख़ने और ऐड़ियाँ बराबर कर के खड़े हों आगे से उंगलियों को बराबर करने की ज़रूरत नहीं है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–96 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–337, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–531, बाबुलइमामत)

मस्अला: अगर पहली सफ़ में जगह नहीं मिली तो इंतिज़ार करे, ताकि दूसरा नमाज़ी आ जाए, अगर नहीं आया तो सफ़ से ऐसे शख़्स को कि जो शख़्स मस्अला को जानता हो पीछे खींच ले, और अगर ऐसा शख़्स नज़र न आए तो तन्हा इमाम के पीछे और सफ़ के बीच में खड़ा हो जाए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–335, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–605)

(उमूमन ना वाक़िफ़ होने लोगों के मसाइल से अगर खींचना मुनासिब न समझे, न खींचे, क्योंकि नमाज़ तन्हा भी हो जाती है) (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अला: इमाम मुक़्तदियों को हुक्म करे कि ख़ूब मिल कर खड़े हों और दो नमाज़ियों के दरमियान में कुशादगी न छोड़ें और अपने मोंढे बराबर करें। पस अगर अगली सफ़ में गुंजाईश है तो फिर बमूजिबे हुक्म अगली सफ़ में

खड़ा होना चाहिए और दरमियान की कुशादगी को बंद करना मुस्तहब और मसनून है। और अगर जगह न हो तो तकलीफ़ देना अगली सफ़ के नमाज़ियों को मुनासिब नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–340, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–532, बाबुलइमामत)

मस्अलाः ख़ूब सूरत नाबालिग़ लड़के को जमाअत में बराबर खड़ा होने से बाज़ फ़ुक़हा ने नमाज़ के फ़ासिद होने का हुक्म दिया है, अगरचे असह अदमे फ़सादे सलात है (यानी नमाज़ फ़ासिद न होगी) और शह्वत की नज़र से उसकी तरफ़ देखने को हराम लिखा है। पस नमाज़ में ऐसे लड़कों को बराबर में खड़ा करना नहीं चाहिए और अस्ल मस्अला ये है कि नाबालिग़ लड़के अगर मुतअद्दद हों तो उनकी सफ़ मर्दों के पीछे होनी चाहिए और अगर एक ही लड़का जमाअत में हो तो उसको मर्दों की जमाअत में खड़ा होना दुरुस्त है।

बहरहाल ये मालूम हो गया कि नाबालिग़ लड़का अगर मर्दों की सफ़ में खड़ा हो गया और दोनों तरफ़ उसके बालिग़ीन खड़े हो गए तो उन बालिग़ीन की नमाज़ में कुछ फ़साद और कराहत नहीं आती।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–342, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–539, बाबुलइमामत व फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–190 व शामी जिल्द–1 सफ़्हा–353)

मस्अलाः अगर अगली सफ़ बालिग़ों की पूरी ने हो और पीछे नाबालिग़ों की सफ़ पूरी हो तो बाद में आने वाला अगर लड़कों के आगे को जाकर या सफ़ को चीर कर बालिग़ों की जमाअत (सफ़) में मिल सके तो चला

जाए और बालिगों की जमाअत में शरीक हो जाए और अगर कुछ मुमकिन न हो और लड़कों की ही जमाअत (सफ़) में खड़ा हो जाए तब भी नमाज़ सहीह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–339, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–532 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–194)

मस्अला: पहली सफ़ पूरी नहीं भरी थी कि पीछे बच्चों की सफ़ पूरी हो गई यानी मर्दों की सफ़ को बच्चों की सफ़ में दाएँ बाएँ से घेर लिया है तो अब मर्द आने वाला इस सूरत में बच्चों के आगे से गुज़र कर मर्दों की सफ़ में शामिल हो जाए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–354)

मस्अला: औरतें अगरचे मुहरमात में से हों, जमाअत में वह भी बराबर न खड़ी हों, इससे मर्द की नमाज़ फ़ासिद हो जाती है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–363, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–535, बाबुलइमामत)

मस्अला: मियाँ बीवी की जमाअत इस तरह कि दोनों बराबर खड़े हों जैसा कि एक मुक़्तदी होने की सूरत में हुक्म है, दुरुस्त नहीं है, इस सूरत में किसी की नमाज़ न होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–342 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–191 व शामी जिल्द–1 सफ़्हा–535 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–14 सफ़्हा–211)

(लेकिन अगर औरत के क़दम मर्द के क़दम से पीछे हों तो दुरुस्त है) (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अलाः दरमियान की सफ़ों को ख़ाली छोड़ कर खड़े होने से नमाज़ तो हो जाऐगी। मगर ये ख़िलाफ़े सुन्नत है, सफ़ूफ़ को मत्तिसल करना चाहिए और ख़ला दरमियान में न छोड़ना चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–338, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–533)

मस्अलाः बिला ज़रूरत सुतूनों के दरमियान यानी दरों में खड़ा होना मकरूह है मगर नमाज़ हो जाती है और सवाबे जमाअ़त भी हासिल होगा, और अगर एक दर में चंद आदमी खड़े हो सकते हैं कि छोटी सी जमाअ़त उनकी हो जाए और उसकी ज़रूरत भी हो तो उसमें कराहत भी बज़ाहिर न होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–344, बहवाला मबसूत जिल्द–2 सफ़्हा–35)

मस्अलाः अगर मुक़्तदी अपना ख़ास मुसल्ला (जाए नमाज़ वग़ैरा) बिछाए तो उसमें कुछ हरज नहीं है, और कुछ ज़रूरत भी नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–344)

(अगल से बिछाने में बड़ाई महसूस होती है, इसलिए अगर ज़रूरत हो तो बिछाए, मसलन कोई मरीज़ राल या पेशाब वग़ैरा का है तो अगल बिछा ले)

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अलाः अगर कोई शख़्स पहले से आकर मस्जिद में किसी जगह बैठा और फिर बज़रूरत वुज़ू वग़ैरा वहाँ से उठा और उस जगह अपना कपड़ा (रूमाल वग़ैरा) रख गया तो वह ज़्यादा मुस्तहिक़ है, उस जगह के साथ।

पस अगर कोई दूसरा शख़्स उस जगह बैठ गया तो वह उसको उठा सकता है और बिदून इस हालते मज़कूरा के किसी जगह रूमाल वगैरा रखना और कब्ज़ा करना अच्छा नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–351)

(जो शख़्स मस्जिद में पहले आ जाए वह ही ख़ाली जगह का मुस्तहिक़ है, अगर वह अपना रूमाल वगैरा रख कर वुज़ू वगैरा में मशगूल हो जाए तो उसका जगह रोकना तो सहीह है लेकिन अगर जगह रोक कर घर वगैरा चला जाए तो उसका जगह रोकना जाइज़ नहीं है)

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी गुफ़िरलहू)

मस्अलाः सफ़े औवल में भी ब एतेबार जवानिब सवाब में कमी बेशी है जो शख़्स इमाम के मुहाज़ी (बिल्कुल पीछे) है उस पर रहमत का नुज़ूल ज़्यादा है मगर दूसरे नमाज़ियों को तकलीफ़ हो तो फिर अफ़ज़ल ये है कि उस जगह को छोड़ दे, और जो मस्जिद में पहले आएगा उसको सवाब ज़्यादा मिलेगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–350)

मस्अलाः सफ़ की दाईं जानिब खड़े होने में अफ़ज़लियत है ताहम अगर दाईं तरफ़ आदमी ज़्यादा हों तो बाईं तरफ़ खड़े होना ज़रूरी है, ताकि दोनों जानिब का तवाज़ुन बराबर हो।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–218)

मस्अलाः इमाम की बराबरी में सिर्फ़ चार अंगुल पीछे जैसा कि एक मुक़्तदी होने की सूरत में खड़ा होता है, बारिश या गर्मी की वजह से सफ़ बना लें तो दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–351)

मस्अला: इमाम के क़रीब अह्ले इल्म व अह्ले अक़्ल का खड़ा होना बेहतर है, लेकिन अगर इमाम के पीछे, क़रीब दूसरे नमाज़ी लोग आ गए हैं तो उनको हटाने की ज़रूरत नहीं है क्योंकि नमाज हर तरह हो जाती है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–357 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–7 सफ़्हा–264)

(अह्ले इल्म को दूसरे अवामुन्नास जो पहले से इमाम के पीछे आ गए थे, तरजीह दें और अपनी जगह इमाम के पीछे खड़ा करें तो ये फ़ेअल भी दुरुस्त बल्कि मतलूब है, और जब पहली सफ़ पूरी हो जाए तो दूसरी सफ़ भी इमाम के पीछे से शुरू करनी चाहिए)

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अला: मुख़न्नस मर्दों की जमाअत में शामिल हो सकते हैं, मगर वह मर्दों की जमाअत से पीछे खड़े हों, और उनके शामिल होने से दीगर मुसलमानों की नमाज़ सहीह है और उनका रुपया मस्जिद में ख़र्च करना दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–353, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–414)

मस्अला: अगर एक नाबालिग़ है तो बालिग़ों की सफ़ में खड़ा हो सकता है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–9 सफ़्हा–75)

मस्अला: अगर मुसल्ले और सफ़ की चौड़ाई कम हो जिस पर सज्दा नहीं हो सकता है तो जिस तरह चाहे करें, ख़्वाह पैर सफ़ और मुसल्ले पर हों और सज्दा फ़र्श

पर हो या पैर नीचे हों और सज्दा सफ़ पर हो।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–352 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–220, कबीरी सफ़्हा–347)

(लेकिन जगह का पाक होना शर्त है, मुसल्ले का होना या छोटा बड़ा होना ज़रूरी नहीं है)

(मुहम्मद रफ़अत कासमी गुफ़ेरलहू)

मस्अला: जो शख़्स आगे सफ़ में जगह ख़ाली देख कर फलांग कर बैठा, उस पर कुछ गुनाह नहीं है और जिसने बावजूद आगे जगह ख़ाली होने के पीछें बैठना इख़्तियार किया, उसने ख़िलाफ़े औला किया।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–345, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–533 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–7 सफ़्हा–262)

मस्अला: जमाअत हो रही हो और सब लोग नीयत बाँध चुके हों, बाद में आने वाला अगर पहली सफ़ में जगह ख़ाली देखे तो वह शख़्स किनारा से सफ़ों में जाकर खड़ा हो सकता है। और कुछ गुनाह न होगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–354)

मस्अला: सब से अगली क़ितार (पहली सफ़) में किसी का वुज़ू टूट जाए, असनाए नमाज़ में तो वह सफ़ों को चीरता हुआ निकल सकता है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–402)

माज़ूर आदमी सफ़ में कहाँ खड़ा हो?

सवाल: हमारी मस्जिद में दो आदमी माज़ूर हैं, खड़े हो कर नमाज़ नहीं पढ़ सकते, अगर पहली सफ़ में

मुअज़्ज़िन के पास बैठ कर नमाज़ अदा करते हैं तो काफ़ी जगह रोकते हैं, सफ़ के दरमियान काफ़ी ख़ला (फ़ासिला) रहता है और दूसरे नमाज़ियों को तकलीफ़ होती है, ऐसे लोगों के लिए क्या हुक्म है?

जवाबः सूरते मसऊला में ऐसे लोगों के लिए बेहतर ये है कि आख़िरी सफ़ में या जहाँ किनारे पर जगह हो वहाँ नमाज़ अदा करें, इंशाअल्लाह उनको जमाअ़त और सफ़े औवल का सवाब मिलेगा। शामी में है कि अपनी ज़ात से किसी को तकलीफ़ पहुंचने का अंदेशा हो तो उसके लिए अफ़ज़ल ये है कि आख़िरी सफ़ में खड़ा हो, क्योंकि आप (स.अ.व.) का इरशादे मुबारका है कि जो किसी मुसलमान को तकलीफ़ पहुंचने के अंदेशा से पहली सफ़ छोड़े तो उसको पहली सफ़ का दुगना अज्र दिया जाएगा।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–7 सफ़्हा–264 व शामी जिल्द–1 सफ़्हा–532)

मस्अलाः अक्सर अवाम का मामूल है कि जब मरीज़ जमाअ़त में शरीक होता है तो तमाम सफ़ के किनारे पर बाईं तरफ़ बैठता है, गोया दरमियान में बैठने को बुरा समझते हैं ये ग़लत है। (अग़लातुलअवाम सफ़्हा–67)

यानी बीच में भी बैठ सकता है, नमाज़ में कोई ख़राबी नहीं आएगी। (रफ़अ़त)

मस्अलाः अगर इमाम के साथ एक मुक़्तदी है फिर दूसरा शख़्स आ जाए तो बेहतर ये है कि पहला मुक़्तदी पीछे हो जाए और दोनों इमाम के पीछे हो जाएँ। इसमें शर्त ये है कि अगर उस मुक़्तदी की नमाज़ के फ़साद

का अंदेशा न हो तो उसको पीछे को हटाए वरना न हटाए, इससे मालूम हुआ कि पीछे करने की ज़रूरत उस वक़्त है कि ये मालूम हो कि पहला मुक़्तदी पीछे हट जाएगा, और उसको मस्अला मालूम हो।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–358)

मस्अलाः इस हालत में इमाम आगे बढ़े या मुक़्तदी पीछे को हटे, दोनों अम्र जाइज़ हैं, लेकिन मुक़्तदी का पीछे हटाना औला है बनिस्बत इमाम के आगे बढ़ने से।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–353, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–531)

मस्अलाः सुन्नत इमाम के लिए मेहराब में और वस्ते क़ौम (नमाज़ियों के बीच) में खड़ा होना है, लिहाज़ा अगर बाहर फ़र्शे सेहन में खड़ा हो तब भी महाज़े मेहराब के खड़ा हो, बाक़ी नमाज़ हर तरह हो जाती है। लेकिन सुन्नत वही है जो मज़कूर हुआ है।

मस्अलाः अगर कहीं मस्जिद का सेहन दस बारह हाथ किसी तरफ़ बढ़ गया हो तो अब इमाम को सेहन के एतेबार से बीच में खड़ा होना चाहिए, यानी बाहर खड़े हों तो सेहन के वस्त का ख़्याल कर लिया जाए।

(फ़ताव दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–361, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–531)

मस्अलाः इमाम सफ़ के बीच में खड़ा हो, ये सुन्नत है, अगर मुक़्तदी सब एक तरफ़ खड़े हो गए, नमाज़ सहीह होगी मगर कराहत के साथ।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–364, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–531)

मस्अला: अगर इमाम दर में इस तरह खड़ा हो कि क़दम भी अन्दर हों और मुक़्तदियान फ़र्श पर हों तो ये मकरूह है जैसा कि मेहराब के अन्दर खड़ा होना इमाम का मकरूह है, और अगर क़दम बाहर फ़र्श पर हों तो कराहत नहीं रहती।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–363 व रद्दलुमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–531)

मस्अला: इमाम को वस्त में खड़ा होना चाहिए और दोनों तरफ़ बराबर मुक़्तदी करने चाहिएँ, बाईं तरफ़ ज़्यादा मुक़्तदियों को खड़ा करना ख़िलाफ़े सुन्नत है।

तरीक़ए सुन्नत ये है कि जिस वक़्त जमाअत खड़ी हो दोनों तरफ़ बराबर मुक़्तदी हों, फिर जो बाद में आकर शरीके जमाअत हों उनको भी ये लिहाज़ रखना चाहिए कि हत्तलवुस्अ दोनों तरफ़ बराबर शरीके जमाअत हों।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–347, आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–83)

मस्अला: मुक़्तदी की सज्दागाह से इमाम के खड़े होने की जगह के (मुक़्तदी व इमाम के) दरमियान में सफ़ का फ़ासिला छोड़ें और कुछ तहदीद नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–347, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–530)

इमाम व मुक़्तदी के दरमियान इतना फ़ासिला हो कि मुक़्तदी का सर रुकूअ व सुजूद में जाते हुए इमाम से न टकराए। (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अला: अगर इमाम की नमाज़ न होगी तो मुक़्तदियों की भी न होगी, सब पर इआदा (लौटाना) नमाज़ का

लाज़िम है, तन्हा इमाम के इआदा से मुक़्तदियों की नमाज़ न होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–372, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–353)

(अगर मुक़्तदी चले गये तो इमाम सबको इत्तिला करे इत्तिला मिलने पर उनको उस नमाज़ का लौटाना ज़रूरी है, अगर इत्तिला न मिले तो मुक़्तदी माज़ूर हैं, उन पर कुछ मुवाख़ज़ा नहीं है)

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अलाः ये ग़लत बात मशहूर है कि चारपाई पर नमाज़ पढ़ने से आदमी बंदर हो जाता है, ये महज़ बेअस्ल बात है। (अग़लातुलअवाम सफ़्हा–52)

मस्अलाः चारपाई (पलंग) पर अगर कोई बहालते सेहत नमाज़ फ़र्ज़ या नफ़्ल पढ़े तो नमाज़ सहीह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–123, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–468, बाब सिफ़्तुस्सलात व इमदादुलअहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–563)

(लेकिन पलंग ख़ूब कसा हुआ हो, सख़्त होना चाहिए ताकि सज्दा वग़ैरा में कमर का तवाज़ुन सहीह रहे, आज कल लोहे के फ़ोलडिंग पलंग सहीह हैं, लेकिन अगर बीमारी की वजह से आम पलंग पर भी नमाज़ अदा करे तो उसके लिए सहीह है जिसमें उसको आराम मिले)

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अलाः नक़्श व निगार (बग़ैर तस्वीर जानदार) वाले मुसल्ले पर नमाज़ अदा हो जाती है, लेकिन पेशे नज़र होना नक़्श व निगार का अच्छा नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–127, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–607)

मस्अलाः तस्वीर का हुक्म, हुक्मे असली नहीं होता, उस मुसल्ले पर नमाज़ पढ़ना जिस पर बैतुल्लाह की तस्वीर हो, ऐसा नहीं जैसे बैतुल्लाह पर नमाज़ पढ़ना, लिहाज़ा बैतुल्लाह की इससे एहानत नहीं होती है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–14 सफ़्हा–203)

मस्अलाः जिस जाए नमाज़ (मुसल्ले) पर परिन्दा की तस्वीर हो, उस पर दूसरा कपड़ा डाल कर नमाज़ जाइज़ है बिला कराहत।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–129, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–606)

मस्अलाः दबाग़त दी हुई खाल का मुसल्ला बनाना दुरुस्त है उस पर नमाज़ पढ़ना बिला कराहत के दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–100, फ़तावा आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–23 बाबुलमियाह)

मस्अलाः मस्जिद के दर में खड़े होकर नमाज़ पढ़ना मकरूह है, लेकिन अगर ज़्यादा नमाज़ी हों जैसा कि जुमा के दिन होता है कि मस्जिद के अन्दर की सफ़ें पूरी कर के कई कई आदमी दरों में जो कि वसीअ़ हैं खड़े हो जाएँ तो ज़रूरत की वजह से उसमें कुछ हरज नहीं है और नमाज़ में ख़लल नहीं आता।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–134, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–604)

मस्अलाः मस्जिद का बंद करना मकरूह है लेकिन अगर सामान चोरी हो जाने का अंदेशा है तो सिवाए औक़ाते

नमाज़ के दरवाज़ा मस्जिद का बंद करना दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–149, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–614, बाब फ़ी अहकामिल मस्जिद)

(और ये मुहल्ला वालों की राये पर है जिस वक़्त वह मुनासिब समझें, सिवाए औक़ाते नमाज़ के दरवाज़ा बंद कर दिया करें) (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अला: बिला इजाज़त दूसरे की ज़मीन में नमाज़ पढ़ी तो नमाज़ हो गई।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–94, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–354)

(अगर किसी की ज़मीन या मकान वग़ैरा ग़सब कर के उसमें नमाज़ पढ़ी तो नमाज़ तो हो जाएगी लेकिन ग़सब करने की सज़ा भुगतनी पड़ेगी)

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अला: घास पर नमाज़ दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–152)

मस्अला: अगली (पहली) सफ़ में जगह हो तो उसके पीछे वाली सफ़ में नमाज़ पढ़ना मकरूह है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–440)

मस्अला: ज़कात के पैसों से ख़रीदी हुई सफ़ों पर नमाज़ जाइज़ है, लेकिन ज़कात उसकी अदा नहीं हुई।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–51, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–85)

(ज़कात देने वाले की ज़कात अदा न होगी, क्योंकि तमलीक नहीं पाई गई, और ज़कात के लिए तमलीक यानी मालिक बनाना ज़रूरी है और मस्जिद में मालिक

बनने की सलाहियत नहीं है। तफ़सील देखिए मुकम्मल व मुदल्लल मसाइले ज़कात)

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अला: मुस्लिम या ग़ैर मुस्लिम के घर में गोबर से लिपी हुई खुश्क जगह पर पाक कपड़ा बिछा कर नमाज़ पढ़ने में कोई हरज नहीं है, जाइज़ है, नमाज़ सहीह हो जाएगी। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–231)

मस्जिद के अन्दरूनी हिस्सा में जमाअत की जाए या सेहन में?

सवाल: मस्जिद के अन्दर नमाज़ पढ़ना और मस्जिद के सेहन में नमाज़ पढ़ना बराबर है, या सवाब में फ़र्क़ आता है, क्योंकि गर्मियों में सेहन में नमाज़ होती है?

जवाब: जहाँ तक ज़मीन मस्जिद के लिए यानी नमाज़ पढ़ने के लिए वक़्फ़ की गई है वह सब फ़ज़ीलत में बराबर है, और जब मस्जिद में सफ़ बंदी हो जाए और जगह न रहे तो जो लोग ख़ारिजे मस्जिद खड़े होकर नमाज़ में शामिल होते हैं उनको भी मिस्ले मस्जिद वालों के सवाब मिलता है, ग़रज़ अन्दरूने मस्जिद व सेहने मस्जिद में कोई फ़र्क़ नहीं, हाँ मस्जिद की छत और दाख़िले मस्जिद में फ़ुक़हा ने फ़र्क़ ब्यान किया है, कि छत पर (जबकि सफ़ूफ़ न मिलें यानी भीड़ न हो तो) वह सवाब नहीं है जो दाख़िले मस्जिद में है, गो हुक्मे एतेकाफ़ में वह भी मस्जिद ही है।

(इमदादुलअहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–443)

मस्अलाः मस्जिद वह ही है जो वक़्फ़ हो, और जो वक़्फ़ न हो वह मस्जिद नहीं है, उसमें जमाअ़त करने से जमाअ़त का सवाब तो मिलेगा, मगर मस्जिद का सवाब न मिलेगा, फ़क़त मकान में नमाज़ की इजाज़त देने से वह मस्जिद नहीं होती, और अगर बग़ैर मस्जिद के (घर वग़ैरा पर) जमाअ़त हो तो सत्ताईस नमाज़ियों का सवाब मिलता है और मस्जिद का सवाब उसके अलावा है।

(इमदादुलअहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–448)

मस्अलाः बालाई मस्जिद में नमाज़ जाइज़ है, (जब कि जमाअ़त में नीचे भर गई हो)।

(इमदादुलअहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–439)

मस्अलाः अगर बाहर सेहन में नमाज़ हो रही हो तो जमाअ़त के वक़्त मस्जिद के अन्दर के दरवाज़ों को बंद करना ज़रूरी नहीं है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–361)

मस्अलाः क़ुर्ब व जवार में मुतअ़द्दद मस्जिदें हैं, अगर ये सब उसके मुहल्ले में हैं तो उन सब में जो सब से पहले की और क़दीम मस्जिद हो वह अफ़ज़ल है, और अगर क़दीम होने में सब बराबर हों या क़दीम होना मालूम न हो तो जो सब से ज़्यादा क़रीब हो वह अफ़ज़ल है।

(इमदादुलअहकाम जिल्द–2 सफ़्हा–459)

मस्जिद में जूते रखना कैसा है?

मस्अलाः जूता में अगर नजासत न लगी हो तो मस्जिद के अन्दर रख देना जूता का जाइज़ है, और चोरी का

ख़ौफ़ न हो तो मस्जिद से बाहर रख देना बेहतर है, और अगर नापाकी लगी हो तो बग़ैर उसके दूर किए जूता मस्जिद में रखना जाइज़ नहीं है।

(इमादादुलअहकाम जिल्द–1 सफ़हा–444)

चटाई वग़ैरा पर नमाज़ पढ़े या ख़ाली ज़मीन पर?

आँ हज़रत (स.अ.व.) से दोनों तरह नमाज़ पढ़ना साबित है। हदीस लैलतुल क़द्र से साबित होता है कि आप (स.अ.व.) ने ज़मीन पर नमाज़ पढ़ी थी, यहाँ तक कि आपकी पेशानी मुबारक पर गारे (मिट्टी) का निशान हो गया। और शरह मुनिया में है कि आप के लिए नमाज़ के वक़्त एक खजूर का बोरिया बिछाया जाता था।

(कबीरी जिल्द–1 सफ़हा–283)

इससे मालूम हुआ कि दोनों तरीक़े सुन्नत हैं, जिसको चाहे इख़तियार कर ले, अलबत्ता अगर सर्दी या गर्मी की वजह से खुली ज़मीन पर नमाज़ पढ़ने से तकलीफ़ और तशवीश ख़ातिर होती हो तो फिर बोरिया चटाई वग़ैरा बिछा लेना अफ़ज़ल है। इसी तरह अगर ज़मीन पर गर्द व गुब्बार की वजह से कपड़े मैले हो जाने का ख़तरा तअ़ल्लुक़े ख़ातिर की हद तक पहुंचता हो तो भी बोरिया पर पढ़ना अफ़ज़ल है, क्योंकि इसमें अपने माल का तहफ़्फ़ुज़ है जिसकी शरअ़न इजाज़त है, और अगर पेशानी या हाथों पर मिट्टी लगने से तबीअत में तकद्दुर न होता हो तो फिर उसकी तरफ़ इलतिफ़ात न करना और ज़मीन पर ही नमाज़ पढ़ना अफ़ज़ल है, क्योंकि उसका मनशा

इस क़िस्म का तरफ़्फ़ो है जो मक़सूदे नमाज़ से दूर है।

(फ़तावा दारुलउलूम क़दीम जिल्द–1 सफ़्हा–58, मअ इमदादुलमुफ़्तीन)

हज़रत अबूसईद ख़ुदरी (रज़ि.) ब्यान करते हैं कि (एक दिन में नबी करीम (स.अ.व.) के पास पहुंचा तो मैंने देखा कि आप (स.अ.व.) बोरिए (चटाई) पर नमाज़ पढ़ रहे हैं और उसी पर सज्दा कर रहे हैं।

तशरीहः इस हदीस में इस बात की दलील है कि जो चीज़ मुसल्ली यानी नमाज़ पढ़ने वाले और ज़मीन के दरमियान हाएल हो, उस पर नमाज़ पढ़ना जाइज़ है, ख़्वाह वह नबातात की क़िस्म से हो, जैसे कपड़ा और सूफ़ वग़ैरा। हदीस में अगरचे हसीर यानी बोरिए ही का ज़िक्र है लेकिन उलमा दूसरे ऐसे दलाइल रखते हैं जिनसे साबित होता है कि चटाई के अलावा कपड़े वग़ैरा की भी जाए नमाज़ बनाना और उस पर नमाज़ पढ़ना जाइज़ है।

(मज़ाहिरे हक़ जिल्द–1 सफ़्हा–642)

मस्अलाः नंगे पाँव चलने वाला बग़ैर पाँव धोए जबकि बावुज़ू हो, पैरों को झाड़ कर, और साफ़ कर के नमाज़ पढ़े तो नमाज़ हो जाएगी। बशर्तेकि पैर पाक हों नजासत लगी न हो।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–139)

ग़ैर मुस्लिम की बनाई हुई सफ़ पर नमाज़ पढ़ना?

सवालः क्या सफ़ों को धो कर नमाज़ पढ़नी चाहिए क्योंकि ये सफ़ें हिन्दू बनाते हैं और वह पानी नापाक

लगाते हैं, क्योंकि जिस बरतन में ये लोग तकला (सफ़ बनाने का आला) भिगोते हैं, उस बरतन में से अक्सर पानी पी लेते हैं, गरज़ ये कि ये लोग एहतियात नहीं करते?

जवाबः हिन्दू (ग़ैर मुस्लिम) की बनाई सफ़ों को धोना अगर नापाक होना यक़ीन से मालूम हो जाए तब तो धोना ज़रूरी है, और अगर शुब्हा हो तो एहतियातन धो लेना बेहतर है। किसी जगह का आम दस्तूर होने से यक़ीन नजासत का नहीं होता, बल्कि यक़ीन की सूरत ये है कि किसी ख़ास चटाई में नापाक पानी लगना मालूम हो जाए।

(इमादादुलअहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–399 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–134)

मस्अलाः जेल ख़ाना से ख़रीद कर्दा जाए नमाज़ जिस को कैदी बुनते हैं नमाज़ जाइज़ है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–138, व रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–373)

एयरकंडीशन मस्जिद और इमाम की इक़्तिदा

सवालः अगर मस्जिद में एयरकंडीशन नसब कर दिया जाए तो क्या हुक्म है? मस्जिद की सूरतेहाल कुछ इस तरह है कि जब मस्जिद भर जाती है तो लोग बरआमदे में नमाज़ अदा करते हैं और एयरकंडीशन के लिए ज़रूरी है कि मस्जिद के दरवाज़े बंद रखे जाएँ। नीज़ अगर मस्जिद के दरवाज़े शीशा के रखे जाएँ जिससे अन्दर के

नमाज़ी दिखाई दें तो कैसा रहेगा?

जवाब: अगर दरवाज़े बंद हों लेकिन बाहर वालों को इमाम के इंतिक़ालात का इल्म होता रहे तो इक़्तिदा दुरुस्त है। इस तरह अगर दरवाज़े शीशे के लगा दिए जाएँ, तो भी इक़्तिदा दुरुस्त है, जब कि इमाम की तकबीरात की आवाज़ मुक़्तदियों तक पहुंच सके।

(आपके मसाइल जिल्द--3 सफ़्हा–238)

जमाअत के सहीह होने की शर्तें

मस्अला: मुक़्तदी को नमाज़ की नीयत के साथ इमाम की इक़्तिदा की भी नीयत करना यानी ये इरादा दिल में करना कि इस इमाम के पीछे फ़लाँ नमाज़ पढ़ता हूँ।

मस्अला: इमाम और मुक़्तदी दोनों के मकान (जगह) का मुत्तहिद होना ख़्वाह हकीक़तन मुत्तहिद हों जैसे दोनों एक ही मस्जिद या एक ही घर में खड़े हों या हुक्मन मुत्तहिद हों जैसे किसी दरिया के पुल पर जमाअत क़ाइम की जाए और इमाम पुल के उस पार हो और कुछ मुक़्तदी (भी इमाम के साथ) पुल के उस पार मगर दरमियान में बराबर सफ़ें खड़ी हों तो इस सूरत में अगरचे इमाम के और उन मुक़्तदियों के दरमियान में जो पुल के उस पार हैं दरिया हाएल है, इस वजह से दोनों का मकान हकीक़तन मुत्तहिद नहीं, मगर चूँकि दरमियान में बराबर सफ़ें खड़ी हैं (इमाम तक) इसलिए दोनों का मकान हुक्मन मुत्तहिद समझा जाएगा और इक़्तिदा सहीह हो जाएगी।

मस्अला: इमाम और मुक़्तदी के दरमियान इतना ख़ाली

मैदान हो कि जिसमें दो सफ़ें हो सकें तो ये दोनों मक़ाम जहाँ मुक़्तदी खड़ा है और जहाँ इमाम है मुख़्तलिफ़ समझे जाएँगे और इक़्तिदा दुरुस्त न होगी। (अगर सफ़ें मिली हुई न हों यानी दरमियान में ख़ला दो सफ़ों के बराबर आ जाएगा तो इक़्तिदा सहीह न होगी, इसलिए मजमा में इसका ख़्याल ज़रूर रखा जाए, ऐसा न करें कि जहाँ जगह और सहूलत देखी नीयत बाँध ली, और जब इक़्तिदा सहीह न होगी तो नमाज़ भी सहीह न होगी)

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अला: मुक़्तदी और इमाम दोनों की नमाज़ का मुग़ाएर न होना, अगर मुक़्तदी की नमाज़ इमाम की नमाज़ से मुग़ाएर होगी तो इक़्तिदा दुरुस्त न होगी, मसलन इमाम ज़ुहर की नमाज़ पढ़ता हो और मुक़्तदी अस्र की नमाज़ की नीयत करे, या इमाम कल गुज़श्ता ज़ुहर की नमाज़ क़ज़ा पढ़ता हो और मुक़्तदी आज की ज़ुहर, हाँ अगर दोनों कल के ज़ुहर की क़ज़ा पढ़ते हों या दोनों आज ही की ज़ुहर की क़ज़ा पढ़ते हों तो दुरुस्त है।

(मराक़ियुलफ़लाह व शामी)

मस्अला: अगर इमाम फ़र्ज़ पढ़ता हो और मुक़्तदी नफ़्ल (मुक़्तदी फ़र्ज़ पहले पढ़ चुका हो और नफ़्ल की नीयत से इमाम के साथ जमाअ़त में शरीक हो जाए) तो इक़्तिदा सहीह हो जाएगी, इसलिए कि ये दोनों नमाज़ें मुग़ाएर नहीं। (फ़ज्र और अस्र में शरीक न हो)

मस्अला: इमाम की नमाज़ का सहीह होना, अगर इमाम की नमाज़ किसी वजह से फ़ासिद होगी तो सब मुक़्तदियों की नमाज़ भी फ़ासिद हो जाएगी, ख़्वाह ये

फ़साद नमाज़ ख़त्म होने से पहले मालूम हो जाए या बाद नमाज़ ख़त्म होने के।

मस्अला: इमाम की नमाज़ अगर किसी वजह से फ़ासिद हो गई हो और मुक़्तदियों को न मालूम हो तो इमाम साहब पर ज़रूरी है कि अपने मुक़्तदियों को हत्तलइम्कान इसकी इत्तिला कर दे (जबकि मुक़्तदी नमाज़ पढ़ कर जा चुके हों) ताकि वह लोग अपनी अपनी नमाज़ों को लौटा लें, ख़्वाह किसी के ज़रीए से इत्तिला की जाए या ख़त वग़ैरा के ज़रीए से (जब कि मुक़्तदी कहीं चले गए हों)।

(दुर्रेमुख़्तार)

मस्अला: अगर इमाम और मुक़्तदी का मज़हब (मसलक) एक न हो मसलन शाफ़ई या मालिकी मज़हब हो और मुक़्तदी हनफ़ी तो इस सूरत में इमाम की नमाज़ का सिर्फ़ इमाम के मज़हब के मुवाफ़िक़ सहीह हो जाना काफ़ी है ख़्वाह मुक़्तदी के मज़हब के मुवाफ़िक़ भी सहीह हो या न हो, हर हाल में बिला कराहत इक़्तिदा दुरुस्त होगी। हाँ अगर इमाम की नमाज़ उसके मसलक के मुवाफ़िक़ सहीह न हो तो मुक़्तदी की नमाज़ भी दुरुस्त न होगी, अगरचे मुक़्तदी के मज़हब के मुवाफ़िक़ नमाज़ में कुछ ख़राबी न आई हो, और यही हुक्म ग़ैर मुक़ल्लिदीन के पीछे नमाज़ पढ़ने का है, यानी मुक़ल्लिद की नमाज़ उनके पीछे बिला कराहत दुरुस्त है, ख़्वाह वह मुक़्तदी के मज़हब की रिआयत करें या न करें।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–85 व किताबुलफ़ेक़ा जिल्द–1 सफ़्हा–661, 682)

इसलिए कि जब इमाम की नमाज़ सहीह न होगी तो

मक़्तदी की नमाज़ जो उस पर मौक़ूफ़ थी, बदरजए औला ने होगी। तफ़सील के लिए देखिए अहक़र की मुरत्तब कर्दा किताब "मसाइले इमामत"।

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अला: मुक़्तदी का इमाम से आगे न खड़ा होना, ख़्वाह बराबर खड़ा हो या पीछे, अगर मुक़्तदी इमाम से आगे खड़ा हो तो उसकी इक़्तिदा दुरुस्त न होगी। इमाम से आगे खड़ा होना उस वक़्त समझा जाएगा कि जब मुक़्तदी की ऐड़ी इमाम की ऐड़ी से आगे हो जाए, अगर ऐड़ी आगे न हो और उंगलियाँ आगे बढ़ जाएँ ख़्वाह पैर के बड़े होने के सबब से या उंगलियों के लम्बे होने की वजह से तो ये आगे खड़ा होना न समझा जाएगा और इक़्तिदा दुरुस्त हो जाएगी। (ऐड़ी इमाम की ऐड़ी से आगे न हो।) (दुर्रेमुख़्तार)

मस्अला: और अगर बैठ कर नमाज़ हो रही हो तो मुक़्तदी की सुरीन इमाम की सुरीन से आगे न हो। अगर मुक़्तदी उससे आगे बढ़ गया तो उसकी नमाज़ न होगी, हाँ अगर बराबर हों तो बिला कराहत नमाज़ दुरुस्त हो जाएगी।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–661)

मस्अला: मुक़्तदी को इमाम के इंतिक़ालात का, मसलन रुकूअ, क़ौमे, सज्दे और क़अदों वग़ैरा का इल्म होना ख़्वाह इमाम को देख कर या उसकी या किसी मुकब्बिर की आवाज़ सुन कर या किसी मुक़्तदी को देख कर अगर मुक़्तदी को इमाम के इंतिक़ालात का इल्म न हो ख़्वाह किसी चीज़ के हाएल होने की वजह से या किसी और

वजह से तो इक़्तिदा सहीह न होगी। (दुर्रेमुख़्तार)

मस्अला: इक़्तिदा के लिए ये भी ज़रूरी है कि इमाम की हालत का इल्म हो, कि वह मुसाफ़िर है या मुक़ीम ख़्वाह नमाज़ से पहले मालूम हो जाए या नमाज़ से फ़ारिग़ होने के फ़ौरन बाद। (दुर्रेमुख़्तार)

मस्अला: मुक़्तदी को तमाम अरकान में सिवाए क़िराअत के इमाम का शरीक रहना ख़्वाह इमाम के साथ अदा करे या उसके बाद या उससे पहले बशर्तेकि उसी रुक्न के आख़िर तक इमाम उसका शरीक हो जाए।

पहली सूरत की मिसाल: इमाम के साथ ही रुकूअ़ सज्दा वग़ैरा करे।

दूसरी सूरत की मिसाल: इमाम रुकूअ़ कर के खड़ा हो जाए, उसके बाद मुक़्तदी रुकूअ़ करे।

तीसरी सूरत की मिसाल: इमाम से पहले रुकूअ़ करे मगर रुकूअ़ में इतनी देर तक रहे कि इमाम का रुकूअ़ उसे मिल जाए। (रद्दुलमुहतार)

अगर किसी रुक्न में इमाम की शिरकत न की जाए मसलन इमाम रुकूअ़ करे और मुक़्तदी रुकूअ़ न करे या इमाम दो सज्दे करे और मुक़्तदी एक ही सज्दा करे, या किसी रुक्न की इब्तिदा इमाम से पहले की जाए और आख़िर तक इमाम उसमें शरीक न हो, मसलन मुक़्तदी इमाम से पहले रुकूअ़ में जाए और क़ब्ल इसके कि इमाम रुकूअ़ कर के खड़ा हो जाए, इन दोनों सूरतों में इक़्तिदा दुरुस्त न होगी।

मस्अला: मुक़्तदी का इमाम से कम या बराबर होना ज़्यादा न होना, मिसाल:

(1) क़याम करने वाले की इक़्तिदा क़याम से आजिज़ के पीछे दुरुस्त है।

(2) तयम्मुम करने वाले के पीछे ख़्वाह वुज़ू का हो या गुस्ल का, वुज़ू और गुस्ल करने वाले की इक़्तिदा दुरुस्त है क्योंकि तयम्मुम और वुज़ू और गुस्ल का हुक्म तहारत (पाकी) में यकसाँ है, कोई किसी से कम ज़्यादा नहीं।

(3) मसह करने वाले के पीछे ख़्वाह मोज़ों पर करता हो या पट्टी पर धोने वाले की इक़्तिदा दुरुस्त है, इसलिए कि मसह करना और धोना दोनों एक दर्जे की तहारत हैं किसी को किसी पर फ़ौक़ियत नहीं।

(4) माज़ूर की इक़्तिदा माज़ूर पीछे दुरुस्त है बशर्तेकि दोनों एक ही उज़्र में मुब्तला हों।

(5) उम्मी (अनपढ़) की इक़्तिदा उम्मी के पीछे दुरुस्त है, बशर्तेकि मुक़्तदियों में कोई क़ारी (पढ़ा लिखा) न हो।

(6) औरत या नाबालिग़ की इक़्तिदा बालिग़ मर्द के पीछे दुरुस्त है।

(7) औरत की इक़्तिदा औरत या मुख़न्नस के पीछे दुरुस्त है।

(8) नाबालिग़ औरत या नाबालिग़ मर्द की इक़्तिदा नाबालिग़ मर्द के पीछे दुरुस्त है।

(9) नफ़्ल पढ़ने वाले की इक़्तिदा वाजिब पढ़ने वाले के पीछे दुरुस्त है।

(10) नफ़्ल पढ़ने वाले की इक़्तिदा नफ़्ल पढ़ने वाले के पीछे दुरुस्त है। हासिल ये है कि जब मुक़्तदी इमाम से कम या बराबर होगा तो इक़्तिदा दुरुस्त हो जाएगी।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–87)

इमाम के साथ कैसे खड़े हों?

मस्अला: इमाम के किसी एक जानिब मुक़्तदियों का ज़्यादा होना और दूसरी जानिब कम होना मकरूह है (तंज़ीही)। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–245)

मस्अला: अगर इमाम के साथ सिर्फ़ एक मर्द हो या बाशुऊर लड़का हो तो मुस्तहब ये है कि इमाम के दाएँ जानिब किसी क़द्र पीछे हट कर ख़ड़ा हो, बराबर खड़ा होना मकरूह है। इसी तरह बाएँ जानिब या पीछे तन्हा खड़ा होना मकरूह है। अगर इमाम के साथ दो मर्द हों तो दोनों का इमाम के पीछे खड़ा होना मुस्तहब है। इसी तरह एक मर्द और एक लड़के की सूरत में भी करना चाहिए। अगर एक मर्द और एक औरत हो तो मर्द इमाम के दाएँ जानिब खड़ा हो और औरत उस शख़्स के पीछे खड़ी हो, यही मस्अला लड़के का है। अगर मर्दों, बच्चों, मुख़न्नसों और औरतों का मजमा हो तो आगे मर्द खड़े हों, उनके पीछे बच्चे, फिर मुख़न्नस और उनके बाद औरतें। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–691)

मस्अला: एक मुक़्तदी को बाईं तरफ़ या पीछे खड़ा रखे तो नमाज़ तो हो जाएगी मगर ख़िलाफ़े सुन्नत होने की वजह से इसाअत का मुरतकिब होगा।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–325, ऐनी शरह कंज़ जिल्द–1 सफ़्हा–39)

मस्अला: इमाम सिर्फ़ एक शख़्स के साथ हसबे क़वाएदे शरई नमाज़ पढ़ा रहा है दूसरे मुक़्तदी की आमद और

कहने से हालते नमाज़ में इमाम आगे बढ़ जाए तो नमाज़ हो गई लेकिन उस मुक़्तदी को इशारा से इमाम को आगे बढ़ने को कहना चाहिए था, लेकिन बहरहाल नमाज़ हो गई, इआदा की ज़रूरत नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–338, ऐनी जिल्द–1 सफ़्हा–39 व दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–507)

मस्अलाः इमाम को चाहिए कि वह सफ़ के आगे दरमियान में खड़ा हो, अगर दाईं या बाईं जानिब खड़ा हो तो बुरा किया, क्योंकि ये तरीक़ा सुन्नत के ख़िलाफ़ है और जो लोग जमाअ़त में अफ़ज़ल हों उन्हें सफ़े औवल में (और ख़ास कर इमाम के पीछे) खड़ा होना चाहिए, ताकि इमाम को हदस वग़ैरा (वुज़ू टूट जाने) लाहिक़ होने की सूरत में इमामत के अह्ल हो सकें।

मस्अलाः पहली सफ़ को दूसरी सफ़ पर और दूसरी को तीसरी पर इसी तरह हर अगली को पिछली सफ़ पर फ़ज़ीलत हासिल है।

मस्अलाः अगर सिर्फ़ एक ही लड़का है तो वह मर्दों की सफ़ में दाख़िल हो जाए, हाँ अगर मुतअ़द्दद लड़के हों तो वह मर्दों के पीछे अपनी अलग सफ़ बना लें और मर्दों की सफ़ को उनसे पुर न किया जाए (भरा न जाए)।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–692)

(जुमा व ईदैन के इज़्दिहाम में बच्चे भी मर्दों के साथ खड़े हो सकते हैं। मर्दों की जमाअ़त और नमाज़ पर इसका कुछ असर न होगा)

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अलाः एक मुक़्तदी भी अगर इमाम के साथ हो तो

जमाअत हो जाएगी और सवाब जमाअत का मिल जाएगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–37, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–518)

मस्अला: अगर मुक़्तदी बालिग़ कोई न हो तो सिर्फ़ बच्चों को मुक़्तदी बनाने से जमाअत का सवाब हासिल हो जाएगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–42, बहवाला अलअशबाह सफ़्हा–480)

मस्अला: अगर कोई शख़्स नमाज़ में ऐसे वक़्त आया कि इमाम रुकूअ़ में है और सब से पिछली सफ़ में कोई जगह ख़ाली है तो सफ़ में शामिल हो कर नीयत बाँधे, सफ़ के बाहर तकबीरे तहरीमा न कहे, ख़्वाह उसमें रकअ़त जाती रहे। सफ़ से बाहर ही नीयत बाँध लेना मकरूह है, लेकिन अगर पिछली सफ़ में जगह न हो बल्कि किसी और सफ़ में जगह ख़ाली हो तब भी सफ़ में शामिल हुए बग़ैर तकबीरे तहरीमा न कहे। हाँ अगर सफ़ों में जगह ख़ाली न हो तो सफ़ के पीछे ही तकबीरे तहरीमा कह ले यानी जहाँ जगह ख़ाली हो नीयत बाँध ले।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–692)

मस्अला: लोगों को चाहिए कि जब नमाज़ के लिए सफ़ों में खड़े हों तो जम कर खड़े हों और ख़ला को पुर करें और उनके मोंढे सफ़ों में बराबर रहें यानी एक दूसरे से मिले रहें।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–692)

मस्अला: अगर एक से ज़्यादा मुक़्तदी हों तो उनको इमाम के पीछे सफ़ बाँध कर खड़ा होना चाहिए, अगर

इमाम के दाहिने बाएँ जानिब खड़े हों और दो हों तो मकरूहे तंज़ीही है। और अगर दो से ज़्यादा हों तो मकरूहे तहरीमी है, इसलिए कि जब दो से ज़्यादा मुक़्तदी हों तो इमाम को आगे खड़ा होना वाजिब है।

(दुर्रेमुख़्तार, शामी, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़हा–93)

मस्अला: अगर नमाज़ शुरू करते वक़्त एक ही मर्द मुक़्तदी था और वह इमाम के दाहिने जानिब खड़ा हुआ उसके बाद और मुक़्तदी आ गए तो पहले मुक़्तदी को चाहिए कि पीछे हट आए ताकि सब मुक़्तदी मिल कर इमाम के पीछे खड़े हों, अगर वह न हटे तो उन मुक़्तदियों को चाहिए कि उसको खींच लें। और अगर ना दानिस्तगी से वह मुक़्तदी इमाम के दाहिने या बाएँ जानिब खड़े हो जाएँ और पहले मुक़्तदी को पीछे न हटाएँ तो इमाम को चाहिए कि ख़ुद आगे बढ़ जाए ताकि वह मुक़्तदी सब मिल जाएँ और इमाम के पीछे हो जाएँ। इसी तरह अगर पीछे हटने की जगह न हो तब भी इमाम ही को चाहिए कि आगे बढ़ जाए।

मस्अला: अगर मुक़्तदी औरत हो या नाबालिग़ लड़की हो तो उसको चाहिए कि इमाम के पीछे खड़ी हो, ख़्वाह एक हो या एक से ज़ाएद।

मस्अला: अगर मुक़्तदियों में मुख़्तलिफ़ क़िस्म के लोग हों कुछ मर्द कुछ औरत, कुछ मुख़न्नस कुछ नाबालिग़ तो इमाम को चाहिए कि इस तरतीब से उनकी सफ़ें क़ाइम करे: पहले मर्दों की सफ़ें, फिर नाबलिग़ लड़कों की, फिर नाबालिग़ लड़कियों की, फिर बालिग़ मुख़न्नसों की, फिर नाबालिग़ मुख़न्नसों की, फिर बालिग़ औरतों की, फिर

नाबालिग़ लड़कियों की।

मस्अला: इमाम को चाहिए कि सफ़ें सीधी कर ले यानी सफ़ में लोगों को आगे पीछे खड़े होने से मना करे सब को बराबर खड़े होने का हुक्म दे, सफ़ में एक दूसरे से मिल कर खड़ा होना चाहिए। दरमियान में ख़ाली जगह न रहना चाहिए, मगर मुख़न्नसों की सफ़ में अलबत्ता एक दूसरे से मिल कर न खड़ा होना चाहिए, बल्कि दरमियान में कोई हाएल या ख़ाली जगह जिसमें एक आदमी खड़ा हो सके छोड़ दी जाए, इसलिए कि हर मुख़न्नस में मर्द और औरत दोनों का एहतेमाल है, लिहाज़ा मिल कर खड़े होने में नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

मस्अला: तन्हा एक शख़्स का सफ़ के पीछे खड़ा होना मकरूह है बल्कि ऐसी हालत में चाहिए कि सफ़ से किसी आदमी को खींच कर अपने हमराह खड़ा कर ले। पहली सफ़ में जगह के होते हुए दूसरी सफ़ में खड़ा होना मकरूह है, हाँ जब पहली सफ़ पूरी हो जाए तब दूसरी सफ़ में खड़ा होना चाहिए।

मस्अला: अगर जमाअत सिर्फ़ औरतों की हो, यानी इमाम भी औरत हो तो इमाम को मुक़्तदियों के बीच में खड़ा होना चाहिए, आगे न खड़ा होना चाहिए, ख़्वाह एक मुक़्तदी हो, या एक से ज़ाएद। सहीह ये है कि सिर्फ़ औरतों की जमाअत मकरूह नहीं बल्कि जाइज़ है।

मस्अला: अगर जमाअत सिर्फ़ मुख़न्नसों की हो तो उनका इमाम मुक़्तदियों से आगे खड़ा हो, मुक़्तदियों के बीच में या उनके बराबर न खड़ा हो, अगरचे एक ही मुक़्तदी हो, अगर इमाम मुक़्तदियों के बराबर खड़ा हो

जाएगा तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी, वजह इसकी ऊपर गुज़र चुकी।

मस्अला: मर्द को सिर्फ़ औरतों की इमामत करना ऐसी जगह मकरूहे तहरीमी है जहाँ कोई मर्द न हो, न कोई महरम औरत, मिस्ल उसकी ज़ौजा या माँ बहन वग़ैरा के मौजूद हो। हाँ अगर कोई मर्द या महरम औरत मौजूद हो तो फिर मकरूह नहीं। (दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

मस्अला: अगर कोई शख़्स तन्हा फ़ज्र या मग़रिब या इशा का फ़र्ज़ आहिस्ता आवाज़ से पढ़ रहा हो, इसी असना में कोई शख़्स उसकी इक़्तिदा करे तो उस पर बुलंद आवाज़ से क़िराअत करना वाजिब है, पस अगर सूरए फ़ातिहा या दूसरी सूरत भी आहिस्ता आवाज़ से पढ़ चुका हो तो उसको चाहिए कि फिर सूरए फ़ातिहा और दूसरी सूरत को बुलंद आवाज़ से पढ़े, इसलिए कि इमाम को फ़ज्र, मग़रिब, इशा के वक़्त बुलंद आवाज़ से क़िराअत करना वाजिब है। हाँ सूरए फ़ातिहा के मुकर्रर हो जाने से सज्दए सह्व करना पड़ेगा।

(दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–93, 95 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–45)

इक़ामत के वक़्त मुक़्तदी कब खड़े हों?

मस्अला: "قَدْ قَامَتِ الصَّلٰوةُ" के वक़्त इमाम और मुक़्तदियों का नमाज़ शुरू कर देना मुस्तहब और आदाब में से है, लेकिन इक़ामत कहने वाला (मुअज़्ज़िन) इमाम के साथ नमाज़ शुरू न कर सकेगा, इसलिए उसकी रिआयत

करते हुए इक़ामत ख़त्म होने के बाद ही नमाज़ शुरू करने को ज़्यादा सहीह कहा गया है, इसी तरह सफ़ों को दुरुस्त करने की ताकीद और सीधी न रखने पर जो वईदें हैं, उनके पेशे नज़र शुरू इक़ामत ही से खड़ा हो जाना अफ़ज़ल, बल्कि ज़रूरी होगा। "حَیَّ عَلَی الْفَلَاح" के बाद खड़े होने में सफ़ें दुरुस्त और सीधी नहीं हो सकतीं, टेढ़ी रहेंगी, नमाज़ी आगे पीछे होंगे। दरमियान में जगह ख़ाली रह जाएगी और वईदे शदीद के मुस्तहिक़ होंगे। अहादीस में बहुत ताकीद के साथ सफ़ों की दुरुस्तगी का हुक्म किया गया है।

एक हदीस में है कि "सफ़ें सीधी रखो, अपने मोंढों को बराबर करो और आपस में मिल कर खड़े हुआ करो, दरमियान में ख़ला न छोड़ो"।

(मिश्कात जिल्द–1 सफ़्हा–99)

"حَیَّ عَلَی الْفَلَاح" के वक़्त खड़ा होना महज़ आदाब में से है, तर्क करने में कोई कराहत नहीं है, जबकि सफ़ों को दुरुस्त रखने की बहुत ताकीद है और दुरुस्त न रखने पर सख़्त वईदें हैं, लिहाज़ा कराहत और इन वईदों से बचने के लिए इब्तिदाए इक़ामत ही से खड़े हो जाना अफ़ज़ल होगा, और इब्तिदाए इक़ामत से सहाबा (रज़ि.) का खड़ा हो जाना भी साबित है, फिर क्योंकर उसको मकरूह कहा जा सकता है।

(मुसन्नफ़ अब्दुर्रज़्ज़ाक़ जिल्द–1 सफ़्हा–507, फ़तहुलबारी जिल्द–2 सफ़्हा–99)

बहरुर्राइक़ जिल्द–1 सफ़्हा–304, में "حَیَّ عَلَی الْفَلَاح" के वक़्त खड़े होने की इल्लत ये ब्यान की है कि "الْفَلَاح"

पर खड़ा होना इस लिए अफ़ज़ल है कि लफ़्ज़ "حَيَّ عَلَى الْفَلَاح" (आओ कामियाबी की तरफ़) में खड़े होने का अम्र (हुक्म) है इस लिए खड़े होने की तरफ़ (जल्दी) करना चाहिए। इससे मालूम होता है कि "حَيَّ عَلَى الْفَلَاح" पर खड़ा होना मुस्तहिब है, इसका मतलब ये है कि इस अम्र के बाद बैठे रहना ख़िलाफ़े अदब है न ये कि इससे पहले खड़ा होना ख़िलाफ़े अदब है, क्योंकि पहले खड़े होने में तो और भी ज़्यादा मुसारअ़त पाई जाती है। यानी मक़्सूद ये है कि खड़े होने में "حَيَّ عَلَى الْفَلَاح" कहने तक ताख़ीर कर सकते हैं, इसका ये मतलब नहीं कि इससे पहले खड़े नहीं हो सकते। इसी बिन पर अल्लामा तहतावी (रह.) उसके बाद फ़रमाते हैं: "यहाँ तक कि अगर शुरू इक़ामत ही से खड़ा हो जाए तो इसमें कोई हरज नहीं है।"

(तहतावी अलदुर्रिमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–331, फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–332 व जिल्द–4 सफ़्हा–317, इमदादुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–185)

मस्अला: ये ज़रूरी नहीं कि इमाम जब मुसल्ले पर खड़ा हो तब ही तकबीर शुरू की जाए, बल्कि इमाम जब मस्जिद में मौजूद है तकबीर कहना दुरुस्त है, इमाम तकबीर सुन कर खुद मसल्ले पर आ जाएगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–112)

मस्अला: मुक़्तदियों में से कोई शख़्स (जबकि भीड़ हो, मुअज़्ज़िन की तख़सीसी नहीं है) इमाम के साथ अपनी आवाज़ भी (तकबीर कहने में) बुलंद करे, ताकि दूसरे मुक़्तदियों तक इमाम की तकबीर की आवाज़ पहुंचाई जा सके, ऐसा करना जाइज़ है, बशर्तेकि मुकब्बिर (तकबीर

कहने वाला) जब तकबीर तहरीमा के लिए आवाज़ बुलंद करे तो साथ ही नीयत बाँधने का इरादा हो, यानी तकबीर कहने वाला जो इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ रहा है, नमाज़ की नीयत के साथ अपनी आवाज़ दूसरों तक पहुंचाने की नीयत भी करे, और अगर नमाज़ की नीयत न की सिर्फ़ तकबीर की आवाज़ पहुंचाने की नीयत की तो ये नमाज़ बातिल हो जाएगी और उनकी भी जो उसके तहत नमाज़ अदा कर रहे हैं, बशर्तेकि नमाज़ियों को ये मालूम हो जाए कि मुकब्बिर ने नमाज़ की नीयत नहीं की थी।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–402)

इक़्तिदा के सहीह न होने के मसाइल

ज़ैल में वह सूरतें हैं जिनमें मुक़्तदी इमाम से ज़्यादा है और इक़्तिदा दुरुस्त नहीं।

मस्अला: (1) बालिग़ की इक़्तिदा ख़्वाह मर्द हो या औरत, नाबालिग़ के पीछे दुरुस्त नहीं।

(2) मर्द की इक़्तिदा ख़्वाह बालिग़ हो या नाबालिग़, औरत के पीछे दुरुस्त नहीं।

(3) मुख़न्नस की इक़्तिदा मुख़न्नस के पीछे दुरुस्त नहीं। (हो सकता है जो इमाम है वह औरत हो और जो मुक़्तदी है वह मर्द हो, क्योंकि मुख़न्नस में दोनों एहतेमाल हैं।)

(4) जिस औरत को अपने हैज़ का ज़माना याद न हो उसकी इक़्तिदा उसी क़िस्म की औरत के पीछे, क्योंकि हो सकता है जो इमाम है उसका ज़माना हैज़ का

हो, और मुक़्तदी औरत का तहारत का (यानी पाकी का ज़माना)।

(5) मुख़न्नस की औरत के पीछे, इस ख़्याल से कि शायद वह मुख़न्नस हो।

(6) होश वाले की इक़्तिदा मजनून, मस्त, बेहोश, बे अक़्ल के पीछे।

(7) ताहिर (पाकी वाले) की इक़्तिदा तहारत से माज़ूर के पीछे, मिस्ल उस शख़्स के जिसको सलसले बौल वग़ैरा की शिकायत हो। (यानी पेशाब के क़तरे वाले मरीज़ के पीछे)

(8) एक उज़्र वाले की इक़्तिदा दो उज़्रों वाले के पीछे दुरुस्त नहीं।

(9) क़ारी (पढ़े लिखे) की इक़्तिदा उम्मी (अनपढ़) के पीछे।

(10) उम्मी की इक़्तिदा उम्मी के पीछे जबकि मुक़्तदियों में कोई क़ारी मौजूद हो, दुरुस्त नहीं।

(11) उम्मी की इक़्तिदा गूँगे के पीछे दुरुस्त नहीं क्योंकि उम्मी अगरचे बिलफ़ेल क़िराअत नहीं कर सकता मगर क़ादिर तो है और गूँगे में तो ये बात नहीं है।

(12) जिस शख़्स का जिस्मे औरत (मख़सूस हिस्सा बदन का) छिपा हुआ हो। यानी कपड़े पहने हुए हो, उसकी इक़्तिदा बरहना (नंगे) के पीछे दुरुस्त नहीं है।

(13) रुकूअ व सुजूद करने वाले की इक़्तिदा उन दोनों से आजिज़ के पीछे, अगर कोई शख़्स सिर्फ़ सज्दा से आजिज़ हो, उसके पीछे भी इक़्तिदा दुरुस्त नहीं।

(14) फ़र्ज़ पढ़ने वाले की इक़्तिदा नफ़्ल पढ़ने वाले

के पीछे।

(15) नज़्र की नमाज़ पढ़ने वाले की इक़्तिदा नफ़्ल पढ़ने वाले के पीछे दुरुस्त नहीं, इसलिए कि नमाज़ नज़्र की वाजिब है।

(16) नज़्र की नमाज़ पढ़ने वाले की इक़्तिदा क़सम की नमाज़ पढ़ने वाले के पीछे दुरुस्त नहीं, क्योंकि नज़्र की नमाज़ वाजिब है और अगर किसी ने क़सम खाई कि मैं नमाज़ पढ़ूँगा तो इसमें इख़्तियार है चाहे पढ़े या कफ़्फ़ारा दे कर अपनी क़सम पूरी कर ले।

(17) जिस शख़्स से साफ़ हुरूफ़ न अदा हो सकते हों मसलन "सीन" को "से" या "रा" को "ग़ैन" पढ़ता हो या और किसी हर्फ़ में तबद्दुल, तग़ैयुर होता हो तो उसके पीछे साफ़ हुरूफ़ और सहीह पढ़ने वाले की नमाज़ दुरुस्त नहीं, हाँ अगर पूरी क़िराअत में एक आध हर्फ़ ऐसा वाक़ेअ हो जाए तो इक़्तिदा सहीह हो जाएगी।

(18) इमाम का वाजिबुलइन्फ़िराद न होना यानी ऐसे शख़्स को इमाम न बनाना जिसका मुन्फ़रिद रहना ज़रूरी है जैसे मस्बूक़ इमाम की नमाज़ ख़त्म हो जाने के बाद मस्बूक़ को अपनी छूटी हुई रकअ़तों को तन्हा पढ़ना ज़रूरी है। पस अगर कोई शख़्स किसी मस्बूक़ (जिसकी रकअ़तें रह गई हों) इक़्तिदा करे तो दुरुस्त नहीं है।

(19) इमाम को किसी का मुक़्तदी न होना (इमामत के वक़्त) इसलिए कि ऐसे शख़्स को इमाम न बनाना चाहिए जो किसी का मुक़्तदी हो। (क्योंकि जब किसी की इक़्तिदा न होगी तो उसकी नमाज़ भी न होगी जिसको उसने बहालते इक़्तिदा अदा किया है।)

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–87, 89)

मस्अलाः मर्दों को इक़्तिदा औरत और नाबलिग़ के पीछे दुरुस्त नहीं।

मस्अलाः नाबालिग़ बच्चे के पीछे फ़र्ज़, तरावीह, वित्र, नफ़्ल कोई भी नमाज़ दुरुस्त नहीं है।

(हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–78, शरह वक़ाया सफ़्हा–87, कबीरी सफ़्हा–516, किताबुलफ़िक़्ह सफ़्हा–652)

मस्अलाः अगर कोई मुक़्तदी लफ़्ज़ "अल्लाह" इमाम के साथ कहे और लफ़्ज़े अकबर को इमाम के कहने से पहले कहदे या मुक़्तदी ने इमाम को रुकूअ़ की हालत में पाया चुनांचे उसने लफ़्ज़ "अल्लाह" तो हालते क़याम में कहा और लफ़्ज़ "अकबर" रुकूअ़ में जाकर कहा तो इन दोनों सूरतों में इक़्तिदा दुरुस्त नहीं होगी, जिस तरह उस शख़्स की इक़्तिदा दुरुस्त नहीं होती जो इमाम के लफ़्ज़ "अल्लाह" कहने से पहले अल्लाह कह ले।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–27, किताबुस्सलात)

(पहली सूरत में दुरुस्त न होने की वजह ये है कि जब तक इमाम पूरा जुमला "अल्लाहुअकबर" कह न लेगा नमाज़ शुरू करने वाला शुमार नहीं होगा, और पहली सूरत में मुक़्तदी ने इमाम के लफ़्ज़ "अकबर" कहने से पहले कह लिया है, और दूसरी सूरत में दुरुस्त न होने की वजह ये है कि मुक़्तदी ने तहरीमा "अल्लाहुअकबर" हालते क़याम में नहीं कहा जो शर्त है बल्कि सिर्फ़ "अल्लाह" कहा और "अकबर" रुकूअ़ में जाकर कहा, चूंकि वह इक़्तिदा की नीयत से दाख़िल हुआ था, लिहाज़ा वह उन दोनों सूरतों में तन्हा भी शुरू करने वाला शुमार न होगा।

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी गुफ़िरलहू)

मस्अला: बिला नीयत ही नमाज़ शुरू कर दी फिर याद आया कि नीयत नहीं की थी या ग़लत नीयत की मसलन अस्र की जगह ज़ुहर की नीयत कर ली तो अब नीयत का वक़्त जाता रहा, नमाज़ शुरू करने के बाद नीयत का एतेबार नहीं है, अज़ सरे नौ तकबीरे तहरीमा कहे।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–303, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–587)

इमाम से पहले रुक्न अदा करना?

मस्अला: अगर कोई मुक़्तदी किसी रुक्न को अपने इमाम के अदा करने से पहले कर ले और इमाम उसको उसमें करते हुए न पाए मसलन मुक़्तदी इमाम के रुकूअ में जाने से पहले रुकूअ में चला गया और इमाम के रुकूअ में पहुंचने से पहले मुक़्तदी ने सर उठा लिया और फिर उस रुकूअ को उसने न इमाम के साथ अदा किया और न उसके बाद, और इमाम के साथ सलाम फेर दिया तो इस सूरत में मुक़्तदी की नमाज़ न होगी।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–576)

माज़ूर शख़्स का घर पर बैठ कर इमाम की इक़्तिदा करना?

सवाल: मैं एक माज़ूर हूँ जुमा की नमाज़ के लिए

मस्जिद नहीं जा सकता। मस्जिद मेरे घर से बहुत करीब है, लाउडस्पीकर से पूरी नमाज़ सुनाई देती है, क्या मैं घर में बैठ कर लाउडस्पीकर से नमाज़े जुमा अदा कर सकता हूँ।

जवाबः इक़्तिदा के लिए सिर्फ़ इमाम की आवाज़ पहुंचना काफ़ी नहीं है बल्कि ये भी ज़रूरी है कि सफ़ें वहाँ तक पहुंचती हों। अगर दरमियान में कोई नहर या सड़क पड़ती हो तो इक़्तिदा सहीह नहीं इसलिए आपका घर में बैठे जुमा की नमाज़ में शरीक होना सहीह नहीं है। अगर आप उज़्र की वजह से मस्जिद में नहीं जा सकते तो घर पर ज़ुहर की नमाज़ पढ़ा कीजिए।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–263,)

(अगर घर तक या जहाँ भी नमाज़ अदा कर रहा है, सफ़ें मिलती चली जाएँ, दरमियान में कोई ख़ला न रहे तो इस सूरत में इक़्तिदा सहीह हो जाएगी)

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

क्या टेलीवीज़न से इक़्तिदा जाइज़ है?

सवालः बाज़ औक़ात टी0 वी0 पर बराहे रास्त हरमे पाक ख़ानए कअ़बा से बा जमाअ़त नमाज़ दिखाई जाती है, अगर बंदा टी0 वी0 को दूसरे कमरा में रख कर उसकी आवाज़ तेज़ रखे और टीले वीज़न के इमाम के साथ नमाज़ पढ़े तो ये नमाज़ सहीह होगी या नहीं?

जवाबः जो तरीक़ा आप ने लिखा है इससे इमाम की इक़्तिदा सहीह नहीं होगी, और ये आपकी नमाज़ होगी।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–263)

मस्अला: जमाअत मस्जिद के अन्दर हो रही है और दरों पर परदे छूटे हुए हैं उसके बाहर जो आदमी नमाज़ को खड़े हो गए हैं, उनकी नमाज़ भी सहीह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–1 सफ़्हा–338, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–548)

(यानी परदे के पीछे इक़्तिदा दुरुस्त है, जबकि अन्दर जगह न हो) (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अला: इमाम मुसल्ले पर और मुक़्तदी फ़र्श पर बग़ैर सफ़ के वैसे ही हों तो ये जाइज़ है।

मस्अला: इमाम चौकी पर और मुक़्तदी फ़र्श पर हों तो अगर वह चौकी एक ज़िराअ़ के बक़द्र ऊँची है तो मकरूह है वरना जाइज़ है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–343, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–604)

मस्अला: धूप से बच कर साया में जो नमाज़ में शरीक होते हैं उनकी नमाज़ सहीह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–361)

(मगर ऐसा करना मुनासिब नहीं, सफ़ें बिल्कुल मिली हुई हों, दरमियान में ख़ला न हो, लेकिन धूप से बचने के लिए भी इंतिज़ाम होना चाहिए, ताकि नमाज़ियों को तकलीफ़ न हो) (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अला: दिल में अस्र की नीयत थी मगर ज़बान से ज़ुहर का लफ़्ज़ निकल गया तो कोई मुज़ाएक़ा नहीं है नमाज़ हो गई।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–303, बहवाला

रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–385)

नमाज़ में इमाम की पैरवी कहाँ ज़रूरी है?

मस्अला: मुक़्तदी का नमाज़ के आमाल में अपने इमाम की पैरवी करना इमामत की शराइत में से है। अहनाफ़ के नज़दीक मुक़्तदी का अपने इमाम की मुताबअ़त (पैरवी) करने की तीन क़िसमें हैं:

एक ये कि मुक़्तदी का अमल इमाम के अमल से मुत्तसिल (क़रीब) हो, यानी जिस वक़्त इमाम नीयत बाँधे तो साथ ही मुक़्तदी भी नीयत बाँध ले, और इमाम के रुकूअ़ के साथ रुकूअ़ करे और सलाम के साथ सलाम फेरे। इमाम की पैरवी में ये अम्र भी दाख़िल है कि मुक़्तदी इमाम से पहले रुकूअ़ में गया और हुनूज़ (अभी मुक़्तदी) रुकूअ़ में था कि इमाम ने भी रुकूअ़ कर लिया, ये हालते रुकूअ़ में मुक़्तदी का इमाम के साथ होना मुतसव्वर होगी।

दूसरे ये कि मुक़्तदी इमाम के अमल के बाद वही अमल करे, बईं तौर कि कोई फ़ेल इमाम के शुरू करने के बाद मुक़्तदी करे और (अभी वह अमल पूरा न हुआ हो) बाक़ी हिस्सा में इमाम के साथ शामिल रहे।

तीसीरे ये कि इमाम की पैरवी ताख़ीर के साथ करे, इस तौर पर कि इमाम जब कोई अमल अंजाम दे चुके तो क़ब्ल इसके कि इमाम कोई आइंदा रुक्न शुरू करे मुक़्तदी उस अमल को अंजाम दे। इन तमाम सूरतों में ये तसलीम किया जाएगा कि मुक़्तदी ने इमाम की पैरवी की।

ग़रज़ इमाम ने रुकूअ़ किया और साथ के साथ मुक़्तदी

ने भी रुकूअ़ किया, या उसके बाद रुकूअ़ किया कि इमाम के साथ रुकूअ़ में शामिल हो गया, या ये कि इमाम के रुकूअ़ से उठने के बाद, लेकिन सज्दा के लिए झुकने से पहले पहले रुकूअ़ कर लिया तो मुक़्तदी ने रुकूअ़ में इमाम की मुताबअ़त (पैरवी) कर ली। इन तीनों में से किसी तरह भी पैरवी की जाए।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–668)

फ़र्ज़ आमाल में पैरवी करना?

जो आमाल नमाज़ में फ़र्ज़ हैं उनमें इमाम की पैरवी फ़र्ज़ है, और जो आमाल वाजिब हैं उनमें वाजिब है, और जो आमाल सुन्नत हैं उनमें सुन्नत है। पस अगर मसलन रुकूअ़ में ये पैरवी छोड़ दी इस तौर पर कि रुकूअ़ किया और इमाम के उठने से पहले सर उठा लिया और उस रुकूअ़ में या उसके बाद की नई रकअ़त के रुकूअ़ में इमाम के साथ शामिल न रहा तो नमाज़ बातिल हो जाएगी, क्योंकि अमले फ़र्ज़ में मुताबअ़त (पैरवी जो फ़र्ज़ थी) नहीं की गई। इसी तरह इमाम से पहले रुकूअ़ और सज्दा कर लिया तो वह रकअ़त जिसमें ये किया गया राएगाँ (बेकार) जाएगी।

दूसरी रकअ़त के अफ़आ़ल पहली रकअ़त में, तसरी रकअ़त के अफ़आ़ल दूसरी में और चौथी के तीसरी में मुन्तक़िल हो जाएंगे और उसके ज़िम्मा एक रकअ़त रह जाएगी। जिसका अदा करना इमाम के सलाम फेरने के बाद वाजिब होगा, अगर ऐसा न किया (एक रकअ़त बाद

में न पढ़ी) तो नमाज़ बातिल हो जाएगी।

इसी तरह अगर कुनूत (वित्र की दुआ) में इमाम की मुताबअत न की तो गुनाह होगा, क्योंकि वाजिब को तर्क किया। अगर रुकूअ की तस्बीह में मुताबअत न की तो सुन्नत को तर्क किया।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–669)

मस्अलाः क़अदए ऊला में अगर इमाम मुक़्तदी के तशह्हुद (अत्तहीयात) पूरा पढ़ने से पहले खड़ा हो जाए तो मुक़्तदी को तशह्हुद पूरा कर के खड़ा होना चाहिए और कुनूते वित्र में अगर इमाम मुक़्तदी की कुनूत ख़त्म से पहले रुकूअ में चला जाए तो उसकी मुताबअत करनी होगी, हर दो सूरत में वजहे फ़र्क़ ये है कि दुआए कुनूत जिस क़दर भी हो गई वाजिब अदा हो गया और तशह्हुद तमाम वाजिब है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–370, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–86)

मस्अलाः आख़िरी क़अदा में इमाम के सलाम के साथ ही मुक़्तदी सलाम फेरें, अलबत्ता अगर किसी मुक़्तदी का तशह्हुद यानी अत्तहीयात कुछ बाक़ी रह जाए तो उसको पूरा कर के सलाम फेरे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–368)

नमाज़ में जहाँ इमाम की पैरवी न की जाए

मस्अलाः चार बातें ऐसी हैं जिनमें इमाम की मुताबअत लाज़िम नहीं है।

(1) औवल ये कि इमाम अमदन कोई सज्दा ज़्यादा करे तो इसमें इमाम की पैरवी न की जाए।

(2) दूसरे ईदैन की तकबीरों में अगर इमाम कुछ ज़्यादा करे जो सहाबा (रज़ि.) से मरवी नहीं है। तो उसकी पैरवी न की जाए।

(3) तीसरे अगर जनाज़ा की तकबीरों में इमाम इज़ाफ़ा करे मसलन पाँच तकबीरें कहे तो उसकी पैरवी ने की जाए।

(4) चौथे जब इमाम फ़र्ज़ को मुकम्मल करने और क़अ़दए अख़ीरा के बाद भूले से एक और रकअ़त के लिए खड़े हो, तब भी पैरवी न की जाए। अगर इमाम ऐसा करे और वह फ़ाज़िल रकअ़त अदा कर के सज्दा करे तो मुक़्तदी को चाहिए कि वह बतौरे खुद ही सलाम फेर कर नमाज़ से अलाहिदा हो जाएँ। हाँ अगर इमाम ने ज़ाएद रकअ़त का सज्दा नहीं किया, बल्कि रुजूअ़ कर के (वापस आकर) क़अ़दए अख़ीरा के लिए बैठ गया और फिर सलाम फेरा तो तुक़्तदी को उसके सलाम के साथ सलाम फेरना चाहिए। लेकिन अगर इमाम क़अ़दए अख़ीरा किए बग़ैर रकअ़त के लिए खड़ा हो गया और उस रकअ़त का सज्दा भी कर लिया तो सब की नमाज़ बातिल हो जाएगी।

मन्दरजा ज़ैल नौ बातें ऐसी हैं कि अगर इमाम उनको तर्क कर दे। यानी छोड़ दे तो मुक़्तदी को चाहिए कि उसके तर्क करने में इमाम की पैरवी न करे, वह बातें ये हैं:

तकबीर तहरीमा में दोनों हाथ उठाना, "سبحانک اللهم" पढ़ना, रुकूअ़ के लिए तकबीर कहना, सज्दा के लिए तकबीर कहना, रुकूअ़ व सुजूद में तस्बीह पढ़ना। "سمع

"سمع اللہ لمن حمدہ" कहना, अत्तहीयात पढ़ना, "السلام علیکم و رحمۃ اللہ" कहना, तकबीर तशरीक़ (ईदुलअज़्हा के मौक़ा पर) पढ़ना। ये नौ उमूर हैं कि उनमें से अगर किसी को इमाम तर्क कर दे तो मुक़्तदी को भी इसकी पैरवी में तर्क न करना चाहिए बल्कि बतौरे ख़ुद ही उसको करे।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–671)

इसी तरह कुछ बातें करने की ऐसी हैं कि अगर इमाम उन्हें तर्क कर दे तो मुक़्तदी को भी तर्क कर देना चाहिए। वह पाँच बातें ये हैं:

ईद की तकबीरें क़अदए ऊला, सज्दए तिलावत, सज्दए सह्व और दुआए कुनूत, इस सूरत में जबकि रुकूअ़ के फ़ौत होने का अंदेशा हो, लेकिन अगर अंदेशा न हो तो कुनूत पढ़ लेना चाहिए। पहले ये बताया जा चुका है कि इमाम के पीछे क़ुरआन पढ़ना मकरूहे तहरीमी है लिहाज़ा इसमें इमाम की पैरवी जाइज़ नहीं है।

मस्अला: अगर मुक़्तदी तशह्हुद (अत्तहीयात) पढ़ चुके तो सलाम में इमाम की पैरवी करे।

मस्अला: सलाम फेरने में इमाम की मुताबअ़त का सब से बेहत्तर तरीक़ा ये है कि मुक़्तदी इमाम के साथ साथ सलाम फेरे न उससे पहले और न उसके बाद।

मस्अला: अगर किसी ने इमाम के सलाम फेरने के बाद सलाम फेरा तो अफ़ज़ल तरीक़ा को नज़र अंदाज़ कर दिया, लेकिन अगर तकबीरे तहरीमा इमाम से पहले कही गई तो नमाज़ दुरुस्त न होगी, और अगर इमाम के साथ साथ कही तो जब भी दुरुस्त न होगी, और अगर उसके बाद ताख़ीर से कही तो तकबीरे तहरीमा का अफ़ज़ल

वक़्त फ़ौत कर दिया।

(किताबुलफ़िक्ह जिल्द–1 सफ़हा–671)

मस्अलाः बाज़ लोगों की आदत है कि ख़ूब गर्दन झुका कर तमाम बदन घुमा कर सलाम फेरते हैं, इस तरह गर्दन झुका कर सलाम फेरना मन गढ़त है, इसकी कोई अस्ल नहीं है। (अग़लातुलअवाम सफ़हा–63)

नमाज़ी के आगे से गुज़रने का ब्यान

नमाज़ी के आगे से गुज़रना हराम है अगरचे नमाज़ी ने बग़ैर किसी उज़्र के सुतरा (रुकावट) न रखा हो, इसी तरह नमाज़ पढ़ने वाले के लिए भी ये हराम है कि अपनी नमाज़ से लोगों के आने जाने में रुकावट डाले, बईं तौर कि बग़ैर सुतरा रखे ऐसी जगह पर नमाज़ पढ़ने लगे जहाँ उसके सामने से लोगों की बकसरत आमदोरफ़्त हो। ऐसी सूरत में अगर नमाज़ी के आगे से कोई शख़्स गुज़र जाए तो सरेदस्त इस बात का गुनाह होगा कि उस जहग नमाज़ पढ़ी जहाँ लोगों को सामने से गुज़रना पड़ा। सुतरा न रखने का गुनाह न होगा। अगर कोई शख़्स सामने से नहीं गुज़रा तो कोई गुनाह न होगा, लेकिन गुज़रने वाले को गुंजाईश थी (कि वह और तरफ़ से चला ज़ाता, फिर भी नमाज़ी के आगे से गुज़रा) तो दोनों गुनहगार होंगे। लेकिन (उसके बरअक्स) अगर नमाज़ी की वजह से रुकावट न थी, लेकिन जाने वाले को किसी और जानिब से गुज़रने की गुंजाईश न थी और नमाज़ी के आगे से गुज़रना पड़ा तो किसी को गुनाह न होगा, और अगर दोनों में से

किसी एक तरफ़ से कोताही हुई तो एक ही शख़्स गुनहागार होगा।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–430, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–581 व निज़ामुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–75)

"सुतरा" उस चीज़ को कहते हैं जो नमाज़ी आड़ करने के लिए अपने सामने लगा ले, अपने आगे खड़ा कर ले, ख़्वाह वह लकड़ी हो, या कोई सुतून हो, या दीवार वग़ैरा हो, और उस (सुतरा खड़ा करने) से मक़्सूद ये होता है कि उसके ज़रीए सज्दा की जगह मुतमैयज़ हो जाए और जिस शख़्स को नमाज़ी के सामने से गुज़रना हो वह नमाज़ी के आगे से गुज़रने का गुनहगार न हो।

सुतरा की ज़रूरत वहाँ पेश आती है जहाँ नमाज़ खुली और बे आड़ जहग पढ़ी जाए, अगर मस्जिद में नमाज़ पढ़नी हो या ऐसे मक़ाम में कि जहाँ लोगों का नमाज़ियों के सामने से गुज़रना होता हो तो उसकी कुछ ज़रूरत नहीं है। सुतरा की लम्बाई एक हाथ से कम न होनी चाहिए और उसकी मोटाई कम से कम एक उंगली के बराबर होनी चाहिए। बा जमाअ़त नमाज़ की सूरत में इमाम का सुतरा तमाम मुक़्तदियों की तरफ़ से काफ़ी है, यानी अगर इमाम के आगे सुतरा है तो मुक़्तदियों के आगे से गुज़रने में कुछ गुनाह नहीं, ख़्वाह उनके आगे कोई आड़ हो या न हो, लेकिन सुतरा के वरे से गुज़रना जाइज़ नहीं, हाँ अगर जमाअ़त में शरीक होने के लिए कोई आने वाला पहली सफ़ में ख़ाली जगह देखे तो उसको जाइज़ है कि दूसरी सफ़ के आगे से गुज़र कर पहली सफ़ में उस ख़ाली जगह पहुंच कर जमाअ़त में शरीक हो जाए।

इस सूरत में कुसूर दूसरी सफ वालों का माना जाएगा, उन्होंने आगे बढ़ कर पहली सफ में ख़ाली जगह को पुर क्यों नहीं किया। यानी क्यों नहीं भरा।

(मज़ाहिरे हक़ जिल्द–1 सफ़्हा–645 व हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–89 व शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–96 व कबीरी सफ़्हा–368 व इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–93 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–427)

मस्अला: सुतरा खड़ा करना सुन्नत है।

(हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–89)

मस्अला: सुतरा के बजाए अगर चादर या छतरी, मुसल्ली (नमाज़ी) के आगे हो तो वह काफ़ी है, लकड़ी की खुसूसियत नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–42 व रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–595)

मस्अला: नमाज़ी के आगे से गुज़रना गुनाह है मगर उससे नमाज़ नहीं टूटती, और अगर कोई बेख़्याली में गुज़र गया तो माज़ूर है।

मस्अला: अगर कोई शख़्स मैदान में या बड़ी मस्जिद में नमाज़ पढ़ रहा हो तो दो तीन सफ़ों की जगह छोड़ कर उसके आगे से गुज़रने की गुंजाईश है, और छोटी मस्जिद में मुतलक़न गुंजाईश नहीं।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–294)

मस्अला: नमाज़ी के आगे से औरत या कोई भी जानवर कुत्ता, बिल्ली वग़ैरा गुज़र जाए तो नमाज़ फ़ासिद नहीं होती, दोबरा पढ़ने की ज़रूरत नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–41, 53 बहवाला

रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़हा–593)

मस्अला: नमाज़ी के आगे से गुजरने वाला अगर जान ले कि उसका वबाल किस क़दर सख़्त और संगीन है तो बरसों खड़ा रहेगा मगर आगे से गुज़रने की हिम्मत न करेगा। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–39, बहवाला मिश्कात जिल्द–1 सफ़्हा–74)

नमाज़ी के आगे से गुज़रने की हद?

मस्अला: जहाँ नमाज़ी की नज़र पहुंचे जबकि वह अपनी नज़र को मौज़ए सुजूद पर रखे (सज्दा की जगह पर निगाह रखे) वहाँ तक आगे को न गुज़रे। पस अगर कोई शख़्स बाहर फ़र्श पर नमाज़ पढ़ता हो तो अन्दर के दरजा में आगे को गुज़र सकता है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–101)

मस्अला: बड़ी मस्जिद और जंगल में तो नमाज़ी से इतने फ़ासिला पर गुज़रना जाइज़ है कि जहाँ तक सज्दा की जगह पर नज़र रख कर नमाज़ी की नज़र न पहुंचे।

(इमदादुलअहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–463)

मस्अला: अगर दो मुसल्ली (नमाज़ी) आगे पीछे नमाज़ पढ़ रहे हैं, आगे वाला पहले फ़ारिग़ हो गया, अब वह दाहनी जानिब या बाईं जानिब को जा सकता है (खिसकता है) ये जाइज़ है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–148)

मस्अला: बैतुलहराम का तवाफ़ करने वाले को जाइज़ है कि नमाज़ी के आगे से चला जाए, इसी तरह कअबा

के अन्दर और मक़ामे इब्राहीम के पीछे नमाज़ी के आगे से गुज़रना जाइज़ है और ये भी जाइज़ है कि नमाज़ पढ़ने वाले और गुज़रने वाले के दरमियान सुतरा न हो।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–431)

(क्योंकि यहाँ पर मजबूरी है)

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

नमाज़ के फ़राइज़

नमाज़ के फ़राइज़ और वाजिबात, सुनन, मुस्तहब्बात, मुफ़सिदात और मकरूहात लिखे जाते हैं जिससे ये मालूम होगा कि जो तरीक़ा नमाज़ पढ़ने का ऊपर ब्यान किया गया उसमें कौन चीज़ फ़र्ज़ है और कौन वाजिब, और कौन सुन्नत और कौन मुस्तहब, और इस तरीक़े के किसी अम्र की रिआयत न करने से नमाज़ मकरूह हो जाती है।

नमाज़ के फ़राइज़ छः हैं, उन छः में से पाँच नमाज़ के रुक्न हैं यानी नमाज़ उनसे मुरक्कब है और वह नमाज़ के जुज़ हैं और छटा यानी नमाज़ को अपने फ़ेल से तमाम करना रुक्न नहीं।

(1) क़याम (खड़ा होना) इतनी देर तक खड़ा रहना फ़र्ज है जिसमें इस क़दर किराअत की जा सके जो फ़र्ज़ है।

(दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

खड़े होने की हद फ़ुक़हा ने ये ब्यान की है कि अगर हाथ बढ़ाए जाएँ तो घुटनों तक न पहुंच सकें।

(मराक़ीयुलफ़लाह)

क़याम सिर्फ फराइज़ और वाजिब नमाज़ों में फ़र्ज़ है,

उनके सिवा और नमाज़ों में फ़र्ज़ नहीं है।

मस्अला: जो शख़्स कयाम पर क़ादिर नहीं उस पर कयाम (खड़ा होना) फ़र्ज़ नहीं है।

(2) क़िराअत यानी क़ुरआन शरीफ़ का पढ़ना नमाज़ में। क़ुरआन मजीद की एक आयत का पढ़ना फ़र्ज़ है, ख़्वाह बड़ी हो या छोटी, मगर शर्त ये है कि कम अज़ कम दो लफ़्ज़ों से मुरक्कब हो जैसे "ثُمَّ نَظَرَ" और अगर एक ही लफ़्ज़ हो जैसे "مُدْهَآمَّتٰنِ" या एक हर्फ़ हो जैसे "صٓ، قٓ" वग़ैरा, या दो हर्फ़ हों जैसे "حٰمٓ" वग़ैरा, या कई हुरूफ़ हों जैसे "الٓمٓ حٰمٓ عٓسٓقٓ" वग़ैरा तो इन सब सूरतों में ऐसी एक आयत के पढ़ने से फ़र्ज़ न अदा होगा।

(मराक़ियुलफ़लाह, दुर्रेमुख़्तार)

मस्अला: फ़र्ज़ नमाज़ों की सिर्फ़ दो रकअतों में क़िराअत फ़र्ज़ है, ये भी तख़्सीस नहीं कि पहली दो रकअतों में क़िरात फ़र्ज़ है या अगली दो रकअतों में या दरमियानी जैसे मग़रिब की नमाज़ में अगर कोई पहली और तीसरी रकअत में क़िराअत करे और दूसरी में नहीं या दूसरी में करे पहली में नहीं, बहरसूरत फ़र्ज़ अदा हो जाएगा।

(कंज़ुल दकाइक़, दुर्रेमुख़्तार, मराक़ी)

मस्अला: वित्र और नफ़्ल नमाज़ों की सब रकअतों में क़िराअत फ़र्ज़ है।

मस्अला: इमाम के पीछे मुक़्तदी को क़िराअत की ज़रूरत नहीं, वहाँ मस्बूक़ (जिसकी रकअत रह गई हो) उसके लिए उन गई हुई रकअतों में चूंकि इमाम नहीं होता इसलिए उसको क़िराअत की ज़रूरत होती है।

(3) रुकूअ हर रकअत में एक मरतबा करना फ़र्ज़ है।

रुकूअ की हद फ़ुक़हा (रह.) ने ये ब्यान की है कि इस क़दर झुक जाए जिसमें दोनों हाथ घुटनों तक पहुंच सकें और सिर्फ़ झुक जाना ही फ़र्ज़ है कुछ देर तक झुका हुआ रहना फ़र्ज़ नहीं।

मस्अलाः अगर किसी की पीठ (कमर) बुढ़ापे वग़ैरा की वजह से झुक गई हो और हर वक़्त उसकी हालत रुकूअ के मुशाबेह रहती हो तो उसको रुकूअ में सिर्फ़ सर झुका देना चाहिए। (मराक़ियुलफ़लाह)

(4) सज्दाः हर रकअ़त में दो सज्दे फ़र्ज़ हैं। एक सज्दा कुरआन करीम से और दूसरा सज्दा अहादीस और इजमा से साबित है।

मस्अलाः सज्दे में एक घुटना और एक पैर की उंगली का और पेशानी का ज़मीन पर रखना और अगर किसी तक़लीफ़ की वजह से पेशानी न रख कसता हो तो बजाए उसके सिर्फ़ नाक रख देना काफ़ी है।

(जबकि इसकी भी कुदरत हो।)

(5) क़अ़दए अख़ीरा यानी वह नशिस्त (बैठना) जो नमाज़ की आख़िरी रकअ़त में दोनों सज्दों के बाद होती है, इतनी देर तक बैठना फ़र्ज है, जिसमें अत्तहीयात पढ़ी जा सके, इससे ज़्यदा बैठना फ़र्ज नहीं।

(दुर्रेमुख़्तार, मराक़ियुलफ़लाह)

(6) नमाज़ को अपने फ़ेल से तमाम कर देना, यानी बाद तमाम हो जाने अरकाने नमाज़ के कोई ऐसा फ़ेल किया जाए जो नमाज़ के मुनाफ़ी हो मसलन "अस्सलामु अलैकुम" कह दे या क़िबला से फिर जाए या और कोई बात चीत। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–61, हिदाया

जिल्द–1 सफ़हा–96, शरह नक़ाया सफ़हा–68, कबीरी सफ़हा–275, किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़हा–370)

खुलासा फ़राइज़े नमाज़

फ़राइज़: (1) क़याम (2) क़िराअत (3) रुकूअ (4) सज्दा (5) क़अ़दए अख़ीरा (6) नमाज़ को अपने फ़ेल से तमाम करना।

वाजिब क़िराअत की मिक़्दार

मस्अला: नफ़्ल और वित्र की (हर रकअत में) और फ़र्ज़ नमाज़ों की इब्तिदाई दो रक्अ़तों में सूरए फ़ातिहा के साथ किसी और सूरत का पढ़ना वाजिब है। छोटी से छोटी सूरत (जैसे सूरए कौसर या उसके बराबर क़ुरआन करीम की आयतें, मसलन तीन छोटी छोटी आयतें, या एक बड़ी आयत के पढ़ लेने से अम्रे वाजिब अदा होता है। छोटी आयात मसलन "ثُمَّ نَظَرَ ۔ ثُمَّ عَبَسَ وَبَسَرَ ۔ ثُمَّ اَدْبَرَ وَاسْتَكْبَرَ" इसमें दस अलफ़ाज़ हैं और मुशद्दद हुरूफ़ को दो हुरूफ़ शुमार कर के तीस हुरूफ़े हिजा हैं। पस लम्बी आयात में से हर रक्अ़त में इस मिक़्दार में क़ुरआन हकीम पढ़ लिया जाए तो वाजिब अदा हो जाएगा। लिहाज़ा अगर आयतुलकुर्सी में से सिर्फ़ इतना पढ़ लिया जाए कि:

"اَللّٰهُ لَا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ الْحَيُّ الْقَيُّوْمُ لَا تَاْخُذُهٗ سِنَةٌ وَّلَا نَوْمٌ"

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़हा–380, सग़ीरी सफ़हा–150, फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़हा–310, शामी जिल्द–1

सफ़्हा–427)

नमाज़ के वाजिबात

(1) तकबीरे तहरीमा का ख़ास "الله اكبر" के लफ़्ज़ से होना, अगर इसके हम माना किसी लफ़्ज़ से मसलन अल्लाहु आज़म वग़ैरा के अदा की जाए तो वाजिब तर्क हो जाएगा।

(2) तकबीरे तहरीमा के बाद इतनी देर तक खड़ा रहना जिसमें सूरए फ़ातिहा और दूसरी कोई सूरत पढ़ी जा सके। (दुर्रेमुख़्तार)

(3) सूरए फ़ातिहा का फ़र्ज़ की दो रकअ़तों में और बाक़ी नमाज़ों की सब रकअ़तों में एक मरतबा पढ़ना।

(4) एक मरतबा सूरए फ़ातिहा पढ़ने के बाद किसी दूसरी सूरत का पढ़ना फ़र्ज़ की दो रकअ़तों में और बाक़ी नमाज़ों की सब रकअ़तों में, ये दूसरी सूरत कम से कम तीन आयतों की होना चाहिए, अगर तीन आयतें पढ़ ली जाएँ, ख़्वाह किसी सूरत का जुज़ हों या ख़ुद सूरत हों तो काफ़ी है।

(5) पहले सूरए फ़ातिहा का पढ़ना, उसके बाद दूसरी सूरत का पढ़ना, अगर कोई शख़्स पहले (फ़ातिहा से) दूसरी सूरत पढ़े और उसके बाद सुरए फ़ातिहा पढ़े तो वाजिब अदा न होगा।

(6) फ़र्ज़ की पहली दो रकतों में क़िराअत करना। अगर दूसरी, तीसरी या तसीरी, चौथी में क़िराअत की जाए और पहली दूसरी में न की जाए तो वाजिब अदा न

होगा, अगरचे फ़र्ज़ अदा हो जाएगा।

(दुर्रेमुख़्तार, मराक़ियुलफ़लाह)

(7) रुकूअ़ के बाद उठ कर सीधा खड़ा हो जाना जिसको फ़ुक़हा क़ौमा कहते हैं।

(8) सज्दों में पूरे दोनों हाथों और घुटनों और दोनों पैरों और नाक का ज़मीन पर रखना।

(मराक़ियुलफ़लाह)

(9) दूसरे सज्दे का उसके माबाद से पहले अदा करना, मसलन अगर कोई शख़्स पहली रकअ़त में बग़ैर दूसरा सज्दा किए हुए खड़ा हो जाए तो उसका वाजिब तर्क हो जाएगा इसलिए कि उसने सज्दे से पहले क़याम कर लिया। (शामी)

(10) रुकूअ़ और सज्दों में इतनी देर तक ठहरना कि एक मरतबा "سُبْحَانَ رَبِّيَ الْعَظِيْم" वग़ैरा, या "سُبْحَانَ رَبِّيَ الْاَعْلٰى" वग़ैरा कह सके।

(तहतावी, मराक़ियुलफ़हाल वग़ैरा)

(11) दोनों सज्दों के दरमियान में उठ कर बैठना जिसको फ़ुक़हा जलसा कहते हैं।

(12) क़ौमा और सज्दों के दरमियान में इस क़दर ठहरना कि एक मरतबा तस्बीह कही जा सके।

(मराक़ियुलफ़लाह)

(13) क़अ़दए ऊला यानी दोनों सज्दों के बाद दूसरी रकअ़त में बैठना, अगर नमाज़ दो रकअ़त से ज़्यादा हो।

(14) क़अ़दए ऊला में बक़द्र अत्तहीयात के बैठना।

(15) दोनों क़अ़दों में एक मरतबा अत्तहीयात पढ़ना, अगर न पढ़ी जाए या एक मरतबा से ज़्यादा पढ़ी जाए

तो वाजिब तर्क हो जाएगा।

(16) नमाज़ में अपनी तरफ़ से कोई ऐसा फ़ेल (काम) करना जो ताख़ीरे फ़र्ज़ या वाजिब का सबब हो जाए।

(दुर्रेमुख़्तार, शामी वग़ैरा)

मिसाल: (1) सूरए फ़ातिहा के बाद ज़्यादा सुकूत (ख़ामोशी) करना, ये सुकूत दूसरी सूरत की ताख़ीर का सबब हो जाएगा। (2) दो रुकूअ़ करना, दूसरा रुकूअ़ सज्दा की ताख़ीर का सबब हो जाएगा। (3) तीन सज्दे करना, तीसरा क़याम या क़ुऊद (बैठने) की ताख़ीर का सबब हो जाएगा। (4) पहली या तीसरी रकअ़त के अख़ीर में ज़्यादा न बैठना, ये बैठना दूसरी या चौथी रकअ़त के क़याम की ताख़ीर का सबब हो जाएगा। (शामी) (5) दूसरी रकअ़त में अत्तहीयात के बाद देर तक बैठना जिसमें कोई रुक्न मिस्ल रुकूअ़ वग़ैरा के अदा हो सके।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–63, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–9)

(17) नमाज़े वित्र में दुआए क़ुनूत पढ़ना ख़्वाह कोई दुआ हो।

(18) ईदैन की नमाज़ में अलावा मामूली तकबीरों के छः ज़ाएद तकबीरें कहना।

(19) ईदैन की दूसरी रकअ़त में रुकूअ़ करते वक़्त तकबीर कहना।

(20) इमाम को फ़ज्र की दोनों रकअ़तों में और मग़रिब व इशा की पहली दो रकअ़तों में ख़्वाह क़ज़ा हों या अदा, और जुमा व ईदैन और तरावीह की नमाज़ में और रमज़ान के वित्र में बुलंद आवाज़ से क़िराअत करना।

मुन्फ़रिद (तन्हा पढ़ने वाले) को इख़तियार है चाहे बुलंद आवाज़ से क़िराअत करे या आहिस्ता अवाज़ से, और आवाज़ के बुलंद होने की फ़ुक़हा ने ये हद ब्यान की है कि कोई दूसरा शख़्स सुन सके, और आहिस्ता आवज़ की ये हद लिखी कि ख़ुद सुन सके दूसरा न सुन सके।

(21) इमाम को ज़ुहर, अस्र की कुल रकअ़तों में और मग़रिब, इशा की अख़ीर रकअ़तों में आहिस्ता आवाज़ से क़िराअत करना। (क़ाज़ी ख़ाँ)

(22) जो नफ़्ल नमाज़ें दिन में पढ़ी जाएँ उनमें आहिस्ता अवाज़ से क़िराअत करना और जो नफ़्लें रात को पढ़ी जाएँ उनमें इख़्तियार है। (मराक़ियुलफ़लाह)

(23) मुन्फ़रिद (तन्हा नमाज़ पढ़ने वाला) अगर फ़ज्र, मग़रिब, इशा की क़ज़ा दिन में पढ़े तो उनमें भी उसको आहिस्ता आवाज़ से क़िराअत करना चाहिए और अगर रात को क़ज़ा पढ़े तो उसे इख़्तियार है।

(24) अगर कोई शख़्स मग़रिब, इशा की पहली दूसरी रकअ़त में सूरए फ़ातिहा के बाद दूसरी सूरत मिलाना भूल जाए तो उसे तीसरी चौथी रकअ़त में सूरए फ़ातिहा के बाद दूसरी सूरत पढ़ना चाहिए, और उन रकअ़तों में भी बुलंद आवाज़ से क़िराअत करना वाजिब है।

(25) नमाज़ को "السلام عليكم" कह कर ख़त्म करना न किसी और लफ़्ज़ से।

(26) दो मरतबा "السلام عليكم" कहना।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–64 व हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–73 व शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–70, कबीरी सफ़्हा–298 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–381 व

बहर जिल्द–1 सफ़्हा–302)

मस्अला: वाजिब के तर्क (छोड़ने) से नमाज़ नाक़िस होती है।

मस्अला: वाजिब का मुन्किर फ़ासिक़ होता है, और फ़र्ज़ का मुन्किर काफ़िर।

मस्अला: वाजिब अगर रह जाए तो सज्दए सह्व से तलाफ़ी हो सकती है कि सलाम फेरने के बाद सज्दए सह्व करले।

मस्अला: क़सदन वाजिब को तर्क किया जाए तो इआदए सलात (नमाज़ का लौटाना) वाजिब होता है।

मस्अला: तर्के वाजिब मकरूहे तहरीमी है और मकरूहे तहरीमी के इरतिकाब से इंसान फ़ासिक़ और गुनहगार होता है।

मस्अला: और जो नमाज़ मकरूहे तहरीमी के साथ अदा की जाए वह वाजिबुल इआदा होगी। यानी लौटाना ज़रूरी होगा।

(नमाज़ मसनून सफ़्हा–303 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–379)

सुन्नत की तारीफ़ और हुक्म

सुन्नत, इससे मुराद वह अमल है जिसके बजा लाने पर मुकल्लफ़ इंसान मुस्तहिक़्क़े सवाब होता है, अगर तर्क कर दे (छोड़ दे) तो उससे मुवाख़ज़ा नहीं। पस अगर किसी ने नमाज़ की तमाम सुन्नतें या कुछ सुन्नतें तर्क कर दीं तो अल्लाह तआला उसके तर्क पर कोई मुवाख़ज़ा

नहीं करेगा, लेकिन उसके बजा लाने में जो सवाब मिलता उससे महरूम रहेगा।

ताहम किसी मुसलमान को ज़ेबा नहीं है कि सुन्नत की बात को बे हैसियत तसव्वुर करे, क्योंकि नमाज़ का मक़सद बारगाहे इलाही में तक़र्रुब हासिल करना है जिसका नतीजा अज़ाब से दूर होना और अल्लाह तआला की नेमतों से बहरायाब होना है।

ऐसी सूरत में कोई आक़िल ये मुनासिब न जानेगा कि नमाज़ की सुन्नतों में से किसी सुन्नत की बेक़द्री करे और उसे तर्क कर दे, क्योंकि उसका तर्क सवाबे अमल से महरूमी का बाइस है, और ये बात किसी दानिशमंद से मख़फ़ी नहीं है कि ये महरूमी ही (बजाए खुद) एक अज़ाब है। ऐसा करने से अल्लाह की नेमतों से महरूमी है। लिहाज़ा मुकल्लफ़ इंसान के लिए ये अम्र ख़ास अहमियत रखता है कि शारेअ़ (आँ हज़रत) अलैहिस्सलाम ने जिन उमूर के बजा लाने का इरशाद फ़रमाया है, उनकी बजा आवरी की जानिब तवज्जोह की जाए, ख़्वाह वह उमूरे फ़र्ज हों या सुन्नत हों।

रहा ये सवाल कि आख़िर इसका क्या सबब है कि शारेअ़ अलैहिस्सलाम ने नमाज़ की बाज़ बातों को फ़र्ज़ (लाज़िम) और बाज़ बातों को ग़ैर ज़रूरी क़रार दिया है? इसका जवाब ये है कि अल्लाह तआला अपने बंदों पर आसानी करता है, इसीलिए उसने बंदों को बाज़ आमाल बजा लाने का इख़्तियार दिया है, ताकि उनका सवाब अता फ़राए। अब अगर कोई शख़्स उसे छोड़ दे तो सवाब से महरूम रहेगा, लेकिन उस पर अज़ाब न होगा।

ये भी शरीअ़ते इस्लामिया की ख़ूबियों में से एक ख़ूबी है कि उसमें शरई ज़िम्मादारियों की दुश्वारी दूर कर दी गई और निहायत ख़ूबी के साथ जज़ाए ख़ैर हासिल करने की तरग़ीब है। (किताबुलफ़िक्ह जिल्द–1 सफ़्हा–383)

मस्अला: नमाज़ की सुन्नत का छोड़ना न तो नमाज़ के फ़साद का मूजिब होता है और न ही सज्दए सह्व का बल्कि वह गुनाह का मूजिब उस वक़्त होता है जबकि उसने जान बूझ कर छोड़ा हो, मगर शर्त ये है कि उसने सुन्नत को हक़ीर समझ कर न छोड़ा हो, बल्कि सुस्ती या काहिली की वजह से ऐसा किया हो, इसलिए कि सुन्नत को हक़ीर समझने वाला अज़ रूए फ़तवा काफ़िर हो जाता है।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–19, किताबुस्सलात)

नमाज़ की सुन्नतें

(1) तकबीरे तहरीमा कहते वक़्त सर को न झुकाना।

(मराक़ियुलफ़लाह)

(2) तकबीरे तहरीमा कहने से पहले दोनों हाथों को उठाना, मर्दों को कानों तक और औरतों को शानों तक और उज़्र की हालत में मर्दों को भी शानों तक हाथ उठाने में कुछ हरज नहीं है।

(3) तकबीरे तहरीमा कहते वक़्त उठे हुए हाथों की हथेलियों और उंगलियों का रुख़ क़िब्ले की तरफ़ करना।

(दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

(4) हाथ उठाते वक़्त उंगलियों को न बहुत कुशादा

करना, न बहुत मिलाना।

(5) तकबीरे तहरीमा के फ़ौरन बाद हाथों का बाँध लेना, मर्दों को नाफ़ के नीचे, औरतों को सीने पर।

(6) मर्दों को इस तरह हाथ बाँधना कि दाहिनी हथेली बाईं पर रख लें और दाहिने अंगूठे और छोटी उंगली से बाएँ कलाई को पकड़ लें और तीन उंगलियाँ बाईं कलाई पर बिछा दें। और औरतों को इस तरह कि दाईं हथेली बाईं हथेली पर रख लें, अंगूठे और छोटी उंगली से बाईं कलाई को पकड़ना उनके लिए मसनून नहीं है।

(7) हाथ बांधने के फ़ौरन बाद "سُبْحَانَكَ اللّٰهُمَّ الخ" पढ़ना।

(8) इमाम और मुन्फ़रिद को "سُبْحَانَكَ اللّٰهُمَّ" के बाद और मस्बूक़ को अपनी उन रकअ़तों की पहली रकअ़त में जो इमाम के बाद पढ़े बशर्तेकि वह रकअ़तें क़िराअत की हों "اَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ" कहना।

(9) हर रकअ़त के शुरू में "الحمد لله" से पहले "بسم الله الرحمٰن الرحيم" कहना।

(10) इमाम और मुन्फ़रिद को सूरए फ़ातिहा के ख़त्म पर आमीन कहना और क़िराअत बुलंद आवाज़ से हो तो सब मुक़्तदियों को भी आमीन (आहिस्ता) कहना।

(11) आमीन का आहिस्ता आवाज़ से कहना।

(12) क़याम (खड़े होने) की हालत में दोनों क़दमों के दरमियान चार उंगली के बराबर फ़स्ल होना।

(13) फ़ज्र और ज़ुहर के वक़्त फ़र्ज़ नमाज़ों में सूरए फ़ातिहा के बाद तिवाले मुफ़स्सल की सूरतों को पढ़ना और अस्र, इशा के वक़्त औसाते मुफ़स्सल।

मग़रिब में किसारे मुफ़स्सल।

बशर्तेकि सफ़र और ज़रूरत की हालत न हो। सफ़र और ज़रूरत की हालत में जो सूरत चाहे पढ़े।

(14) फ़ज्र के फ़र्ज़ की पहली रकअ़त में दूसरी रकअ़त की बनिस्बत डेवढ़ी सूरत पढ़ना। (शामी)

(15) रुकूअ़ में जाते वक़्त "अल्लाहुअकबर" कहना, इस तरह कि तकबीर और रुकूअ़ की इब्तिदा साथ ही हो और रुकूअ़ में पहुंचते ही तकबीर ख़त्म हो जाए।

(मुनिया व गुनिया वग़ैरा)

(16) मर्दों को रुकूअ़ में घुटनों का दोनों हाथों से पकड़ना और औरतों को सिर्फ़ घुटनों पर हाथ रख लेना।

(गुनिया)

(17) मर्दों को उंगलियाँ कुशादा कर के घुटनों पर रखना और औरतों को मिला कर।

(18) रुकूअ़ की हालत में पिंडलियों का सीधा रखना।

(19) मर्दों को रुकूअ़ की हालत में अच्छी तरह झुक जाना कि पीठ और सुरीन सब बराबर हो जाएँ, और औरतों को सिर्फ़ इस क़दर झुकना कि हाथ घुटनों तक पहुंच जाएँ। (मराक़ी)

(20) रुकूअ़ में कम से कम तीन मरतबा "سُبْحَانَ رَبِّیَ الْعَظِیْم" कहना।

(21) रुकूअ़ में मर्दों को दोनों हाथों का पहलू से जुदा रखना।

(22) क़ौमे में इमाम को सिर्फ़ "سَمِعَ اللّٰهُ لِمَنْ حَمِدَهٗ" कहना और मुक़्तदी को सिर्फ़ "رَبَّنَا وَلَکَ الْحَمْدُ" और मुन्फ़रिद को दोनों कहना।

(23) सज्दे में जाते वक़्त अल्लाहुअकबर कहना।

(24) सज्दे में जाते वक़्त पहले घुटनों को ज़मीन पर रखना, फिर हाथों को फिर नाक को फिर पेशानी को और उठते वक़्त पहले नाक को उठाना फिर पेशानी को फिर हाथों को फिर घुटनों को। (मराक़ी)

(25) सज्दा की हालत में मुंह को दोनों हाथों के दरमियान में रखना। (शरह वक़ाया)

(26) सज्दे की हालत में मर्दों को अपने पेट का ज़ानों से और केहनियों का पहलू से अलाहिदा रखना और हाथ की बाहों का ज़मीन से उठा हुआ रखना और औरतों को पेट का ज़ानों से और केहनियों का पहलू से मिला हुआ, और हाथ की बाहों का ज़मीन पर बिछा हुआ रखना।

(27) सज्दे की हालत में दोनों हाथों की उंगलियों का मिला हुआ रखना। (शरह वक़ाया वग़ैरा)

(28) सज्दे की हालत में दोनों पैरों की उंगलियों को क़िबले की तरफ़ रखना। (शरह वक़ाया)

(29) सज्दे की हालत में दोनों ज़ानों को मिला हुआ रखना।

(30) सज्दे में क़म अज़ कम तीन मरतबा "سبحان ربی الاعلیٰ" कहना।

(31) सज्दे से उठते हुए तकबीर कहते हुए सर का ज़मीन से उठाना।

(32) दोनों सज्दों के दरमियान में उसी ख़ास कैफ़ियत से बैठना जिस कैफ़ियत से दोनों सज्दों के बाद बैठना चाहिए जिसका ब्यान आगे आता है।

(33) क़अ़दए ऊला और दूसरा क़अ़दा दोनों में मर्दों

को इस तरह बैठना कि दाहिना पैर उंगलियों के बल खड़ा हो और उसकी उंगलियों का रुख़ क़िब्ला की तरफ़ हो और बायाँ पैर ज़मीन पर बिछा हो और उसी पर बैठे हों और दोनों हाथ ज़ानों पर हों, उंगलियों के सिरे घुटनों के क़रीब हों। और औरतों को इस तरह कि अपने बाएँ सुरीन पर बैठें और दाहिने ज़ानों को बाएँ पर रख लें और बायाँ पैर दाहनी तरफ़ निकाल दें और दोनों हाथ बदस्तूर ज़ानों पर हों।

(34) अत्तहीयात में लाइलाहा कहते वक़्त दाहिने हाथ की बीच की उंगली और अंगूठे का हलक़ा बना कर और छोटी उंगली और उसके आस पास की उंगलियाँ बंद कर के कलिमा की उंगली का उठाना और इल्लल्लाह कहते वक़्त रख देना और बाक़ी उंगलियों को आख़िर तक बदस्तूर बाक़ी रखना।

(35) फ़र्ज़ की पहली दो रकतों के बाद हर रकअ़त में सूरए फ़ातिहा पढ़ना। (मराक़ीयुलफ़लाह)

(36) क़अ़दए अख़ीर में अत्तहीयात के बाद दुरूद शरीफ़ पढ़ना। (मराक़ियुलफ़लाह)

(37) दरूद शरीफ़ के बाद किसी ऐसी दुआ़ का पढ़ना जो क़ुरआने करीम या अहादीस से साबित हो, अगर कोई ऐसी दुआ़ पढ़ी जाए. जो क़ुरआन करीम और अहादीस से साबित न हो तब भी जाइज़ है। बशर्तेकि दुआ़ ऐसी चीज़ की हो जिसका तलब करना ख़ुदा के सिवा किसी से मुमकिन न हो। (बहरुर्राइक़)

(38) अस्सलामु अलैकुम कहते वक़्त दाहिनी बाईं तरफ़ मुंह फेरना। (मराक़ियुलफ़लाह)

(39) पहले दाहिनी तरफ़ मुंह फेरना, फिर बाईं तरफ़।
(मराक़ियुलफ़लाह)

(40) इमाम को बुलंद आवाज़ से सलाम फेरना। (कहना)

(41) दूसरे सलाम की आवाज़ का बनिस्बत पहले सलाम की आवाज़ के पस्त होना। (मराक़ियुलफ़लाह)

(42) इमाम को अपने सलाम में अपने तमाम मुक़्तदियों की नीयत करना, ख़्वाह मर्द हों या औरत या लड़के हों या मुख़न्नस और किरामन कातिबीन वग़ैरा फ़रिश्तों की नीयत करना और मुक़्तदियों को अपने साथ सब नमाज़ पढ़ने वालों की और किरामन कातिबीन फ़रिश्तों की। और इमाम दाहिनी तरफ़ हो तो दाहिने सलाम में और बाईं तरफ़ हो तो बाएँ सलाम में और मुहाज़ी हो तो दोनों सलाम में इमाम की भी नीयत करना।

(मराक़ियुलफ़लाह, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–68 ता 71 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–383 ता 385 व नमाज़ मसनून सफ़्हा–310)

नमाज़ के मुस्तहब्बात

(1) तकबीरे तहरीमा कहते वक़्त मर्दों को अपने हाथों को आस्तीन या चादर वग़ैरा से बाहर निकाल लेना, बशर्तेकि कोई उज़्र मिस्ल सर्दी वग़ैरा के न हो और औरतों को हाथों का न निकालना बल्कि चादर या दोपट्टा वग़ैरा में छिपाए रखना। (मराक़ियुलफ़लाह)

(2) खड़े होने की हालत में अपनी नज़र सज्दे के मक़ाम पर जमाए रखना और रुकूअ़ में क़दम पर, सज्दे

में नाक पर, बैठने की हालत में जानों पर, सलाम की हालत में शानों पर। (दुर्रेमुख़्तार)

(3) जहाँ तक मुमकिन हो ख़ाँसी या जमाई को रोकना। (दुर्रेमुख़्तार, मराक़ियुलफ़लाह)

(4) अगर जमाई आ जाए तो हालते क़याम में दाहिने हाथ की पुश्त वरना बाएँ हाथ की पुश्त मुंह पर रख लेना। (दुर्रेमुख़्तार)

(5) इमाम का "قد قامت الصلوٰة" के फ़ौरन बाद तकबीरे तहरीमा कहना।

(6) क़अ़्दए ऊला और अख़ीरा में वही ख़ास तशह्हुद पढ़ना जो ब्यान हो चुका उसमें कमी ज़्यादती न करना।

(7) कुनूत में उसी खास दुआ का पढ़ना जो हम ऊपर लिख चुके हैं यानी "اللهم انا نستعينك الخ" तक पढ लेना।

(शामी, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–72 व नमाज़ मसनून सफ़्हा–311)

मस्अला: हर रकअ़त में "الحمد لله" से पहले और सूरत के पढ़ने के वक़्त "بسم الله الرحمٰن الرحيم" पढ़ना मुस्तहब है।

(शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–74, कबीरी सफ़्हा–308)

अह्नाफ़ के नज़दीक मन्दूब, अदब और मुस्तहब के एक ही माना हैं, यानी इससे मुराद वह उमूर हैं जो नबी करीम (स.अ.व.) ने किए, लेकिन हमेशा उस पर अमल नहीं फ़रमाया। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–425)

फ़राइज़ुस्सलात

औवलन ये बात ज़ेहन नशीन रहे कि फ़राइज़ फ़रीज़ा

की जमा है और फ़र्ज़ शरअन हर उस फ़ेल को कहा जाता है जिसका बजा लाना (अदा करना) दलीले क़तई से लाज़िम हुआ है, चाहे वह फ़ेल फ़ी नफ़्सिही रुक्न हो या शर्त।

"كما قال فى البحر الرائق. فان الفرض شرعاً مالزم فعله' بدليل قطعى اعم من ان يكون شرطاً او ركناً جلد-اول صفحه-٢٩٠"

तंबीह: सानियन, ये बात वाज़ेह रहे कि फ़राइज़े सलात की तादाद में इबारते कुतुबे फ़िक़्ह मुख़्तलिफ़ हैं। बहरुर्राइक़ व शामी में सात और आलमगीरी व हिदाया में छः और कबीरी में आठ ज़िक्र किए गए हैं, लेकिन ख़ुलासा और मोतमद बेह ये है कि कुल फ़राइज़े सलात आठ हैं, उनमें से छः हमारे अइम्मा के दरमियान मुत्तफ़क़ अलैह हैं और दो मुख़्तलफ़ फ़ीह हैं।

كما فى الكبيرى: امافرائض الصلوٰة اى اركانها التى توجد ماهيتها بمجموعها فثمان فرائض ست فرائض على الوفاق بين ائمتنا ومنها لثنان فريضتان على الخلاف بينهم (صفحہ-٢٩٢)

(فى بيان الفرائض) متفق عليها

छः फ़राइज़ ये हैं (1) तकबीरे इफ़तिताह बलफ़्ज़ दीगर तकबीरे तहरीमा (2) क़याम (3) क़िराअत (4) रुकूअ़ (5) सज्दा (6) क़अ़दए आख़ीरा बमिक़्दारे तशह्हुद पढ़ेंगे।

ايضاً فى الكبيرى وهى اى الفرائض الست المتفق عليها تكبيرات الافتتاح (الى ان قال) والفرائض الباقية من الست القيام والقراءة والركوع والسجود والقعدة الاخره مقدار قراءة التشهد ـ (صفحہ-٢٩٢)

मुलाहज़ा: तकबीरे तहरीमा के बारे में ये बात ख़्याल में रहे कि उसकी फ़रज़ियत हमारे अइम्मा के नज़दीक

मुत्तफ़क़ अलैह होने के बावजूद उनके दरमियान इस बात में इख़तिलाफ़ हुआ है कि आया वह रुक्ने सलात है या शर्ते सलात। तो इमसें सहीह और मोतमद क़ौल ये है कि तकबीरे तहरीमा शर्ते सलात है न कि रुक्ने सलात। इसी क़ौल को साहबे बदाएउस्सनाए ने मुहक़्क़िक़ीन की तरफ़ और साहबे ग़ायतुलबयान ने आम मशाइख़ की तरफ़ मनसूब किया है और यही असह क़ौल है।

كمافى البحرالرائق: ثم اختلفوا هل شرط او ركن ففى
الحاوى هى شرط فى اصح الروايتين وجعله فى
البدائع قول المحققين من مشائخنا وفى غاية البيان
قول عامة المشائخ وهو الاصح (جلد-۱ صفحہ-۲۹۱)

और इसी वजह से फ़र्ज़ नमाज़ की तहरीमा से नफ़्ल पढ़ना जाइज़ होता है, बख़िलाफ़ उसके अक्स के (पस वह नाजाइज़ होगा)

كما ايضاً فى البحر: وثمرة الاختلاف تظهرفى بناء النفل
على تحريمة الفرض فيجوز عندالقائلين بالشرطية ولا
يجوز عند القائلين بالركنية (جلد-۱ صفحه-۲۹۱)

फ़राइज़ मुख़्तलफ़ फ़ीह : और मुख़्तलफ़ फ़ीह फ़राइज़ ये हैं: (1) خروج المصلى (मुसल्ली का क़सदन अपने मुनाफ़िए सलात फ़ेल के ज़रीए नमाज़ से निकलना) इमामे आज़म अबू हनीफ़ा (रह.) के नज़दीक फ़र्ज़ है, बख़िलाफ़ इमाम अबुयूसुफ़ (रह.) और इमाम मुहम्मद (रह.) के (पस उनके नज़दीक ये फ़र्ज़ नहीं है) (2) तादीले अरकान, और मतलब इसका इत्मीनान हासिल करना अदाए अरकान के वक़्त (रुक्न बादा रुक्निन और तमाम आज़ा से इज़तिराब का दूर होना और उसकी अक़ल्ले मिक़दार

एक तस्बीह का अंदाज़ा है। पस ये इमाम अबूयूसुफ़ (रह.) और अइम्मए सलासा इमाम मालिक (रह.), इमाम शाफ़ई (रह.), इमाम अहमद (रह.) के नज़दीक फ़र्ज़ है, बख़िलाफ़ इमाम आज़म अबूहनीफ़ा (रह.) और इमाम मुहम्मद (रह.) वग़ैरा के उनके नज़दीक फ़र्ज़ नहीं है।

كمافي الكبيرى: اما الخروج من الصلوٰة لصنعه اى بالفعل الناشى من المصلى ففرض عند ابى حنيفة خلافاً لهما الخ (وبعد) وتعديل الاركان وهو الطمانينة و زوال الاضطراب من جميع الاعضاء واقله قدر تسبيحةٍ فرض عند ابى يوسف والائمة الثلاثة (صفحه-٢٥٦)

अलग़र्ज़ मुत्तफ़क़ अलैह फ़राइज़ में से अगर एक फ़र्ज़ भी क़सदन या सहवन फ़ौत हो जाए तो फ़रज़ियते सलात अदा न होगी, बल्कि नमाज़ ज़िम्मा फ़र्ज़ रहेगी। और मुख़्तलफ़ फ़ीह ख़ुसूसन तादील अरकान अगर क़सदन फ़ौत हुई तो, नमाज़ वाजिबुलइआदा होगी और अगर सहवन ऐसा हुआ है तो सज्दए सहव लाज़िम होगा। इसलिए तमाम फ़राइज़े सलात को बएहतेमाम अदा करना ज़रूरी है, ताकि नमाज़ में किसी क़िस्म का नुक़सान वाक़े न हो। (वत्तफ़सील फ़ी कुतुबिलफ़िक़्ह) वल्लाहु तआला आलमु बिस्सवाब।

तादादे रकआत और तरीक़ए नमाज़

फ़ज्र के वक़्त दो रकअत नमाज़ फ़र्ज़ है, और ज़ुहर, अस्र, इशा के वक़्त चार चार रकअतें, जुमा के दिन बजाए ज़ुहर के दो रकअत नमाज़े जुमा। मग़रिब के वक़्त तीन

रकअ़त।

पढ़ने का तरीक़ा ये है कि तमाम शराइत की पाबंदी के साथ खड़े हो कर दोनों हाथों को चादर या आस्तीन वग़ैरा से बाहर निकाल कर कानों तक उठाए, इस तरह कि दोनों अंगूठे कानों की लौ से मिल जाएँ और हथेलियाँ क़िबला की तरफ़ हों, उंगलियाँ न बहुत कुशादा हों न मिली हुई, ऐसी हालत में जिस नमाज को पढ़ना चाहे, उसकी नीयत दिल में कर ले और ज़बान से भी दिली इरादा को ज़ाहिर करे (तो बेहतर है) और नीयत अरबी ज़बान में कहना कुछ ज़रूरी नहीं, बल्कि जिस ज़बान में भी करे इस तरह से करे कि: "मैंने ये नीयत की कि दो रकअ़त नमाज़ फ़र्ज़ फ़ज्र के वक़्त मैं पढ़ूँ।" हर नमाज़ की इसी तरह से इस नीयत के साथ ही "अल्लाहुअकबर" कह कर दोनों हाथ नाफ़ के नीचे बाँध ले, इस तरह कि दाहिनी हथेली बाईं हथेली की पुश्त पर हो और बाईं कलाई को दाहिने अंगूठे और छोटी उंगली से पकड़े और बाक़ी तीन उंगलियाँ बाईं कलाई पर बिछा ले फिर फ़ौरन ये दुआ़ पढ़े:

"سُبْحَانَکَ اللّٰھُمَّ وَبِحَمْدِکَ وَتَبَارَکَ
اسْمُکَ وَتَعَالٰی جَدُّکَ وَلَا اِلٰہَ غَیْرُکَ"

अगर किसी के पीछे नमाज़ पढ़ता हो तो इस दुआ़ को पढ़ कर ख़ामोश रहे और अगर इमाम क़िराअत शुरू कर चुका हो तो इस दुआ़ को भी न पढ़े, बल्कि "अल्लाहुकबर" के बाद ही ख़ामोश रहे, और अगर तन्हा नमाज़ पढ़ता हो या इमाम हो तो उसके बाद اَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ ـ بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ पढ़ कर सूरए फ़ातिहा

(अलहम्द शरीफ़) पढ़े और जब सूरए फ़ातिहा ख़त्म हो जाए तो मुन्फ़रिद और इमाम आहिस्ता से आमीन कहें, अगर किसी ऐसे वक़्त की नमाज़ हो जिसमें बुलंद आवाज़ से किराअत की जाती है तो सब मुक़्तदी भी आहिस्ता से आमीन कहें, आमीन के अलिफ़ को बढ़ा कर कहना चाहिए, इसके बाद कोई सूरत कुरआन करीम की पढ़े, अगर सफ़र की हालत में हो या कोई ज़रूरत हो तो इख़्तियार है कि जो सूरत चाहे और अगर सफ़र और ज़रूरत की हालत न हो तो फ़ज्र और जुहर की नमाज़ में सूरए हुजरात और सूरए बुरूज और उसके दरमियान की सूरतों में से जिस सूरत को चाहे पढ़े, और फ़ज्र की पहली रकअत में बनिस्बत दूसरी रकअत के बड़ी सूरत होना चाहिए, बाकी औक़ात की दोनों रकअतें में सूरतें बराबर होनी चाहिएँ, एक दो आयत की कमी ज़्यादती का एतेबार नहीं।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–35)

मस्अला: सूरए फ़ातिहा और सूरत के दरमियान में बिस्मिल्लाह आहिस्ता पढ़ना चाहिए।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–176)

मस्अला: सुब्हानकल्लाहुम्मा से पहले बिस्मिल्लाह नहीं पढ़ी जाती बल्कि सना के बाद पढ़ी जाती है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–209)

मस्अला: अस्र व इशा की नमाज़ में "وَالسَّمَاءِ وَالطَّارِقِ" "لَمْ يَكُنْ" और उनके दरमियान की सूरतों में से कोई सूरत पढ़नी चाहिए। मग़रिब की नमज़ में "اذا زلزلت" से आख़िर तक।

(अगर याद हों तो ये सूरतें पढ़ें, वरना जो भी याद हो वह पढ़ लें) (रफ़अ़त क़ासमी)

सूरत पढ़ने के बाद "अल्लाहुअकबर" कहता हुआ रुकूअ़ में जाए और रुकूअ़ की इब्तिदा साथ ही हो और रुकूअ़ में अच्छी तरह पहुंच जाने के साथ ही तकबीर ख़त्म हो जाए। रुकूअ़ इस तरह किया जाए कि दोनों हाथ घुटनों पर हों, हाथों की उंगलियाँ कुशादा हों और सर और सुरीन (कूल्हे) बराबर हों, ऐसा न हो कि सर झुका हुआ हो और पीठ उठी हुई हो, पैर की पिंडलियाँ सीधी हों, ख़मदार (टेढ़ी) न हों, रुकूअ़ में कम से कम तीन मरतबा "سبحان ربی العظیم" कहना चाहिए, फिर रुकूअ़ से उठ कर सीधा खड़ा हो जाए और इमाम सिर्फ़ "سمع الله لمن حمده" कहे और मुक़्तदी सिर्फ़ "ربنا لك الحمد" और मुन्फ़रिद (तन्हा पढ़ने वाला) दोनों कहे, फिर तकबीर कहता हुआ और दोनों हाथों को घुटनों पर रखे हुए सज्दे में जाए, तकबीर और सज्दा की इब्तिदा साथ ही हो और सज्दा में पहुंचते ही तकबीर ख़त्म हो जाए।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–35, किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–413 व दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–96 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–302)

सज्दा करने का तरीक़ा

सज्दे में पहले घुटनों को ज़मीन पर रखना चाहिए फिर हाथों को फिर नाक को फिर पेशानी को (उठते वक़्त उसके बरअक्स उठे) और मुंह दोनों हाथों के दरमियान

होना चाहिए, और उंगलियाँ मिली हुई किब्ला रू होना चाहिए और दोनों पैर उंगलियों के बल खड़े हों, और उंगलियों का रुख़ किब्ला की तरफ़ और पेट ज़ानों से अलाहिदा और बगल से जुदा हों, पेट ज़मीन से इस क़दर ऊँचा हो कि बकरी का बहुत छोटा सा बच्चा दरमियान से निकल सके। (यानी जहाँ तक भी बिला तकल्लुफ़ ज़मीन से ऊँचा उठ सके उठाए) सज्दा में कम से कम तीन मरतबा "سُبْحَانَ رَبِّيَ الْاَعْلٰى" कहे, फिर सज्दा से उठ कर अच्छी तरह बैठ जाए और दोनों हाथ घुटनों पर रख ले, इस तरह कि उंगलियाँ फैली हुई हों, रुख़ उनका किब्ला की तरफ़ हो, न बहुत कुशादा हों, न बिल्कुल मिली हुई, सिरे उनके घुटने के क़रीब हों और इस हालत में कोई दुआ न पढ़े।

सज्दे से उठते वक़्त पहले पेशानी उठाए, फिर नाक, फिर हाथ, इत्मीनान से बैठ चुकने के बाद दूसरा सज्दा उसी तरह करे जैसे पहला सज्दा किया था, दूसरा सज्दा कर चुकने के बाद तकबीर कहता हुआ फ़ौरन खड़ा हो जाए, खड़े होते वक़्त पहले पेशानी उठाए, फिर नाक, फिर हाथ, फिर घटने और हाथों को घुटनों पर रख कर खड़ा हो, हाथों को ज़मीन से सहारा देते हुए (बिला उज़्र) न खड़ा हो, इस दूसरी रकअत में सिर्फ़ बिस्मिल्लाह पढ़ कर सूरए फ़ातिहा पढ़ी जाए और इसी तरह कोई दूसरी सूरत मिला कर उसी तरह (पहली रकअत की तरह) रुकूअ, कौमा, दोनों सज्दे किए जाएँ, दूसरे सज्दा के बाद उसी तरह बैठ कर जिस तरह दोनों सज्दों के दरमियान बैठा था, ये दुआ पढ़े:

التَّحِيَّاتُ لِلّٰهِ وَالصَّلَوٰتُ وَالطَّيِّبَاتُ اَلسَّلَامُ عَلَيْكَ اَيُّهَا النَّبِيُّ
وَرَحْمَةُ اللّٰهِ وَبَرَكَاتُهٗ اَلسَّلَامُ عَلَيْنَا وَعَلٰى عِبَادِ اللّٰهِ الصَّالِحِيْنَ
اَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَاَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ۔

لَا اِلٰهَ कहते वक़्त अंगूठे और बीच की उंगली का हलक़ा बना कर छोटी उंगली और उसके पास की उंगली को बंद कर के कलिमा की उंगली आसमान की तरफ़ उठाए और اِلَّا اللّٰه कहते वक़्त कलिमा की उंगली झुका दे फिर जितनी देर बैठे उंगलियाँ उसी हालत में रहें और अगर दो रकअत वाली नमाज़ हो तो अत्तहीयात के बाद ये दुआ पढ़े:

اَللّٰهُمَّ صَلِّ عَلٰى مُحَمَّدٍ وَّعَلٰى اٰلِ مُحَمَّدٍ كَمَا صَلَّيْتَ
عَلٰى اِبْرَاهِيْمَ وَعَلٰى اٰلِ اِبْرَاهِيْمَ اِنَّكَ حَمِيْدٌ مَّجِيْدٌ ۔
اَللّٰهُمَّ بَارِكْ عَلٰى مُحَمَّدٍ وَّعَلٰى آلِ مُحَمَّدٍ كَمَا بَارَكْتَ
عَلٰى اِبْرَاهِيْمَ وَعَلٰى اٰلِ اِبْرَاهِيْمَ اِنَّكَ حَمِيْدٌ مَّجِيْدٌ۔

ये दुरूद पढ़ने के बाद ये दुआ पढ़े:

اَللّٰهُمَّ اِنِّيْ ظَلَمْتُ نَفْسِيْ ظُلْمًا كَثِيْرًا وَّاِنَّهٗ
لَا يَغْفِرُ الذُّنُوْبَ اِلَّا اَنْتَ فَاغْفِرْلِيْ مَغْفِرَةً مِّنْ
عِنْدِكَ وَارْحَمْنِيْ اِنَّكَ اَنْتَ الْغَفُوْرُ الرَّحِيْمُ۔

इसके बाद नमाज ख़त्म कर दे, इस तरह कि पहले दाहिनी तरफ़ मुंह फेर कर कहे: "اَلسَّلَامُ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَةُ اللّٰهِ" फिर बाईं तरफ़ मुंह फेर कर कहे: "اَلسَّلَامُ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَةُ اللّٰهِ" (अगर इमाम हो तो) इस सलाम में किरामन कातिबीन, फ़रिश्तों की और उन लोगों की नीयत की जाए जो नमाज़ में शरीक हों।

(इल्मुलफ़िक्ह जिल्द–2 सफ़हा–36, हिदाया जिल्द–1 सफ़हा–64, कबीरी सफ़हा–300, शरह नक़ाया सफ़हा–72,

किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़हा–413)

मस्अला: अगर उज़्र की वजह से क़अ़दा में मसनून तरीक़ा से न बैठ सके तो जिस तरह बन पड़े बैठे और कोशिश करे कि हैअते मसनूना के क़रीब तर हो।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़हा–181)

दो रकअ़त से ज़ाइद रकअ़त का तरीक़ा

और अगर दो रकअ़त वाली नमाज़ न हो बल्कि तीन रकअ़त या चार रकअ़त वाली नमाज़ हो तो सिर्फ़ अत्तहीयात अख़ीर तक पढ़ कर फ़ौरन खड़ा हो जाए बाक़ी तीन रकअ़त भी इसी तरह पढ़े मगर उन रकअ़तों में बिस्मिल्लाह पढ़ने के बाद सिर्फ़ सूरए फ़ातिहा पढ़ कर रुकूअ़ कर दे और दूसरी सूरत न मिलाए, अगर तीन रकअ़त वाली नमाज़ हो तो तीसरी रकअ़त में, वरना चौथी रकअ़त में दोनों सज्दों के बाद उसी तरह बैठ कर उसी तरह अत्तहीयात और दुरूद वग़ैरा पढ़ कर उसके बाद उसी तरह सलाम फेर कर नमाज़ ख़त्म कर दे। फ़ज्र, मग़रिब, इशा के वक़्त पहली दो रकअ़त में सूरए फ़ातिहा और दूसरी सूरत और "سَمِعَ اللّٰهُ لِمَنْ حَمِدَهٗ" और सब तकबीरें बुलंद आवाज़ से कहे और मुन्फ़रिद आहिस्ता और मुक़्तदी हर वक़्त तकबीरें वग़ैरा आहिस्ता कहे।

मस्अला: नमाज़ की हालत में इधर उधर न देखना चाहिए बल्कि खड़े होने की हालत में सज्दा के मक़ाम पर नज़र जमाए रखे और रुकूअ़ की हालत में पैरों की पुश्त पर और सज्दों में नाक और बैठने की हालत में ज़ानों

पर। नमाज़ की हालत में आँखों को खुला रखे, बंद न करे, हाँ अगर समझे कि आँख बंद कर लेने से नमाज़ में दिल ज़्यादा लगेगा तो कुछ मुज़ाएका नहीं है।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़हा–37)

नमाज़ ख़त्म करने के बाद दोनों हाथ सीना तक उठा कर फैलाए और अल्लाह तआला से अपने लिए दुआ माँगे और अगर इमाम हो तो मुक़्तदियों के लिए भी और मुक़्तदी सब आमीन आमीन कहते रहें और दुआ के बाद दोनों हाथ मुंह पर फेर लें। जिन नमाज़ों के बाद सुन्नतें हैं जैसे ज़ुहर, मग़रिब, इशा उनके बाद बहुत देर दुआ न माँगे बल्कि मुख़्तसर दुआ माँग कर उन सुन्नतों के पढ़ने में मशग़ूल हो जाए और जिन नमाज़ों के बाद सुन्नतें नहीं हैं जैसे फ़ज्र और अस्र उनके बाद जितनी देर तक चाहे दुआ माँगे, और इमाम हो तो मुक़्तदियों की तरफ़ मुंह फेर कर बैठ जाए, उसके बाद दुआ मांगे, बशर्तेकि कोई मस्बूक़ (जिसकी रकअ़त रह गई हो) उसके मुक़ाबले में नमाज़ न पढ़ रहा हो।

फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद बशर्तेकि उनके बाद सुन्नत न हो, वरना सुन्नत के बाद मुस्तहब है "اَسْتَغْفِرُ اللّٰهَ الَّذِیْ لَا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ الْحَیُّ الْقَیُّوْمُ" तीन मरतबा। आयतुलकुर्सी, चारों कुल एक एक मरतबा पढ़ कर तैंतीस मरतबा "سبحان الله" तैंसीस मरतबा "الحمد لله" और चौंतीस मरतबा "الله اكبر" पढ़े।

(मराक़ियुलफ़लाह, दुर्रेमुख़्तार, शामी वग़ैरा, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़हा–37, कबीरी सफ़हा–300, हिदाया जिल्द–1 सफ़हा–64, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़हा–72, तिर्मिज़ी सफ़हा–408, मुस्तदरक हाकिम सफ़हा–560, बहश्ती ज़ेवर

जिल्द–11 सफ़्हा–33, मराक़ियुलफ़ला सफ़्हा–18)

मस्अला: नमाज़ (फ़ज्र व अस्र) के बाद तस्बीहात का उंगलियों पर गिनना (शुमार करना) न सिर्फ़ जाइज़ है बल्कि हदीस शरीफ़ में तस्बीहात को उंगलियों पर गिनने का हुक्म आया है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–278)

मस्अला: मर्दों के लिए नाफ़ के ऊपर और नीचे हाथ बाँधना दोनों तरीक़े हदीस से साबित हैं। अहनाफ़ (रह.) ने हदीस ज़ेरे नाफ़ को मामूल बनाया है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–183, बहवाला गुनया सफ़्हा–294)

तशह्हुद में उंगली किस लफ़्ज़ पर गिराए?

मस्अला: तशह्हुद यानी नमाज़ में कलिमा की उंगली सिर्फ़ दाएँ हाथ की हिलाई जा सकती है, अगर किसी की वह उंगली कटी हुई हो या उसमें कोई मरज़ हो तो उसके बजाए दाएँ हाथ या बाएँ हाथ की किसी और उंगली से तशह्हुद (अत्तहीयात) के दौरान इशारा न किया जाए। इशारा का तरीक़ा ये है कि तशह्हुद में उस वक़्त कलिमा की उंगली को उठाया जाए, जब ग़ैरुल्लाह की उलूहीयत की नफ़ी करने वाले अलफ़ाज़ "لَا اِلٰہ" कहे जाएँ और जब "اِلَّا اللّٰہ" कहा जाए तो उंगली झुकाई जाए, गोया उंगली का उठाना (ग़ैरुल्लाह की) उलूहीयत से इन्कार और उसका झुका लेना अल्लाह की उलूहीयत के इक़रार की अलामत है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–418, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–92, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–474 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–68)

मस्अला: और नमाज़ के ख़त्म तक ऐसे ही रहने दे।

(नमाज़ मसनून सफ़्हा–389)

नमाज़ में सलाम फेरने का मसनून तरीक़ा

मस्अला: सलाम फेरने का सुन्नत तरीक़ा ये है कि पहले दाईं जानिब और फिर बाईं जानिब सलाम फेरा जाए और इतना मुड़ा जाए कि दाएँ और बाएँ रुख़्सार (कल्ला पीछे की जानिब) दिखाई दे जाएँ। अगर भूले से बाईं जानिब सलाम फेर लिया तो अब सिर्फ़ दाईं जानिब सलाम फेरा जाए। बाईं तरफ़ सलाम दोबारा न फेरा जाए। हाँ अगर मुंह को सामने रखे हुए सलाम फेरा तो अब दाईं और बाईं जानिब मुड़ कर सलाम फेरना चाहिए, और सुन्नत ये है कि "अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाह" कहा जाए, और ये कि दूसरे सलाम की आवाज़ पहले की बनिस्बत हल्की हो। फिर अगर इमाम हो तो ज़मीर मुख़ातब से (जो अस्सलामुअलैकुम में है) नमाज़ पढ़ने वाले मुसलमानों और जिनों और फ़रिश्तों का इरादा किया जाए। अगर मुक़्तदी हो तो अपने इमाम और नमाज़ियों की नीयत (सलाम में) करे, और अगर तन्हा नमाज़ पढ़ रहा है तो हिफ़ाज़त करने वाले फ़रिश्तों की नीयत करना चाहिए।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–419)

मस्अला: नमाज़ के सलाम में "वरहमतुल्लाह" के बाद

"वबरकातुह" का इज़ाफ़ा मतरूकुलअमल है।

(फ़तावा रहीमिया ज़िल्द–4 सफ़हा–299, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़हा–498)

मस्अला: बिला उज़्रे शरई मुक़्तदी इमाम से पहले सलाम फेर दे तो अगरचे नमाज़ हो जाएगी मगर मकरूह होगी, उसको चाहिए कि इमाम के साथ नमाज़ पूरी करे और इमाम के साथ दोबारा सलाम फेरे।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़हा–243)

मस्अला: उलमा बाआवाज़े बुलंद कलिमा तैयबा को नमाज़ के बाद बकैफ़ियते ख़ास पढ़ने से मना करते हैं और आँ हज़रत (स.अ.व.) का आवाज़ से पढ़ना बग़रज़ तालीम था, इसलिए औरों को जेह्रे मुफ़रित करने से रोका जाता है, और बेहतर ये है कि बुलंद आवाज़ से न पढ़ा जाए जिसमें दीगर नमाज़ियों और ज़ाकिरीन को अज़ीयत हो।

(फ़तावा दारुउलूम जिल्द–4 सफ़हा–137, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़हा–618 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़हा–139)

मस्अला: हल्की आवाज़ से फ़र्ज़ों के बाद कलिमा तैयबा पढ़ना जाइज़ है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़हा–169, बहवाला मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़हा–88)

औरतें नमाज़ कैसे पढ़ें?

औरतें भी उसी तरह नमाज़ पढ़ें जिस तरह मर्द पढ़ें

सिर्फ़ चंद मक़ामात पर उनको उनके ख़िलाफ़ करना चाहिए जिनकी तफ़सील ये है:

(1) तकबीरे तहरीमा के वक़्त मर्दों को चादर वग़ैरा से हाथ निकाल कर कानों तक उठाना चाहिए (मोंडों तक) अगर सर्दी का ज़माना न हो, और औरतों को हर ज़माना में बग़ैर हाथ निकाले हुए शानों तक हाथ उठाने चाहिएँ।

(2) तकबीरे तहरीमा के बाद मर्दों को नाफ़ के नीचे हाथ बाँधना चाहिए और औरतों को सीने पर।

(3) मर्दों को छोटी उंगली और अंगूठे का हलक़ा बना कर बाईं कलाई को पकड़ना चाहिए, और दाहिनी तीन उंगलियाँ बाईं कलाई पर बिछाना चाहिए और औरतों को दाहिनी हथेली बाईं हथेली की पुश्त पर रखनी चाहिए, हलक़ा बनाना और बाईं कलाई को पकड़ना न चाहिए।

(4) मर्दों को रुकूअ़ में अच्छी तरह झुक जाना चाहिए कि सर और सरीन (कूल्हे) और पुश्त बराबर हो जाएँ और औरतों को इस क़दर झुकना न चाहिए बल्कि सिर्फ़ उसी क़दर जिसमें उनके हाथ घुटनों तक पहुंच जाएँ।

(5) मर्दों को रुकूअ़ में उंगलियाँ कुशादा कर के घुटनों पर रखना चाहिए और औरतों को बग़ैर कुशादा किए हुए बल्कि मिला कर।

(6) मर्दों को हालते रुकूअ़ में कुहनियाँ पहलू से अलाहिदा रखना चाहिए और औरतों को मिली हुई।

(7) मर्दों को सज्दे मे पेट रानों से और बाज़ू बग़ल से जुदा रखना चाहिए और औरतों को मिला हुआ।

(8) मर्दों को सज्दे में कुहनियाँ ज़मीन से उठी हुई रखना चाहिए और औरतों को ज़मीन पर बिछी हुई।

(9) मर्दों को सज्दों में दोनों पैरों को उंगलियों के बल खड़े रखना चाहिए औरतों को नहीं, यानी पाँव खड़ा न करें बल्कि दोनों पाँव दाहिनी तरफ़ निकाल दें और ख़ूब सिमट कर सज्दा करें और दोनों हाथों की उंगलियाँ मिला कर किब्ला रुख़ रखें।

(10) मर्दों को बैठने की हालत में बाएँ पैर पर बैठना चाहिए और दाहिने पैर को उंगलियों के बल खड़ा रखना चाहिए और औरतों को बाई सुरीन (कूल्हे) के बल बैठना चाहिए और दोनों पैर दाहिनी तरफ़ निकाल देना चाहिए इस तरह कि दाहिनी रान बाई रान पर आ जाए और दाहिनी पिंडली बाई पिंडली पर।

(11) औरतों को किसी वक़्त क़िराअत बुलंद आवाज़ से करने का इख़्तियार नहीं, बल्कि उनको हर वक़्त आहिस्ता आवाज़ से क़िराअत करना चाहिए।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–38, इमदादुलअहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–468, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–70, शरह नकाया सफ़्हा–80, कबीरी सफ़्हा–333, फ़तावा रहीमिया जिल्द–7 सफ़्हा–224)

(12) अज़ान व इक़ामत औरतों के हक़ में मसनून नहीं हैं।

(नमाज़ मसनून सफ़्हा–371, फ़तावा अज़ीज़ी सफ़्हा–448, आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–305)

मस्अला: आवाम में मशहूर है कि जब तक जुमा की नमाज़ मस्जिद में ख़त्म न हो जाए औरतें घरों में ज़ुहर की नमाज़ न पढ़ें, ये महज़ बेअस्ल और ग़लत है।

(हसनुलअज़ीज़ जिल्द–4 सफ़्हा–128)

औरत बवक़्ते विलादत नमाज़ कैसे पढ़े?

मस्अला: औरत हालते दर्देज़ेह में जब कि होश व हवास दुरुस्त हों और बज़ाहिर बच्चा के ज़ाए होने का अंदेशा न हो मगर रुतूबते ख़ून वग़ैरा जारी हो और बच्चा का कुछ हिस्सा जिस्म से निकलना बाक़ी हो और नमाज़ का वक़्त हो तो ऐसी हालत में अगर वक़्ते नमाज़ के निकलने का अंदेशा हो तो वह औरत वुज़ू करे, अगर हो सके, वरना तयम्मुम कर के नमाज़ अदा करे और उस ख़ून का ख़्याल न करे क्योंकि वह ख़ूने इस्तिहाज़ा है, मानेअ़ अनिस्सलात नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–441, बहवाला गुनया सफ़्हा–365)

(मक़्सद ये है कि ख़ूने निफ़ास के निकलने तक औरत पर नमाज़ फ़र्ज़ है, अगर नहीं पढ़ेगी तो बाद में क़ज़ा वाजिब होगी। नमाज़ की अहमियत का इससे अंदाज़ा हो सकता है कि ऐसी हालत में भी नमाज़ मआफ़ नहीं है)

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मेंहदी लगा कर नमाज़ पढ़ना?

मस्अला: हाथों को मेंहदी लगा कर बंद मुट्ठियों के साथ नमाज़ पढ़ना जाइज़ नहीं है, क्योंकि इससे तर्के सुनन वाजिब आता है इसलिए मकरूह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–145)

(चूँकि नमाज़ के हर रुक्न में मुट्ठी का खुला हुआ रखना मसनून है) (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

लूप की हालत में नमाज़ पढ़ना?

मस्अलाः "حامدا ومصليا" लूप अगर पाक है और एलाज के लिए औरत ने (शर्मगाह में) लगा रखा है तो ऐसी हालत में नमाज़, तिलावत, वग़ैरा कुछ भी ममनूअ़ नहीं है, सब दुरुस्त है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–55)

मस्अलाः बीमारी की हालत में औरतों को रिहम (शर्मगाह) में जो दवा अन्दर रखनी पड़ती है उसी हालत में नमाज़ पढ़ ले क़ज़ा न करे।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–98)

लीकोरिया की मरीज़ औरत की नमाज़ का हुक्म

मस्अलाः इस मरज़ में ख़ारिज होने वाला पानी नापाक होता है, जो कपड़ा उससे आलूदा हो जाए उसमें नमाज़ न पढ़ी जाए। अलबत्ता कपड़े के नापाक हिस्सा को धो कर पाक कर लिया जाए तो इमसें नमाज़ दुरुस्त है।

पस जिन औरतों को अैयाम से पाक होने के बाद लीकोरिया की इतनी शिद्दत हो कि वह पूरे वक़्त के अन्दर तहारत (पाकी) के साथ नमाज़ नहीं पढ़ सकतीं, उन पर माज़ूर का हुक्म जारी होगा और उनको हर नमाज़ के वक़्त एक बार वुज़ू कर लेना काफ़ी होगा,

लेकिन अगर इतनी शिद्दत न हो तो वह माज़ूर नहीं। अगर वुज़ू के बाद नमाज़ से पहले या नमाज़ के अन्दर पानी ख़ारिज हो जाए तो उनको दोबारा वुज़ू कर के नमाज़ पढ़ना ज़रूरी होगा।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–331)

मस्अलाः नाखुन पालिश और लिपिस्टिक अगर बदन तक पानी न पहुंचने दे तो वुज़ू नहीं होगा और जब वुज़ू न हुआ तो नमाज़ भी न हुई।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–75)

औरतों की नमाज़ से मुतअ़ल्लिक़ मसाइल

मस्अलाः औरत का जवान होने का वक़्त मालूम हो तो उस वक़्त से नमाज़ फ़र्ज़ है। वरना औरतों पर नौ साल पूरे होने पर दसवीं साल से नमाज़ फ़र्ज़ समझी जाएगी।

मस्अलाः जो कपड़े ऐसे बारीक हों कि उनके अन्दर से बदन नज़र आए, उनसे नमाज़ नहीं होती। नमाज़ के लिए दुपट्टा भी मोटा इस्तेमाल करना चाहिए।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–297, फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–149, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–274)

मस्अलाः औरतें लिबास ऐसा पहनें जिसमें बदन न खुलता हो, अगर बदन पूरा ढका हुआ हो तो नमाज़ साड़ी में भी हो जाएगी।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–297, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–243 ब हवाला रद्दुलमुहतार

जिल्द–1 सफ़्हा–374)

मस्अला: औरत का नमाज़ के दौरान सर खुल जाए और तीन बार "सुब्हानल्लाह" कहने की मिक़्दार तक खुला रहे तो नमाज़ टूट जाएगी, और अगर सर खुलते ही फ़ौरन ढक लिया तो नमाज़ हो जाएगी।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–298)

मस्अला: वक़्त हो जाने के बाद औरतों के लिए औवले वक़्त में नमाज़ पढ़ना अफ़ज़ल है औरतों को अज़ान का इंतिज़ार करना ज़रूरी नहीं, अलबत्ता अगर वक़्त का पता न चले तो अज़ान का इंतिज़ार करें।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–299)

मस्अला: बीवी शौहर की इक़्तिदा में नमाज़ पढ़ सकती है, मगर बराबर में खड़ी न हो, बल्कि पीछे खड़ी हो।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–300)

मस्अला: औरत अगर मस्जिद में जमाअत के साथ जुमा पढ़े तो उसके लिए भी उतनी ही रकअतें हैं जितनी मर्दों के लिए, यानी पहले चार सुन्नतें गैर मुअक्कदा। औरतों पर जुमा फ़र्ज़ नहीं, इसलिए अगर वह अपने घर पर नमाज़ पढ़ें तो आम दिनों की तरह ज़ुहर की चार रकअतें पढ़ें। नीज़ औरतों पर जुमा जमाअत और ईदैन की नमाज़ ज़िम्मा नहीं है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–301)

मस्अला: औरत को ख़ास अैयाम (हैज़ व निफ़ास के दौरान) में नमाज़ पढ़ने की इजाज़त नहीं, लेकिन तस्बीह पढ़ सकती है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–304)

मस्अला: औरतों को भी बेठ कर नमाज़ पढ़ना बिला उज़्र दुरुस्त नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द--1 सफ़्हा--152)

मस्अला: औरत मर्दों की इमामत न करे।

मस्अला: औरतें अगर जमाअत कराएँ तो जो औरत इमाम हो वह आगे बढ़ कर न खड़ी हो बल्कि सफ़ के बीच में खड़ी हो।

मस्अला: फ़ितना व फ़साद की वजह से औरतों को मस्जिद में जमाअत में हाज़िर होना मकरूह है।

मस्अला: औरत अगर जमाअत में शरीक हो तो मर्दों और बच्चों से पिछली सफ़ में खड़ी हो।

मस्अला: औरतों पर अैयामे तशरीक़ यानी ईदुलअज़हा के ज़माना में फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद की तकबीराते तशरीक़ वाजिब नहीं, अलबत्ता अगर कोई औरत जमाअत में शरीक हुई हो तो इमाम की मुताबअत की वजह से उस पर भी वाजिब है, मगर बुलंद आवाज़ से तकबीर न कहे।

(क्योंकि उसकी आवाज़ भी सत्र है, यानी आवाज़ का भी परदा है।)

मस्अला: औरतों को फ़ज्र की नमाज़ जल्दी यानी अंधेरे में पढ़ना मुस्तहब है और तमाम नमाज़ें औवले वक़्त में अदा करना मुस्तहब है।

मस्अला: औरतों को नमाज़ में बुलंद आवाज़ से किराअत करने की इजाज़त नहीं, नमाज़ ख़्वाह जेहरी हो या सिर्री, उनको हर हाल में आहिस्ता किराअत करनी चाहिए।

मस्अला: औरत अज़ान नहीं दे सकती।

मस्अलाः औरत मस्जिद में एतेकाफ़ न करे, और अगर घर में कोई जगह नमाज़ के लिए मख़सूस न हो तो एतेकाफ़ के लिए किसी जगह को मुक़र्रर कर ले।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़हा–307)

मस्अलाः औरतों के हक़ में पाँव की उंगलियाँ खड़ा करना मशरूअ नहीं है। (जलसा व सज्दा में)

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़हा–164 व शामी जिल्द–1 सफ़हा–471)

मस्अलाः मर्द व औरत के आज़ाए सत्र (जिस्म का वह हिस्सा जिसका छिपाना ज़रूरी है) में से किसी अज़्व का चौथाई हिस्स अगर नमाज़ के अन्दर तीन तस्बीह की मिक़्दारे तिलावत तक खुला रह जाए तो नमाज़ बातिल हो जाएगी, अगर फ़ौरन ढाँप ले तो कोई हरज नहीं है।

(कबीरी सफ़हा–267)

मस्अलाः नमाज़ में अगर औरत के सर का रुब्अ (चौथाई) हिस्स खुला हुआ होगा तो नमाज़ जाइज़ नहीं होगी। इसी तरह औरत के सर के पीछे लटके हुए बालों का चौथाई हिस्सा खुला हुआ हो तो फिर भी नमाज़ नहीं होगी। (नमाज़ मसनून सफ़हा–267)

मस्अलाः औरत नमाज़ में अगर ऐसा बारीक कपड़ा पहने जिससे बदन या बालों का रंग झलकता हुआ नज़र आए तो नमाज़ नहीं होगी।

(नमाज़ मसनून सफ़हा–268, बहवाला बैहेक़ी जिल्द–2 सफ़हा–235)

मस्अलाः अगर बच्चे के जिस्म या कपड़ों पर नजासत लगी हुई है वह बच्चा नमाज़ी की गोद में आ जाए तो

नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। (फ़तहुलमुल्हिम)

मस्अला: औरत ने नमाज़ में बच्चे को उठाया, बच्चे ने औरत के पिस्तान को चूसा और उससे दूध निकला तो ऐसी सूरत में उस औरत की नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

(कबीरी जिल्द–1 सफ़्हा–443, फ़तहुलमुल्हिम सफ़्हा–141)

मस्अला: औरतों के लिए दोनों पाँव और दोनों हाथों की ज़हर व बत्न (ऊपर नीचे का हिस्सा) नमाज़ में ढाँकना ज़रूरी नहीं है। इसके खुले रहने से नमाज़ में कोई ख़लल नहीं आता।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–143)

मस्अला: औरतों को अपने बदन और आज़ा को सज्दा वग़ैरा में ख़ूब मिलाना चाहिए। मर्दों की तरह खुल कर न करना चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–209)

मस्अला: औरत अगर नमाज़ में मर्द के साथ मुहाज़ात (बराबर) में आ जाए और औरत हो भी बालिग़ ख़्वाह महरम ही क्यों न हो, और दोनों एक ही नमाज़ तहरीमा में शरीक हों, दरमियान में कोई हाएल भी न हो, और औरत जुनून, हैज़ व निफ़ास वाली भी न हों, और एक रुक्न की अदाएगी की मिक़्दार में मुहाज़ात हो, दोनों एक ही इमाम के मुक़्तदी हों, और इमाम ने औरत की इमामत की नीयत भी की हो, या औरत मुक़्तदी हो और मर्द ने औरत की इमामत की नीयत भी की हो, तो ऐसी सूरत में मर्द की नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

(हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–79, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–89, शरह वक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–154, नमाज़

मसनून सफ़हा–490)

मस्अला: मस्जिद में जमाअत हो गई, या शरई उज़्र की वजह से मस्जिद में न जा सके, तो घर में बीवी, वालिदा, बहन वग़ैरा के साथ नमाज़ बा जमाअत अदा करना बेहतर है। एक औरत हो तो तब भी पीछे खड़ी रहे, मर्द की तरह बराबर में खड़ी हो गई तो नमाज़ न होगी।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़हा–40, बहवाला मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़हा–96)

मस्अला: बाज़ औरतें नमाज़ पढ़ने के बाद जाए नमाज़ का गोशा ये समझ कर उलट देना ज़रूरी समझती हैं कि शैतान उस पर नमाज़ पढ़ेगा, इसमें किसी बात की भी अस्ल नहीं है।

(अग़लातुलअवाम सफ़हा–56)

मस्अला: औरतों में मशहूर है कि औरतें मर्दों से पहले नमाज़ न पढ़ें। ये ग़लत है। जब वक़्त हो जाए नमाज़ पढ़ लें। (अग़लातुलअवाम सफ़हा–56)

मस्अला: दुर्रेमुख़्तार में ये मस्अला लिखा है कि अगर मर्द ने औरत का बोसा (प्यार) नमाज़ में लिया, यानी औरत नमाज़ पढ़ रही थी और इस हालत में मर्द ने (नमाज़ में शामिल हुए बग़ैर) उसका बोसा लिया, ख़्वाह शहवत हो या न हो, औरत की नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी और अगर मर्द नमाज़ पढ़ रहा था और औरत ने उसका बोसा लिया और मर्द को शहवत हो गई तो मर्द की नमाज़ फ़ासिद हो गई और अगर मर्द को शहवत न हुई तो मर्द की नमाज़ फ़ासिद न होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–55, बहवाला

दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–587)

मस्अला: बाज़ औरतें बैठ कर नमाज़ पढ़ती हैं, या खड़ी होकर शुरू करती हैं मगर दूसरी रकअत में (बिला वजह) बैठ जाती हैं, याद रखना चाहिए कि फ़र्ज़ और वाजिब बल्कि सुन्नतें मुअक्कदा में कयाम (नमाज़ में खड़े होना) फ़र्ज़ है, (बिला वजह बग़ैर मजबूरी के) बैठ कर पढ़ने से नमाज़ नहीं होती।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–31)

नमाज़ में औरत का मर्द के बराबर खड़े हो जाना?

वह औरत जिस पर इंसानी नफ़्स माइल होता है जमाअत में मर्द के बराबर आ जाए या उसके आगे हो, यानी मर्द की पिंडलियों या टख़्नों के बराबर में हो (अगर पिंडली और टख़्ने के पीछे है तो नमाज़ सहीह हो जाएगी) तो नमाज़ बातिल हो जाएगी बशर्तेकि ये शर्तें पाई जाएँ।

(किताबुलफ़ेका जिल्द–1 सफ़्हा–682)

मस्अला: औरत का मर्द के किसी अज़्व के मुहाज़ी खड़ा होना इन शर्तों से (1) औरत बालिग़ हो चुकी हो, ख़्वाह जवान हो, या बूढ़ी, या नाबालिग़ हो, मगर क़ाबिले जिमाअ हो, अगर कोई कम सिन नाबालिग़ लड़की नमाज़ में मुहाज़ी हो जाए तो नमाज़ फ़ासिद न होगी। (2) दोनों नमाज़ में हों, अगर एक नमाज़ में हो दूसरा नहीं तो इस मुहाज़ात से नमाज़ फ़ासिद न होगी। (3) कोई हाइल दरमियान में न हो। अगर कोई परदा दरमियान में हो या कोई सुतरा हाइल हो तब भी नमाज़ फ़ासिद न होगी,

और अगर दरमियान में इतनी जगह ख़ाली हो कि एक आदमी वहाँ खड़ा हो सके तब भी नमाज़ फ़ासिद न होगी और वह जगह हाइल समझी जाएगी। (4) औरत में नमाज़ के सहीह होने की शर्तें पाई जाती हों, अगर औरत मजनून हो या हालते हैज़ व निफ़ास में हो तो उसकी मुहाज़ात से नमाज़ फ़ासिद न होगी, इसलिए कि इन सूरतों में वह नमाज़ में न समझी जाएगी। (5) नमाज़ जनाज़े की न हो जनाज़े की नमाज़ में मुहाज़ात मुफ़सिद नहीं। (6) मुहाज़ात बक़द्र एक रुक्न के बाक़ी रहे अगर इससे कम मुहाज़ात रहे तो मुफ़सिद नहीं मसलन इतनी देर तक मुहाज़ात रहे कि जिसमें रुकूअ वग़ैरा नहीं हो सकता उसके बाद जाती रहे तो इस क़लील मुहाज़ात से नमाज़ में फ़साद न आएगा। (7) तहरीमा दोनों की एक हो, यानी उस औरत ने उस मर्द की इक़्तिदा की हो या दोनों ने किसी तसीरे की इक़्तिदा की हो। (8) अदा दोनों क़िस्म की एक ही हो। यानी बहालते इक़्तिदा नमाज़ अदा कर रहे हों। अगर एक बहालते इक़्तिदा करता हो, दूसरा बहालते इन्फ़िराद या दोनों बहालते इन्फ़िराद तो मुहाज़ात मुफ़सिद न होगी। मसलन एक मस्बूक़ हो दूसरा लाहिक़ या दोनों मस्बूक़ हों, इसलिए कि मस्बूक़ बाद सलाम इमाम के अपनी गई हुई रकअतों के अदा करने में मुन्फ़रिद का हुक्म रखता है। हाँ अगर दोनों लाहिक़ हों तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी इसलिए कि लाहिक़ मुक़्तदी का हुक्म रखता है। (9) मकान दोनों का एक हो, अगर एक किसी मकान में हो दूसरा दूसरे मकान में तब भी मुहाज़ात मुफ़सिद नहीं, मसलन एक मस्जिद में हो दूसरा मस्जिद के बाहर।

(10) दोनों एक ही तरफ़ नमाज़ पढ़ते हों, अगर दोनों के नमाज़ पढ़ने की जिहत मुख़्तलिफ़ हो मसलन अंधेरी शब में क़िब्ला न मालूम होने के सबब से हर शख़्स ने अपने ग़ालिब गुमान पर अमल किया हो और हर एक की राए दूसरे के ख़िलाफ़ हुई हो या कअबा के अन्दर नमाज़ होती हो और हर शख़्स मुख़्तलिफ़ जिहत की तरफ़ नमाज़ पढ़ता हो। (11) इमाम ने उस औरत की इमामत की नीयत नमाज़ शुरू करते वक़्त की हो, अगर इमाम ने उसके इमामत की नीयत न की हो तो फिर इस मुहाज़ात से नमाज़ फ़ासिद न होगी, बल्कि उसी औरत की नमाज़ सहीह न होगी।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–104)

सज्दा और रुकूअ़ से मुतअ़ल्लिक़ मसाइल

मस्अलाः अगर तमाम सज्दे में दोनों क़दम (पैर) ज़मीन से बिल्कुल उठे रहे तो सज्दा न होगा। और जब सज्दा न होगा तो नमाज़ न होगी। कम अज़ कम एक उंलगी किसी वक़्त सज्दा में ज़मीन पर ठहर जाए, ये नहीं कि अगर क़दमैन (दोनों पाँव) ज़मीन से उठ गए और फिर रख लिए तो उसमें भी नमाज़ न होगी। मतलब ये है कि अगर सज्दा में दोनों पाँव बिल्कुल (पूरे सज्दा में) उठे रहे तो नमाज़ न होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–45, बहवाला बहरुर्राइक़ जिल्द–1 सफ़्हा–336)

मस्अलाः सज्दा की हालत में दोनों पाँव की उंगलियाँ

किब्ला की तरफ़ मुतवज्जेह करना सुन्नत है, दोनों पाँव ज़मीन से लगाना वाजिब है, और बिला उज़्र एक (भी) पाँव का उठाए रखना मकरूहे तहरीमी है। दोनों में से एक पाँव का कुछ हिस्सा ज़मीन से लगाना फ़र्ज़ है, ख़्वाह एक ही उंगली लगाई जाए, फ़र्ज़ अदा हो जाएगा। और अगर दोनों पाँव ज़मीन से बिला उज़्र उठाए और तीन बार सुब्हानल्लाह कहने की मिक्दार उठाए रखे तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। उंगली ज़मीन से लगाने की शर्त ये है कि फ़कत नाख़ुन ज़मीन से न छूए बल्कि उंगली के सिरे का गोश्त भी ज़मीन से छू जाए यानी उंगली ज़मीन पर मुड़ जाए।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–316, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–153, फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–196 व जिल्द–10 सफ़्हा 270, जौहरे नैयरा सफ़्हा–52 आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–101, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–233)

मस्अलाः सज्दा में सिर्फ़ अंगूठा ज़मीन पर रखने पर इक्तिफ़ा करना और दूसरी उंगलियों को उठाए रखना ख़िलाफ़े सुन्नत है, इसलिए मकरूह है। सुन्नत ये है कि दोनों उंगलियाँ ज़मीन पर लगी रहें और उंगलियों का रुख़ किब्ला की जानिब हो।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–304 व शामी जिल्द–1 सफ़्हा–416 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–54)

मस्अलाः चार अंगुश्त का फ़ासिला पैरों में कयाम की हालत में रखना बेहतर है, अगर कुछ कम व बेश हो गया

तो नमाज़ सहीह है कुछ कराहत नहीं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़हा–153, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़हा–414)

मस्अला: रुकूअ़ से उठ कर सीधे खड़े न हों तो, इसमें तर्के वाजिब होता है और वह नमाज़ क़ाबिले इआदा है, यानी रुकूअ़ से उठ कर सीधे खड़ा होना चाहिए।

मस्अला: नीज़ पहले सज्दे से उठ कर सीधा बैठ जाए, फिर दूसरा सज्दा करे, वरना नमाज़ लौटानी पड़ेगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़हा–155, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़हा–424)

मस्अला: जो शख़्स "سُبْحَانَ رَبِّيَ الْعَظِيْم" के अलफ़ाज़ को अदा न कर सके यानी "سُبْحَانَ رَبِّيَ الْعَجِيْم" पढ़े तो वह (जो के) तलफ़्फ़ुज़ के सहीह होने तक "رَبِّيَ الْكَرِيْم" पढ़ सकता है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़हा–171)

मस्अला: इमाम अबूहनीफ़ा (रह.) के नज़दीक पेशानी और नाक दोनों पर सज्दा करना फ़र्ज़ है, मगर ज़रूरत के वक़्त एक पर भी इक्तिफ़ा कर सकता है।

मस्अला: बिला उज़्र सिर्फ़ नाक पर सज्दा करने से नमाज़ अदा न होगी और पेशानी पर इक्तिफ़ा (बिला ज़रूरत) मकरूहे तहरीमी है।

मस्अला: अगर पेशानी और नाक दोनों मजरूह हों तो ऐसा शख़्स सज्दा इशारा से कर सकता है।

(आलमगीरी जिल्द–1 सफ़हा–73, कबीरी सफ़हा–283, नमाज़ मसनून सफ़हा–367)

मस्अला: सज्दा करते वक़्त सात आज़ा को ज़मीन पर टिकाए, दोनों घुटनें, दोनों हाथ, दोनों पाँव और पेशानी

मअ़ नाक।

(हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–70, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–78, कबीरी सफ़्हा–321)

सज्दा में पेशानी और नाक को दोनों हाथों के दरमियान रखे। (हिदाया, जिल्द–1, सफ़्हा–70, कबीरी सफ़्हा–321, नक़ाया सफ़्हा–78)

मस्अला: सज्दा की हालत में बाज़ुओं और कुहनियों को ज़मीन पर न लगाए।

(हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–70, नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–78)

मस्अला: रुकूअ़ व सुजूद ठीक तरीक़ा से इत्मीनान के साथ अदा करने चाहिएँ।

(बुख़ारी शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–109)

मस्अला: सज्दा की हालत में उंगलियों का रुख़ क़िब्ला की तरफ़ करे, और बाज़ुओं को पहलुओं (पसलियों) से दूर रखे और सर को रानों से दूर रखे।

(हिदाया सफ़्हा–70, नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–78)

(जमाअ़त में बाज़ुओं को मिला कर) और रुकूअ़ व सज्दा में पुश्त को सीधा रखे। (नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–78)

मस्अला: जलसा (दोनों सज्दों के दरमियान में बैठना) अच्छी तरह न किया तो दो सज्दे अदा न होंगे।

(हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–70, कबीरी सफ़्हा–322)

मस्अला: सज्दा में अपने दोनों हाथों की उंगलियाँ मिला कर ज़मीन पर इस तरह रखे कि उंगलियों के सर क़िब्ला की तरफ़ रहें, रुकूअ़ में दोनों हाथों की उंगलियाँ खोल कर कुशादा कर के घुटने पकड़ना मसनून है, इन

दोनों हालतों के अलावा उंगलियों को हसबे आदत रखे, न खोले न बंद करे।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–183, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–465)

मस्अला: सज्दा से उठने का तरीक़ा ये है कि पहले सर को उठाए, फिर हाथों को, फिर घुटनों को, और हाथों को ज़मीन पर लगाए बग़ैर सीधा खड़ा हो जाए, बग़ैर उज़्र के ज़मीन का सहारा न ले।

(शरह नक़ाया सफ़्हा–79)

मस्अला: तकबीरात में मुक़्तदी को तवक़्क़ुफ़ करना चाहिए, ताकि मुक़्तदी की तकबीर वग़ैरा इमाम की तकबीर वग़ैरा से पहले न हो जाए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–366, बहवाला मिश्कात जिल्द–1 सफ़्हा–98)

मस्अला: इमाम के लिए बेहतर ये है कि रुकूअ़ और सज्दा की तस्बीह पाँच पाँच मरतबा कहे, अगर तीन बार कहें तो इस तरह कहे कि तस्बीह मुक़्तदियों को बख़ूबी तीन तीन बार पढ़ने का मौक़ा मिल जाए।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–371, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–462)

तन्हा नमाज़ पढ़ने वाले के लिए भी पाँच पाँच मरतबा तस्बीह पढ़ना अफ़ज़ल है।

(मसाइले सज्दए सह्व सफ़्हा–81)

मस्अला: अगर मुक़्तदी ने रुकूअ़ की तस्बीह या सज्दा की तस्बीह तीन मरतबा पूरी नहीं पढ़ी थी कि इमाम उठ गया तो चूँकि मुक़्तदी के लिए इमाम की ताबेदारी वाजिब

है इसलिए इमाम के साथ मुक़्तदी को भी सर उठा लेना चाहिए। तस्बीहात की तादाद पूरी करने की ग़रज़ से ताख़ीर नहीं करनी चाहिए।

(मसाइले सज्दए सह्व सफ़्हा–80, बहवाला शामी)

मस्अला: बेहतर है कि नफ़्ल में "رَبَّنَا لَكَ الْحَمْدُ حَمْدًا كَثِيرًا طَيِّبًا مُبَارَكًا فِيهِ" रुकूअ़ से उठते वक़्त ये दुआ अगरचे फ़राइज़ में भी पढ़ी जा सकती हैं, लेकिन फ़राइज़ में चूंकि तख़फ़ीफ़ ज़्यादा मुनासिब है (इमाम के लिए) इसलिए नवाफ़िल में इन दुआओं का पढ़ना ज़्यादा बेहतर है।

(नमाज़ मसनून सफ़्हा–356, बहवाला मुस्लिम शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–191)

मस्अला: रुकूअ़ में कम अज़ कम तीन बार "سُبْحَانَ رَبِّيَ الْعَظِيمِ" पढ़ना सुन्नते कामिल का अदना दरजा है।

(नमाज़ मसनून सफ़्हा–354, हिदाया सफ़्हा–68, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–76, कबीरी सफ़्हा–316)

मस्अला: रुकूअ़ में सर को पुश्त के साथ बराबर रखे, बिला उज़्र सर ऊँचा नीचा न हो।

(हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–68, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–76, कबीरी सफ़्हा–316)

मस्अला: रुकूअ़ से सीधा खड़ा हो पूरे इत्मीनान के साथ। इसको क़ौमा कहते हैं ये वाजिब है।

(फ़तहुलक़दीर जिल्द–1 सफ़्हा–212)

मस्अला: जो रुकूअ़ में शरीक हो उससे सना سبحانک اللھم الخ साक़ित हो गई यानी सना न पढ़े।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–379)

मस्अला: जमाअ़त में इमाम के क़िराअत शुरू करने

के बाद अगर कोई शरीक हो तो उसको सना न पढ़नी चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–379, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–456)

मस्अला: मुक़्तदी नमाज़ में औवल से शरीक हो और किसी वजह से रुकूअ़ करना भूल गया फिर सज्दा में शरीक हो गया तो उस मुक़्तदी को ज़रूरी है कि अगर उसने नमाज़ के अन्दर रुकूअ़ नहीं किया तो बाद फ़ारिग़ होने इमाम के, खड़े हो कर रुकूअ़ कर के सज्दए सह्व कर ले उस वक़्त नमाज़ हो जाएगी। (इमाम के सलाम के बाद रुकूअ़ कर लिया तो नमाज़ हो जाएगी)

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–60)

मस्अला: जिस रकअ़त का रुकूअ़ इमाम के साथ मिल जाए तो समझा जाएगा कि वह रकअ़त मिल गई, हाँ अगर रुकूअ़ न मिले तो फिर उस रकअ़त का शुमार न होगा। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–100)

मस्अला: तीन मरतबा तस्बीह रुकूअ़ व सुजूद से सुन्नते तस्बीह अदा हो जाती है, और फ़राइज़ में (इमाम के लिए) तख़फ़ीफ़ का हुक्म है, इसलिए बरिआयत मुक़्तदियान ज़्यादा ततवील न करनी चाहिए, लेकिन तीन से ज़्यादा होने को अहनाफ़ मकरूह नहीं फ़रमाते और "سَمِعَ اللّٰهُ لِمَنْ حَمِدَه" के बाद "رَبَّنَا لَكَ الْحَمْد" कहना भी मुस्तहिब है, इसी तरह जलसा में "رَبِّ اغْفِرْلِيْ" कहना भी मुस्तहसन है, लेकिन बेहतर ये है कि ये अदइया व अज़कार नवाफ़िल में पढ़े और फ़राइज़ में (इमाम) तख़फ़ीफ़ करे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–157, बहवाला

मिश्कात शरीफ जिल्द–1 सफहा–101)

मस्अलाः सज्दए शुक्र नेमत हासिल होने पर मुस्तहिब है। (फतावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफहा–162, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफहा–731)

मस्अलाः अहनाफ के नजदीक आमीन आहिस्ता कहना सुन्नत है लेकिन अगर एक दो आदमी बराबर के सुन लें तो वह जेहर (जोर से) नहीं है, वह भी आहिस्ता में दाखिल है। (फतावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफहा–162, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफहा–498)

मस्अलाः अगर कोई उज्र न हो तो सज्दा में जाते हुए पहले घुटने रखे, फिर दोनों हाथ रखे, ये सुन्नत तरीका है, बिला उज्र इसके खिलाफ करना मकरूह है, अलबत्ता अगर उज्र हो जैसे बुढ़ापा या बदन भारी हो गया हो और पहले घुटने रखने में तकलीफ हो तो इस सूरत में पहले हाथ रखने में मुजाएका नहीं।

(मराकियुलफलाह मअ तहतावी सफहा–154)

मस्अलाः सज्दा में जाते वक्त जमीन पर वह आजा रखे जो जमीन से करीब हैं फिर उसके बाद वाले अलत्तरतीब रखे, पस पहले दोनों घुटने रखे फिर दोनों हाथ फिर नाक फिर पेशानी रखे और पेशानी का अक्सर हिस्सा लगा दे, क्योंकि ये वाजिब है, और इस तरह रखे कि अच्छी तरह करार पकड़े, और ये उस वक्त है जबकि कोई उज्र न हो, अगर उम्र ज्यादा हो जाने की वजह से पहले घुटने नहीं रख सकता तो दोनों हाथों को घुटनों से पहले रख ले, अगर उज्र की वजह से दोनों एक साथ जमीन पर नहीं रख सकता तो दाएँ हाथ और घुटने को

बाएँ पर मुक़द्दम करे।

(उमदतुलफ़िक्ह जिल्द–2 सफ़्हा–110, फ़तावा रहीमिया जिल्द–7 सफ़्हा–220)

मस्अला: मर्द के लिए सज्दा का मसनून और सहीह तरीक़ा ये है कि अपने बाज़ुओं को अपनी पसलियों से जुदा रखे, लेकिन जमाअत के अन्दर बाज़ुओं को पहलू से मिला हुआ रखे (कि दीगर मुक़्तदियों को तकलीफ़ न हो) कुहनियों को ज़मीन पर न बिछाए, बल्कि ज़मीन से उठा हुआ रखे, पेट को रानों से जुदा रखे और सज्दा में दोनों हाथ कानों के मुक़ाबिल रखे (सीने के मुक़ाबिल न रखे) यानी चेहरा दोनों हथेलियों के दरमियान और अंगूठे कानों की लौ के मुक़ाबिल रहें, हाथों की उंगलियाँ बिल्कुल मिला कर रखें ताकि सब के सिरे क़िब्ला रुख़ रहें, और दोनों पाँव की उंगलियाँ भी ज़मीन पर इस तरह रखे कि उनके सिरे क़िबला रुख़ रहें। मर्दों का सज्दा की हालत में दोनों कुहनियाँ (बिला उज़्र) ज़मीन पर बिछाना मकरूह तहरीमी है।

(उमदतुलफ़िक्ह जिल्द–2 सफ़्हा–110, फ़तावा रहीमिया जिल्द–7 सफ़्हा–220, आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–102, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–233, फ़तावा महमूदिया जिल्द–1 सफ़्हा–198)

मस्अला: अत्तहीयात में शहादत की उंगली उठाने से तौहीद का इशारा होता है ताकि जैसा कि ज़बान से "اَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ" कहा जाता है, जिसका मतलब तौहीद का इक़रार है। उसी तरह अमलन भी अफ़आल व जवारेह से उसको ज़ाहिर किया जाए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–171, बहवाला मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–434)

तकबीरात का सुन्नत तरीक़ा

मस्अलाः एक रुक्न के बाद दूसरे रुक्न में जाने के लिए शरई अज़कार का बे मौक़ा इस्तेमाल मकरूह है। सुन्नत ये है कि जब एक रुक्न के बाद दूसरा रुक्न शुरू किया जाए, उस वक़्त (शरई तरीक़ा से) अल्लाह का नाम लिया जाए और जब वह इंतिक़ाल (रुक्न पूरा) हो तो वह ज़िक्र भी (तकबीर वग़ैरा को) ख़त्म किया जाए, चुनांचे मसलन ये सूरत मकरूह होगी कि कोई शख़्स रुकूअ में जाते वक़्त की तकबीर उस वक़्त कहे जब रुकूअ में पहुंच जाए या "سَمِعَ اللّٰهُ لِمَنْ حَمِدَهٗ" जो रुकूअ से उठते वक़्त कहना चाहिए पूरे तौर पर खड़े हो जाने के बाद कहा जाए, हालांकि हुक्म का मक़्सद ये है कि तकबीर वग़ैरा (एक रुक्न से दूसरे रुक्न में) मुन्तक़िल होने के दरमियानी अरसा के अन्दर अदा की जाए।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–437)

मस्अलाः तकबीराते इंतिक़ालात के अन्दर इमाम का हद से ज़्यादा जेह्र या हद से ज़्यादा इख़फ़ा (ज़्यादा बुलंद या ज़्यादा हल्की अवाज़) दोनों अम्र ख़िलाफ़े सुन्नत हैं। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–347)

मस्अलाः तकबीरात में कामिल सुन्नत उसी वक़्त अदा होती है जब कि एक रुक्न से दूसरे रुक्न की तरफ़ मुन्तक़िल होने के साथ साथ शुरू करे और जैसे ही दूसरे

रुक्न में पहुंचे तो तकबीर की आवाज़ बंद हो जाए।

(कबीरी सफ़्हा–313)

मस्अला: असह ये है कि "अकबर" की बा और रा के दरमियान अलिफ़ मुमाला ज़्यादा कर के "इकबार" पढ़ेगा तो तकबीरे तहरीमा सहीह न होगी, और नमाज़ में दाख़िल न होगा, और अगर तकबीरे तहरीमा सहीह अदा की मगर तकबीराते इंतिक़ालात (दरमियान की तकबीरात) मज़कूरा तरीक़ा से अलिफ़ मुमाला के इज़ाफ़ा के साथ तकबीर कहेगा तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–474)

मस्अला: तकबीरे तहरीमा अल्लाहुअकबर कह कर हाथों को बग़ैर छोड़े हुए बाँध ले।

(इमदादुल अहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–477)

कौमा और जलसा का मसनून तरीक़ा

सवाल: हमारे इमाम साहब रुकूअ के बाद क़ौमा में सीधे खड़े हुए बग़ैर सज्दे में चले जाते हैं और "سَمِعَ اللّٰهُ لِمَنْ حَمِدَهٗ" के साथ ही "اَللّٰهُ اَكْبَرُ" कहते हैं, दरमियान में ज़रा भी नहीं ठहरते और न साँस तोड़ते हैं, इसी तरह सज्दे के बाद जलसा की हालत में और यही हालत सज्दे में जाने और सज्दा से उठने की तकबीरात की, इन तकबीरात में वक़्फ़ा नहीं करते, उनको देख कर मुक़्तदी भी ऐसा ही करते हैं, लिहाज़ा तफ़सीली जवाब मतलूब है।

जवाब: इस तरह आदत कर लेना ग़लत है, नमाज़ मकरूह हो जाती है और क़ाबिले इआदा हो जाती है।

क़ौमा व जलसा (रुकूअ के बाद सहीह खड़े होना और दोनों सज्दों के दरमियान अच्छी तरह बैठना) को इत्मीनान से अदा करना ज़रूरी है।

दुर्रेमुख़्तार मअ़ शामी जिल्द–1 सफ़्हा–466 ता जिल्द–1 सफ़्हा–472 का हासिल ये है कि रुकूअ़ के बाद सीधा खड़ा हो, क्योंकि क़ौमा सुन्नत है, और उसको वाजिब और फ़र्ज़ भी कहा गया है, फिर ज़मीन की तरफ़ झुकते हुए "اَللّٰهُ اَكْبَرُ" कहे और दोनों घुटने ज़मीन पर रखे, और उन इबारात में लफ़्ज़ "ثُمَّ" आया है जिसका मतलब यही है कि साथ ठहर ठहर कर सज्दा में जाते हुए तकबीर कहते हुए झुकना शुरू करें, ये तकबीर उस वक़्त ख़त्म हो जब झुकना ख़त्म हो (और पेशानी ज़मीन पर रखी जाए) फिर दोनों सज्दों के दरमियान इत्मीनान से बैठे यानी इतनी देर बैठे कि "سُبْحَانَ اللّٰهِ" कहा जा सके। आँ हज़रत (स.अ.व.) का तरीक़ए मुबारक ये था कि जब रुकूअ़ से अपना सर मुबारक उठाते तो इत्मीनान से सीधे खड़े होते, फिर सज्दा में जाते, इसी तरह सज्दा के बाद सर मुबारक उठा कर बराबर सीधे बैठ जाते, तब दूसरा सज्दा फ़रमाते थे।

(मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–75)

आँ हज़रत (स.अ.व.) की नमाज़ के मुताबिक़ अपनी नमाज़ होनी ज़रूरी है, क्योंकि आप (स.अ.व.) का इरशादे मुबारक है कि "जिस तरह मुझे नमाज़ पढ़ते देख रहे हो, उसी तरह तुम नमाज़ पढ़ो।"

अगर हम ख़ुद अपनी नमाज़ आँ हज़रत (स.अ.व.) की नमाज़ के मुताबिक़ अदा करने की कोशिश न करें और

ख़िलाफ़े सुन्नत नमाज़ पढ़ें तो नमाज़ मक़बूल न होगी और क़ाबिले इआदा होगी।

आप (स.अ.व.) का इरशाद मुबारक है कि बदतर और सब से बड़ा चोर वह है जो नमाज़ में चोरी करता है। सहाबए किराम (रज़ि.) ने अर्ज़ किया कि या रसूलुल्लाह! नमाज़ किस तरह चुराता है? आँ हज़रत (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि नमाज़ में चोरी ये है कि रुकूअ व सुजूद को ठीक तौर पर अदा नहीं करता, फिर फ़रमाया अल्लाह तआला उस शख़्स की नमाज़ की तरफ़ नहीं देखता जो रुकूअ व सुजूद में अपनी पीठ को साबित (सीधी) नहीं रखता।

आपका ही इरशाद है कि तुम में से किसी की नमाज़ पूरी नहीं होती, जब तक कि रुकूअ के बाद सीधा खड़ा न हो और अपनी पीठ को साबित न रखे (न ठहराए) और उसका हर–हर अज़्व अपनी अपनी जगह पर क़रार न पकड़े। इसी तरह जो शख़्स दोनों सज्दों के दरमियान बैठने के वक़्त अपनी पीठ को दुरुस्त नहीं करता, उसकी नमाज़ पूरी नहीं होती है।

(मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–83)

मन्कूल है कि जब बंदए मोमिन नमाज़ को अच्छी तरह अदा करता है और उसके रुकूअ व सुजूद को अच्छी तरह बजा लाता है उसकी नमाज़ बश्शाश और नूरानी होती है, फ़रिश्ते उस नमाज़ को आसमान पर ले जाते हैं, और वह नमाज़ अपने नमाज़ी के लिए दुआ करती है और कहती है "अल्लाह तआला तेरी हिफ़ाज़त करे जिस तरह तूने मेरी हिफ़ाज़त की" और अगर नमाज़

को अच्छी तरह नहीं अदा करता तो वह नमाज़ सियाह रहती है और फ़रिश्तों को उस नमाज़ से कराहत आती है, और उसको आसमान पर नहीं ले जाते, और वह नमाज़ कहती है कि "अल्लाह तआला तुझे ज़ाए करे, जिस तरह तूने मुझ को ज़ाए किया।

(खुलासा, फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–45, बहवाला मकतूब सफ़्हा–69, इमाम रब्बानी जिल्द–2 सफ़्हा–138)

मस्अला: जो नमाज़ें तादीले अरकान के साथ अदा नहीं हुई हैं अगरचे वह हो गई हैं लेकिन उनका इआदा (लौटाना) अच्छा है, फ़र्ज़ और वित्र का इआदा करे, सुन्नतों का इआदा न करे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–156, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–424, व अगलातुलअवाम सफ़्हा–59)

कौमा व जलसा में दुआ का हुक्म

सवाल: कौमा और जलसा में इमाम और मुक़्तदी दुआ पढ़ सकते हैं या नहीं?

जवाब: मुक़्तदी रुकूअ से सर उठाने के बाद सीधा खड़ा हो कर (कौमा में) "رَبَّنَا لَكَ الْحَمْدُ" के बाद "حَمْدًا كَثِيْرًا طَيِّبًا مُّبَارَكًا فِيْهِ" कह सकता है, जबकि वक़्त मिल जाए इमाम से पीछे रहना लाज़िम न आता हो, इसी तरह दोनों सज्दों के दरमियान (जलसा में) "اَللّٰهُمَّ اغْفِرْلِيْ" कहे, और अगर वक़्त मिल जाता हो तो "وَارْحَمْنِيْ وَاهْدِنِيْ وَعَافِنِيْ وَارْزُقْنِيْ" भी कह सकता है, ममनूअ नहीं है। अलबत्ता इमाम

के लिए आप (स.अ.व.) की हिदायत है कि इमाम को हलकी फुलकी ही नमाज़ पढ़ानी चाहिए, क्योंकि जमाअ़त में मरीज़ और बूढ़े भी होते हैं, उसका लिहाज़ करते हुए कि ये मुक़्तदियों के लिए ज़हमत और मशक़्क़त का सबब न बने। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–301, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–472)

नमाज़ के बाद दुआ ज़ोर से या आहिस्ता?

मस्अला: फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद इमाम और मुक़्तदी के मिल कर दुआ माँगने की बड़ी फ़ज़ीलत है, और इसका मसनून और अफ़ज़ल तरीक़ा ये है कि इमाम और मुक़्तदी दोनों आहिस्ता आहिस्ता दुआ माँगें, ये तरीक़ा इख़लास से पुर (भरा हुआ) है। ख़ुशूअ़ व ख़ुज़ूअ़, आजिज़ी वाला, नीज़ दिल पर असर अंदाज़, क़बूलियत के क़रीब और रियाकारी से दूर है। दुआ में अस्ल इख़्फ़ा (पोशीदा मांगना) है। क़ुरआन से साबित है कि दुआ आजिज़ी और गिरया वज़ारी के साथ होनी चाहिए। दुआ आहिस्ता मांगनी चाहिए। हज़रत ज़करिय्या अलैहिस्सलाम का भी यही तरीक़ा था। "نِدَاءً خَفِيًّا"

नीज़ हदीस शरीफ़ में है: "خَيْرُ الدُّعَا الخفى" बेहतर दुआए ख़फ़ी (आहिस्ता) है। "اُدْعُوْا رَبَّكُمْ تَضَرُّعًا وَّخُفْيَةً"

फ़तहुलबारी जिल्द–2 सफ़्हा–269 में है कि मुख़्तार तरीक़ा ये है कि इमाम और मुक़्तदी दुआ आहिस्ता आवाज़ से करें, हाँ जब दुआ सिखाने की ज़रूरत हो फिर (सीखने तक) मुज़ाएक़ा नहीं है। ख़ुलासए कलाम ये कि मुहद्दिसीन,

मुफ़स्सिरीन और फ़ुक़हा के अक़वाल से सराहतन मालूम होता है कि आहिस्ता दुआ मांगना, इमाम व मुक़्तदी और मुनफ़रिद हर एक के लिए अफ़ज़ल और मसनून है। इमाम का ज़ोर से दुआ मांगने की आदत बना लेना ख़िलाफ़े औला और मकरूह है, इमामों को चाहिए कि सुन्नत की अज़मत और अहमियत को पहचानें और उस पर अमल करने की कोशिश करें, अवाम और ख़्वाहिशाते नफ़्सानी की पैरवी न करें।

मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ीअ साहब अलैहिर्रहमा का फ़तवा ये है कि "सब से बड़ा मुफ़्सिदा ये है कि इमाम ब आवाज़ दुआईया कलिमात पढ़ता है, और आम तौर पर बहुत से लोग मस्बूक़ (जिनकी रकअत रह जाती है) होते हैं जो बाक़ी माँदा नमाज़ की अदाएगी में मशग़ूल होते हैं, उनकी नमाज़ में ख़लल आता है। यही वजह है कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) और सहाबा (रज़ि.) व ताबईन और अइम्मए दीन किसी से ये सूरत मन्क़ूल नहीं कि नमाज़ के बाद वह (इमाम) दुआ करे और मुक़्तदी सिर्फ़ आमीन कहते रहें। ख़ुलासा ये कि आम हालात में इससे इजतिनाब कर के इमाम और मुक़्तदी सब आहिस्ता आहिस्ता दुआ माँगें, हाँ किसी मौक़ा पर जहाँ मज़कूरा मफ़ासिद न हों, कोई एक जेहरन दुआ करे।

मुक़्तदियों को भी इमाम को जेहरन दुआ करने पर मजबूर नहीं करना चाहिए। ख़ुदा तआला हर एक की दुआ सुनता है, अरबी में याद न हो तो फ़ारसी में, उर्दू में ग़र्ज़ें कि जो उसकी ज़बान हो उसी ज़बान में आहिस्ता आहिस्ता अपनी अपनी दुआ माँगे।

(खुलासा फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–332, जिल्द–1 सफ़्हा–105)

मस्अलाः जुहर, मग़रिब, इशा की नमाज़ के बाद इमाम देर तक दुआ न मांगे, यानी जिन नमाज़ों के बाद सुन्नतें हैं दुआ मुख़्तसर होनी चाहिए।

(बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–11 सफ़्हा–32)

मस्अलाः आहिस्ता दुआ मांगना अफ़ज़ल है, नमाज़ियों का हरज न होता हो तो कभी कभी ज़रा आवाज़ से कर ले, जाइज़ है। लेकिन हमेशा जेहरी (बुलंद अवाज़ से) दुआ की आदत बनाना मकरूह है। हदीसों में जिस तरह दुआ के मुतअल्लिक रिवायतें हैं कि आँ हज़रत (स.अ.व.) ने ये दुआ पढ़ी, ऐसे ही ये भी है कि आँ हज़रत (स.अ.व.) ने रुकूअ में "سُبْحَانَ رَبِّيَ الْعَظِيْم" और सज्दा में "سُبْحَانَ رَبِّيَ الْاَعْلٰى" पढ़ा, लेकिन जिस तरह रुकूअ और सज्दा की तस्बीहात की रिवायतों से जेहर साबित नहीं होता, दुआ की रिवायतों से भी जेहर साबित नहीं किया जा सकता है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–183)

अलबत्ता तवील दुआएँ पढ़ने की इमाम को आदत न बना लेनी चाहिए, जिससे सुन्नत में ताख़ीर हो, और नमाज़ियों को भी गिराँ गुज़रे।

मस्अलाः दुआ के औवल व आख़िर दुरूद शरीफ़ का होना दुआ की कबूलियत के लिए ज़्यादा उम्मीद बख़्श है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–283)

मस्अलाः आँ हज़रत (स.अ.व.) से पूछा गया कि कौन सी दुआ कबूल होती है? आप (स.अ.व.) ने इरशाद फ़रमाया कि रात के आख़िरी हिस्सा की और फ़र्ज़ नमाज़ के बाद

की दुआ।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–204 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–14 सफ़्हा–200)

मस्अला: इमाम जिस वक़्त नमाज़ से फ़ारिग़ हो मअ़ मुक़्तदियों के सब इकट्ठे (एक साथ) दुआ मॉंगें फिर सुन्नतें और नफ़्ल पढ़ कर अपने अपने कारोबार में चले जाएँ, दोबारा सेहबारा (सुन्नतों के बाद) दुआ मॉंगना साबित नहीं है और नमाज़ियों को मुक़ैयद रखना दूसरी तीसरी दुआ तक जाइज़ नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–130 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–183)

मस्अला: हज़रत साइब (रज़ि.) अपने वालिद से नक़्ल करते हैं कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) जब दुआ फ़रमाते थे तो अपने दोनों मुबारक हाथ उठाते और जब फ़ारिग़ होते तो उन दोनों हाथों को चेहरे मुबारक पर फेरते थे।

(मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–196, बाबुद्दुआ)

मस्अला: दुआ के लिए दोनों हाथों को कानों के बराबर उठाए इस तरह कि दोनों बग़ल ज़ाहिर हो जाएँ यानी बग़लों से जुदा रखे।

(अहकामे दुआ मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ीअ (रह.) सफ़्हा–11)

मस्अला: फ़राइज़ के बाद जो दुआ चाहे मांगे, ये ज़रूरी नहीं कि इमाम की दुआ पर आमीन कहे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–201, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–489)

मस्अला: अगर मुक़्तदी को कुछ ज़रूरत है और कोई ज़रूरी काम है तो सलाम के बाद फ़ौरन चले जाने में

कोई गुनाह नहीं है और उस (जाने वाले) पर कुछ तअ़न न करना चाहिए और अगर दुआ़ के ख़त्म तक इंतिज़ार करे और इमाम के साथ दुआ़ में शरीक हो तो ये अच्छा है और इसमें ज़यादा सवाब है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–103, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–495)

मस्अला: फ़र्ज़ नमाज़ के बाद सर पर हाथ रख कर ये दुआ़ भी पढ़ सकते हैं:

"بِسْمِ اللّٰهِ الَّذِىْ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ الرَّحْمٰنُ
الرَّحِيْمُ. اَللّٰهُمَّ اذْهَبْ عَنِّى الْهَمَّ وَالْحُزْنَ"

(इमदादुलअहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–487)

मस्अला: फ़र्ज़ नमाज़ के बाद "اَللّٰهُمَّ اَنْتَ السَّلَامُ وَمِنْكَ السَّلَامُ تَبَارَكْتَ يَاذَاالْجَلَالِ وَالْاِكْرَام" पढ़ना मसनून और अफ़ज़ल है। इसलिए अक्सर उसी को पढ़ा जाता है, लेकिन दूसरी दुआ़ और दुरूद वग़ैरा पढ़ने से भी सुन्नत अदा हो जाती है, लिहाज़ा किसी दूसरी दुआ़ को ख़िलाफ़े सुन्नत कहना सहीह नहीं है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–25)

मस्अला: नमाज़ के बाद हाथ उठा कर दुआ़ करना शरअ़न साबित है और मुस्तहब है, लेकिन अगर इत्तिफ़ाक़िया तौर पर कोई शख़्स कभी तर्क कर दे तो उस पर एतेराज़ नहीं करना चाहिए।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–10 सफ़्हा–241)

मस्अला: दुआ़ के आदाब में से ये है कि दोनों हाथ सीना तक उठा कर दुआ़ करे और दोनों के दरमियान क़द्रे फ़ासिला हो, मिला कर रखना ख़िलाफ़े औला है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़हा–304, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़हा–474)

मस्अलाः दुआ के वक़्त दोनों हाथों में कुछ फ़स्ल रखना अफ़ज़ल है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–1 सफ़हा–268)

मस्अलाः नमाज़ के बाद दुआ का पहला और अख़ीर लफ़्ज़ जेहरन कहना जाइज़ है मगर एहतेमाम की ज़रूरत नहीं। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–1 सफ़हा–248)

(ताकि अवाम नमाज़ का जुज़्व न समझें)

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी गुफ़िरलहू)

मस्अलाः जमाअत के बाद इमाम की दुआ पर "आमीन" कहता रहे या अपनी दुआ मांगे, दोनों तरह दुरुस्त है और दुआ में इख़फ़ा अफ़ज़ल है।

(फ़तावा महमूदिया ज़िल्द–10 सफ़हा–261)

मस्अलाः नमाज़ के बाद बिलइल्तिज़ाम मुसाफ़हा या मुआनक़ा करना दुरुस्त नहीं है, जहाँ तक हो सके इस अमल से बचना ज़रूरी है, लेकिन इब्तिदाई मुलाक़ात किसी भी नमाज़ के बाद फ़ौरन ही हो तो इस सूरत में गुंजाइश है कि मुसाफ़हा या मुआनक़ा किया जा सकता है।

(निज़ामुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़हा–50)

इमाम के दूसरे सलाम के पहले मुक़्तदी का क़िब्ला से फिर जाना?

सवालः हमारी मस्जिद के इमाम साहब बहुत लम्बा (देर तक) सलाम फेरते हैं, एक मुक़्तदी इमाम के दूसरा

सलाम फेरते ही मुंह क़िब्ले से फेर लेता है जबकि इमाम साहब का सलाम अभी पूरा नहीं होता। उसका कहना है कि दूसरा सलाम फेरते वक़्त मुक़्तदी इमाम की इक़्तिदा से आज़ाद हो जाता है, क्या उसका ये अमल दुरुस्त है?

जवाबः इमाम को सलाम इतना लम्बा नहीं करना चाहिए (यानी किराअत की लम्बी आवाज़ न करे) कि मुक़्तदियों का सलाम दरमियान ही में ख़त्म हो जाए, जो मुक़्तदी इमाम का दूसरा सलाम पूरा होने से पहले ही क़िब्ला से हट कर बैठ जाता है उसकी नमाज़ फ़ासिद नहीं होगी, लेकिन ऐसा मकरूह है। जब उसने पाँच सात मिनट इमाम के साथ सब्र किया है तो चंद सिकन्ड और भी सब्र कर लिया करे।

(आप के मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–262 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–193)

मस्अलाः अगर "السلام عليكم" में अलैकुम के बजाए अलैतुम निकल जाए तो नमाज़ हो जाएगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–45, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–418)

मस्अलाः नमाज़ के ख़त्म के सलाम में क़िब्ला से सिर्फ़ मुंह फेरना दोनों तरफ़ सलाम के साथ काफ़ी है, सीना न फेरे। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–27)

मस्अलाः अगर कोई शख़्स इमाम के पीछे सलाम फेरते वक़्त शरीक हो, यानी इमाम के लफ़्ज़ अस्सलाम कहने के बाद अलैकुम व रहमतुल्लाह कहने से पहले शरीक हुआ तो उसकी शिरकत और इक़्तिदा सहीह न होगी, सलाम के पहले मीम पर नमाज़ ख़त्म हो जाती है,

इसलिए वह शख़्स अपनी नमाज़ अलाहिदा पढ़े, और तहरीमा अलाहिदा कह कर नमाज़ शुरू करे और अपने आपको इमाम का मुक़्तदी न समझे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–363, रहुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–436 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–124 अग़लातुल अवाम सफ़्हा–66)

मस्अलाः अगर पूरी तकबीर तहरीमा यानी अल्लाहुअक्बर इमाम के सलाम फेरने से पहले कह चुका है तो वह शरीके जमाअत हो गया, अब उसको दोबारा तकबीर कहने की ज़रूरत नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–65 व शामी जिल्द–1 सफ़्हा–436)

मस्अलाः इमाम दाहिनी तरफ़ सलाम फेरने वाला था कि मस्बूक़ आकर इमाम की नमाज़ में शामिल हो गया तो ऐसी सूरत में इमाम के सलाम फेरने के बाद बेहतर ये है कि तशह्हुद पूरा कर के उठे।

(शामी जिल्द–1 सफ़्हा–463 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–380)

और अगर पूरा तशह्हुद न पढ़ा और खड़ा हो गया तो ये भी जाइज़ है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–165)

मस्अलाः मस्बूक़ ने तकबीरे तहरीमा कही, उसके बाद इमाम ने सलाम फेर दिया, तो ये शख़्स जमाअत में शामिल हो गया, अपनी नमाज़ शुरू करे, क़अदा करने की ज़रूरत नहीं है। और अगर इमाम ने सलाम का लफ़्ज़ कहा, अभी अलैकुम का लफ़्ज़ कहने नहीं पाया था कि मस्बूक़ ने तकबीरे तहरीमा कही, तो उसकी इक़्तिदा सहीह नहीं

हुई। तीसरी सूरत ये है कि मस्बूक़ ने तकबीरे तहरीमा कही और क़अदा में बैठा था कि इमाम ने सलाम फेर दिया तो उसको तशह्हुद पढ़ कर खड़ा होना चाहिए, अगर तशह्हुद पढ़े बगैर ही खड़ा हो गया तब भी नमाज़ दुरुस्त है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–301, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–436, फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–205, इमदादुलअहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–551)

मस्अला: अस्सलामु अलैकुम कहते वक़्त मुक़्तदी का साँस इमाम से पहले टूट जाए तो इस सूरत में मुक़्तदी की नमाज़ में कुछ ख़लल नहीं आता।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–163, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–000 बाबुसिफ़तिस्सलात)

मस्अला: ख़त्मे नमाज़ सिर्फ़ लफ़्ज़ अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाह पर होनी चाहिए, व बरकातुहू के ज़ाइद करने की ज़रूरत नहीं है। यानी वबरकातुहू का इज़ाफ़ा न करे। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–196)

इमाम का सलाम के बाद क़िब्ला की तरफ़ से फिरना?

मस्अला: जिन नमाज़ों के बाद सुन्नतें नहीं हैं जैसे फ़ज्र, अस्र उनमें इमाम को इख़्तियार है, ख़्वाह दाहिनी तरफ़ मुंह कर के बैठे या बाईं तरफ़, हदीस शरीफ़ से दोनों उमूर साबित हैं और फ़ुक़हाए अहनाफ़ (रह.) ने भी दोनों में इख़्तियार दिया है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–139, रद्दुलमुहतार

जिल्द–1 सफ़हा–496, बुख़ारी जिल्द–1 सफ़हा–118, फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़हा–126, आपके मसाइल जिल्द–2 सफ़हा–252)

मस्अला: जिहत बदलता रहे ताकि अवाम एक ही जिहत को ज़रूरी न समझें।

(रहीमिया जिल्द–3 सफ़हा– 35)

(लेकिन किसी एक जिहत को लाज़िम न करे, बदलते रहना चाहिए और इस बैठने में इमाम तस्बीहे फ़ातमी के साथ साथ ये भी देखे कि जिनकी रकअत रह गई वह अपनी नमाज़ को किस अंदाज़ में अदा कर रहे हैं और क्या वह तरीक़ा क़ाबिले इस्लाह है? नीज़ ये भी देखे कि मुहल्ला के कौन आदमी नमाज़ की जमाअत से रह गए हैं और हाज़िर न होने का सबब क्या है, क्योंकि इमाम मुहल्ले का सरबराह और ज़िम्मादार भी होता है)

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

नमाज़ के ख़त्म पर सलाम क्यों है?

रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने जिस तरह नमाज़ के इफ़तेताह और आग़ाज़ के लिए कलिमए अल्लाहुअकबर तालीम फ़रमाया है, जिससे बेहतर कोई दूसरा कलिमा इफ़तेताहे नमाज़ के लिए सोचा ही नहीं जा सकता। उसी तरह उसके इख़्तिताम के लिए "अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाह" तलक़ीन फ़रमाया है और बिला शुब्हा नमाज़ के ख़त्म के लिए भी इससे बेहतर कोई लफ़्ज़ नहीं सोचा जा सकता। हर शख़्स जानता है कि सलाम उस वक़्त

किया जाता है जब एक दूसर से ग़ाएब और अलग होने के बाद पहली मुलाक़ात हो, लिहाज़ा इख़्तिताम के लिए "अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाह" की तालीम में वाज़ेह इशारा है बल्कि गोया हिदायत है कि बंदा अल्लाहुअकबर कह कर जब नमाज़ में दाख़िल हुआ और बारगाहे खुदावंदी में अर्ज़ मारूज़ शुरू करे, तो चाहिए कि वह उस वक़्त आलमे शुहूद से हत्ता कि अपने माहौल और दाएँ बाएँ वालों से ग़ाएब और अलग हो जाए, और अल्लाह तआ़ला के सिवा कोई भी उस वक़्त उसके दिल की निगाह के सामने न रहे, पूरी नमाज़ में उसका हाल यही रहे।

फिर जब क़अ़दए अख़ीरा में तशह्हुद और दुरूद शरीफ़ और आख़िरी दुआ अल्लाह तआ़ला के हुज़ूर में अर्ज़ कर के अपनी नमाज़ पूरी कर ली, तो उसके बातिन का हाल ये हो कि गोया अब वह किसी दूसरे आलम से इस दुनिया में और अपने माहौल में वापस आया है और दाएँ बाएँ वाले इंसानों या फ़रिश्तों से अब उसकी नई मुलाक़ात हो रही है, इसलिए अब वह उनकी तरफ़ रुख़ कर के और उन्ही से मुख़ातब हो कर कहे:

"اَلسَّلَامُ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَةُ اللهِ"

इस आजिज़ के नज़्दीक इस हुक्म का राज़, और यही उसकी हिकमत है।

(मआ़रिफ़ुल हदीस जिल्द–3 सफ़्हा–308)

नमाज़ जिन चीज़ों से फ़ासिद हो जाती है?

नमाज़ के शराइत में से किसी शर्त का मफ़क़ूद हो

जाना मिसालः (1) तहारत बाकी न रहे, तहारत के बाकी न रहने की बाज़ सूरतों में नमाज़ फ़ासिद नहीं होती, जिनको हम नमाज़ के मकरूहात के बाद एक मुस्तकिल उनवान से ब्यान करेंगे।

(2) होश व हवास दुरुस्त न रहें ख़्वाह बेहोशी के सबब से या जुनून, आसेब वग़ैरा की वजह से।

(3) सीनी को क़स्दन बे उज़्र क़िब्ला से फेरना। अगर बेक़स्द, बेइख़्तियारी की हालत में सीना क़िब्ला से फिर जाए तो अगर बक़द्र अदा करने किसी रुक्न के मिस्ल रुकूअ़ वग़ैरा के यही हालत रहे तो नमाज़ फ़ासिद होगी वरना नहीं। या किसी उज़्र से क़स्दन फेरा जाए तब भी फ़ासिद न होगी, मसलन हालते नमाज़ में किसी को ये शुब्हा हो कि वुज़ू जाता रहा और वुज़ू के लिए सीना क़िब्ले से फेर ले और बाद उसके याद आ जाए कि नहीं गया, अगर ये याद मस्जिद से निकलने के क़ब्ल है तो नमाज़ फ़ासिद न होगी वरना फ़ासिद हो जाएगी।

मस्अलाः नमाज़ के फ़राइज़ का तर्क हो जाना ख़्वाह अमदन हो या सहवन मसलन क़िराअत बिल्कुल न करे या क़याम रुकूअ़ सज्दा वग़ैरा बेउज़्र तर्क कर दिया जाए।

(4) नमाज़ के वाजिबात का अमदन छोड़ देना।

(5) नमाज़ के वाजिबात का सहवन छोड़ कर सज्दए सह्व न करना।

(6) हालते नमाज़ में कलाम करना, कलाम के मुफ़सिदे नमाज़ होने में ये शर्त है कि कम से कम उसमें दो हर्फ़ हों या ऐसा एक हर्फ़ हो जिसके माना समझ में आ जाते हों।

(दुर्रेमुख़्तार इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–100)

कलाम की पाँच क़िस्में हैं: पहली क़िस्म किसी आदमी के मुख़ातब में ये कलाम हर हाल में मुफ़सिदे नमाज़ है ख़्वाह अमदन हो या सहवन, अरबी ज़बान में हो या ग़ैर अरबी, वह लफ़्ज़ कुरआन मजीद में हो या नहीं।

मिसाल: (1) कोई शख़्स ये समझ कर कि मैं नमाज़ में नहीं हूँ या और किसी धोका में आकर किसी आदमी से कुछ कलाम करे।

(2) नमाज़ की हालत में किसी आदमी से कहे "اُقْتُلِ الْحَيَّةَ" कि साँप को मार डाल।

(3) नमाज़ की हालत में किसी से कहे कि पढ़ो।

(4) किसी यहया नाम के आदमी से कहे कि "يَا يحيى خُذِ الْكِتَابَ" (ऐ यहया किताब ले लो) या किसी मूसा नाम के आदमी से कहे कि या मूसा (ऐ मूसा) या किसी से कहे कि इक़रा (पढ़ो) ये सब अलफ़ाज़ कुरआन मजीद के हैं। यही हुक्म है सलाम और सलाम के जवाब का, जब किसी आदमी के मुख़ातब में हो। और यही हुक्म है, अगर दूसरे की छींक के जवाब में "يَرْحَمُكَ اللّٰه" (अल्लाह तुम पर रहम करे) कहे, या अच्छी ख़बर सुन कर कहे "اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ" या इसी तरह और कोई लफ़्ज़ ज़बान से निकल जाए, अगर अल्लाह तआला का नाम सुन कर "جَلَّ جَلَالُهٗ" कहे या नबी (स.अ.व.) का इस्मे ग्रिामी सुन कर दुरूद शरीफ़ पढ़े तब भी नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। बशर्तेकि उस कहने से उस शख़्स का जवाब देना हो।

(दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

हासिल ये कि जब आदमियों के मुख़ातबा में कलाम किया जाएगा, ख़्वाह किसी क़िस्म का हो और किसी

हालत में हो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

(इल्मुलफ़िक्ह जिल्द–2 सफ़हा–101, नमाज़ मसनून सफ़हा–478, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़हा–91, हिदाया जिल्द–1 सफ़हा–86, कबीरी सफ़हा–434, दुर्रेमुख़्तार सफ़हा–554)

दूसरी क़िस्म: किसी जानवर के मुख़ातबा में कलाम करना, ये कलाम भी हर हाल में मुफ़सिदे नमाज़ है।

तीसरी क़िस्म: खुद–बखुद कलाम करना। ये कलाम भी मुफ़सिदे नमाज़ है बशर्तेकि अरबी लफ़्ज़ न हो, और ऐसी न हो जो कुरआन मजीद में वारिद हुई हो। और अरबी लफ़्ज़ हो और कुरआन मजीद में वारिद हो तो उससे ममाज फ़ासिद न होगी, मसलन अपनी छींक के जवाब में "اَلْحَمْدُ لِلّٰہِ" कहे या उसी क़िस्म का कोई और लफ़्ज़ ज़बान से निकल जाए। अगर कोई लफ़्ज़ किसी शख़्स की सुख़न तकिया हो तो उसके कहने से भी नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी अगरचे वह लफ़्ज़ कुरआन में वारिद हो मसलन "نَعَمْ" किसी का सुख़न तकिया हो तो "نَعَمْ" कहने से उसकी नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी अगरचे ये लफ़्ज़ कुरआन मजीद में है।

चौथी क़िस्म ज़िक्र और दुआ: ये क़िस्म भी मुफ़सिदे नमाज़ है, बशर्तेकि दुआ ग़ैर अरबी इबारत में हो या अरबी इबारत में हो, मगर कुरआन मजीद और अहादीस में वारिद न हो न उसका तलब करना ग़ैर खुदा से हराम हो। मसलन हालते नमाज़ में अल्लाह तआला से दुआ करे कि "اللّٰھم اعطنی الملح" (ऐ अल्लाह मुझे नमक इनायत कर दे) "اللّٰھم زوجنی فلانۃ" (ऐ अल्लाह मेरा निकाह फ़लाँ

औरत से कर दे)। ये दुआएँ न कुरआन मजीद में हैं न अहादीस में, न उनका तलब करना ग़ैर ख़ुदा से ममनूअ है, लिहाज़ा ऐसी दुआएँ से नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी, हाँ अगर कुरआन मजीद या अहादीस में कोई दुआ वारिद हुई हो या उसका तलब करना ग़ैर ख़ुदा से नाजाइज़ हो तो ऐसी दुआ से नमाज़ फ़ासिद न होगी। अगर बेमौक़ा पढ़ी जाए मसलन रुकूअ या सज्दों में।

पाँचवीं क़िस्मः हालते नमाज़ में लुक़मा देना, यानी किसी को कुरआन मजीद के ग़लत पढ़ने पर आगाह करना। ये क़िस्म भी मुफ़सिदे नमाज़ है बशर्तेकि लुक़मा देने वाला मुक़्तदी और लेने वाला उसका इमाम न हो।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़हा–101)

मस्अलाः चूंकि लुक़मा देने का मस्अला फ़ुक़हा के दरमियान में इख़तिलाफ़ी है। बाज़ उलमा ने इस मस्अला में मुस्तक़िल रिसाले तस्नीफ़ किए हैं, इसलिए हम चंद जुज़ईयात उसके इस मक़ाम पर ज़िक्र करते हैं। **सहीह** ये है कि मुक़्तदी अगर अपने इमाम को लुक़मा दे तो नमाज़ फ़ासिद न होगी, ख़्वाह इमाम बक़द्रे ज़रूरत क़िराअत कर चुका हो या नहीं, बक़द्रे ज़रूरत से वह मिक़्दार क़िराअत की मक़्सूद है जो मसनून है।

(बहरुर्राइक़, शामी वग़ैरा)

मस्अलाः इमाम अगर बक़द्रे ज़रूरत क़िराअत कर चुका हो तो उसको चाहिए कि रुकूअ कर दे, मुक़्तदियों को लुक़मा देने पर मजबूर न करे, मुक़्तदियों को चाहिए कि जब तक ज़रूरते शदीदा न पेश आए इमाम को लुक़मा न दें। ज़रूरते शदीदा से मुराद ये है कि मसलन इमाम

ग़लत पढ़ कर आगे बढ़ना चाहता हो या रुकूअ़ न करता हो या सुकूत कर के खड़ा हो जाए। अगर कोई शख़्स किसी नमाज़ पढ़ने वाले को लुक़्मा दे और वह लुक़्मा देने वाला उसका मुक़्तदी न हो ख़्वाह वह भी नमाज़ में हो या नहीं तो ये शख़्स अगर लुक़्मा ले लेगा तो उसकी नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी, हाँ अगर उसको ख़ुद बख़ुद याद आ जाए ख़्वाह उसके लुक़्मा देने के साथ ही या पहले पीछे उसके लुक़्मा देने को कुछ दख़ल न हो तो उसकी नमाज़ में फ़साद न आएगा।

(शामी, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–102)

अगर कोई नमाज़ पढ़ने वाला किसी ऐसे शख़्स को लुक़्मा दे जो उसका इमाम नहीं ख़्वाह वह भी नमाज़ में हो या नहीं हर हाल में उस लुक़्मा देने वाले की नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। (बह्‌रुर्राइक़ वग़ैरा)

मुक़्तदी अगर किसी दूसरे शख़्स का पढ़ना सुन कर या क़ुरआन मजीद में देख कर इमाम को लुक़्मा दे तो उसकी नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। और इमाम अगर लुक़्मा ले लेगा तो उसकी नमाज़ भी।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–102, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–87, कबीरी सफ़्हा–440, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–91)

इसी तरह अगर हालते नमाज़ में क़ुरआन मजीद देख कर क़िराअत की जाए तब भी नमाज़ फ़सिद हो जाएगी।

(दुर्रेमुख़्तार)

मुक़्तदी को चाहिए कि लुक़्मा देने में तिलावते क़ुरआन की नीयत न करे, बल्कि लुक़्मा देने की, इसलिए कि

हनफ़ीया के नज़दीक मुक़्तदी को क़िराअते क़ुरआन न करनी चाहिए। (फ़तहुलक़दीर वग़ैरा)

खाँसना बिलाकिसी उज़्र या ग़रज़े सहीह के, अगर कोई उज़्र हो मसलन किसी को खाँसी का मरज़ हो, या बे इख़्तियार खाँसी आ जाए या कोई ग़रज़े सहीह हो तो फिर नमाज़ फ़ासिद न होगी। (ग़रज़े सहीह की मिसाल)

(1) आवाज़ साफ़ करने के लिए खाँसे।

(2) मुक़्तदी इमाम को उसकी ग़लती पर आगाह करने के लिए खाँसे।

(3) कोई शख़्स इस ग़रज़ से खाँसे कि दूसरे लोग समझ लें कि ये नमाज़ में है।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–102 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–241)

मस्अला: रोना या आह, उफ़ वग़ैरा कहना, बशर्तेकि किसी मुसीबत या दर्द से हो, और बेइख़्तियारी न हो अगर बेइख़्तियारी से ये बातें सादिर हों या मुसीबत व दर्द से न हों बल्कि ख़ुदा के ख़ौफ़ या जन्नत व दोज़ख़ की याद से हों, तो फिर नमाज़ फ़ासिद न होगी।

(दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

मस्अला: खाना, पीना अगरचे बहुत ही क़लील हो, हाँ अगर दाँतों के दरमियान कोई चीज़ चने की मिक़्दार से कम बाक़ी हो और उसको निगल जाए तो नमाज़ फ़ासिद न होगी। हासिल ये कि जिस क़िस्म के खाने पीने से रोज़े में फ़साद आता है नमाज़ भी उससे फ़ासिद हो जाती है। (दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

मस्अला: अमले कसीर, बशर्तेकि अफ़आले नमाज़ की

जिन्स से या नमाज़ की इसलाह की ग़रज़ से न हो। अगर आमाले नमाज़ की जिन्स से हो मसलन कोई शख़्स एक रकअ़त में दो रुकूअ़ करे या तीन सज्दे करे तो नमाज़ फ़ासिद न होगी, इसलिए कि रुकूअ़ सज्दा वग़ैरा आमाले नमाज़ की जिन्स से हैं। इसी तरह अगर नमाज़ की इस्लाह की ग़रज़ से हो तब भी नमाज़ फ़ासिद न होगी, मसलन हालते नमाज़ में किसी का वुज़ू टूट जाए और वह शख़्स वुज़ू करने के लिए जाए तो उसकी नमाज़ फ़ासिद न होगी। अगरचे चलना फिरना वुज़ू करना अमले कसीर है मगर चूंकि इसलाहे नमाज़ के लिए है लिहाज़ा मआ़फ़ है।

मस्अला: हालते नमाज़ में किसी औरत का पिस्तान चूसा जाए और उससे दूध निकल आए तो उस औरत की नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी, इसलिए कि ये दूध का पिलाना अमले कसीर है। (दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

मस्अला: नमाज़ में बेउज़्र चलना फिरना, हाँ अगर चलने की हालत में सीना क़िब्ले से न फिरने पाए और जमाअ़त में हो तो एक रकअ़त में एक सफ़ से ज़्यादा न चले, और तन्हा नमाज़ पढ़ता हो तो अपने सज्दे के मक़ाम से आगे न बढ़े और मकान न बदलने पाए मसलन मस्जिद में हो तो मस्जिद से बाहर न निकल जाए तो नमाज़ फ़ासिद न होगी। या किसी उज़्र से चले मसलन वुज़ू टूट जाए और वुज़ू करने के लिए चले, इस सूरत में अगरचे सीना क़िब्ले से फिर जाए और चाहे जिस क़दर चलना पड़े नमाज़ फ़ासिद न होगी।

मस्अला: नमाज़ की हालत में अगर कोई शख़्स तकलीफ़

देह जानवर के उड़ाने की ग़र्ज़ से ढेला फेंके तो नमाज़ फ़ासिद न होगी, और अगर किसी इंसान पर फेंका है तो अमले कसीर समझा जाएगा और नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–103)

मस्अला: नमाज़ की सेहत के शराइत मफ़्क़ूद हो जाने के बाद किसी रुक्न का अदा करना या बक़द्रे अदा करने किसी रुक्न के उसी हालत में रहना।

(दुर्रेमुख़्तार, वग़ैरा)

मस्अला: इमाम का बाद हदस के बे ख़लीफ़ा किए हुए मस्जिद से बाहर निकल जाना। (दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

मस्अला: इमाम का किसी ऐसे शख़्स को ख़लीफ़ा कर देना जिसमें इमामत की सलहियत नहीं मसलन किसी मजनून या नाबालिग़ बच्चे को या किसी औरत को।

(दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

मस्अला: मुक़्तदी लाहिक़ का हर हाल में और इमाम लाहिक़ का अगर जमाअ़त बाक़ी हो तो मौज़ए इक़्तिदा में बाक़ी नमाज़ को तमाम करना।

मस्अला: क़ुरआन मजीद की क़िराअत में ग़लती हो जाना ख़्वाह ये ग़लती एराब में हो या किसी मुशद्दद हर्फ़ के मुख़फ़्फ़फ़ पढ़ने में या किसी मुख़फ़्फ़फ़ के मुशद्दद पढ़ने में कोई हर्फ़ या कलिमा बढ़ जाए या बदल जाए या कम ज़्यादा हो जाए, क़ुरआन मजीद की क़िराअत में ग़लती हो जाना, इन सूरतों में मुफ़सिदे नमाज़ है।

(1) जिस ग़लती से माना बदल जाऐं ऐसे कि जिनका एतेक़ाद कुफ़्र हो ख़्वाह वह इबारत क़ुरआन मजीद में हो या नहीं।

(2) माना बदल गए हों अगरचे ऐसे न हों कि जिनका एतेक़ाद कुफ़्र हो मगर वह इबारत कुरआन मजीद में न हो।

(3) माना में तग़ैयुर आ गया हो और वह माना वहाँ मुनासिब न हों अगरचे वह लफ़्ज़ कुरआन मजीद में हो।

(4) माना में तग़ैयुर आ गया हो जिससे लफ़्ज़ बे माना हो गया हो जैसे सराइर की जगह कोई शख़्स सराइल पढ़ जाए।

अगर ऐसी ग़लती हो जिससे माना में बहुत तग़ैयुर न आए और मिस्ल उसका कुरआन मजीद में मौजूद हो तो नमाज़ फ़ासिद न होगी।

अगर किसी लिखे हुए काग़ज़ पर नज़र पड़ जाए और उसके माना भी समझ में आ जाएँ तो नमाज़ फ़ासिद न होगी। अगर किसी शख़्स के जिस्मे औरत पर नज़र पड़ जाए तब भी नमाज़ फ़ासिद न होगी। (बहरुर्राइक़)

अगर औरत किसी मर्द का हालते नमाज़ में बोसा ले तो उस मर्द की नमाज़ फ़ासिद न होगी, हाँ अगर शहवत के साथ बोसा ले तो अलबत्ता नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

(दुर्रेमुख़्तार, इल्मुलफ़िक्ह जिल्द–2 सफ़्हा–105)

अगर कोई शख़्स नमाज़ी के सामने से निकल जाए तब भी नमाज़ फ़ासिद न होगी, अगरचे नमाज़ी के सामने से निकलने वाले पर सख़्त गुनाह होगा। अगर कोई शख़्स नमाज़ी के सामने से निकलना चाहे तो हालते नमाज़ में उस शख़्स से मुज़ाहमत करना और उसको उस फ़ेल से बाज़ रखना जाइज़ है।

(दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

यहाँ जो सूरतें हम ने ब्यान की हैं वह मुतक़द्दिमीन के

क़वाएद के मुवाफ़िक़ हैं और उन्हीं के मज़हब में एहतियात ज़्यादा है, मसलन मतअख़्ख़िरीन के नज़दीक एराब की ग़लती से नमाज़ फ़ासिद नहीं होती लिहाज़ा हम ने मुतक़द्दमीन का मज़हब इख़्तियार किया है। (क़ाज़ी ख़ाँ, शामी वग़ैरा)

तमाम मुफ़्सिदाते नमाज़ जिनका ब्यान ऊपर हो चुका। अगर क़ब्ल क़अदए अख़ीरा के या क़अदए अख़ीरा में क़ब्ल अत्तहीयात पढ़ने के पाए जाएँ तो मुफ़्सिदे नमाज़ हैं वरना मुफ़्सिद नहीं, बल्कि मुतिम्मे नमाज़ हैं यानी उनके पाए जाने से नमाज़ मुकम्मल हो जाएगी। मगर इन चंद सूरतों में: (1) अगर बाद अत्तहीयात पढ़ने के क़अदए अख़ीरा में किसी तयम्मुम करने वाले को वुज़ू पर क़ुदरत हो जाए। (2) या मोज़ों पर मसह करने वाले की मुद्दत गुज़र जाए, या पट्टी पर मसह करता हो और वह ज़ख़्म जिस पर पट्टी बंधी हुई हो अच्छा हो जाए। (3) या किसी का मोज़ा उतर जाए। (4) या ख़ुद उतारे मगर अमले कसीर न होने पाए। (5) या किसी उम्मी को कोई सूरत याद हो जाए। (6) या किसी बरहना नमाज़ पढ़ने वाले को कपड़ा मिल जाए। (7) या इशारों से नमाज़ पढ़ने वाला रुकूअ सज्दे पर क़ादिर हो जाए। (8) या इमाम को हदस हो जाए और वह किसी ऐसे शख़्स को ख़लीफ़ा कर दे जिसमें इमामत की सलाहियत नहीं। (9) या फ़ज्र की नमाज़ में आफ़ताब निकल आए। (10) या जुमे की नमाज़ में अस्र का वक़्त आ जाए। (11) या कोई शख़्स वुज़ू से माज़ूर हो और उसका उज़्र जाता रहे। (12) या किसी साहबे तरतीब को क़ज़ा नमाज़ याद आ जाए और वक़्त में उसके अदा करने की गुंजाइश हो तो इन सब

सूरतों में नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। अगरचे ये उमूर बाद तमाम हो जाने अरकाने नमाज़ के पाए गए हैं।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द--2 सफ़्हा--106)

या बारह सूरतें हैं जिनमें इमाम साहब (रह.) के नज़दीक नमाज़ फ़ासिद हो जाती है और साहिबैन (रह.) के नज़दीक नमाज़ फ़ासिद नहीं होती, बल्कि ख़त्म हो जाती है, इसलिए कि इन सूरतों में मुफ़्सिद नमाज़ क़अ़्दए अख़ीरा में बाद अत्तहीयात पढ़ चुकने के पाया गया जबकि कोई रुक्न नमाज़ का बाक़ी नहीं रहा और ऐसे वक़्त में अगर कोई चीज़ मुफ़्सिदे नमाज़ की पाई जाती है, तो नमाज़ तमाम हो जाती है मगर चूंकि एहतियात इमाम साहब (रह.) के मज़हब में है और इबादत में जहाँ तक एहतियात मुमकिन हो बेहतर है और फ़िक़्ह के जुमला मुतून में उसी मज़हब को इख़्तियार किया है, इसलिए हम ने भी उसी को इख़्तियार किया। वल्लाहुआलम (शामी)

नमाज़ के फ़ासिद होने से मुतअल्लिक़ मसाइल

वह उमूर जिन को नमाज़ के दौरान करने से नमाज़ फ़ासिद (ख़त्म, टूट जाती है, दोबारा पढ़ना ज़रूरी) हो जाती है, मंदरजा ज़ैल मज़ीद हैं।

मस्अलाः छींकने वाले के जवाब में "يَرْحَمُكَ اللهُ" कहने से भी नमाज़ फ़ासिद हो जाती है। रंज व ग़म की बुरी ख़बर सुन कर "اِنَّا لِلّٰهِ وَاِنَّا اِلَيْهِ رَاجِعُوْنَ" कहने पर भी नमाज़ फ़सिद हो जाती है। किसी खुश ख़बरी पर "اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ" कहना, या किसी बात पर इज़हारे तअज्जुब की ख़बर

सुन कर "سُبْحَانَ اللّٰه" या "لَا إِلٰهَ إِلَّا اللّٰه" कहने पर भी नमाज़ फ़ासिद हो जाती है।

किसी के सवाल के जवाब में कुरआन की आयत पढ़ देने पर भी नमाज़ फ़ासिद हो जाती है (ताकि उसके सवाल का जवाब हो जाए)

साहबे तरतीब को भूली हुई नमाज़ों का याद आ जाना, जब कि वक़्त में गुंजाइश हो। (तफ़सील कज़ा के ब्यान में है)

नमाज़ में बक़द्रे तशह्हुद बैठने से पहले तयम्मुम से नमाज़ पढ़ने वाले को पानी मिल जाए, जिसे वह इस्तेमाल कर सकता हो तो नमाज़ बातिल हो जाएगी, इसी तरह मुक़्तदी बा वुज़ू है और इमाम का तयम्मुम है और इमाम को पानी मिल जाए तो मुक़्तदी की नमाज़ बातिल हो जाएगी, फ़र्ज़ नमाज़, और वह नमाज़ नफ़्ल हो जाएगी।

मसह की मिआद ख़त्म हो जाना जबकि बक़द्रे तशह्हुद बैठने से पहले ख़त्म हो। इसी तरह मोज़ा का उतर जाना, अगरचे किसी मामूली हरकत से उतर जाए।

(तफ़सील देखिए मसाइले खुफ़्फ़ैन)

जो अनपढ़ है वह नमाज़ में कुरआन की कोई आयत सीख जाए तो नमाज़ जाती रहेगी, बशर्तेकि वह शख़्स ऐसे शख़्स का मुक़्तदी न हो जो कुरआन जानता है। अब वह अनपढ़ कुरआन की आयत या तो सुन कर सीख गया हो, या भूला हुआ था और याद आ गई। अनपढ़ की नमाज़ बातिल उस सूरत में होगी जबकि बमिक़्दारे तशह्हुद बैठने से पहले ऐसा हुआ हो कि वह सुन कर सीख गया हो, वरना बातिल न होगी।

जो शख़्स इशारा से नमाज़ पढ़ रहा है, अगर नमाज़ के दौरान रुकूअ व सुजूद के क़ाबिल हो जाए तो नमाज़ बातिल हो जाएगी। जो शख़्स नमाज़ की सलाहियत नहीं रखता, जैसे अनपढ़ या माज़ूर, उसको इमाम ख़लीफ़ा बना दे तो नमाज़ बातिल जो जाएगी।

नमाज़े फ़ज्र पढ़ने में सूरज का निकल आना। ईदैन में से किसी ईद की नमाज़ के दौरान आफ़ताब का ज़वाल पज़ीर होना, इससे भी नमाज़ बातिल हो जाएगी।

जुमा की नमाज़ पढ़ते हुए अस्र का वक़्त आ जाए तो नमाज़ बातिल हो जाएगी।

ज़ख़्म भर जाने के बाइस पट्टी का उतर जाना नमाज़ के दौरान, इससे भी नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

माज़ूर के उज़्र का जाता रहना नमाज़ के दौरान। वुज़ू टूटने पर नमाज़ में बग़ैर किसी उज़्र के इतनी देर ठहरना कि उसमें एक रुक्न अदा किया जा सके, नमाज़ को बातिल कर देता है, यानी दोबारा पढ़नी पड़ेगी। नमाज़ के दौरान ख़्याल आया कि मेरा वुज़ू नहीं है, या मसह की मुद्दत ख़त्म हो गई, या कोई क़ज़ा नमाज़ पढ़नी है, या नजासत (नापाकी) लग गई है, नमाज़ी का अपनी जगह से हट जाने से नमाज़ बातिल हो जाती है, अगरचे मस्जिद से बाहर न गया हो।

मुक़्तदी का अपने इमाम के अलावा किसी और की ग़लती बताना, हाँ अपने इमाम को ग़लती बता सकता है। नमाज़ पढ़ने वाले का किसी और की बताई हुई ग़लती को मान लेना, इससे भी नमाज़ फ़ासिद हो जाती है। नमाज़ पढ़ते हुए किसी के हुक्म की तामील करना।

जो नमाज़ पढ़ी जा रही है उससे हट कर किसी और दूसरी नमाज़ की तरफ़ मुन्तक़िल होने के लिए तकबीर कहना। तकबीर में, अल्लाहुअकबर के पहले अलिफ़ को खींच कर पढ़ना जैसे आल्लाहुअकबर, या अल्लाहु इकबार बा को खींच कर पढ़ने से भी नमाज़ फ़ासिद हो जाती है।

नमाज़ में वह हिस्सा खुल जाने से जिसका ढाँकना ज़रूरी है खुल जाने या नापाकी के लग जाने से इतनी देर उसी हालत में रहना कि एक रुक्न अदा किया जा सके। मुक़्तदी का अपने इमाम से पहले किसी अपने रुक्न का अदा करना जिसमें उसके साथ शिरकत न की हो, उसमें भी नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

मुक़्तदी के क़दम का अपने इमाम के क़दम से आगे निकल जाने से भी नमाज़ बातिल हो जाती है।

चार रकअ़त वाली नमाज़ में ये समझ कर कि ये दो रकअ़त वाली नमाज़ है दो रकअ़त पर सलाम फेर देना, मसलन ज़ुहर की नमाज़ है और ये समझ कर कि ये जुमा की नमाज़ है दो रकअ़त पर सलाम फेर दिया तो इसमें भी नमाज़ बातिल हो जाती है।

(किताबुलफ़िक़्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ़ जिल्द–1 सफ़्हा–469 ता 473)

किसी नबीना को हलाकत की जगह से बचाने के लिए नमाज़ के अन्दर बोलने से भी नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–477)

नमाज़ में ज़्यादती के साथ ऐसे काम करने से जो नमाज़ के आमाल में से नहीं हैं नमाज़ बातिल हो जाती है और ज़्यादती के साथ काम करने से ये मुराद है कि

देखने वाले को ये मालूम हो कि ये नमाज़ में नहीं है या शक करने लगें कि ये शख़्स नमाज़ में नहीं है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–487)

मस्अला: मुंह में पान अगर दबा हुआ हो और उसकी पीक हलक़ में जाती है तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

(बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–2 सफ़्हा–23)

मस्अला: बच्चा ने आकर माँ का दूध पी लिया तो नमाज़ जाती रहेगी, अलबत्ता अगर दूध न निकला तो नमाज़ हो जाएगी।

(बहरुर्राइक़ जिल्द–1 सफ़्हा–12, बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–2 सफ़्हा–23)

मस्अला: नमाज़ पढ़ते हुए किसी लिखी हुई चीज़ पर नज़र पड़ी और उसको ज़बान से पढ़ ले तो नमाज़ जाती रहेगी। (बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–2 सफ़्हा–23, बहवाला मजमउलअनहर सफ़्हा–122, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–579)

मस्अला: नमाज़ में मीठी चीज़ का हलक़ में अगर सिर्फ़ ज़ाएक़ा ही बाक़ी रहा तो नमाज़ हो जाएगी, और अगर वह मीठी चीज़ मुंह में बाक़ी हो और तहलील (घुल कर) हो कर हलक़ में चली गई हो तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

मस्अला: नमाज़ में डिकार लेना मकरूह (तंज़ीही) है, इसको रोकने की कोशिश की जाए और जहाँ तक मुमकिन हो आवाज़ पस्त रखी जाए।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–316, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–583 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–191)

मस्अला: नमाज़ में चने की मिक़्दार या कम व बेश

खाने की चीज़ मुंह में नमाज़ी की ज़बान पर आई, उसको कपड़े या हाथ से बाहर निकाल देने से नमाज़ में कुछ नुक़्सान नहीं आएगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–121, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–588)

मस्अला: नमाज़ में अगर थूकना हो और निगल न सके तो कपड़े (रूमाल वग़ैरा) में लेले।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–112, मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–71 बाबुलमसाजिद)

मस्अला: नमाज़ में छींक और डिकार से जो आवाज़ बन जाती है उससे नमाज़ फ़ासिद न होगी, क्यों उससे बचना मुश्किल है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–486, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–92)

मस्अला: अगर छींक या डिकार में ऐसे हुरूफ़ का (खुद) इज़ाफ़ा किया जो कुदरती तौर पर नहीं निकलते तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

(किताबुल फ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–486)

मस्अला: नमाज़ से बाहर वाले की दुआ पर आमीन कहने से भी नमाज़ में, तो नमाज़ टूट जाती है।

(कबीरी सफ़्हा–239)

मस्अला: नमाज़ में अज़ान का जवाब देने से भी नमाज़ फ़ासिद हो जाती है।

(कबीरी सफ़्हा–444, नमाज़े मसनून सफ़्हा–483)

मस्अला: किसी चीज़ के नीचे गिरने पर बिस्मिल्लाह पढ़ने से भी नमाज़ फ़ासिद हो जाती है। नीज़ किसी

नागवार बात के सुनने पर "لَاحَوْلَ وَلَا قُوَّةَ إِلَّا بِاللهِ" कहने से भी नमाज़ फ़ासिद हो जाती है।

मस्अला: रंज व ग़म की वजह से कराहने, आह, उफ़, हाए कहने से भी नमाज़ फ़ासिद हो जाती है, अगर किसी मरज़ के बाइस हो जिसको ज़ब्त न किया जा सके तो नमाज़ बातिल न होगी। (हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–86, शरह जिल्द–1 सफ़्हा–92, कबीरी सफ़्हा–437)

मस्अला: किसी दुनयावी रंज व मुसीबत में, या दीनवी ग़रज़ के लिए आवाज़ के साथ रोने से नमाज़ फ़ासिद हो जाती है। (किताबुलफ़िक्ह जिल्द–1 सफ़्हा–478)

मस्अला: नमाज़ में अल्लाह के ख़ौफ़, या अम्रे आख़िरत की वजह से रोना आ जाए तो उससे नमाज़ फ़ासिद नहीं होती जबकि ये रोना बेइख़्तियार हो।

(हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–86, शरह नकाया जिल्द–1 सफ़्हा–92, कबीरी सफ़्हा–436)

मस्अला: नमाज़ के दौरान अगर छींक आ जाए तो अलहमदुलिल्लाह नहीं कहना चाहिए, अगर कह लिया तो नमाज़ फ़ासिद नहीं होगी।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–32)

मस्अला: मजबूरी की वजह से नमाज़ में जमाई ली हो और एहतियात करता हो, और आवाज़ न निकले तो मआफ़ है और अगर उसमें एहतियात न करता हो और बेएहतियाती की वजह से आवाज़ निकले और हुरूफ़ पैदा हों तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

(उमदतुलफ़िक्ह सफ़्हा–252)

मस्अला: नमाज़ में मुसाफ़हा करने, सलाम करने या

सलाम का जवाब देने से भी नमाज़ फ़ासिद हो जाती है।

(कबीरी सफ़्हा–442, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–92, नमाज़ मसनून सफ़्हा–481)

मस्अला: नमाज़ में सिर्फ़ गर्दन मोड़ना मकरूह है। अलबत्ता कनअंखियों से दाएँ बाएँ देख लेना रवा है। लेकिन ये भी मुनासिब नहीं है और सीना को क़िब्ला के रुख़ से हटा कर किसी और जानिब इतनी देर तक मोड़े रखना जितनी देर में एक रुक्न नमाज़ का पूरा हो सके, इससे नमाज़ फ़ासिद हो जाती है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–433, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–90, कबीरी–351, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–92)

मस्अला: नापाक जगह सज्दा करने से नमाज़ फ़ासिद हो जाती है।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–90, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–92)

मस्अला: नमाज़ की क़िराअत में अगर फ़ाश ग़लती हो गई जिससे मफ़हूम मआनी बदल जाएँ तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। नीज़ क़ुरआने करीम को मोसीक़ी की तर्ज़ पर पढ़ने से भी नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–90)

मस्अला: बरहना (नंगा) आदमी जो नमाज़ पढ़ रहा है, दौराने नमाज़ परदा पोशी के लिए कपड़े वग़ैरा मिल जाएँ तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। (हिदाया सफ़्हा–82)

मस्अला: नमाज़ में जुनून या बेहोशी या जनाबत लाहिक़ हो जाए तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

(हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–83)

मस्अला: नमाज़ के दौरान बाहर से कोई चीज़ खाएगा या पीएगा, चाहे तिल के बराबर ही हो, निगल ले तो उससे नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

(नमाज़ मसनून सफ़्हा-489, शरह नक़ाया जिल्द-1 सफ़्हा-93)

मस्अला: दाँतों के दरमियान से कोई चीज़ दौराने नमाज़ निकाल कर खाएगा तो अगर चने के दाना के बराबर या उससे बड़ी हो तो उससे नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

(शरह नक़ाया जिल्द-1 सफ़्हा-93)

मस्अला: और ऐसी चीज़ के निगलने और मेअ्दा में पहुंचने से भी नमाज़ बातिल हो जाती है जो मुंह में घुल जाती है जैसे चीनी मिठाई वग़ैरा।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द-1 सफ़्हा-489)

जिन चीज़ों से नमाज़ मकरूह हो जाती है

मस्अला: हालते नमाज़ में कपड़े का ख़िलाफ़े दस्तूर पहनना यानी जो तरीक़ा उसके पहनने का हो और जिस तरीक़ा से उसको अह्ले तहज़ीब पहनते हों उसके ख़िलाफ़ उसका इस्तेमाल करना मकरूह तहरीमी है।

मिसाल: कोई शख़्स चादर ओढ़े और उसका किनारा शाने पर न डाले या कुर्ता पहने और आस्तीनों में हाथ न डाले।

मस्अला: रुकूअ़ या सज्दे में जाते वक़्त अपने कपड़ों को मिट्टी वग़ैरा से बचाने के लिए या और किसी ग़रज़

से उठा लेना मकरूहे तहरीमी है। (रद्दुलमुहतार वग़ैरा)

मस्अला: हालते नमाज़ में कोई लग्व फ़ेल करना जो अमले कसीर की हद तक न पहुंचने पाए मकरूहे तहरीमी है।

मिसाल: (1) कोई शख़्स अपनी दाढ़ी के बाल हाथ में ले। (2) अपने कपड़े को पकड़े, अपने बदन को बेज़रूरत खुजलाए।

मस्अला: हालते नमाज़ में वह कपडे पहनना मकरूहे तहरीमी हैं जिनको पहन कर आम तौर पर लोगों के पास न जा सकता हो, हाँ अगर उस कपड़े के सिवा दूसरा कपड़ा उसके पास न हो तो मकरूह नहीं।

मस्अला: कोई टुकड़ा चाँदी सोने या पथर वग़ैरा का मुंह में रख लेना मकरूह तंज़ीही है बशर्तेकि क़िराअत में मुख़िल न हो, अगर क़िराअत में मुख़िल होगा तो फिर नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। (दुर्रेमुख़्तार, शामी)

मस्अला: बरहना सर नमाज़ पढ़ना, हाँ अगर अपना तज़ल्लुल और ख़ुशूअ ज़ाहिर करने के लिए ऐसा करे तो कुछ मुज़ाएक़ा नहीं। अगर किसी की टोपी या अमामा नमाज़ पढ़ते हुए गिर जाए तो अफ़ज़ल ये है कि उसी हालत में उसे उठा कर पहन ले लेकिन अगर उसके पहनने में अमले कसीर की ज़रूरत पड़े तो फिर न पहने।

(रद्दुलमुहतार, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–106)

मस्अला: पाख़ाना, पेशाब या ख़ुरूजे रीह की ज़रूरत के वक़्त बेज़रूरत रफ़ा किए हुए नमाज़ पढ़ना मकरूहे तहरीमी है। (दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

•अगर किसी को बाद नमाज़ शुरू कर चुकने के ऐन हालते नमाज़ में पाख़ाना, पेशाब वग़ैर मालूम हो तो उसको

चाहिए कि नमाज़ तोड़ दे और उन ज़रूरतों से फ़रागत कर के ब इत्मीनान पढ़े, ख़्वाह वह नमाज़ नफ़्ल हो या फ़र्ज़, और ख़्वाह तन्हा पढ़ता हो या जमाअ़त से, और ये ख़ौफ़ भी हो कि बाद उस जमाअ़त के दूसरी जमाअ़त न मिलेगी। हाँ अगर ये ख़ौफ़ हो कि वक़्त नमाज़ का न रहेगा, या जनाज़ा की नमाज़ हो कि नमाज़ हो जाएगी तो न तोड़े बल्कि उसी हालत में नमाज़ तमाम करे। (शामी)

मस्अला: मर्दों को अपने बालों का जूड़ा वग़ैरा बाँध कर नमाज़ पढ़ना मकरूहे तंज़ीही है और हालते नमाज़ में जूड़ा वग़ैरा बाँधे तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। इसलिए कि ये अमले कसीर है। (दुर्रेमुख़्तार, शामी)

मस्अला: सज्दे के मक़ाम से कंकरियों वग़ैरा का हटाना मकरूहे तहरीमी है। हाँ अगर बग़ैर हटाए सज्दा बिल्कुल मुमकिन ही न हो तो फिर हटाना ज़रूरी है और अगर मसनून तरीक़ा से बे हटाए मुमकिन न हो तो एक मरतबा हटा दे और न हटाना बेहतर है।

(दुर्रेमुख़्तार, शामी वग़ैरा)

मस्अला: हालते नमाज़ में उंगलियों का तोड़ना या एक हाथ की उंगलियों का दूसरे हाथ की उंगलियों में दाख़िल करना (यानी चटख़ाना) मकरूह तहरीमी है।

(दुर्रेमुख़्तार, शामी वग़ैरा)

मस्अला: हालते नमाज़ में हाथ का कूल्हे पर रखना मकरूह तहरीमी है। (बहरुर्राइक़, शामी वग़ैरा)

मस्अला: हालते नमाज़ में मुंह का क़िब्ले से फेरना मकरूहे तहरीमी है ख़्वाह पूरा मुंह फेरा जाए या थोड़ा।

(शामी वग़ैरा)

मस्अला: गोशाए चश्म से बे ज़रूरते शदीदा इधर उधर देखना मकरूह तंज़ीही है। (दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

मस्अला: हालते नमाज़ में इस तरह बैठना कि दोनों हाथ और सुरीन ज़मीन पर हों और दोनों ज़ानों खड़े हुए सीने से लगे हुए हों मकरूहे तहरीमी है। मजबूरी में जाइज़ है। (शामी वग़ैरा)

मस्अला: मर्दों को अपने दोनों हाथों की कुहनियों को सज्दे की हालत में ज़मीन पर बिछा देना मकरूहे तहरीमी है।

मस्अला: किसी आदमी की तरफ़ नमाज़ पढ़ना मकरूहे तहरीमी है। (शामी वग़ैरा)

मस्अला: सलाम का जवाब देना हाथ या सर के इशारे से मकरूहे तंज़ीही है। (शामी)

मस्अला: सज्दा सिर्फ़ पेशानी या सिर्फ़ नाक पर करना मकरूहे तहरीमी है।

(दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–107)

मस्अला: अमामे के पेच पर सज्दा करना मकरूहे तहरीमी है। (दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

मस्अला: नमाज़ में बेउज़्र चार ज़ानू बैठना मकरूहे तहरीमी है। (दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

मस्अला: हालते नमाज़ में जमाई लेना मकरूहे तंज़ीही है। (शामी)

मस्अला: हालते नमाज़ में आँखों का बंद कर लेना मकरूहे तंज़ीही है। हाँ अगर आँख बंद कर लेने से ख़ुशूअ़ ज़्यादा होता हो तो मकरूह नहीं, बल्कि बेहतर है।

(दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

मस्अला: इमाम का मेहराब में खड़ा होना मकरूहे तंज़ीही है, अगर मेहराब से बाहर खड़ा हो मगर सज्दा मेहराब में होता हो तो मकरूह नहीं। (दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

मस्अला: सिर्फ़ इमाम का बेज़रूरत किसी बुलंद मक़ाम पर खड़ा होना जिसकी बुलंदी एक गज़ से कम न हो मकरूहे तंज़ीही है, अगर इमाम के साथ मुक़्तदी भी हो तो मकरूह नहीं। (दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

मस्अला: मुक़्तदियों को बेज़रूरत किसी ऊँचे मक़ाम पर खड़ा होना मकरूहे तंज़ीही है, हाँ कोई ज़रूरत हो मसलन जमाअत ज़्यादा हो और जगह किफ़ायत न करती हो तो मकरूह नहीं। (दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

मस्अला: हालते नमाज़ में कोई ऐसा कपड़ा पहनना जिसमें किसी जानदार की तस्वीर हो मकरूहे तहरीमी है, इसी तरह ऐसे मक़ाम में नमाज़ पढ़ना जहाँ छत पर या दाहिने बाएँ जानिब किसी जानदार की तस्वीर हो। (दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा) अगर फ़र्श पर जहाँ खड़े हुए हों तस्वीर हो तो मकरूह नहीं, इसी तरह अगर तस्वीर छिपी हुई हो या इस क़दर छोटी हो कि अगर ज़मीन पर रख दी जाए और कोई शख़्स खड़े हो कर उसका देखे तो उसके आज़ा महसूस न हों या उसका सर या चेहरा काट दिया गया हो या मिटा दिया गया हो या तस्वीर जानदार की न हो तो मकरूह नहीं। (दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

मस्अला: हालते नमाज़ में आयतों या सूरतों को या तस्बीह का उंगलियों से शुमार करना मकरूहे तंज़ीही है। हाँ अगर उंगलियों पर शुमार न करे बल्कि उनके दबाने से हिसाब रखे तो मकरूह नहीं, जैसा कि सलातुत्तस्बीह

के ब्यान में है।

(शामी, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़हा–108)

मस्अला: हालते नमाज़ में नाक साफ़ करना या इसी तरह कोई और अमले क़लील बेज़रूरत करना मकरूहे तहरीमी है। (शामी)

मस्अला: नाक और मुंह किसी कपड़े वग़ैरा से बंद कर के नमाज़ पढ़ना मकरूहे तहरीमी है। (शामी)

मस्अला: मुक़्तदी को अपने इमाम से पहले किसी फ़ेल का करना मकरूहे तहरीमी है। (शामी)

मस्अला: क़िराअत ख़त्म होने से पहले रुकूअ़ के लिए झुक जाना और झुकने की हालत में क़िराअत तमाम करना मकरूहे तहरीमी है। (शामी)

मस्अला: रुकूअ़ और सज्दे से क़ब्ल तीन मरतबा तस्बीह कहने से, सर उठा लेना मकरूहे तंज़ीही है।

मस्अला: किसी ऐसे कपड़े को पहन कर नमाज़ पढ़ना मकरूहे तहरीमी है, जिसमें बक़द्रे मआ़फ़ी नजासत हो मसलन नजासते ग़लीज़ा एक दिरहम से ज़्यादा न हो या ख़फ़ीफ़ा चौथाई हिस्सा से ज़्यादा न हो।

(रसाइले अरकान)

मस्अला: फ़र्ज़ नमाज़ों में क़सदन तरतीबे क़ुरआनी के ख़िलाफ़ क़िराअत करना मकरूहे तहरीमी है। यानी जो सूरत पीछे है उसको पहली रकअ़त में पढ़ना और जो पहले है उसको दूसरी रकअ़त में मसलन "قُلْ يَا أَيُّهَا الْكَافِرُوْن" पहली रकअ़त में और "أَلَمْ تَرَ كَيْفَ" दूसरी रकअ़त में। अगर सहवन ख़िलाफ़े तरतीब हो जाए तो मकरूह नहीं। नवाफ़िल में अगर क़सदन भी ख़िलाफ़ करे

तो कुछ कराहत नहीं। अगर किसी से सहवन ख़िलाफ़े तरतीब हो जाए और मअ़न उसको ख़्याल आ जाए कि मैं ख़िलाफ़े तरतीब क़िराअत कर रहा हूँ तो उसको चाहिए कि उसी सूरत को तमाम कर ले, इसलिए कि उस सूरत के शुरू करते वक़्त उसका क़स्द ख़िलाफ़े तरतीब पढ़ने का न था और क़सदन न होने के सबब से उसका पढ़ना मकरूह न रहा।

(शामी, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–109)

मस्अला: एक ही सूरत की कुछ आयतें एक जगह से एक रकअ़त में पढ़ना और कुछ आयतें दूसरी जगह से दूसरी रकअ़त में पढ़ना तंज़ीही है, बशर्तेकि दरमियान में दो आयतों से कम छोड़ दी जाए। अगर मुसलसल क़िराअत की जाए यानी दरमियान में कुछ आयतें छूटने न पाएँ या दो आयतों से ज़्यादा छोड़ दी जाएँ तो फिर मकरूह नहीं। इसी तरह अगर दो सूरतें दो रकअ़तों में पढ़ी जाएँ और उन दोनों सूरतों के दरमियान में कोई छोटी सूरत जिसमें तीन आयतें हों छोड़ दी जाए तो मकरूहे तंज़ीही है।

मिसाल पहली सूरत में सूरए तकासुर पढ़ी जाए और दूसरी रकअ़त में सूरए हमज़ा और दरमियान में सूरए अस्र जो तीन आयतों की सूरत है छोड़ दी जाए। ये कराहत भी फराइज़ के साथ ख़ास है, नफ़्ल नमाज़ों में अगर ऐसा किया जाए तो कुछ कराहत नहीं। (शामी)

मस्अला: ऐसी दो सूरातों का एक रकअ़त में पढ़ना जिनके दरमियान में कोई सूरत हो ख़्वाह छोटी हो या बड़ी, एक या एक से ज़्यादा, मकरूहे तंज़ीही है उसकी कराहत भी सिर्फ़ फ़राइज़ में है। (शामी)

मस्अला: मुक़्तदी को जबकि इमाम क़िराअत कर रहा हो कोई दुआ वग़ैरा पढ़ना या कुरआन मजीद की क़िराअत करना ख़्वाह वह सूरए फ़ातिहा हो या कोई सूरत हो मकरूहे तहरीमी है। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–110)

मस्अला: नमाज़ में सर पर इस तरह रूमाल बाँधना कि चंदिया खाली रहे मकरूह है।

मस्अला: सज्दा में जाते वक़्त अपने आगे या पीछे से कपड़ों को समेटना मकरूह है।

मस्अला: चादर को काँधों से लटका कर रखना यानी बक्कल, पल्लू न मारना, नीज़ कपड़े को इस तरह लपेटना कि हाथ बाहर न निकाले जा सकें, मकरूह है।

मस्अला: नमाज़ में बिल इरादा ख़ुशबू सूँघना।

मस्अला: सज्दों की दरमियानी नशिस्त की हालत में दोनों हाथों को ज़ानुओं पर न रखना, नीज़ हालते क़याम में दाँए हाथ को बाँए हाथ पर जिस तरह बताया गया है न रखना मकरूह है।

मस्अला: आँखें उठा कर आस्मान की तरफ़ देखना मकरूह है।

मस्अला: बेसबब चूंटी (वग़ैरा) को पकड़ कर मारना, हाँ अगर उसके काटने से नमाज़ में ख़लल हो तो उसके मारने में मुज़ाएक़ा नहीं है, लेकिन ख़ून से बचना चाहिए।

मस्अला: घटिया लिबास में जो मैल कुचैल से भरे हुए हों, नमाज़ पढ़ना, हाँ अगर अपनी आजिज़ी और ज़िल्लत के इज़हार की ख़ातिर या और कपड़े न होने के सबब ऐसा किया जाए तो बिला कराहत जाइज़ है।

मस्अला: किसी शख़्स का अपने लिए मस्जिद में

किसी ख़ास जगह को (बिला उज़्र) मख़सूस कर लेना कि हमेशा वहीं पर नमाज़ पढ़े तो ये भी मकरूह है, नीज़ नमाज़ के लिए किसी ख़ास सूरत का जबकि और सूरतें याद हों मुक़र्रर कर लेना मकरूह है।

मस्अला: नमाज़ की हालत में पेशानी से मिट्टी का झाड़ना जबकि न झाड़ने में कोई हरज न हो, मकरूह है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–142, शरह नक़ाया सफ़्हा–96, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–90, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–91, कबीरी सफ़्हा–375)

क़ज़ा नमाज़ों का ब्यान

बे उज़्र नमाज़ का क़ज़ा करना गुनाहे कबीरा है जो बे सिद्क़े दिल से तौबा किए हुए मआफ़ नहीं होता, हज करने से भी गुनाहे कबीरा मआफ़ होते हैं, और अरहमुर्राहिमीन को इख़्तियार है कि बे किसी वसीला और सबब के मआफ़ कर दे।

मस्अला: अगर चंद लोगों की नमाज़ किसी वक़्त की क़ज़ा हो गई हो तो उनको चाहिए कि उस नमाज़ को जमाअत से अदा करें, अगर बुलंद आवाज़ की नमाज़ हो तो बुलंद आवाज़ से क़िराअत की जाए और आहिस्ता आवाज़ की हो तो आहिस्ता आवाज़ से।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–120, इमदादुलअहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–668)

मस्अला: क़ज़ा नमाज़ का बिल एलान अदा करना गुनाह है, इसलिए कि नमाज़ का क़ज़ा होना गुनाह है

और गुनाह का ज़ाहिर करना गुनाह है, नमाज़े क़ज़ा के पढ़ने का वही तरीक़ा है जो अदा नमाज़ का है, क़ज़ा नमाज़ में ये भी नीयत करना चाहिए कि मैं फ़लाँ नमाज़ की क़ज़ा पढ़ता हूँ और अगर न नीयत करे तब भी जाइज़ है, इसलिए कि क़ज़ा बनीयते अदा और अदा बनीयते क़ज़ा दुरुस्त है (इसलिए कि क़ज़ा की नीयत के साथ और अदा क़ज़ा की नीयत के साथ जाइज़ है)।

(इल्मुलफ़िक्ह जिल्द–2 सफ़्हा–121, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–339)

मस्अला: फ़र्ज़ नमाज़ों की क़ज़ा भी फ़र्ज़ और वाजिब की क़ज़ा वाजिब है, वित्र की क़ज़ा वाजिब है और इसी तरह नज़्र के नमाज़ की और उस नफ़्ल की जो शुरू कर के फ़ासिद कर दी गई हो। इसलिए कि नफ़्ल बाद शुरू करने के वाजिब हो जाती है। सुनन मुअक्कदा वग़ैरा या और किसी नफ़्ल की क़ज़ा नहीं हो सकती, बल्कि जो नमाज़ उनकी क़ज़ा की ग़रज़ से पढ़ी जाएगी वह मुस्तक़िल नमाज़ अलाहिदा समझी जाएगी। उसकी क़ज़ा न होगी, हाँ फ़ज्र की सुन्नतों के लिए ये हुक्म है कि अगर फ़र्ज़ के साथ क़ज़ा हो जाएँ और फ़र्ज़ की क़ज़ा क़ब्ल ज़वाल के पढ़ी जाए तो वह सुन्नतें भी पढ़ी जाएँ और अगर बाद ज़वाल के पढ़ी जाए तो नहीं, और ज़ुहर की सुन्नतों के लिए ये हुक्म है कि अगर रह जाएँ तो वक़्त के अन्दर क़ब्ल उन दो सुन्नतों के जो फ़र्ज़ के बाद हैं पढ़ ली जाएँ, वक़्त के बाद नहीं पढ़ी जा सकतीं ख़्वाह फ़र्ज़ के साथ रह जाएँ या तन्हा।

मस्अला: वक़्ती नमाज़ और क़ज़ा नमाज़ में और ऐसे

ही क़ज़ा नमाज़ों में बाहम तरतीब ज़रूरी है बशर्तेकि वह क़ज़ा फ़र्ज़ नमाज़ हो या वित्र की मसलन किसी की ज़ुहर की नमाज़ क़ज़ा हो गई हो तो ज़ुहर की क़ज़ा और अस्र की वक़्ती नमाज़ में उसको तरतीब की रिआयत ज़रूरी है, यानी जब तक पहले ज़ुहर की क़ज़ा न पढ़ लेगा अस्र की फ़र्ज़ नहीं पढ़ सकता और अगर पढ़ेगा तो वह नफ़्ल हो जाएँगी और अगर किसी ने वित्र न पढ़ी हो तो वह फ़ज्र की फ़र्ज़ व वित्र अदा किए हुए नहीं पढ़ सकता। इसी तरह अगर किसी के ज़िम्मा फ़ज्र और ज़ुहर की क़ज़ा हो तो उन दोनों के आपस में भी तरतीब ज़रूरी है, यानी जब तक पहले फ़ज्र की क़ज़ा न पढ़ लेगा ज़ुहर की क़ज़ा नहीं पढ़ सकता और अगर पढ़ेगा तो वह नफ़्ल हो जाएगी और ज़ुहर की क़ज़ा बदस्तूर उसके ज़िम्मा बाक़ी रहेगी। हाँ अगर बाद उस क़ज़ा के पाँच नमाज़ें उसी तरह पढ़ ली जाएँ तो फिर ये पाँचों सहीह हो जाएँगी यानी नफ़्ल न होंगी फ़र्ज़ रहेंगी, चुनांचे आगे ब्यान होगा। तरतीब इन तीन सूरतों में साक़ित हो जाती है।

पहली सूरतः निस्यान यानी क़ज़ा नमाज़ का याद न रहना, अगर किसी के ज़िम्मा क़ज़ा नमाज़ हो और उसको वक़्ती नमाज़ पढ़ते वक़्त उसके अदा करने का ख़्याल न रहे तो उस पर तरतीब वाजिब नहीं और उसकी वक़्ती नमाज़ जिसको अदा कर रहा है सहीह हो जाएगी इसलिए कि क़ज़ा नमाज़ पढ़ने का हुक्म याद करने पर मुशरूत है। अगर किसी शख़्स की कुछ नमाज़ें मुख़्तलिफ़ अैयाम में क़ज़ा हुई हों मसलन ज़ुहर किसी दिन की और अस्र

किसी दिन की, मग़रिब किसी दिन की, और उसको ये न याद रहे कि पहले कौन सी क़ज़ा हुई थी तो इस सूरत में उनकी आपस की तरतीब साक़ित हो जाएगी, जिसको चाहे पहले अदा करे चाहे पहले ज़ुहर की क़ज़ा पढ़े या अस्र की या मग़रिब की। (शामी)

मस्अला: अगर नमाज़ शुरू करते वक़्त क़ज़ा नमाज़ का ख़्याल न था, बाद शुरू करने के ख़्याल आया तो अगर क़ब्ल क़अदए अख़ीरा में अत्तहीयात पढ़ने के या बाद अत्तहीयात पढ़ने के मगर क़ब्ल सलाम के ये ख़्याल आ जाए तो वह नमाज़ उसकी नफ़्ल हो जाएगी और फ़र्ज़ उसको फिर पढ़ना होगा। (शामी)

मस्अला: अगर किसी शख़्स को वजूबे तरतीब का इल्म न हो यानी ये न जानता हो कि पहले क़ज़ा नमाज़ों को बग़ैर पढ़े हुए वक़्ती नमाज़ों को न पढ़ना चाहिए तो उसका ये जेह्ल भी निस्यान के हुक्म में रखा जाएगा और तरतीब उससे साक़ित हो जाएगी। (दुर्रेमुख़्तार)

दूसरी सूरत: वक़्त का तंग हो जाना। अगर किसी के ज़िम्मा कोई क़ज़ा नमाज़ हो और वक़्ती नमाज़ ऐसे तंग वक़्त पढ़े जिसमें सिर्फ़ एक नमाज़ की गुंजाइश हो ख़्वाह उस वक़्ती नमाज़ को पढ़ ले या उस क़ज़ा को तो इस सूरत में तरतीब साक़ित हो जाएगी और बग़ैर उस क़ज़ा के पढ़े हुए वक़्ती नमाज़ का पढ़ना उस शख़्स के लिए दुरुस्त होगा। अस्र की नमाज़ में वक़्ते मुस्तहब का एतेबार किया गया है। यानी अगर मुस्तहब वक़्त में सिर्फ़ उसी क़द्र गुंजाइश हो कि सिर्फ़ अस्र का फ़र्ज़ पढ़ा जा सकता हो, उससे ज़्यादा की गुंजाइश न हो तो तरतीब

साकित हो जाएगी अगरचे अस्ल वक़्त में गुंजाइश हो इसलिए कि बाद आफ़ताब ज़र्द हो जाने के नमाज़ मकरूह है। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–123, फ़तावा दारुलउलूम सफ़्हा–353, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–138)

मस्अला: अगर किसी के ज़िम्मा कई नमाज़ों की क़ज़ा हो और वक़्त में सब की गुंजाइश न हो बाज़ की गुंजाइश हो तब भी सहीह ये है कि तरतीब साक़ित हो जाएगी और उस पर ये ज़रूरी न होगा कि जिस क़द्र क़ज़ा नमाज़ों की गुंजाइश वक़्त में हो पहले उनको अदा कर ले उसके बाद वक़्ती नमाज़ पढ़े, मसलन किसी की इशा की नमाज़ क़ज़ा हुई थी और फ़ज्र को ऐसे तंग वक़्त में उठा कि सिर्फ़ पाँच रकअ़त की गुंजाइश हो तो उस पर ये ज़रूरी नहीं कि पहले वित्र पढ़ ले, तब सुब्ह की नमाज़ पढ़े, बल्कि बे वित्र अदा किए हुए भी अगर सुब्ह के फ़र्ज़ पढ़ेगा तो दुरुस्त है।

तीसरी सूरत: क़ज़ा नमाज़ों का पाँच से ज़्यादा हो जाना। वित्र का हिसाब उन पाँच में नहीं है और वह भी मिला ली जाए तो यूँ कहेंगे कि छः से ज़्यादा होना, ये क़ज़ा नमाज़ें ख़्वाह हक़ीक़तन क़ज़ा हों जैसे वह नमाज़ें जो अपने वक़्त मे न पढ़ी जाएँ या हुक्मन क़ज़ा हों जैसे वह नमाज़ें जो किसी क़ज़ा नमाज़ के बाद बावजूद तरतीब वाजिब होने के बे उसके अदा किए हुए पढ़ ली जाएँ मसलन किसी से फ़ज्र की नमाज़ क़ज़ा हुई हो और ज़ुहर की नमाज़ बे उसके अदा किए हुए बावजूद याद होने के और वक़्त में गुंजाइश के पढ़ ले तो ये ज़ुहर की नमाज़ हुक्मन क़ज़ा में शुमार होगी, उसके बाद अस्र

की नमाज़ भी हुकमन कज़ा समझी जाएगी। अगर बेअदा किए हुए उन दोनों नमाज़ों के, बावजूद याद होने के और वक़्त में गुंजाइश के पढ़ ले, तो ये ज़ुहर की नमाज़ हुकमन कज़ा में शुमार होगी, उसके बाद अस्र की नमाज़ भी हुकमन कज़ा समझी जाएगी, अगर बे अदा किए हुए उन दोनों नमाज़ों के बावजूद याद होने के और वक़्त में गुंजाइश के पढ़लें। इसी तरह मग़रिब और इशा की भी फिर जब दूसरे दिन की फ़ज्र पढ़ेगा तो चूंकि उससे पहले कज़ा नमाज़ें पाँच हो चुकी थीं एक हक़ीक़तन और चार हुक्मन। लिहाज़ा अब उसके ऊपर तरतीब वाजिब न थी और ये फ़ज्र की नमाज़ उसकी सहीह होगी।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–123, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4, सफ़्हा–353, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–137, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–666)

तरतीब कब तक रहती है?

मस्अला: पाँच नमाज़ों तक तरतीब बाक़ी रहती है अगरचे वह मुख़्तलिफ़ औक़ात में क़ज़ा हुई हों और ज़माना भी बहुत गुज़र चुका हो, मसलन किसी की कोई क़ज़ा नमाज़ हुई थी और वह उसको याद न रही, चंद रोज़ के बाद फिर उसकी कोई नमाज़ क़ज़ा हो गई और उसका भी ख़्याल उसको न रहा फिर चंद रोज़ के बाद उसकी कोई नमाज़ क़ज़ा हुई और उसका भी उसको ख़्याल न रहा, फिर चंद रोज़ के बाद उसकी कोई नमाज़ क़ज़ा हुई और उसका भी उसको ख़्याल न रहा, फिर चंद रोज़ के

बाद और कोई नमाज़ क़ज़ा हुई और वह भी उसको याद न रही, तो अब ये पाँच नमाज़ें हुई अब तक उनमें तरतीब वाजिब है, यानी उनके याद होते हुए बावजूद वक़्त में गुंजाइश के वक़्ती फ़र्ज़ अगर पढ़ेगा तो वह सहीह न होगी और नफ़्ल हो जाएगी।

(दुर्रेमुख़्तार, रद्दुलमुहतार)

तरतीब ख़त्म होने के बाद का हुक्म

मस्अला:- तरतीब साक़ित हो जाने के बाद फिर औद नहीं करती, मसलन किसी की क़ज़ा नमाज़ें पाँच से ज़्यादा हो जाएँ और उस सबब से उसकी तरतीब साक़ित हो जाए बाद उसके वह अपनी क़ज़ा नमाज़ों को अदा करना शुरू करे, यहाँ तक कि अदा करते करते पाँच रह जाएँ तो अब वह साहबे तरतीब न होगा और बग़ैर उनके अदा किए हुए बावजूद याद होने के और वक़्त में गुंजाइश के जो फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ेगा वह सहीह होगी।

अगर किसी की कोई नमाज़ क़ज़ा हो गई हो और उसके बाद उसने पाँच नमाज़ें और पढ़ ली हों और उस क़ज़ा नमाज़ को बावजूद याद होने के और वक़्त में गुंजाइश के न पढ़ा हो तो पाँचवीं नमाज़ का वक़्त गुज़र जाने के बाद ये पाँचों नमाज़ें उसकी सहीह हो जाएँगी, यानी फ़र्ज़ रहेंगी इसलिए कि ये पाँच नमाज़ें हुकमन क़ज़ा हैं और वह एक हक़ीक़तन क़ज़ा सब मिल कर पाँच से ज़्यादा हो गईं, लिहाज़ा उनमें तरतीब साक़ित हो गई और उनका अदा करना ख़िलाफ़े तरतीब दुरुस्त हो गया।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़हा–123)

मस्अला: अगर किसी की नमाज़ें हालते सफ़र में क़ज़ा हुई हों और इक़ामत की हालत में उनको अदा करे तो क़स्र के साथ क़ज़ा करना चाहिए, यानी चार रकअ़त वाली नमाज़ की दो रकअ़त, इसी तरह हालते इक़ामत में जो नमाज़ें क़ज़ा हुई थीं उनकी क़ज़ा हालते सफ़र में पढ़े तो पूरी चार रकअ़तें पढ़े, क़स्र न करे।

(दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

मस्अला: नफ़्ल नमाज़ें शुरू कर देने के बाद वाजिब हो जाती हैं, अगरचे वह किसी वक़्ते मकरूह में शुरू की जाएँ, यानी उनका तमाम करना ज़रूरी है और अगर किसी क़िस्म का फ़साद या कराहते तहरीमा उसमें आ जाए तो उनकी क़ज़ा पढ़ना वाजिब हो जाती है बशर्तेकि वह नफ़्ल क़सदन शुरू की जाए और शुरू करना उसका सहीह हो, अगर क़सदन न शुरू की जाए मसलन कोई शख़्स ये ख़्याल करे कि मैंने अभी फ़र्ज़ नमाज़ नहीं पढ़ी, फ़र्ज़ की नीयत से नमाज़ शुरू कर दे, बाद इसके उसको याद आ जाए कि मैं फ़र्ज़ पढ़ चुका था तो ये नमाज़ उसकी नफ़्ल हो जाएगी, उसका तमाम करना उस पर ज़रूरी न होगा। और अगर उस में फ़साद वग़ैरा आ जाएगा तो उसकी क़ज़ा भी उसको न पढ़ना पड़ेगी। इसी तरह अगर कोई क़अ़दए अख़ीरा में सहवन खड़ा हो जाए और दो रकअ़तें पढ़ ले तो ये दो रकअ़तें उसकी नफ़्ल हो जाएँगी। और चूँकि क़सदन नहीं शुरू की गई इसलिए उनका तमाम करना उस पर ज़रूरी नहीं, न फ़ासिद हो जाने की सूरत में उसकी क़ज़ा ज़रूरी है। और अगर

शुरू करना सहीह न हो तब भी उसका तमाम करना और फ़ासिद हो जाने की सूरत में उसकी कज़ा न करना होगी। मसलन कोई मर्द किसी औरत की इक़्तिदा में नफ़्ल नमाज़ शुरू करे तो ये शुरू करना ही उसका सहीह न होगा।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़हा–124)

मस्अला: अगर नफ़्ल नमाज़ शुरू कर देने के बाद फ़ासिद कर दी जाए तो सिर्फ़ दो रकअतों की कज़ा वाजिब होगी, अगरचे नीयत दो रकअत से ज़्यादा की हों, इसलिए कि नफ़्ल का हर शुफ़अ यानी हर दो रकअतें अलाहिदा नमाज़ का हुक्म रखती हैं।

मस्अला: अगर कोई शख़्स चार रकअत नफ़्ल की नीयत करे और उसके दोनों शुफ़अ में क़िराअत न करे या पहले शुफ़अ में क़िराअत न करे या दूसरे में न करे या सिर्फ़ पहले शुफ़अ की एक रकअत में न करे, या सिर्फ़ दूसरे शुफ़अ की एक रकअत में न करे या पहले शुफ़अ की दोनों रकअतों में और दूसरे शुफ़अ की एक रकअत में न करे तो इन सब छः सूरतों में दो ही रकअत की कज़ा उसके ज़िम्मा लाज़िम होगी। पहली दूसरी सूरत में सिर्फ़ पहले शुफ़अ की, इसलिए कि पहले शुफ़अ की दोनों रकअतों में क़िराअत न करने के सबब से उसकी तहरीमा फ़ासिद हो गई और दूसरे शुफ़अ की बिना उस पर सहीह न होगी गोया दूसरा शुफ़अ शुरू ही नहीं किया गया, पस उसकी कज़ा भी लाज़िम न होगी। तीसरी सूरत में सिर्फ़ दूसरे शुफ़अ की इस सबब से कि पहले शुफ़अ में कुछ फ़साद नहीं आया, फ़साद सिर्फ़ दूसरे शुफ़अ में आया है दूसरा शुफ़अ बिल्कुल सहीह है। पाँचवीं सूरत में सिर्फ़

दूसरे शुफ़्अ की इसलिए कि फ़साद सिर्फ़ उसमें आया है। पहला शुफ़्अ बिल्कुल सहीह है। छटी सूरत में सिर्फ़ पहले शुफ़्अ की इसलिए कि पहले शुफ़्अ की दोनों रकअ़तों में किराअत न करने के सबब से उसकी तहरीमा फ़ासिद हो जाएगी और दूसरे शुफ़्अ की बिना उस पर सहीह न होगी, लिहाज़ा उसकी कज़ा भी उसके ज़िम्मा लाज़िम न होगी।

मस्अला: अगर कोई शख़्स चार रकअ़त नफ़्ल की नीयत करे और हर शुफ़्अ की एक एक रकअ़त में किराअत करे, एक एक में न करे, या पहले शुफ़्अ की एक और दूसरे की दोनों रकअ़तों में न करे तो इन दोनों सूरतों में चार रकअ़त की कज़ा पढ़ना होगी इसलिए कि इन दोनों सूरतों में पहले शुफ़्अ की तहरीमा फ़ासिद नहीं हुई, लिहाज़ा दूसरे शुफ़्अ की बिना उस पर सहीह होगी और फ़साद दोनों शुफ़्ओं में आया है।

(इल्मुलफ़िक्ह जिल्द–2 सफ़्हा–125 व किताबुलफ़िक्ह जिल्द–1 सफ़्हा–494)

मस्अला: हैज़ व निफ़्फ़ास की हालत में जो नमाज़ें न पढ़ी जाएँ वह मआफ़ हैं उनकी क़ज़ा न करनी चाहिए, हाँ अगर हैज़ व निफ़्फ़ास से किसी ऐसे वक़्त में फ़रागत हासिल हो जाए कि उसमें तहरीमा की भी गुंजाइश हो तो उस वक़्त के नमाज़ की क़ज़ा उसको पढ़ना होगी, और अगर वक़्त में ज़्यादा गुंजाइश हो तो उसी वक़्त उस नमाज़ को पढ़ले, अगरचे पढ़ चुकी हो, इसलिए कि इससे पहले उस पर नमाज़ फ़र्ज़ न थी, अब फ़र्ज़ हुई है इससे पहले पढ़ने का कुछ एतेबार नहीं है, यानी फ़र्ज़ नहीं साक़ित हो सकता। इसी तरह अगर कोई नाबालिग़ ऐसे

वक़्त में बालिग़ हो तो उसको भी उस वक़्त के नमाज़ की क़ज़ा पढ़ना होगी। इस मस्अले की तफ़सील हैज़ के ब्यान में है।

इसी तरह अगर कोई लड़का इशा की नमाज़ पढ़ कर सोए और बाद तुलूअे फ़ज्र के बेदार होकर मनी का असर देखे, जिससे मालूम हो कि उसको एहतेलाम हो गया है तो उसको चाहिए कि इशा की नमाज़ का इआ़दा करे। (फ़तावा क़ाज़ी ख़ाँ)

मस्अलाः अगर किसी औरत को आख़िर वक़्त में हैज़ या निफ़्फ़ास आ जाए और अभी तक उसने नमाज़ न पढ़ी हो तो उस वक़्त की नमाज़ उससे मआ़फ़ है, उसकी क़ज़ा उसको न करना होगी।

(शरह वक़ाया वग़ैरा, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–125, किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–789)

मस्अलाः अगर किसी को जुनून या बेहोशी तारी हो जाए और छः नमाज़ों के वक़्त तक रहे तो उसके ज़िम्मा उन नमाज़ों की क़ज़ा नहीं, वह नमाज़ें मआ़फ़ हैं, हाँ अगर पाँच नमाज़ों तक बेहोशी रहे और छटी नमाज़ में उसको होश आ जाए तो उन नमाज़ों की क़ज़ा उसको करना होगी।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–125, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–110, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–118, कबीरी जिल्द–1 सफ़्हा–263, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–439, किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–788)

मस्अलाः जो काफ़िर दारुलहर्ब में इस्लाम लाए और मसाइल न जानने के सबब से नमाज़ न पढ़े तो जितने

दिन वहाँ रहने के सबब से उसकी नमाज़ें गई हों, उन नमाज़ों की क़ज़ा उसके ज़िम्मे हैं। (दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

मस्अला: अगर किसी की बहुत नमाज़ें क़ज़ा हो चुकी हों और उनको अदा करना चाहे तो क़ज़ा के वक़्त उनका तअैयुन ज़रूरी है, इस तरह कि मैं उस फ़ज्र की क़ज़ा पढ़ता हूँ कि जो सब के अख़ीर में मुझ से क़ज़ा हुई है, फिर उसके बाद ये नीयत करे कि मैं उस फ़ज्र की क़ज़ा पढ़ता हूँ जो इससे पहले मुझ से क़ज़ा हुई थी, इस तरह जुहर, अस्र वग़ैरा की नमाज़ में भी तअैयुन कर ले।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़हा–126)

नमाज़ पढ़ने के बाद दोबारा उसी नमाज़ को पढ़ना?

मस्अला: अगर कोई शख़्स तन्हा नमाज़ पढ़ने लगा और वह नमाज़ अदा की है यानी उसी वक़्त की। न क़ज़ा की नमाज़ है और न नज़्र, और न नफ़्ली नमाज़ है, फिर जमाअ़त खड़ी हो गई तो मुस्तहब ये है कि उस नमाज़ को एक सलाम फेर कर तोड़ दे ताकि जमाअ़त में शामिल हो जाने की फ़ज़ीलत हासिल हो जाए। और ये हुक्म उस सूरत में है जबकि अभी तक उस नमाज़ में सज्दा न किया गया हो।

मस्अला: अगर किसी ने जुहर, अस्र, मग़रिब या इशा की नमाज़ तन्हा पढ़ी या जमाअ़त के साथ अदा की और फिर उसी नमाज़ के लिए जमाअ़त खड़ी हो गई तो उस तन्हा पढ़नें वाले या जमाअ़त के साथ नमाज़ पढ़ने वाले को इमाम के साथ शामिल होकर दोबारा नमाज़ अदा

करनां जाइज़ है, लेकिन ये दूसरी नमाज़ नफ़्ल होगी, औरन ऐसा करना उस सूरत में जाइज़ है, जबकि इमाम फ़र्ज़ पढ़ा रहा हो, नफ़्ल नहीं। क्योंकि फ़र्ज़ पढ़ने वाले के पीछे नफ़्ल नमाज़ मकरूह नहीं है। अलबत्ता नफ़्ल नमाज़ (दोबारा) नफ़्ल नमाज़ की जमाअत में मकरूह है। बशर्तेकि वह जमाअत तीन आदमियों से ज़्यादा की हो। जैसा कि नवाफ़िल की जमाअत के ब्यान में मसाइले तरावीह सफ़्हा–117 पर गुज़रा है लिहाज़ा कुछ लोगों ने जमाअत से नमाज़ अदा कर ली, फिर उन्होंने उसी नमाज़ को जमाअत के साथ पढ़ा, और जमाअत तीन आदमियों से ज़्यादा की है तो ये फ़ेल मकरूह है, हाँ अगर इससे कम हों तो मकरूह नहीं है, बशर्तेकि उसको बग़ैर अज़ान के पढ़ा जाए। अज़ान के साथ नमाज़ में दोबारा पढ़ना बहरहाल मकरूह है और जब ये मालूम हो कि दूसरी नमाज़ नफ़्ल है तो उसमें नमाज़ की हैसियत मकरूह औक़ात में नफ़्ल पढ़ने की सी होगी, लिहाज़ा फ़ज्र व अस्र की नमाज़ों को दोहराना जाइज़ नहीं है, क्योंकि अस्र के बाद नफ़्ल नमाज़ पढ़ने की मुमानअत है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–697)

मस्अलाः क़ज़ा नमाज़ जमाअत के साथ पढ़ना मसनून है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–346, बहवाला मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–67)

मसालः जो नमाज़ तन्हा मस्जिद में क़ज़ा पढ़े तो उसके लिए अज़ान व इक़ामत मशरूअ नहीं है और न वित्र के लिए। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–344, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–356, बाबुलअज़ान)

मस्अला: अगर क़ज़ा नमाज़ में जमाअ़त हो तो पहली नमाज़ के लिए अज़ान और इक़ामत कही जाए और बाक़ी के लिए इख़्तियार है कहे या न कहे और इक़ामत तो सबके लिए कही जाए। (जमाअ़त के लिए)

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–360)

मस्अला: क़ज़ा के अदा करने की आसान सूरत ये है कि हर एक नमाज़ के साथ वही नमाज़ क़ज़ा करे। जिस क़दर बरसों की नमाज़ फ़ौत हुई उतने बरसों तक हर एक नमाज़ के साथ वही नमाज़ क़ज़ा पढ़े।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–345)

क़ज़ा नमाज़ों में ताख़ीर की गुंजाइश

मस्अला: फ़ौत शुदा बहुत सारी नमाज़ें जो किसी के ज़िम्मा वाजिब हैं गो उसके लिए वाजिब ये है कि फ़ौरन अदा की जाएँ, लेकिन उज़्र की वजह से उन नमाज़ों को देर से अदा करना जाइज़ है, जिस तरह और जितनी फ़ुरसत मिले थोड़ा थोड़ा कर के अदा कर सकता है, अलबत्ता छोड़ना नहीं चाहिए।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–675)

फ़ौत शुदा नमाज़ की नीयत

मस्अला: फ़ौत शुदा नमाज़ें किसी के ज़िम्मा ज़्यादा तादाद में हो गई हों तो नीयत में इस तरह कहे कि पहली नमाज़े ज़ुहर अदा कर रहा है जो उसके ज़िम्मा

थी, फिर उसके बाद दूसरी जुहर का नाम ले।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–676)

अगर मरने से पहले क़ज़ा नमाज़ अदा न कर सका?

सवालः अगर क़ज़ा नमाज़ अदा करने की नौबत न आए कि मरज़ुलमौत में गिरफ़्तार हो जाए और फ़िदया की ताक़त न हो तो मुवाख़ज़ा से बरी होने की क्या सूरत है?

जवाबः फ़ौत शुदा नमाज़ों का अदा करना या फ़िदया देना भी (मरने के बाद) मूजिबे सुकूते अज़ाब हो सकता है। बाक़ी अल्लाह तआला की मशीयत पर है जैसा कि फ़रमायाः "وَيَغْفِرُ مَا دُوْنَ ذَالِكَ لِمَنْ يَشَاءُ"

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–362)

मस्अलाः अगर क़ज़ा नमाज़ें बकसरत हों जिनका शुमार करना दुश्वार हो तो चाहिए कि ख़ूब सोच समझ कर एक सहीह तख़मीना करे, मसलन चौदा या पन्द्रह साल की उम्र में बालिग़ हो और चार पाँच साल तक नमाज़ें नहीं पढ़ीं या कभी पढ़ी और कभी छोड़ दी और ये सूरत उस शख़्स के अंदाज़ा में मसलन चार साल की हुई तो उस शख़्स को अपने ज़ोअम (गुमान) के मुताबिक़ उस क़दर नमाज़ों को अदा करना चाहिए।

आख़िर दुनिया में किसी शख़्स का क़र्ज़ ज़िम्मा हो और तादाद याद न हो तो अंदाज़ा व तख़मीना से ही उसको अदा करते हैं कि उसका कुछ ज़िम्मा बाक़ी न रहे। ऐसे ही सोच कर कि किस क़दर दिनों की नमाज़ें क़ज़ा हुई हैं, उनको अदा करना चाहिए और मुनासिब ये

है कि जिस क़दर हो सके ज़ाएद पढ़े कि सरासर नफ़ा ही नफ़ा है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–353, हिदाया सफ़्हा–138, बाब क़ज़ा)

क़ज़ा नमाज़ों का फ़िदया कब अदा किया जाए?

मस्अला: ज़िन्दगी में तो नमाज़ का फ़िदया अदा नहीं किया जा सकता, बल्कि क़ज़ा नमाज़ों को अदा करना ही लाज़िम है, अलबत्ता अगर कोई शख़्स उसी हालत में मर जाए कि उसके ज़िम्मा क़ज़ा हों तो हर नमाज़ का फ़िदया सदक़ए फ़ित्र की तरह पौने दो सेर ग़ल्ला है। फ़िदया अदा करने के दिन की क़ीमत का एतेबार है, उस दिन ग़ल्ला की जो क़ीमत हो, उसके हिसाब से फ़िदया अदा किया जाए, और चूंकि वित्र एक मुस्तक़िल नमाज़ है इसलिए दिन रात की छः नमाज़ें होती है, और एक दिन की नमाज़ क़ज़ा होने पर छः सदक़े लाज़िम हैं। मैयत ने अगर उससे वसीअत की हो, तब तो तिहाई माल से ये फ़िदया अदा करना वाजिब है। और अगर वसीअत न की हो तो वारिसों के ज़िम्मा वाजिब नहीं। अलबत्ता तमाम वारिस आक़िल व बालिग़ हों और वह अपनी अपनी खुशी से फ़िदया अदा करें, तो तवक़्क़ो है कि मैयत का बोझ उतर जाएगा। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–359)

क़ज़ा नमाज़ किस वक़्त पढ़नी नाजाइज़ है?

मस्अला: तीन औक़ात ऐसे हैं कि जिनमें कोई नमाज़

भी जाइज़ नहीं, न क़ज़ा न नफ़्ल:

(1) सूरज तुलूअ होने के वक़्त, यहाँ तक कि सूरज बुलंद हो जाए, और धूप की ज़र्दी जाती रहे।

(2) गुरूब से पहले जब सूरज की धूप ज़र्द हो जाए, उस वक़्त से लेकर गुरूबे आफ़ताब तक। (अलबत्ता अगर उस दिन अस्र की नमाज़ न पढ़ी हो तो उस वक़्त भी पढ़ लेना ज़रूरी है, नमाज़ का क़ज़ा कर देना अच्छा नहीं)

(3) निस्फ़ुन्नहार (ज़वाल) के वक़्त, यहाँ तक कि सूरज ढल जाए।

इन तीन औक़ात में कोई भी नमाज़ जाइज़ नहीं। इनके अवाला तीन औक़ात और हैं, जिनमें नफ़्ल नमाज़ जाइज़ नहीं। क़ज़ा नमाज़ और सज्दए तिलावत की इजाज़त है:

(1) सुब्ह सादिक़ के बाद नमाज़े फ़ज्र से पहले सिर्फ़ सुन्नत पढ़ी जाती है, उसके अलावा कोई नफ़्ल नमाज़ उस वक़्त जाइज़ नहीं।

(2) फ़ज्र की नमाज़ के बाद तुलूए आफ़ताब तक।

(3) अस्र की नमाज़ के बाद गुरूब (से पहले धूप ज़र्द होने) तक।

इन तीन औक़ात में नवाफ़िल की इजाज़त नहीं, न तहीयतुलमस्जिद, न तहीयतुलवुज़ू न दो गाना तवाफ़, अलबत्ता क़ज़ा नमाज़ उन औक़ात में जाइज़ है, लेकिन ये ज़रूरी है कि उन औक़ात में क़ज़ा नमाज़ लोगों के सामने न पढ़ी जाए, बल्कि तन्हाई में पढ़े।

(आपके मसाइल जिल्द–4 सफ़्हा–354)

मस्अला: जिस शख़्स के ज़िम्मा क़ज़ा नमाज़ें हों, उसको नवाफ़िल के बजाए क़ज़ा नमाज़ें पढ़नी चाहिएँ, ख़्वाह जागने

वाली रातों (शबेबराअत व शबेक़द्र) में पढ़े।

(आप के साइल जिल्द–3 सफ़्हा–356)

मैयत की तरफ़ से नमाज़ रोज़ा अदा करना

मस्अला: अगर मैयत के वारिसीन उसके हुक्म से उसकी फ़ौत शुदा नमाज़ों की क़ज़ा करें तो ये नमाज़ें उसकी तरफ़ से दुरुस्त नहीं होंगी, इसलिए कि नमाज़ इबादते बदनी है जिसके लिए हर मुकल्लफ़ को हुक्म है कि वह खुद अदा करे, दूसरे के अदा करने से उसकी तरफ़ से अदा नहीं होती है, बरख़िलाफ़ हज के उसमें वह नियाबत को क़बूल करता है, यानी अगर वारिस मैयत की तरफ़ से हज कर देगा तो उसके ज़िम्मा से फ़र्ज़ साक़ित हो जाएगा, अगरचे मैयत ने उसकी वसीअत न की हो।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–673, इमदादुलअहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–668)

मरज़ुलमौत में खुद फ़िदया देना?

मस्अला: मैयत अगर अपने मरज़ुलमौत में खुद अपनी नमाज़ का फ़िदया देगा तो ये दुरुस्त नहीं होगा, लिहाज़ा उस पर वाजिब ये है कि वह वसीअ़त कर जाए, अलबत्ता रोज़ा का फ़िदया खुद अपनी तरफ़ से अपने मरज़ुलमौत में दे देगा तो ये जाइज़ होगा, मगर उसकी सेहत उसकी मौत के बाद साबित होगी।

मस्अला: नमाज़, रोज़ा के कफ़्फ़ारा में कुल फ़िदया

की रक़म एक फ़क़ीर (हाजत मंद, जो साहबे निसाब न हो) को देना भी दुरुस्त है, और किसी को भी दे सकता है।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–674)

अगर मुर्तद फिर इस्लाम क़बूल कर ले तो वह नमाज़ें कैसे पढ़ेगा?

मस्अलाः जो लोग मुर्तद हो गए हों (इस्लाम से फिर गए हों) और फिर इस्लाम क़बूल कर लिया हो वह ज़मानए रिद्दत की उन नमाज़ों की क़ज़ा नहीं पढ़ेंगे जो उन्होंने छोड़ दी थीं और उन पर ज़मानए रिद्दत के पहले की नमाज़ों की क़ज़ा नहीं है, इसलिए कि वह मुर्तद होने की वजह से अस्ल काफ़िर की तरह हो जाता है, तो जिस तरह काफ़िर पर असली ज़मानए कुफ़्र के वक़्त की नमाज़ों की क़ज़ा नहीं है, उसी तरह उस पर भी नहीं है, अलबत्ता हज की क़ज़ा करेगा, यानी उसका लौटाना ज़रूरी होगा।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–675)

रात में बालिग़ होने से इशा की क़ज़ा

मस्अलाः एक नाबालिग़ इशा की नमाज़ पढ़ने के बाद सोया, नींद में उसको एहतेलाम हुआ, अब फ़ज्र के बाद वह जागा तो उसके लिए लाज़िम है कि वह इशा की नमाज़ की क़ज़ा पढ़े इसलिए कि वह सोने से पहले नाबालिग़ था, और इशा की नमाज़ उस हालत में पढ़ी थी तो वह नफ़्ल के दरजे में हुई, अब जब रात को

एहतेलाम हुआ तो उससे मालूम हो गया कि वह रात ही में बालिग़ हो गया, लिहाज़ा इशा की नमाज़ बुलूग़ के बाद उस पर फ़र्ज़ होगी, गो वह उस वक़्त सोया हुआ था, मगर सोना ख़िताबे शरई के लिए मानेअ़ नहीं है, तो अब वह फ़ज्र के बाद जब जागा है तो उसके लिए फ़र्ज़ है कि गुस्ल करने के बाद इशा की नमाज़ की क़ज़ा पढ़े।

मस्अला: मरीज़ ने बीमारी में तयम्मुम कर के इशारा से वह नमाज़ पढ़ी जो उसकी सेहत के ज़माना में फ़ौत हो गई थी तो उससे उसकी ये नमाज़ दुरुस्त होगी, तंदरुस्त होने के बाद उस नमाज़ को दोबारा नहीं पढ़ेगा।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–676)

क्या क़ज़ा नमाज़ें छिप कर अदा की जाएँ?

मस्अला: मुनासिब ये है कि जो शख़्स नमाज़ों की क़ज़ा पढ़े, उस पर दूसरों को मुत्तला न होने दे, यानी क़ज़ा नमाज़ें छिप कर पोशीदा तौर पर पढ़े, और ये इस वजह से कि नमाज़ को उसके वक़्त से टालना मासियत है और गुनाह व मासियत को ज़ाहिर नहीं कर सकता है, ये बुरी बात है। चुनांचे शामी में है क़ज़ा नमाज़ अलल ऐलान पढ़ना मकरूहे तहरीमी है।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–677)

मस्अला: क़ज़ा नमाज़, अदा नमाज़ के मुशाबेह है, सफ़र में भी और इक़ामत में भी, इस वजह से कि क़ज़ा हो जानो के बाद वह मुतग़ैयर नहीं होती है, यानी अगर सफ़र में नमाज़ क़ज़ा हो गई थी तो हालते इक़ामत में

उसको पढ़ेगा और इसी तरह जो नमाज़ हालते इक़ामते में क़ज़ा हुई है और उसने उसको हालते सफ़र में अदा की तो पूरी नमाज़ पढ़ेगा, इसलिए कि नमाज़ जिस तरह वाजिब होती है वक़्त के बाद उसी तरह अदा की जाती है उसमें रद्दोबदल नहीं हुआ करता है, अलबत्ता वक़्त के अन्दर नीयत के बदल जाने से नमाज़ बदल जाती है, मसलन मुसाफ़िर था, वक़्त के अन्दर इक़ामत (ठहरने) की नीयत कर ली तो अब पूरी नमाज़ पढ़ेगा, इसी तरह मुक़ीम था और वक़्त के अन्दर सफ़र की नीयत कर ली और अपनी आबादी से बाहर निकल गया तो क़स्र पढ़ेगा, या मुसाफ़िर था, उसने किसी मुक़ीम इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ी तो अब पूरी नमाज़ पढ़ेगा।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–748)

मस्अला: अगर क़स्र पढ़ता रहा, बाद में मालूम हुआ कि वह मुसाफ़िर नहीं है, तो उन नमाज़ों की क़ज़ा करना ज़रूरी है, मसलन जितने दिनों की नमाज़ क़स्र पढ़ी उनको शुमार कर के वह सब नमाज़ें मअ़ वित्र के क़ज़ा करें और सुन्नतों की क़ज़ा नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–333)

क्योंकि जब नमाज़ ही नहीं हुई तो क़ज़ा करनी होगी। (तफ़सील देखिए) अहक़र मुरत्तबत कर्दा किताब ''मसाइले सफ़र''। (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

सुन्नतों और नवाफ़िल का ब्यान

दिन रात में पाँच नमाज़ें तो फ़र्ज़ की गई हैं और वह

गोया इस्लाम का रुक्ने रकीन और लाज़िमए ईमान हैं, उनके अलावा उनके आगे पीछे और दूसरे औक़ात में भी कुछ रकअ़तें पढ़ने की तरग़ीब व तालीम रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने दी है, फिर उनमें से जिन के लिए आप (स.अ.व.) ने ताकीदी अलफ़ाज़ फ़रमाए या दूसरों को तरग़ीब देने के साथ साथ जिनका आप ने अमलन बहुत ज़्यादा एहतेमाम फ़रमाया, उनको उर्फ़े आम में "सुन्नत" कहा जाता है और उनके अलावा को "नवाफ़िल" कहा जाता है।

नवाफ़िल के अस्ल माना ज़वाइद के हैं, और हदीसों में फ़र्ज़ नमाज़ों के अलावा बाक़ी सब नमज़ों को नवाफ़िल कहा गया है।

फिर जिन सुन्नतों या नफ़्लों को फ़र्ज़ों से पहले पढ़ने की तालीम दी गई है, बज़ाहिर उनकी ख़ास हिकमत और मसलिहत ये है कि फ़र्ज़ नमाज़ जो अल्लाह तआ़ला के दरबारे आ़ली की ख़ासुलख़ास हुज़ूरी है उसमें मशग़ूल रहने से पहले इन्फ़िरादी तौर पर दो चार रकअ़तें पढ़ कर दिल को उस दरबार से आशना और मानूस कर लिया जाए और मलाए आला से एक कुर्ब व मुनासबत पैदा कर ली जाए।

और जिन सुन्नतों या नफ़्लों को फ़र्ज़ों के बाद पढ़ने की तालीम दी गई है। उनकी हिकमत और मसलिहत बज़ाहिर ये मालूम होती है कि फ़र्ज़ों की अदाएगी में जो क़ुसूर रह गया हो उसका तदारुक बाद वाली इन सुन्नतों और नफ़्लों से हो जाए।

फ़र्ज़ों के आगे या पीछे वाले सुनन व नवाफ़िल के अ़लावा जिन नवाफ़िल की मुस्तक़िल हैसियत है मसलन

उनमें चाश्त और रात में तहज्जुद ये दरअस्ल तक़र्रुब इलल्लाह के ख़ास तालिबीन के लिए तरक्क़ी और तख़स्सुस व मख़सूस निसाब है।

(मारिफुल हदीस जिल्द–3 सफ़्हा–320 व मज़ाहिरे हक़ जिल्द–2 सफ़्हा–112 व इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–40)

नवाफ़िल का एक ख़ास फ़ाएदा

आँ हज़रत (स.अ.व.) का फ़रमान है कि क़यामत के दिन बंदे के आमाल में से सब से पहले नमाज़ का हिसाब होगा और उसकी नमाज़ की जाँच की जाएगी, पस अगर वह ठीक निकली तो बंदा फ़लाह याब और कामियाब हो जाएगा और अगर वह ख़राब निकली तो बंदा नाकाम व नामुराद हो जाएगा, फिर अगर उसके फ़राएज़ में कमी कस्र हुई तो रब्बे करीम फ़रमाएगा कि देखो क्या चीज़ बंदा के ज़ख़ीरए आमाल में फ़राइज़ के अलावा कुछ नेकियाँ (सुन्नतें या नवाफ़िल) हैं? ताकि उसके फ़राएज़ की कमी व क़स्र को पूरी कर सके। फिर नमाज़ के अवाला बाक़ी आमाल का हिसाब भी उसी तरह होगा।

(मआरिफुल हदीस जिल्द–3 सफ़्हा–374)

सुन्नत पढ़ने का तरीक़ा और तादाद

नफ़्ल नमाज़ों के पढ़ने का भी वही तरीक़ा है जो फ़र्ज़ का है, फ़र्क़ सिर्फ़ इस क़दर है कि फ़राइज़ की सिर्फ़ दो रकअतों में सूरए फ़ातिहा के बाद दूसरी सूरत

पढ़ने का हुक्म है और नवाफ़िल और सुन्नतों की सब रकअतों में जो सूरतें पढ़ी जाएँ उनका बराबर न होना भी ख़िलाफ़े सुन्नत नहीं है।

नवाफ़िल दिन में दो रकअ़त तक और रात में चार रकअ़त तक एक ही सलाम से पढ़ी जा सकती हैं, मगर हर दो रकअ़त के बाद अत्तहीयात पढ़नी चाहिए।

फ़ज्र के वक़्त फ़र्ज़ से पहले दो रकअ़त सुन्नते मुअक्कदा हैं, उनकी ताकीद तमाम मुअक्कदा सुन्नतों से ज़्यादा है, यहाँ तक कि बाज़ रिवायात में इमाम साहब से उनका वुजूब मन्कूल है।

हुज़ूर (स.अ.व.) का इरशादे मुबारक है कि फ़ज्र की सुन्नतें न छोड़ो चाहे तुम को घोड़े कुचल डालें, यानी जान जाने का ख़ौफ़ हो, जब भी न छोड़ो, इससे सिर्फ़ ताकीद और तरग़ीब है वरना जान के ख़ौफ़ से तो फ़राइज़ का छोड़ना भी जाइज़ है। एक हदीस शरीफ़ में है कि फ़ज्र की सुन्नतें मेरे नज़दीक तमाम दुनिया व माफ़ीहा से बेहतर हैं।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–42, मुस्लिम शरीफ़ जिलद–1 सफ़्हा–251, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–97)

ज़ुहर के वक़्त फ़र्ज़ से पहले चार रकअ़त एक सलाम से और फ़र्ज़ के बाद दो रकअ़त सुन्नते मुअक्कदा हैं।

(मराक़ियुलफ़लाह, दुर्रेमुख़्तार, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–42, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–95, शरह नक़ाया सफ़्हा–100, कबीरी सफ़्हा–383)

जुमा के वक़्त फ़र्ज़ से पहले चार रकअ़तें एक सलाम से सुन्नते मुअक्कदा हैं और फ़र्ज़ के बाद भी चार रकअ़तें

एक सलम से। (मराक़ियुलफ़लाह)

अस्र के वक़्त कोई सुन्नते मुअक्कदा नहीं, हाँ फ़र्ज़ से पहले चार रकअतें एक सलाम से मुस्तहब हैं।

(मराक़ियुलफ़लाह, इल्मुलफ़िक़्ह सफ़हा–42, तिर्मिज़ी शरीफ़ सफ़हा–98, फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़हा–25)

मग़रिब के वक़्त फ़र्ज़ के बाद दो रकअत सुन्नते मुअक्कदा है। (इल्मुलफ़िक़्ह सफ़हा–42, मुस्लिम शरीफ़ जिल्द–1 सफ़हा–252)

इशा के वक़्त फ़र्ज़ के बाद दो रकअत सुन्नते मुअक्कदा है और फ़र्ज़ से पहले चार रकअतें एक सलाम से मुस्तहब हैं। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़हा–42, हिदाया जिल्द–1 सफ़हा–95, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़हा–10, कबीरी सफ़हा–384, अबूदाऊद सफ़हा–185, फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़हा–48, फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़हा–203)

वित्र के बाद भी दो रकअतें नबी करीम (स.अ.व.) से मन्क़ूल हैं लिहाज़ा ये दो रकअतें वित्र के बाद मुस्तहब हैं।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़हा–42, बुख़ारी शरीफ़ जिल्द–1 सफ़हा–155, इब्ने माजा सफ़हा–83)

नबी करीम (स.अ.व) ने फ़रमाया जो मुसलमान फ़राइज़ के अलावा बारह रकअतें पढ़ लिया करे उसके लिए अल्लाह तआला जन्नत में घर बनाएगा। (सहीह मुस्लिम शरीफ़)

अहादसी में इन बारह रकअतों की तफ़्सील इस तरह मन्क़ूल है: चार रकअत क़ब्ल ज़ुहर और दो रकअत उसके बाद, दो मग़रिब के बाद, दो इशा के बाद और दो क़ब्ल फ़ज्र के।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़हा–42, किताबुलफ़िक़्ह

जिल्द–1 सफ़्हा–519 ता 521, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–235)

अहादीस में पंज वक़्ती नमाज़ों से पहले या बाद सुनन व नवाफ़िल का ज़िक्र आता है, ये बहुत अहम हैं और उनकी अहमियत का अंदाज़ा क़यामत में होगा कि अल्लाह तआला फ़राइज़ की कमी को नवाफ़िल वग़ैरा से पूरा करेंगे। इसलिए उनका एहतेमाम करना चाहिए।

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अलाः अगर सुब्ह की नमाज़ शुरू हो चुकी हो, और कोई शख़्स मस्जिद मे ऐसे वक़्त आए कि उसने फ़ज्र की सुन्नतें नहीं पढ़ीं, अगर उसको एक रकअ़त मिल जाने का यक़ीन हो तो फिर वह अलग जगह पर सुन्नतें पढ़ कर जमाअ़त में शरीक हो जाए।

(हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–101, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–108, फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–47, किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–520, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–99)

मस्अलाः सुब्ह की सुन्नतें ऐन इमाम के पीछे अदा करना शदीद मकरूह है। (नमाज़ मसनून सफ़्हा–536, जामेअ़ सग़ीर सफ़्हा–12, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–101, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–108)

मसालः फ़ज्र के फ़र्ज़ों से पहले दो रकअ़तें हैं। ये सब से ज़्यादा ज़रूरी सुन्नतें हैं, उनका बैठ कर (बग़ैर मजबूरी के) या सवारी के ऊपर बिला किसी उज़्र के अदा करना जाइज़ नहीं है, उनका वक़्त वही है जो नमाज़े फ़ज्र का वक़्त है, पस अगर दोनों का वक़्त निकल जाए

तो उन सुन्नतों की क़ज़ा फिर फ़र्ज़ के साथ पढ़ी जाए, मसलन कोई सोता रहे यहाँ तक कि सूरज निकल आया तो पहले सुन्नतों की क़ज़ा फिर फ़र्ज़ क़ज़ा पढ़ी जाए और क़ज़ा पढ़ने का वक़्त ज़वाले आफ़ताब से पहले पहले है। और अगर उनमें से सिर्फ़ फ़ज्र पढ़े, फ़र्ज़ से पहले सुन्नतें नहीं पढ़ीं तो सुन्नतों की क़ज़ा न पढ़ी जाए, सिर्फ़ फ़र्ज़ पढ़े। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–520, फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–54 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–190)

मस्अला: फ़ज्र की सुन्नतों की मुसतक़िल क़ज़ा नहीं है, अलबत्ता अगर फ़ज्र के फ़र्ज़ क़ज़ा हो गए हों तो फ़ज्र के फ़र्ज़ के साथ ज़वाल से पहले पहले सुन्नतों की क़ज़ा है बाद में नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–215)

मस्अला: सुब्ह सादिक़ के बाद फ़र्ज़ों से पहले सिवाए दो सुन्नते फ़ज्र के या क़ज़ा के और नवाफ़िल पढ़ना दुरुस्त नहीं है और बाद नमाज़े फ़ज्र के सुन्नते फ़ज्र भी जाइज़ नहीं, और न कोई नवाफ़िल, और अस्र की नमाज़ के बाद भी कोई नमाज़ जाइज़ नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–71, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–347, गुनयतुलमुस्तमली सफ़्हा–237)

मस्अला: अगर ये ख़ौफ़ हो कि फ़ज्र की सुन्नत में अगर नमाज़ के सुनन और मुस्तहबात वग़ैरा की पाबंदी की जाएगी तो जमाअत नहीं मिलेगी तो ऐसी हालत में चाहिए कि सिर्फ़ (नमाज़ के) फ़राइज़ और वाजिबात पर इख़्तिसार करे सुनन वग़ैरा को छोड़े।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–99)

फ़ज्र व ज़ुहर की सुन्नतों की क़ज़ा में फ़र्क़ क्यों?

सवालः सुब्ह की दो रकअ़त सुन्नत और ज़ुहर के फ़र्ज़ से पहले की चार रकअ़त सुन्नते मुअक्कदा हैं, फिर क्या सबब है कि सुब्ह की सुन्नत की क़ज़ा सूरज निकलने के बाद पढ़े तो बेहतर है और अगर न पढ़े तो कुछ मुवाख़ज़ा नहीं और ज़ुहर की सुनन अगर क़ज़ा हो जाएँ तो फ़र्ज़ पढ़ने के बाद ज़रूरी अदा करे। वजहे फ़र्क़ क्या है?

जवाबः इसकी वजह ये है कि ज़ुहर का वक़्त बाक़ी है और सुब्ह का वक़्त सूरज निकलने के बाद बाक़ी नहीं रहता। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–72, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–331)

जमाअ़त के लिए सुन्नत पढ़ने वाले का इंतिज़ार करना?

सवालः ज़ुहर की नमाज़ दो बजे होती हे, अभी दो बजने में तीन मिनट बाक़ी थे कि एक शख़्स ने ज़ुहर की सुन्नतों की नीयत बाँध ली, तीसरी रकअ़त में दो बज गए। क्या इमाम को इतनी ताख़ीर की इजाज़त है कि वह शख़्स चार सुन्नतों को पूरी कर ले?

जवाबः इजाज़त इस क़दर की है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–47, बहवाला आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–53)

ताख़ीर से आने वालों को चाहिए कि वह वक़्ते मुक़र्ररा का ख़्याल रखते हुए सुन्नतें पढ़ें या अलग हिस्सा में सुन्नतें अदा की जाएँ ताकि किसी को परेशानी न हो, और अच्छा तो यही है कि सनन व नवाफ़िल घरों पर पढ़ें।

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

फ़ज्र की सुन्नतें जमाअ़त के वक़्त क्यों?

सवालः एक शख़्स तअ़न करता है कि फ़ज्र की सुन्नतें बावजूद जमाअ़त क़ाएम हो जाने के हनफ़ी लोग पढ़ते रहते हैं?

जवाबः इमाम साहब (रह.) के मज़हब के मुवाफ़िक़ हदीस और क़ुरआन शरीफ़ दोनों पर अमल हो जाता है, बाज़ अहादीस में चूंकि सुन्नते फ़ज्र की ज़्यादा ताकीद आई है और सहाबए किराम (रज़ि.) का अमल ऐसा रहा है कि फ़र्ज़ों के शुरू होने के बाद उन्होंने सुन्नतें सुब्ह की पढ़ी हैं और सुन्नतें पढ़ कर जमाअ़त में शरीक हुए हैं। चुनांचे वह आसार कुतुब में मन्क़ूल हैं। इमाम साहब ने उस पर अमल फ़रमाया फिर एतेराज़ और तअ़न फ़ुज़ूल और ग़लती है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–322)

मस्अलाः आसारे सहाबा (रज़ि.) से ऐसा साबित है कि सुब्ह के फ़र्ज़ की क़िराअत की आवाज़ आती थी और वह एक तरफ़ होकर सुन्नतें पढ़ते थे। इसलिए इमाम अबूहनीफ़ा (रह.) ने ऐसा हुक्म दिया है कि अलाहिदा हो कर सुब्ह की सुन्नतें पढ़ ले फिर शरीके जमाअ़त हो जाए

ताकि दोनों फ़ज़ीलतें हासिल हो जाएँ।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–201, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–379)

सुन्नतों को फ़ज़ीलत किस क़ाएदा से?

सवालः अगर कोई मग़रिब या फ़ज्र के फ़र्ज़ अलग पढ़ रहा हो, अगर दूसरी रकअ़त के सज्दा से पहले जमाअ़त क़ाएम हो जाए तो नमाज़ तोड़ कर जमाअ़त में मिल जाए अब शुब्हा ये है कि जमाअ़त सुन्नत है और आमाल के बातिल करने पर क़ुरआन में हुक्मे मुमानअ़त आया है और फ़ज्र की सुन्नत के मुतअ़ल्लिक़ है कि जब तक क़अ़दए अख़ीरा मिलने की उम्मीद है सुन्नतें न तोड़े और चार रकअ़त सुन्नत के बारे में है कि अगर तीसरी रकअ़त में जमाअ़त क़ाएम हुई है तो चार रकअ़त पूरी कर के शरीके जमाअ़त हो। तो शुब्हा ये है कि सुन्नतों को फ़र्ज़ों पर फ़ज़ीलत किस क़ाएदे से हासिल है कि फ़र्ज़ तोड़े जाएँ और सुन्नत न तोड़ी जाएँ?

जवाबः ये इब्ताले अमल चूँकि वास्ते इकमाल के है इसलिए जाइज़ है और ममनूअ़ नहीं है, बल्कि बेहतर है और सवाब का काम है, और फ़ज्र की सुन्नतों में ये भी मस्अला है कि क़अ़दए अख़ीरा के मिलने तक की उम्मीद हो कि सुन्नतें पढ़ कर शामिले जमाअ़त हो जाए ताकि सवाब भी मिल जाए और सुन्नतें भी अदा हो जाएँ। ग़रज़ ये कि मसाइले मज़कूरा सहीह हैं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–316, शरह वक़ाया

जिल्द–1 सफ़्हा–209)

(सवाल में जो इश्काल सुन्नत के न तोड़ने पर है। उसका जवाब ये दिया गया कि फ़र्ज़ अगर पढ़ रहा है तो उसको तोड़ कर फिर उसे ही इमाम के साथ अदा करेगा तो वहाँ इबतालिल इकमाल है, बख़िलाफ़ सुन्नत के कि उसे तर्क कर के उसे न पढ़ेगा बल्कि फ़र्ज़ पढ़ेगा तो ये इबतालिल इकमाल न हुआ, लिहाज़ा न तोड़ने की सूरत में सुन्नत भी अदा हो जाएगी और फ़र्ज़ की फ़ज़ीलत भी हासिल कर लेगा)

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू, हाशिया फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–316)

सुन्नतों के मसाइल

मस्अला: एक रकअ़त पढ़ चुकने के बाद ज़ुहर की नमाज़ की जमाअ़त शुरू हो गई तो दूसरी रकअ़त पूरी कर के सलाम फेर कर जमाअ़त में शरीक हो जाए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–319, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–668)

मस्अला: अगर किसी ने ज़ुहर से पहले चार रकअ़त सुन्नते मुअक्कदा की नीयत बाँधी और इतने में ज़ुहर की नमाज़ बाजमाअ़त शुरू हो गई और उसने दो रकअ़त पूरी कर के सलाम फेर दिया तो उसको फ़र्ज़ों के बाद पूरी चार रकअ़त पढ़नी होंगी और पहले जो दो रकअ़त पढ़ी थीं वह नफ़्ल हो जाएँगी।

(मसाइले सज्दए सह्व सफ़्हा–59, बहवाला शामी

जिल्द–1 सफ़्हा–630 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–314)

मस्अला: अगर चार सुन्नत की नमाज़ में दो रकअ़त पर सलमा फेर दिया तो ये सुन्नत शुमार न होगी। बाद में चार रकअ़त एक सलाम से पढ़े।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–7 सफ़्हा–292)

मस्अला: ज़ुहर के पहले की सुन्नत जो शख़्स न पढ़ सका हो और जमाअ़त में शामिल हो गया तो फ़र्ज़ के बाद चार रकअ़त सुन्नत पहले पढ़े और दो रकअ़त बाद को, मगर फ़तहुक़दीर ने पहले दो सुन्नत पढ़ने को तरजीह दी है। पस इख़्तियार है जो चाहे करे दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–322, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ्हा–673 व गुनया जिल्द–1 सफ़्हा–379)

वैसे अच्छा यही है कि पहले फ़र्ज़ के बाद दो सुन्नत पढ़े और फिर बाद में चार सुन्नतें पहले वाली पढ़े क्योंकि देखने वाले को ये मुग़ालता न हो कि ये फ़र्ज़ पढ़ने के बाद फिर फ़र्ज़ लौटा रहा है। (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

मस्अला: हदीस से फ़ज्र और अस्र के बाद सुनन व नवाफ़िल की मुमानअ़त मालूम हुई और ज़ुहर के बाद मुमानअ़त नही आई, लिहाज़ा ज़ुहर की सुन्नतें पहले की अगर रह जाएँ तो बाद फ़र्ज़ों के उनको पढ़ ले।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–205, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–672)

मस्अला: अगर इमाम के साथ अत्तहीयात भी मिल सके तो फ़ज्र की सुन्नतें पढ़ कर शरीके जमाअ़त हो मगर ये ज़रूरी है कि जमाअ़त के बराबर या जिस दर्जा में जमाअ़त हो रही है उसमें सुन्नतें न पढ़े कि ये मकरूह

है और हदीस में उसकी मुमानअ़त आई है और फुक़हाए हनफ़ीया ने ये तसरीह फ़रमाई है कि मस्जिद के दरवाज़े के पास या अलाहिदा कोई सेहदरी वग़ैरा या हुजरा हो, उसमें सुन्नतें पढ़कर जमाअ़त में शामिल हो, इमाम और जमाअ़त के पास सुन्नतें न पढ़े। इमाम की क़िराअत की आवाज़ आना मानेअ़ सुन्नतों के पढ़ने को नहीं है। आवाज़ आने या न आने पर मदार सुन्नतों के पढ़ने न पढ़ने का नहीं रखा, यानी आवाज़ आने में कोई हरज नहीं है और चूंकि सुब्ह की सुन्नतों की ताकीद ज़्यादा आई है, इसलिए बावजूद अलाहिदा जगह होने के सुन्नतों को छोड़ना बुरा है। क्योंकि शरीअ़त में ये साबित है कि जमाअ़त होते हुए सुन्नतें अलाहिदा पढ़ना ममनूअ़ नहीं है तो बिला वजह सुन्नतों का छोड़ना अच्छा न होगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–325, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–617)

मस्अला: बेहतर ये है कि सुन्नत फ़ज्र की अलाहिदा जगह में मस्जिद से ख़ारिज में पढ़ें, अगर ऐसा मौक़ा न हो तो जमाअ़त अगर अन्दर के दर्जा में हो रही हो तो बाहर पढ़ें, और अगर बाहर जमाअ़त हो रही हो तो अन्दर पढ़ें, और मजबूरी में ऐसा भी दुरुस्त है कि अगर कोई जगह अलग न हो तो पीछे की सफ़ूफ़ में सुन्नत पढ़ें। बहरहाल छोड़ना सुन्नत का न चाहिए जब तक जमाअ़त का कोई जुज़्व मिल सके।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–333, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–671, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–99)

मस्अला: सुन्नत पढ़े बग़ैर जो जमाअत में शामिल हो गया वह बाद फ़र्ज़ के उसी वक़्त सुन्नत न पढ़े बल्कि बाद आफ़ताब तुलूअ होने और बुलंद होने के अगर चाहे तो पढ़े। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–323, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–672)

(मतलब ये है कि सुन्नत की क़ज़ा नहीं है अगर चाहे तो सूरज तुलूअ होने के बाद पढ़ ले और अगर फ़ज्र की नमाज़ क़ज़ा हो गई तो ज़वाल से पहले अगर अदा करे तो सुन्नत भी पढ़ ले और ज़वाल के बाद सुन्नत की क़ज़ा नहीं है बाद में चाहे तो पढ़े)

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अला: तुलूए आफ़ताब से पहले सुन्नते क़ज़ा फ़ज्र की पढ़ना मकरूह है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–1 सफ़्हा–263)

मस्अला: अगर कोई शख़्स इशा की नमाज़ अदा कर चुका फिर जमाअत होते देखी तो उसमें भी शामिल हो गाय, अब वह (अगर सुन्नत, वित्र पहले पढ़ चुका तो) सुन्नत और वित्र न पढ़े क्योंकि वह पहले अदा कर चुका है, और जमाअत में शामिल होना उसके लिए नफ़्ल के हुक्म में है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–320)

मस्अला: इमाम ने मुअक्कदा सुन्नतें न पढ़ी हों तब भी वह जमाअत करा सकता है। इमाम साहब को चाहिए कि सुन्नतों से पहले फ़ारिग़ होने का एहतेमाम किया करें और अगर कभी इमाम पहल फ़ारिग़ न हो सके ते मुक़्तदियों को चाहिए कि इमाम को सुन्नतों का मौक़ा दे दिया करें। अगर वक़्त कम हो तो इमाम फ़र्ज़ पढ़ाने के बाद सुन्नत

पढ़े। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–170, तिर्मिज़ी शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–57, आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–248, फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–402)

मस्अला: फ़र्ज़ जहाँ पर पढ़े हों, वहाँ से अलग (आगे या पीछे) होकर नफ़्ल व सुन्नत पढ़ना मुस्तहब है और अलग घर में पढ़ने वाले के लिए भी यही बेहतर है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–230)

मस्अला: सुन्नतें मकान पर पढ़ने की फ़ज़ीलत है और ये हुक्म हर दो सुनन (फ़र्ज़ से पहले और बाद वाली) के लिए है, लेकिन अगर फ़र्ज़ के बाद मकान पर जाने में रास्ता या मकान जाकर कुछ हरज वाक़ेअ होने का एहतेमाल है और उमूरे दीनवी में मशगूल हो जाने का अंदेशा है तो फिर मस्जिद ही में सुन्नतें पढ़ ले, क्योंकि ऐसा भी साबित है और जब तक वक़्त उस नमाज़ का है, उन नवाफ़िल व सुन्नत का भी वक़्त है (मगर मुत्तसिलन, फ़ौरन ही पढ़ना औला है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–207, फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–29, मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–186)

(मगर मुत्तसिलन, फ़ौरन ही पढ़ना औला है)

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अला: फ़ज्र के फ़र्ज़ शुरू करने के बाद याद आया कि सुन्नत नहीं पढ़ी है। ऐसी हालत में सुन्नत के लिए फ़र्ज़ न तोड़े। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–18, बहरुर्राइक़ जिल्द–2 सफ़्हा–48)

मस्अला: सुनने मुअक्कदा पढ़ने के बाद अगर जमाअत

में देर हो तो नवाफ़िल पढ़ने में कुछ हरज नहीं है। सिवाए सुन्नते फ़ज्र के, उसके बाद नवाफ़िल सूरज बुलंद होने तक दुरुस्त नहीं हैं। दीगर औक़ात में कोई हरज नहीं है, क्योंकि वह वक़्त नवाफ़िल की कराहत का नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–238, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–349)

मस्अला: दिन की नफ़्लों और सुन्नतों में क़िराअत आहिस्ता ही पढ़ना चाहिए, अलबत्ता रात में इख़्तियार है ख़्वाह जेह्र करे या आहिस्ता पढ़े। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–240, रद्दुलमुहतार सफ़्हा–498)

मस्अला: नफ़्ल शुरू करने से वाजिब हो जाती है। पस अगर किसी ने नफ़्ल नमाज़ शुरू करने के बाद किसी वजह से नमाज़ तोड़ दी तो उस पर उस नमाज़ का लौटाना वाजिब है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–235)

मस्अला: सुन्नत व फ़र्ज़ के दरमियान दुनियावी बातें करने से सवाब में तो कमी आ जाती है लेकिन सुन्नतों के लौटाने की ज़रूरत नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–201, रद्दुलमुहतार जिल्द–4 सफ़्हा–636)

मस्अला: कोई सुन्नते ज़ुहर पढ़ रहा था, **अभी एक** रकअत पढ़ी थी कि जमाअत खड़ी हो गई तो **दो रकअत** पढ़ कर सलाम फेर कर जमाअत में शरीक हो जाए और बाद फ़र्ज़ के चार रकअत फिर सुन्नते ज़ुहर पढ़नी चाहिए (दो रकअत जो पढ़ी उसके अलावा वह चार पढ़नी चाहिए) और इसमें इख़्तियार है चाहे चार सुन्नत पहले या दो सुन्नत पहले और नीयत सुन्नते ज़ुहर की करे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–202, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–673, फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–376 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–187)

मस्अलाः जुमे की सुन्नते मुअक्कदा का हुक्म जुहर की सुन्नत की तरह है कि अगर शुरू कर चुका और फ़र्ज़ होने लगे तो दो ही रकअ़त पढ़ कर सलाम फेर दे और फिर उन सुन्नतों को फ़र्ज़ के बाद पढ़ ले।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–99)

मस्अलाः सुन्नत पढ़ने के वास्ते अज़ान का इंतिज़ार ज़रूरी नहीं है। जुमा और जुहर और इशा और फ़ज्र की सुन्नतें अज़ान से पहले पढ़ी जा सकती हैं।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–3 सफ़्हा–267)

बशर्तेकि नमाज़ का वक़्त हो जाए।

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अलाः बग़ैर सुन्नत (जुहर वग़ैरा) पढ़े फ़र्ज़ पढ़ा देने से नमाज़ हो जाती है।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–3 सफ्हा–272)

मस्अलाः जिस जगह सुन्नत पढ़ी जाए फ़र्ज़ के लिए उस जगह से हटना ज़रूरी नहीं है।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–3 सफ़्हा–274)

मस्अलाः तहीयतुलवुज़ू और तहीयतुलमस्जिद फ़ज्र यानी सुब्ह सादिक़ हो जाने के बाद और ग़ुरूबे शम्स के बाद फ़र्ज़ से पहले पढ़ना हनफ़ीया (रह.) के नज़दीक मकरूह है।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–3 सफ़्हा–274)

मस्अलाः बाज़ लोग ये समझते हैं कि मुसाफ़िर पर

सुन्नतें नहीं हैं, इसलिए (मुसाफ़िर सिर्फ़ फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ते हैं) और बिला उज़्र और बिला मजबूरी भी सुन्नतें छोड़ देते हैं, ये ग़लत है, सहीह ये है कि सफ़रे शरई के अन्दर अगर मशग़ूली ज़्यादा हो या रेल में कसरत से भीड़ हो तो सिवाए फ़ज्र की सुन्नतों के बाक़ी वक़्तों की सुन्नतें छोड़ने की गुंजाइश है, मगर इत्मीनान की हालत में कभी न छोड़ना चाहिए, पस सख़्त मजबूरी में ऐसा करे।

(अग़लातुलअवाम सफ़्हा–63, तफ़सील देखिए मसाइले सफ़र मुकम्मल व मुदल्लल में।)

क्या सुन्नतों के बाद मज़ीद दुआ करें?

सवालः दुआ मांगने के दो तरीक़े देखे, पहला तरीक़ा ये है कि नमाज़ के बाद इमाम और मुक़्तदी सब मिल कर माँगते हैं (ज़्यादा तवील नहीं) उसके बाद नवाफ़िल में मशग़ूल हो जाते हैं।

दूसरा तरीक़ा ये है कि फ़राइज़ के बाद फ़क़त "اَللّٰھُمَّ اَنْتَ السَّلَام" वाली दुआ मांगी जाती है, फिर सुनन वग़ैरा पढ़ कर इमाम व मुक़्तदी इकट्ठे होकर अलफ़ातिहा कह कर मिल कर दुआ करते हैं, सुन्नतों के बाद मिल कर दुआ को ज़रूरी समझा जाता है, बड़े एहतेमाम व इल्तिज़ाम और पाबंदी से की जाती है और इमाम के साथ भी शर्त की जाती है कि इस तरह अलफ़ातिहा पढ़ना होगा कौन सा तरीक़ा मसनून है?

जवाबः मसनून ये है कि जिस तरह फ़र्ज़ नमाज़ जमाअत से पढ़ी है दुआ भी जमाअत के साथ की जाए,

यानी इमाम और मुक़्तदी सब मिल कर दुआ माँगें, और जिस तरह सुन्नतें और नफ़्लें अलग अलग पढ़ी हैं दुआ भी अलग अलग माँगें। लिहाज़ा सूरते मसऊला में दोनों तरीक़ों में से पहला तरीक़ा मसनून और मुताबिक़े सुन्नत है। दूसरा तरीक़ा ख़िलाफ़े सुन्नत, बेअसल, मनगढ़त और बिला दलील है। अलग अलग सुन्नतें और नफ़्ल पढ़ने के बाद सब का इकट्ठा जमा होना और इकट्ठे हो कर दुआ माँगना न सिर्फ़ आँ हज़रत (स.अ.व.) के किसी अमल और फ़रमान से साबित है न सहाबा (रज़ि.) व ताबईन (रह.), तबअ़ ताबईन (रह.) और अइम्माए दीन में से किसी के क़ौल व अमल से साबित है। आँ हज़रत (स.अ.व.), सहाबए कराम (रज़ि.) और सलफ़े सालिहीन का तरीक़ा था कि फ़र्ज़ नमाज़ जमाअ़त से अदा फ़रमा कर दुआ भी जमाअ़त के साथ इमाम व मुक़्तदी सब मिल कर मांगा करते थे, और सुन्नतें और नफ़्लें अलग अलग पढ़ा करते थे तो दुआ भी अलग अलग मांगा करते थे। बहरहाल जब ये साबित है कि आँ हज़रत (स.अ.व.) और सहाबए किराम (रज़ि.) अक्सर व बेशतर सुन्नतें घर जाकर अदा फ़रमाते थे तो इमाम व मुक़्तदी का मिल कर बाजमाअ़त (सुन्नतों और नफ़्लों के बाद) दुआ माँगने का सवाल ही पैदा नहीं होता है, क्या सुन्नतें घर में पढ़कर दोबारा मस्जिद में जमा होते थे?

कभी किसी मसलिहत या ज़रूरत की वजह से आँ हज़रत (स.अ.व.) को मस्जिद में सुन्नतें पढ़ने का इत्तिफ़ाक़ हुआ तब भी आप (स.अ.व.) ने मुक़्तदियों के साथ मिल कर दुआ नहीं फ़रमाई, बल्कि आप (स.अ.व.) सुन्नतों में

मशगूल रहते और मुक्तदी अपनी अपनी नमाज़ों से फ़ारिग़ होकर आँ हज़रत (स.अ.व.) की फ़रागत का इंतिज़ार किए बग़ैर ही चले जाते थे।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़हा–216, बहवाला अबूदाऊद सफ़हा–191, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा– 212, तफ़सीर कबीर जिल्द--8 सफ़हा–243, बहरुर्राइक़ जिल्द–2 सफ़हा–159)

मस्अला: इमाम के साथ दुआ मांगना कोई ज़रूरी नहीं है, आप नमाज़ से फ़ारिग़ हो कर (अगर जल्दी हो तो) अपनी दुआ कर के जा सकते हैं।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़हा–273)

मस्अला: दुआ के वक़्त नमाज़े इसतिस्क़ा के अलावा हाथ काँधों से ऊपर न जाएँ और दुआ में आजिज़ी और मसकनत की कैफ़ियत होनी चाहिए।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़हा–275)

मस्अला: नमाज़ों के बाद बग़ल गीर होना या मुसाफ़हा करना न सुन्नत है न वाजिब, बल्कि बिदअत है, अगर कोई शख़्स दूर से आया हो और नमाज़ के बाद मिले तो उसका मुसाफ़हा व मुआनक़ा करना जाइज़ है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़हा–287)

मस्अला: दुआ मांगते वक़्त जब हाथों को उठाओ तो उनको इस तरह रखो कि हाथों के अन्दर का रुख़ यानी हथेलियाँ मुंह के सामने रहें जैसा कि दुआ के वक़्त का मामूल है। (मज़ाहिरे हक़ जिल्द–3 सफ़हा–91)

मस्अला: अहादीस से मालूम हुआ कि दुआ के वक़्त अपने दोनों हाथों को उठाना और फिर दुआ के बाद उठे

हुए हाथों को अपने मुंह पर फेरना सुन्नत है।

(मज़ाहिरे हक़ जिल्द–3 सफ़्हा–91)

मस्अला: नमाज़ ख़त्म होने के बाद दोनों हाथ सीना तक उठा कर फैलाए और अल्लाह तआ़ला से अपने लिए दुआ मांगे और अगर इमाम हो तो तमाम मुक़्तदियों के लिए भी, और दुआ मांगने के बाद दोनों हाथ मुंह पर फेर ले। मुक़्तदी ख़्वाह अपनी अपनी दुआ मांगें या इमाम की दुआ सुनाई दे तो ख़्वाह सब आमीन आमीन कहते रहें।

(बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–11 सफ़्हा–32, बहवाला तहतावी जिल्द–1 सफ़्हा–184, किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–3 सफ़्हा–307)

अगर फ़र्ज़ दोबारा पढ़े जाएँ तो बाद की सुन्नतों का हुक्म

सवाल: अगर इमाम से जमाअ़त के दौरान ग़लती हो जाए और उस ग़लती का एहसास उस वक़्त हो, जब फ़र्ज़ नमाज़ के बाद की सुन्नतें और नफ़्लें भी पढ़ी जा चुकी हैं तो दोबारा फ़र्ज़ पढ़ाने के बाद की सुन्नतें भी दोबारा पढ़ना पड़ेंगी या नहीं?

जवाब: बाद की सुन्नतें फ़र्ज़ की ताबेअ़ हैं, अगर सुन्नतें पढ़ने के बाद मालूम हुआ कि फ़र्ज़ नमाज़ सहीह नहीं हुई तो फ़र्ज़ के साथ बाद की सुन्नतें भी दोबारा पढ़ी जाएँ। अलबत्ता वित्र दोबारा पढ़ने की ज़रूरत नहीं।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–353)

मस्अला: इशा के फ़र्ज़ बे वुज़ू पढ़े और सुन्नत व वित्र बा वज़ू पढ़े तो वक़्त के अन्दर याद आ जाए तो फ़र्ज़ों के साथ सुन्नतों का इआ़दा करना चाहिए। ये मस्अला

वक़्त के अन्दर पढ़ने का है, वजह सुन्नतों के इआदा की और वित्र के अदमे इआदा की मज़हबे हनफ़ीया में ये है कि जब फ़र्ज़ इशा के न हुए तो फ़र्ज़ के लौटाने के साथ सुन्नतों का भी इआदा करे क्योंकि सुन्नत फ़र्ज़ के ताबेअ़ हैं और चूंकि वित्र वाजिबे मुस्तकिल है और वह वुज़ू से हुए लिहाज़ा उसके लौटाने की ज़रूरत नहीं है, और साहिबैन (रह.) चूंकि वित्र को सुन्नत फ़रमाते हैं इसलिए वह फ़र्ज़ के साथ वित्र के इआदा का भी हुक्म करते हैं, और सूरते मसऊला ये है कि नमाज़ के बाद वक़्त के अन्दर याद आ गया और वक़्त गुज़रने के बाद अगर याद आया तो सिर्फ़ फ़र्ज़ इशा के पढ़े।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–64, बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़हा–139)

नमाज़े वित्र का तरीक़ा

नमाज़े वित्र वाजिब है। नबी करीम (स.अ.व.) ने फ़रमाया जो शख़्स वित्र न पढ़ें वह हमारी जमाअत में नहीं।

(अबूदाऊद, मुस्तदरक)

वित्र की नमाज़ भी मग़रिब की नमाज़ की तरह तीन रकअ़त है, उसके पढ़ने का तरीक़ा भी वही है जो फ़र्ज़ नमाज़ों का है। फ़र्क़ सिर्फ़ इस क़दर है कि फ़र्ज़ की सिर्फ़ दो रकअ़तों में सूरए फ़ातिहा के बाद दूसरी सूरत मिलाई जाती है और उसकी तीनों रकअ़तों में सूरत पढ़ने का हुक्म है और तीसरी रकअ़त में सूरत के बाद दोनों हाथ तकबीर के साथ कानों तक उसी तरह उठा कर

जिस तरह तकबीरे तहरीमा के वक़्त उठाते हैं, उठा कर फिर बाँधे और इस दुआ को आहिस्ता आवाज़ से पढ़ेः

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़हा–38)

"اَللّٰھُمَّ اِنَّا نَسْتَعِیْنُکَ وَنَسْتَغْفِرُکَ وَ نُؤْمِنُ بِکَ
وَنَتَوَکَّلُ عَلَیْکَ وَنُثْنِیْ عَلَیْکَ الْخَیْرَ وَنَشْکُرُکَ
وَلَا نَکْفُرُکَ وَ نَخْلَعُ وَنَتْرُکُ مَنْ یَّفْجُرُکَ ط
اَللّٰھُمَّ اِیَّاکَ نَعْبُدُ وَلَکَ نُصَلِّیْ وَنَسْجُدُ وَاِلَیْکَ
نَسْعٰی وَنَحْفِدُ وَنَرْجُوْا رَحْمَتَکَ وَنَخْشٰی
عَذَابَکَ اِنَّ عَذَابَکَ بِالْکُفَّارِ مُلْحِقٌ ط"

मस्अलाः अगर किसी को ये दुआए कुनूत याद न हो तो बजाए उसके ये दुआ पढ़ेः

"رَبَّنَا اٰتِنَا فِی الدُّنْیَا حَسَنَۃً وَّ فِی الْاٰخِرَۃِ حَسَنَۃً وَّقِنَا عَذَابَ النَّار"

और अगर ये भी न याद हो तो दुआए कुनूत के याद होने तक ये दुआ पढ़ लेः "اَللّٰھُمَّ اغْفِرْلِیْ" तीन मरतब, या ये पढ़े "یَا رَبِّ" तीन मरतबा। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–3 सफ़हा–40, किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़हा–533, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–164, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़हा–624)

मस्अलाः वित्र और सुन्नते मुअक्कदा और नवाफ़िल की तमाम रकअ़तों में सूरए फ़ातिहा और उसके साथ कोई सूरत मिलाना ज़रूरी है।

(नमाज़ मसनून सफ़हा–393, कबीरी–333)

मस्अलाः हर रकअ़त में सूरह फ़ातिहा और सूरत से पहले बिस्मिल्लाह पढ़नी जाइज़ है मगर आहिस्ता आवाज़ से, बुलंद आवाज़ से न पढ़े।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़हा–411)

मस्अलाः वित्र का वक़्त शफ़क़ के ग़ाएब होने से तुलूए

फ़ज्र तक है। अगर भूले से या इरादतन तर्क हुए तो उसकी क़ज़ा वाजिब होगी, अगरचे उसमें देर हो जाए।

मस्अला: वित्र को नमाज़े इशा के बाद पढ़ना वाजिब है, क्योंकि उसमें ये तरतीब लाज़िमी है। ताहम अगर भूले से इशा की नमाज़ से पहले पढ़ लिए गए तो सहीह हो गए। इसी तरह अगर अलत्तरतीब दोनों यानी नमाज़ फ़र्ज़ और वित्र को पढ़ लिया, बाद में मालूम हुआ कि इशा की नमाज़ बातिल हो गई लेकिन वित्र सहीह पढ़े गए थे तो नमाज़ वित्र सहीह क़रार दी जाएगी और सिर्फ़ इशा की नमाज़ दोबारा पढ़ी जाए, क्योंकि इस क़िस्म की माज़ूरियों में तरतीब साक़ित (ख़त्म) हो जाती है।

मस्अला: वित्र में दुआए कुनूत का पढ़ना वाजिब है और सुन्नत ये है कि उसको आहिस्ता पढ़ा जाए ख़्वाह कोई इमाम हो या तन्हा पढ़ने वाला और रमज़ानुलमुबारक में वित्र की जमाअत में इमाम और मुक़्तदी दोनों हज़रात कुनूत आहिस्ता पढ़ेंगे।

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अला: अगर कोई शख़्स दुआए कुनूत पढ़ना भूल जाए और रुकूअ में जाने के बाद याद आए तो रुकूअ की हालत में दुआए कुनूत न पढ़ी जाए और न दोबारा कुनूत के लिए खड़ा हो बल्कि सलाम के बाद सज्दए सह्व करे। और अगर खड़े होकर रुकूअ से कुनूत पढ़ ली और रुकूअ का इआदा (दोबारा) न किया तो नमाज़ फ़ासिद न होगी।

मस्अला: अगर ग़लती से सूरत और कुनूत पढ़ने से पहले रुकूअ किया यानी महज़ सूरए फ़ातिहा (अलहम्द शरीफ़) पढ़ कर रुकूअ में चला गया तो ज़रूरी है कि

सूरए फ़ातिहा और कुनूत पढ़ने के लिए उठे और दोनों चीज़ें पढ़ कर दोबारा रुकूअ़ करे और आख़िर में सज्दए सह्व कर ले। अगर सूरए फ़ातिहा और सूरत और कुनूत तीनों को भूल कर रुकूअ़ में चला गया तो रुकूअ़ से उठ कर फ़ातिहा, सूरत और कुनूत पढ़ कर दोबारा रुकूअ़ कर ले, और अगर रुकूअ़ दोबारा न किया तो तब भी नमाज़ हो जाएगी, लेकिन सज्दए सह्व बहरहाल करना चाहिए।

मस्अला: नमाज़े वित्र रमज़ानुलमुबारक के अलावा और दिनों में जमाअ़त के साथ मशरूअ़ नहीं है। माहे रमज़ान में वित्र की जमाअ़त मुस्तहब है, और रमज़ान के अलावा वित्र की जमाअ़त मकरूह है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–534)

मस्अला: तहज्जुद गुज़ार के लिए भी अफ़ज़ल यही है कि रमज़ानुलमुबारक में वित्र जमाअ़त के साथ पढ़े।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–29, मराक़ियुल फ़लाह सफ़्हा–74, नूरुलईज़ाह सफ़्हा–100)

मस्अला: वित्र की नीयत में ये कहना चाहिए कि नीयत करता हूँ मैं नमाज़े वित्र की, और अगर वाजिबुल्लैल भी कह दे तो कोई हरज नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–160, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–389)

मस्अला: वित्र को वाजिब कहना चाहिए, वित्र इमामे आज़म (रह.) के नज़दीक वाजिब है, लिहाज़ा वित्र के अदा करते वक़्त वाजिब का लफ़्ज़ कहने में कुछ हरज नहीं है, और अगर न कहा जाए, तब भी वाजिब है, वित्र अदा हो जाएगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द—4 सफ़्हा—163, रद्दुलमुहतार जिल्द—1 सफ़्हा—388, बहस नीयत)

और अगर मुतलक़ वित्र की नीयत कर के पढ़े जब भी नमाज़ में कुछ ख़लल न होगा, नमाज़ वित्र हो जाएगी।

(रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अला: जिसने रमज़ानुलमुबारक में इशा के फ़र्ज़ जमाअ़त से नहीं पढ़े तो वह वित्र की जमाअ़त में शरीक हो सकता है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द—4 सफ़्हा—152)

मस्अला: इमाम ने कुनूत पढ़ कर रुकूअ़ किया और मुक़्तदी की दुआ़ए कुनूत पूरी नहीं हुई, अगर थोड़ी बाक़ी है कि उसको पूरा कर के इमाम के रुकूअ़ में शरीक हो सकता है तो पूरा कर के रुकूअ़ करे वरना छोड़ दे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द—4 सफ़्हा—154, आलमगीरी जिल्द—1 सफ़्हा—104)

मस्अला: अगर वित्र की तीसरी रकअ़त में शरीक हुआ पस अगर उसने तीसरी रकअ़त पूरी पा ली है तो इमाम के साथ कुनूत पढ़े, बाद में पढ़ने की ज़रूरत नहीं है, इसी तरह तीसरी रकअ़त के रुकूअ़ में शरीक हुआ जब भी बाद में दुआ़ए कुनूत पढ़ने की ज़रूरत नहीं है।

(मसाइले सज्दए सह्व सफ़्हा—96, बहवाला मराक़ियुल फ़लाह जिल्द—1 सफ़्हा—225, फ़तावा रहीमिया जिल्द—1 सफ़्हा—157, आलमगीरी जिल्द—1 सफ़्हा—178)

मस्अला: वित्रों के बाद दो नफ़्ल बैठ कर या खड़े हो कर दोनों तरह दुरुस्त है मगर खड़े होकर पढ़ने में दोहरा सवाब है बनिस्बत बैठ कर पढ़ने में और आँ हज़रत (स.अ.व.) ने उनको बैठ कर पढ़ा है, लेकिन आपको बैठ कर पढ़ने

में पूरा सवाब था, दूसरों को निस्फ़ सवाब मिलता है, अहादीस से ये साबित है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–231, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–653)

मस्अलाः क्योंकि उसमें भी उम्मत की तालीम थी कि नफ़्लों में खड़ा होना फ़र्ज़ नहीं है, उम्मत को तालीम देना नुबूवत के वाजिबात में से है, पस आप (स.अ.व.) के बैठ कर नफ़्ल पढ़ने में भी वाजिब की अदाएगी है जिस का सवाब नफ़्ल से ज़्यादा होता है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–24)

मरीज़ के अहकाम

मस्अलाः बाज़ मरीज़ नमाज़ का एहतेमाम नहीं करते, हालांकि मुमकिन है ये ज़िन्दगी का आख़िरी मरज़ हो, क्योंकि हर बीमारी मौत की याद दिहानी कराती है, सेहत में फ़िक्र न की तो अब ग़ाफ़िल रहना और एहतेमाम न करना बड़े ही अंदेशा और ख़तरा की बात है।

मस्अलाः बाज़ मरीज़ तंदुरुस्ती के ज़माना में तो नमाज़ के पाबंद होते हैं, मगर बीमारी में नमाज़ का ख़्याल नहीं रखते, और ख़्याल न रखने की उमूमी वजह ये होती है कि बीमारी या वसवसा की वजह की बिना पर कपड़े या बदन नापाक गंदे हैं, या वुज़ू और गुस्ल नहीं कर सकते और तयम्मुम को दिल गवारा नहीं करता कि उससे तबीअ़त साफ़ नहीं होती, इसलिए नमाज़ क़ज़ा कर देते हैं, ये सख़्त जिहालत और नादानी की बात है, ऐसे मौक़ा पर

अह्ले इल्म से मस्अला मालूम कर के अमल करना चाहिए और शरीअत की अता कर्दा सहूलतों पर अमल करना चाहिए। इन वजूहात की बिना पर नमाज़ क़ज़ा करना जाइज़ नहीं है।

मस्अला: बाज़ मरीज़ डाक्टर और हकीम के मना कर देने का उज़्र करते हैं और नमाज़ पढ़ना छोड़ देते हैं, हालांकि मस्अला ये है कि जब तक इशारा से नमाज़ पढ़ने पर कुदरत हो, इशारा से नमाज़ अदा करना लाज़िम है, हाँ जब इशारा पर भी कुदरत न रहे तो बेशक नमाज़ मुअख़्ख़र करना और बाद में क़ज़ा कर लेना दुरुस्त है, बीमारी प्यामे मौत है। इससे इन्सान को और ज़्यादा होशियार और फ़िक्रे आख़िरत की तरफ़ और ज्यादा मुतवज्जेह होना चाहिए।

मस्अला: बाज़ मरीज़ नमाज़ के पूरे पाबंद होते हैं मगर बीमारी के ग़लबा से या नमाज़ के वक़्त नींद के ग़लबा से या बहुत ज़्यादा ज़ोअफ़, कमज़ोरी और नक़ाहत से आँखें बंद हो कर ग़फ़लत सी हो जाती है और नमाज़ के औक़ात वग़ैरा की पूरी ख़बर नहीं होती, यहाँ तक नमाज़ क़ज़ा हो जाती है हालांकि अगर नमाज़ की इत्तिला की जाए तो हरगिज़ कोताही न करें, लेकिन ऊपर के लोग, तीमारदार, ख़िदमत करने वाले हज़रात मरीज़ की राहत का ख़्याल कर के नमाज़ की इत्तिला नहीं करते और अगर बीमार को किसी तरह इत्तिला भी हो जाए तो उलटा मना कर देते हैं, या उसकी इमदाद नहीं करते मसलन वुज़ू, तयम्मुम, कपड़ों की तबदीली, क़िब्ला रुख़ करना वग़ैरा कुछ नहीं करते जिससे ख़ुद भी गुनहगार

होते हैं, ऐसा करना न मरीज़ के साथ ख़ैर ख़्वाही है न अपने साथ। (क्यों कि अगर मरीज़ का उसी मरज़ में इंतिक़ाल हो जाए तो वहाँ कौन साथ देगा?)

मस्अलाः बाज़ लोग ये समझते हैं कि जब मरीज़ होश में नहीं है तो नमाज़ मआफ़ है, ये भी दुरुस्त नहीं, क्योंकि हर बेहोशी में नमाज़ मआफ़ नहीं होती, जिसमें नमाज़ मआफ़ होती है वह बेहोशी है जिसमें ख़बरदार करने से भी आगाह (वाक़िफ़) न हो, और मुत्तसिल मुसलसल छः नमाज़ें (मुकम्मल) बेहोशी में गुज़र जाएँ, ऐसी शक्ल में नमाज़ मआफ़ है, क़ज़ा भी वाजिब नहीं और अगर उससे कम बेहोशी हो मसलन चार या पाँच नमाज़ें उस हालत में गुज़र जाएँ तो उस वक़्त तो मरीज़ बेहोशी की बिना पर नमाज़ें अदा करने का मुकल्लफ़ नहीं। अलबत्ता होश आने पर उनकी क़ज़ा वाजिब है और अगर क़ज़ा में सुस्ती और लापरवाई की तो मरने से पहले उन नमाज़ों का फ़िदया अदा करने की वसीय्यत करना वाजिब है।

मस्अलाः बाज़ बीमार खड़े होकर नमाज़ पढ़ने की क़ुदरत रखते हैं मगर फिर भी वह बैठ कर नमाज़ अदा करते हैं, हालांकि जब तक खड़े होकर नमाज़ अदा करने की क़ुदरत हो बैठ कर अदा करना जाइज़ नहीं है, लिहाज़ा बड़ी एहतियात से नमाज़ अदा करना चाहिए।

मस्अलाः बाज़ मरीज़ नमाज़ में बावजूद इसके कि क़राहने को ज़ब्त कर सकते हैं लेकिन आह आह ख़ूब साफ़ साफ़ लफ़्ज़ों से कहते हैं और इसकी बिल्कुल परवाह नहीं करते कि नमाज़ रहेगी या जाएगी। याद रखना चाहिए कि क़ुदरते ज़ब्त होते हुए नमाज़ में हाए हाए या आह

आह ऊई वग़ैरा करने से नमाज़ जाती रहती है।

(अग़लातुलअवाम अज़–मौलाना थानवी (रह.) सफ़्हा–198)

मस्अलाः बाज़ अवाम ऐसे मरज़ में मुब्तला हो कर नमाज़ छोड़ देते हैं जिसमें बदन और कपड़ों का पाक रहना मुश्किल है और ये समझतें है कि इस हालत में नमाज़ होने की कोई सूरत नहीं है। हालांकि ये ख़्याल ग़लत है। उलमा से मसाइल मालूम कर के नमाज़ पढ़ना चाहिए। ऐसी हालत में भी नमाज़ दुरुस्त हो जाती है, जब धोने से सख़्त तकलीफ़ हो या मरज़ बढ़ जाने का डर हो और कपड़े बदलने के लिए कपड़े ज़्यादा न हों तो ऐसी हालत में नमाज़ दुरुस्त हो जाती है।

(अग़लातुलअवाम सफ़्हा–58)

मरीज़ के लिए तयम्मुम का हुक्म

मस्अलाः बाज़ मरीज़ ये कोताही करते हैं कि बावजूद इसके कि वुज़ू कुछ मुज़िर नहीं फिर भी तयम्मुम कर लेते हैं, बाज़ मरतबा ख़िदमत गुज़ार (तीमारदार) या दूसरे ख़ैर ख़्वाह वुज़ू से रोकते हैं और कहते हैं कि मियाँ शरीअ़त में आसानी है तयम्मुम कर लो। ये सख़्त नादानी है, जब तक वुज़ू करना मुज़िर न हो, तयम्मुम करना जाइज़ नहीं है।

मस्अलाः बाज़ मरीज़ ये ग़लती और बेएहतियाती करते हैं कि ख़्वाह उन पर कैसी ही मुसीबत गुज़रे, ख़्वाह कितना ही मरज़ बढ़ जाए, जान निकल जाए, मगर तयम्मुम नहीं करते, मर जाएँगे मगर वुज़ू ही करेंगे, ये ग़ुलू है, और दरपरदा हक़ तआ़ला शानहू की अता करदा सहूलत को

क़बूल न करना है जो सख़्त गुस्ताख़ी और बेअदबी है। जिस तरह वुज़ू करना हक़ तआ़ला का हुक्म है तयम्मुम भी उसका ही हुक्म है। बंदा का काम मानाना है, न कि दिल की चाहत और सफ़ाई को देखना, बंदगी तो इसी का नाम है कि जिस वक़्त जो हुक्म हो जान व दिल से इताअ़त करे।

(अग़लातुलअवाम सफ़्हा–196)

मस्अला: अगर जुनबी को (जिसको गुस्ल की ज़रूरत हो) गुस्ल करने से हलाकत या मरज़ के बढ़ जाने का ग़ालिब अंदेशा हो, और गर्म पानी का सामान भी न हो, या इस्तेमाल न कर सकता हो तो ऐसी सूरत में तयम्मुम जाइज़ है। (शामी सफ़्हा–156, जिल्द–1 व हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–52)

मरीज़ और माज़ूर की नमाज़

मस्अला: अगर कोई शख़्स किसी मरज़ की वजह से नमाज़ के अरकान अदा करने पर पूरे तौर से क़ादिर न हो तो उसको चाहिए कि अपनी ताक़त और क़ुदरत के मुवाफ़िक़ अरकाने नमाज़ को अदा करे। अगर क़याम पर क़ुदरत न हो कि अगर खड़ा हो तो गिर पड़े या किसी मरज़ के पैदा हो जाने या बढ़ जाने का ख़ौफ़ हो या खड़े होने से बदन में कहीं सख़्त दर्द होने लगता हो तो उस पर क़याम फ़र्ज़ नहीं, उसको चाहिए कि बैठ कर नमाज़ पढ़े और रुकूअ़ सज्दे सर के इशारे से करे, अगर मसनून तरीक़े से बैठ सकता हो यानी जिस तरीक़े से अत्तहीयात

पढ़ने के लिए हालते सेहत में बैठना चाहिए तो उसी तरह बैठे वरना जिस तरीके से बैठने में उसको आसानी हो उसी तरह बैठे। और अगर थोड़ी देर भी खड़ा हो सकता हो तो उसको चाहिए कि नमाज़ खड़े हो कर शुरू करे और जितनी देर तक खड़ा हो जाए, खड़ा रहे, बाद उसके बैठ जाए, हत्ता कि अगर सिर्फ़ बकद्रे तकबीरे तहरीमा के खड़े होने की कूवत हो तब भी उसको चाहिए कि तकबीरे तहरीमा खड़े होकर कहे, बाद उसके बैठ जाए, अगर न खड़ा होगा तो नमाज़ न होगी। इसी तरह अगर किसी चीज़ के सहारे से ख़्वाह लकड़ी के या तकिया के या किसी आदमी के खड़ा हो सकता हो तब भी खड़े होकर नमाज़ पढ़ना चाहिए।

(दुर्रेमुख़्तार, रद्दुलमुहतार वग़ैरा, सग़ीरी सफ़्हा–143, इल्मुलफ़िक़्ह सफ़्हा–127, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–108 शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–117, कबीरी सफ़्हा–216)

मस्अलाः अगर किसी शख़्स के पास कपड़ा इस क़दर हो कि खड़े होने की हालत में उसका जिस्मे औरत न छिप सकता हो, हाँ बैठने की हालत में छिप जाता हो तो इस सूरत में भी खड़े हो कर नमाज़ न पढ़ना चाहिए। इसी तरह अगर कोई कमज़ोर आदमी खड़े होने से ऐसा बेताक़त या तनफ़्फ़ुस में मुब्तला हो जाता हो कि किराअत न कर सके तो उसको भी बैठ कर नमाज़ पढ़ना चाहिए।

(दुर्रेमुख़्तार, शामी वग़ैरा)

मस्अलाः अगर रुकूअ और सज्दे या सिर्फ़ सज्दे पर कुदरत न हो तो उसको चाहिए कि बैठ कर नमाज़ पढ़े अगरचे खड़े होने की कूवत हो और रुकूअ और सज्दा

सर के इशारे से करे, सज्दे के लिए रुकूअ की बनिस्बत ज़्यादा सर झुका दे। किसी चीज़ को पेशानी के बराबर उठा कर उस पर सज्दा करना मकरूह तहरीमी है, हाँ अगर कोई ऊँची चीज़ पेशानी के बराबर रख दी जाए और उस पर सज्दा किया जाए तो कुछ मुज़ाएका नहीं।

मस्अला: अगर कोई मरीज़ बैठने से भी माज़ूर हो यानी न अपनी कूवत से बैठ सकता हो न किसी के सहारे से तो उसको चाहिए कि लेट कर इशारे से नमाज़ पढ़े, लेटने की हालत में बेहतर ये है कि चित लेटे, पैर क़िब्ले की तरफ़ हों और सर के नीचे कोई तकिया वग़ैरा रख ले ताकि मुंह क़िब्ले के सामने हो जाए और अगर पहलू पर लेटे ख़्वाह दाहिने पर या बाएँ पहलू पर तब भी दुरुस्त है बशर्तेकि मुंह क़िब्ले की तरफ़ हो और सर से रुकूअ सज्दे का इशारा करना चाहिए, सज्दे का इशारा रुकूअ के इशारा से झुका हुआ हो, आँख या अबरू वग़ैरा के इशारा से सज्दा करना काफ़ी नहीं। (दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

अगर ये भी कुदरत न हो तो जैसे मुमकिन सहूलत हो पढ़े। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–127, किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–803, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–703)

मस्अला: अगर कोई औरत दर्देज़ेह में मुब्तला हो मगर होश व हवास क़ाइम हों तो उसको चाहिए कि बहुत जल्द नमाज़ पढ़ ले ताख़ीर न करे मबादा निफ़ास में मुब्तला हो जाए और नमाज़ क़ज़ा हो जाए। हाँ अगर खड़े हो कर नमाज़ पढ़ने में ये ख़ौफ़ हो कि अगर उसी हालत में बच्चा पैदा हो जाएगा तो उसको सदमा पहुंचेगा तो बैठ कर पढ़े, इसी तरह अगर किसी औरत के ख़ास

हिस्से से बच्चे का कुछ हिस्सा निस्फ़ से कम बाहर आ गया हो मगर अभी तक निफ़ास न हुआ हो तो उसको भी नमाज़ में ताख़ीर करना जाइज़ नहीं, बैठे बैठे नमाज़ पढ़े और ज़मीन में कोई गढा खोद कर रूई वग़ैरा बिछा कर बच्चे का सर उस में रख दे, ये भी न मुमकिन हो तो इशारों से नमाज़ पढ़ ले। (ख़ज़ानतुर्रिवायात वग़ैरा)

अगर न पढ़ेगी तो बाद में उस नमाज़ की क़ज़ा उसके ज़िम्मा होगी। (रफ़अ़त क़ासमी)

मस्अला: अगर कोई मरीज़ सर से इशारा भी न कर सकता हो तो उसको चाहिए कि नमाज़ उस वक़्त न पढ़े बाद सेहत के उसकी क़ज़ा पढ़ ले, फिर अगर यही हालत उसकी पाँच नमाज़ों से ज़्याद तक रहे तो उस पर उन नमाज़ों की क़ज़ा भी नहीं, जैसा कि क़ज़ा के ब्यान में गुज़र चुका।

मस्अला: अगर किसी मरीज़ को रकअ़तों का शुमार याद न रहता हो तो उस पर भी उस वक़्त की नमाज़ का अदा करना ज़रूरी नहीं, बल्कि बाद सेहत के उनकी क़ज़ा पढ़ ले, हाँ अगर कोई शख़्स उसको बतलाता जाए और वह पढ़ ले तो जाइज़ है। यही हुक्म है उस शख़्स का जो ज़्यादा बुढ़ापे के सबब से मख़बूतुलअक़्ल हो गया हो यानी दूसरे शख़्स के बतलाने से उसकी नमाज़ दुरुस्त हो जाएगी, और अगर कोई बतलाने वाला न मिले तो वह अपनी ग़ालिब राए पर अमल करे। (नफ़्उलमुफ़्ती)

मस्अला: अगर कोई शख़्स नमाज़ पढ़ने की हालत में बीमार हो जाए तो उसको चाहिए कि बाक़ी नमाज़ जिस तरह पढ़ सकता हो तमाम कर ले, मसलन अगर खड़े हो

कर नमाज़ पढ़ रहा था और अब खड़े होने की ताक़त न रही तो बैठ कर पढ़े, रुकूअ सज्दे से भी माज़ूर हो गया हो तो इशारे से रुकूअ सज्दा करे, बैठने से भी माज़ूर हो गया हो तो लेट कर।

(इल्मुलफ़िक्ह ज़िल्द–2 सफ़्हा–128, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–109, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–118, कबीरी सफ़्हा–269, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–706)

मस्अला: अगर कोई माज़ूर हालते नमाज़ में क़ादिर हो जाए तो अगर सिर्फ़ क़याम से माज़ूर था और बैठ कर रुकूअ सज्दा करता था और अब खड़े होने की क़ुदरत हो गई तो बाक़ी नमाज़ खड़े हो कर तमाम करे, और अगर रुकूअ सज्दे से भी माज़ूर था और उसने इशारे से रुकूअ सज्दा करने का इरादा कर के नीयत बाँधी थी मगर अभी तक कोई रुकूअ सज्दा इशारे से अदा नहीं किया था और अब उसको रुकूअ सज्दे पर क़ुदरत हो गई तो वह बाक़ी नमाज़ अपनी रुकूअ सज्दे के साथ अदा करे, और अगर इशारे से कोई रुकूअ सज्दा कर चुका हो तो वह नमाज़ उसकी फ़ासिद हो जाएगी और फिर नए सिरे से उस नमाज़ का पढ़ना उस पर लाज़िम होगा।

(इल्मुलफ़िक्ह जिल्द–2 सफ़्हा–128, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–109, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–108, कबीरी सफ़्हा–269)

मस्अला: अगर कोई शख़्स क़िराअत के तवील होने के सबब से खड़े खड़े थक जाए और तकलीफ़ होने लगे तो उसको किसी दीवार या दरख़्त या लकड़ी वग़ैरा से तकिया लगा लेना मकरूह नहीं, तरावीह की नमाज़ में

ज़ईफ़ और बूढ़े लोगों को अक्सर इसकी ज़रूरत पेश आती है। ऐसी नींद न आए जिससे वुज़ू जाता रहे।

(शामी वग़ैरा)

मस्अला: नफ़्ल नमाज़ में जैसा कि इब्तिदा में बैठ कर पढ़ने का इख़्तियार हासिल है वैसे ही दरमियाने नमाज़ में भी बैठ जाने का इख़्तियार है और इसमें किसी क़िस्म की करहात नहीं।

(दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–129)

इंसान माज़ूर कब बनता है?

मस्अला: किसी को पेशाब का क़तरा कम व बेश आता रहता है मगर नमाज़ का पूरा वक़्त घेरता नहीं है, इतना वक़्त मिल जाता है कि पाकी की हालत में नमाज़ अदा कर सके तो वह माज़ूर नहीं है, उसको चाहिए कि क़तरा रुक जाने का इंतिज़ार कर के फिर वुज़ू कर के नमाज़ पढ़ ले, अगर नमाज़ पढ़ते हुए क़तरा आने का शुब्हा हो जाए तो नमाज़ तोड़ कर वह जगह देख ले, अगर वाक़ई क़तरा है तो शर्मगाह पानी से धो ले और वुज़ू कर के कपड़ा बदल कर नमाज़ पढ़े। अगर क़तरा न आया हो वैसे ही शुब्हा हुआ हो तो आइंदा उस क़िस्म के शुब्हा की परवा न करे, बल्कि वुज़ू करने के बाद रूमाली पर कुछ पानी छिड़क ले। शुब्हात से बचने की ये भी एक तदबीर और एलाज है, और अगर क़तरा आता रहता है और इतना वक़्त भी न मिले कि तहारत (पाकी) के साथ उस वक़्त की नमाज़ अदा कर सके तो वह माज़ूर है।

ऐसा माजूर हर नमाज़ के वक़्त नया वुजू कर के पाक कपड़ा पहन कर फ़र्ज़, वाजिब, सुन्नत नफ़्ल जो चाहे पढ़ सकता है, जब तक उस नमाज़ का वक़्त बाक़ी रहेगा क़तरा आने से वुजू नहीं टूटेगा। हाँ क़तरा के अलावा दूसरे नवाक़िज़ से वुजू टूट जाएगा। यानी दूसरी वुजू तोड़ने वाली चीज़ से वुजू टूट जाएगा।

एक वक़्त पूरा ऐसा गुज़र जाने के बाद तहारत से नमाज़ अदा करने का मौक़ा न मिले और माजूर होने का हुक्म लग जाए, उसके बाद दूसरी नमाज़ों के औक़ात में पूरा वक़्त क़तरा जारी रहना शर्त नहीं है। कभी कभी क़तरा आ जाना माजूर बने रहने के लिए काफ़ी है। हाँ अगर नमाज़ का एक वक़्त कामिल (पूरा) ऐसा गुज़र जाए कि एक दफ़ा भी क़तरा न आए तो अब वह माजूर न रहेगा।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–273, बहवाला नूरुलईज़ाह सफ़्हा–54 व इमदादुलअहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–372)

मस्अला: चाहे नमाज़ की हालत में पेशाब का क़तरा टपक जाए और कपड़ों पर भी लग जाए माजूर होने की वजह से शरअ़न मआफ़ है। लिहाज़ा नमाज़ न पढ़ने का बहाना ग़लत है नमाज़ मआफ़ नहीं है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–272, बहवाला मराक़ियुलफ़लाह सफ़्हा–29)

मस्अला: क़तरा निकलने के ख़ौफ़ से अज़्वे ख़ास (पेशाब गाह) पर कपड़ा बाँध कर नमाज़ पढ़ना सहीह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–12, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–139)

मसला: अगर बैठ कर नमाज़ पढ़ी जाए तो रुकूअ़

का मुस्तहब और सहीह तरीक़ा ये है कि पीठ को इतनी झुकाई जाए कि पेशानी घुटनों के मुक़ाबिल हो जाए। सुरीन (कूल्हे) उठाने की ज़रूरत नहीं है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–299, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–416)

मस्अला: बैठ कर नमाज़ पढ़ने में क़िराअत के वक़्त निगाह सज्दे की जगह के बजाए गोद में मुनासिब है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–157, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–321)

मस्अला: माज़ूर के लिए सज्दा करने के लिए तकिया वग़ैरा कोई ऊँची चीज़ रख लेना और उस पर सज्दा करना न चाहिए। जब सज्दा की क़ुदरत न हो तो बस इशारा कर लिया करे, तकिया के ऊपर सज्दा करने की ज़रूरत नहीं है। (इमदादुलअहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–198)

माज़ूर से मुतअल्लिक़ मसाइल

मस्अला: जो शख़्स खड़े होकर नफ़्ल नमाज़ पढ़ रहा है, अगर दरमियान में थक जाए और दरमांदा हो जाए तो लाठी, दीवार पर टेक लगा कर नमाज़ पूरी कर सकता है, या बैठ जाए और नमाज़ पूरी कर ले। ये उज़्र है उसके हक़ में अगर बग़ैर उज़्र के बैठेगा तो मकरूह होगा।

(हिदाया सफ़्हा–109, कबीरी सफ़्हा–271)

क्योंकि नफ़्ल पढ़ने वाला बिला कराहत हर हाल में बैठ कर नमाज़ पढ़ सकता है और जब बैठ कर पढ़ सकता है तो दरमियान में भी बैठ सकता है।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–706)

मस्अला: अगर रेलगाड़ी वग़ैरा में भी खड़े हो कर नमाज़ न पढ़ सकता हो तो बैठ कर पढ़े।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–706)

मस्अला: माज़ूर बीमार बैठ कर नमाज़ पढ़ने वाला किराअत और रुकूअ के वक़्त जिस तरह चाहे बैठे, अगरचे बेहतर सूरत वही है जैसे तशह्हुद के वक़्त बैठा जाता है, सज्दा और तशह्हुद की हालत में इस तरह बैठना चाहिए जिस तरह पहले बताया गया है, लेकिन ये हुक्म उस सूरत में है जबकि ऐसा करने में कोई हरज और दुश्वारी न हो, बसूरते दीगर वह तरीक़ा इख़्तियार करना चाहिए जिसमें ज़्याद आसान्नी हो।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–804)

मस्अला: लंगड़ा जो कि खड़े होकर नमाज़ नहीं पढ़ सकता, उसको जमाअत में सफ़े औवल में (किनारा पर) बैठ कर नमाज़ पढ़ना जाइज़ है।

(इमदादुलअहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–545)

मस्अला: जो शख़्स बैठ कर भी इशारा से नमाज़ न पढ़ सके, वह लेट कर इशारा से नमाज़ पढ़े और सुन्नत और नफ़्ल का अदा करना (मरीज़ के लिए) ज़रूरी नहीं है अगरचे पढ़ सके तो बेहतर है न पढ़े तो कुछ गुनाह नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–440, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–712)

मस्अला: मरज़ की वजह से शराब (या नजिस मरहम वग़ैरा) की पट्टी बाँधी गई तो वह उसी हालत में नमाज़ पढ़ ले, नमाज़ उसकी दुरुस्त है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–440, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–711)

मस्अलाः अगर रियाह का मरीज़ शरई माज़ूर हो चुका है यानी ये मरज़ खुरूजे रीह का उसका इस क़दर ज़्यादा है कि किसी वक़्त उसको ऐसी नौबत आ चुकी है कि तमाम वक़्त नमाज़ में इस क़दर मुहलत उसको इस मरज़ ने नहीं दी कि वुज़ू कर के फ़र्ज़ वक़्त में बग़ैर उस उज़्र के पढ़ सका हो तो उसके लिए ये जाइज़ है कि एक दफ़ा वुज़ू कर के वक़्त के अन्दर नमाज़ पढ़ सकता है अगरचे रीह नमाज़ में ख़ारिज होती रहे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–442, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–480, बाबुलमाज़ूर, व फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–133)

ऐसा मरीज़ वुज़ू से वक़्त के अन्दर अन्दर उस नमाज़ को अदा कर सकता है.चाहे नमाज़ में भी रियाह निकलती रहें, लेकिन उस वज़ू से दूसरे वक़्त की नमाज़ नहीं पढ़ सकता है, हर नमाज़ के लिए ताज़ा वुज़ू या अगर तयम्मुम की ज़रूरत हो तो ताज़ा तयम्मुम करे।

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अलाः जिस क़दर ताक़त हो उसी के मुवाफ़िक़ नमाज़ अदा हो जाएगी। अगर खड़े होने की ताक़त न हो तो बैठ कर और अगर बैठने की भी ताक़त न हो तो लेट कर नमाज़ अदा करना सहीह है। अलग़रज़ तकलीफ़ बक़द्र वुसअ़त है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–436)

मस्अलाः अगर मरज़ की वजह से रुकूअ़ व सुजूद की भी ताक़त न हो तो फिर इशारा से नमाज़ पढ़े और रुकूअ़ की निस्बत से सज्दा का इशारा ज़रा पस्त करे, लेकिन कोई चीज़ (तकिया वग़ैरा) उठा कर पेशानी के

सामने कर के उस पर सज्दा न करे।

(हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–108, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–117, कबीरी सफ़्हा–262, फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–56)

मस्अला: अगर ऐसी कमज़ोरी हो कि बैठ कर भी नमाज़ नहीं पढ़ सकता तो फिर पुश्त पर (यानी चित) लेट कर नमाज़ पढ़े और पाँव का रुख़ क़िब्ला की तरफ़ कर दे तो ऐसा भी जाइज़ है, और रुकूअ़ व सज्दा इशारा से करे। (हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–109, कबीरी सफ़्हा–262)

मस्अला: अगर पहलू पर लेट कर मुंह क़िब्ला की तरफ़ कर दे तो ऐसा भी जाइज़ है।

(शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–117)

मस्अला: अगर बीमार के पास कोई दूसरा शख़्स न हो और ख़ुद मरीज़ क़िब्ला की तरफ़ अपना रुख़ नहीं कर सकता तो जिस तरफ़ मरीज़ का रुख़ हो, उसी तरफ़ वह नमाज़ पढ़ सकता है।

(किताबुलफ़िक़्ह सफ़्हा–324)

मस्अला: अगर किसी को सलसले बौल (पेशाब जारी होना) का मरज़ लाहिक़ हो और ये अंदेशा है कि नमाज़ के लिए खड़े होने से पेशाब आ जाएगा, और बैठ कर पढ़े तो नहीं आएगा तो वह बैठ कर नमाज़ पढ़े। इसी तरह एक तंदुरुस्त सेहत मंद आदमी को अगर तजरबा वग़ैरा से ये मालूम हो कि खड़े होने से बेहोशी हो जाएगी या सर चकराएगा तो बैठ कर नमाज़ पढ़े और इन तमाम सूरतों में रुकूअ़ और सुजूद के साथ मुकम्मल तौर पर नमाज़ का अदा करना वाजिब है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–803, फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–195)

मस्अलाः अगर कोई शख़्स बग़ैर सहारे के खड़े हो कर नमाज़ पढ़ने से आजिज़ है लेकिन किसी दीवार या लकड़ी वग़ैरा के सहारे खड़े हो कर नमाज़ पढ़ सकता है तो वह सहारे से खड़े हो कर नमाज़ पढ़ने का पाबंद है, उसको बैठ कर नमाज़ जाइज़ नहीं है।

मस्अलाः जितनी देर भी मरीज़ को बग़ैर सहारे के बैठ कर नमाज़ पढ़ना मुमकिन हो उतनी देर बग़ैर सहारे के बैठना चाहिए, अगर बग़ैर सहारे के न बैठा जा सके तो सहारा लेना ही पड़ेगा, उसके लिए लेट कर नमाज़ जाइज़ नहीं है। अगर कोई सहारा ले कर या बग़ैर सहारे के बैट कर पढ़ने से आजिज़ हो तो करवट ले कर या लेट कर नमाज़ पढ़े।

(किताबुल फ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–803, इमदादुल फ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–451 व दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–701)

जिस तरह भी मुमकिन हो सके बग़ैर किसी परेशानी के नमाज़ पढ़े। (रफ़अ़त क़ासमी)

मस्अलाः अगर कोई शख़्स महज़ आँख, पलक या दिल से इशारा कर सकता है तो उसी हालत में वह नमाज़ से बरीउज़्ज़िम्मा मुतसव्वर होगा और उस हालत में नमाज़ दुरुस्त न होगी, ख़्वाह अक़्ल क़ाएम हो या न हो। या ऐसा मरज़ है तो उस पर क़ज़ा भी वाजिब न होगी, बशर्तेकि फ़ौत शुदा नमाज़ों की तादाद पाँच से ज़्यादा हो जाएँ, बसूरते दीगर क़ज़ा वाजिब है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–86)

मस्अला: अगर मरीज़ को सर के साथ इशारा करने की ताक़त भी न रहे तो ऐसी हालत में नमाज़ उससे मुअख़्ख़र होगी। आँख और अबरू का इशारा मोतबर नहीं होगा। ऐसी हालत में नमाज़ को मुअख़्ख़र कर दे। अगर तंदुरुस्त हो गया तो नमाज़ें क़ज़ा करेगा।

(हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–109, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–118, कबीरी सफ़्हा–262)

मस्अला: कोई शख़्स क़याम (खड़े होने) पर क़ादिर हो, लेकिन रुकूअ़ और सुजूद पर क़ादिर न हो तो उस पर क़याम लाज़िम होगा, बल्कि वह बैठ कर इशारा से नमाज़ पढ़े। (हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–109, कबीरी सफ़्हा–266 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–806)

रुकूअ़ व सुजूद से माज़ूरी का हुक्म

मस्अला: अगर कोई शख़्स रुकूअ़ करने या सज्दा करने से या उनमें से किसी एक के अदा करने से माज़ूर हो तो जिस अम्र से माज़ूर हो उसको इशारा से अदा करे।

मस्अला: अगर कोई शख़्स खड़े होने और सज्दा करने की ताक़त रखता है, सिर्फ़ रुकूअ़ नहीं कर सकता तो उसे वाजिब है कि नीयत बाँधे और क़िराअत करने के लिए खड़ा हो और रुकूअ़ का सिर्फ़ इशारा करे फिर सज्दा कर ले।

मस्अला: अगर क़याम (खड़ा) तो कर सकता हो, लेकिन रुकूअ़ और सुजूद से आजिज़ हो तो तकबीरे तहरीमा और क़िराअत खड़े हो कर करे और रुकूअ़ के लिए खड़े

खड़े इशारा करे फिर बैठ कर इशारा से सज्दा करे।

(किताबुलफ़िक्ह जिल्द–1 सफ़्हा–805)

मस्अला: ऐसा ज़ख़्मी जिसको सज्दा करने से ख़ून बह पड़ता है, और बैठ कर नमाज़ पढ़ने में ख़ून नहीं बहता, तो इस सूरत में उसके लिए अच्छी शक्ल ये है कि बैठ कर सर के इशारा से नमाज़ अदा करे, इसलिए कि इस सूरत में वुज़ू बाक़ी रहता है सिर्फ़ सज्दा छूटता है और सज्दे के बग़ैर नमाज़ शरीअत में मौजूद है। मसलन सवारी पर नमाज़ जब उज़्र दरपेश हो तो सज्दा तर्क कर दे तो कोई मुज़ाएक़ा नहीं है।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–65, किताबुलसलात)

मस्अला: एक बीमार जिसके जिस्म के नीचे नापाक कपड़े हों और जब भी उसके नीचे कोई चीज़ बिछाई जाती है फ़ौरन नापाक हो जाती है तो वह उसी हालत में नमाज़ पढ़ेगा, क्योंकि ये उसके लिए हुक्मन पाक क़रार दिए गए हैं। (दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–709)

जिस मरीज़ को रकआत वग़ैरा याद न रहें?

मस्अला: अगर बीमार पर ऊँघ की बीमारी की वजह से रकअतों की तादाद मुश्तबह हो जाए कि उसने कितनी रकअतें पढ़ीं या सज्दे मुश्तबह हो जाएँ और याद न रहें कि उसने कितने सज्दे किए, तो इस सूरत में उस पर नमाज़ का इआदा करना लाज़िम नहीं है और अगर वह नमाज़ों को दूसरे के सिखाने और बताने से अदा करेगा तो कोई हरज नहीं है, नमाज़ हो जाएगी।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–704)

आँख के इशारा से नमाज़ पढ़ना?

मस्अलाः मजबूर आदमी सर के इशारा से बिला शुब्हा नमाज़ अदा कर सकता है, मगर अपनी आँख, अपने दिल और अबरू के इशारा से नमाज़ अदा नहीं कर सकता है।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–704)

मस्अलाः जिस मरीज़ को चित लेटने का हुक्म दे दिया गया हो तो ऐसा शख़्स इशारा से नमाज़ पढ़ेगा, इसलिए कि आज़ाए इंसानी की हुरमत जान की हुरमत के बराबर है यानी जिस तरह जान का बचाना फ़र्ज़ है, आज़ा का बचाना भी फ़र्ज़ है।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–708)

मस्अलाः अगर किसी के दोनों हाथ कुहनी से और पाँव टख़ने से कटे हुए हों और उसके चेहरे पर ज़ख़्म हो तो ऐसा शख़्स बग़ैर वुज़ू और बगैर तयम्मुम नमाज़ पढ़ेगा और फिर उन नमाज़ों को लौटाएगा भी नहीं।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–708)

अगर हाथ कुहनी से कम कटा हुआ हो तो कोई वुज़ू कराने वाला हो तो धोना वाजिब है और अगर मौजूद न हो तो ज़रूरी नहीं है। (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

पागल और बेहोश का हुक्म

मस्अलाः जो शख़्स पागल हो जाए या उस पर बेहोशी

तारी हो जाए, पूरे चौबीस घन्टे यही हाल रहे तो बेहोशी के ख़त्म होने के बाद उन पाँच वक़्तों की क़ज़ा करेगा। और अगर उसका जुनून और बेहोशी छटी नामज़ के वक़्त बढ़ जाए तो फिर वह उन नमाज़ों की क़ज़ा नहीं करेगा।
(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़हा–707 व किताबुलफ़िक्ह जिल्द–1 सफ़हा–788)

भंग व शराब से अक्ल जाने पर नमाज़ का हुक्म

मस्अला: नमाज़ी की अक़्ल अगर भंग या शराब या किसी और दवा के इस्तेमाल से ज़ाएल हुई है तो उस पर बेअक़्ली के ज़माने की नमाज़ों की क़ज़ा लाज़िम है, अगरचे अक़्ल के ज़ाएल होने की मुद्दत लम्बी हो, इसलिए कि ये अक़्ल का ज़ाएल होना खुद बंदा के फ़ेल से लाहिक़ हुआ है, जैसे कोई सो रहा है तो सोने के ज़माने की नमाज़ों की क़ज़ा लाज़िम है, साक़ित नहीं होती, इसी तरह खुद कुछ खा कर बेहोश हुआ है तो उसकी वजह से भी नमाज़ साक़ित नहीं होती है।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़हा–708)

नमाज़ की हालत में पेट में क़राक़र होना?

मस्अला: बाज़ दफ़ा नमाज़ पढ़ते हुए पेट में क़राक़र हो कर एसा शुब्हा होता है कि शायद रीह निकल गई हो, ऐसी शक की हालत में नमाज़ न तोड़े, जब तक आंवाज़ या बदबू न आ जाए नमाज़ से न फिरे।

(फ़तावा मुहम्मदया मियाँ साहब (रह.) सफ़्हा–67)

मक़सद ये कि शक व शुब्हा न किया जाए, जब तक कि आवाज़ सुन कर या बदबू सूंघ दर रीह निकलने का यक़ीन न हो जाए। (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

रियाह रोक कर नमाज़ पढ़ना

मस्अला: रियाह रोक कर नमाज़ अदा करने की सूरत में नमाज़ हो गई, अलबत्ता इसमें कराहत है जबकि अगर क़ल्ब उसका इसमें ज़्यादा मशग़ूल हो तो कराहते तहरीमी होगी वरना तंज़ीही। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–125, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–612 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–230)

मस्अला: पेशाब रोक कर जमाअत में शिरकत करने में नमाज़ मकरूहे तहरीमी है, लेकिन ये उस वक़्त है कि पेशाब व पाख़ाना की ऐसी हाजत हो कि उसका दिल उसमें मशग़ूल हो।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–146, व रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–600)

नमाज़ में खुजाना?

मस्अला: नमाज़ में खुजलाहट, ख़ारिश जितनी मरतबा भी हो खुजाना दुरुस्त है, मुफ़सिदे नमाज़ नहीं है, ख़ारिश अगर काफी मरतबा हो तो वह अमले कसीर की तारीफ़ से ख़ारिज है।

मस्अला: नाक से मैल निकालना ये बुरा है, अगरचे नमाज़ उससे फ़ासिद नहीं होती मगर ये मकरूह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–145 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–60)

सेहत के ज़माने की नमाज़ हालते बीमारी में पढ़ना

मस्अला: मरीज़ अपनी सेहत की हालत में क़ज़ा शुदा नमाज़ को अपने मरज़ में जिस तरह पढ़ने पर कुदरत रखता होगा उसी तरह अदा करेगा, मसलन हालते सेहत की नमाज़ क़ज़ा हुई थी अब अगर उस नमाज़ को बीमारी के ज़माने में बैठ कर पढ़ेगा तो उज़्र की वजह से उसकी ये नमाज़ जाइज़ होगी, लेकिन अगर हालते बीमारी की क़ज़ा शुदा नमाज़ हालते सेहत में बैठ कर पढ़ेगा तो दुरुस्त नहीं होगी, क्योंकि उस वक़्त उसको कोई उज़्र नहीं है।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–748, किताबुस्सलात)

मरीज़ और माज़ूर का क़िब्ला?

मस्अला: उस शख़्स का क़िब्ला जो अपने मरज़ की वजह से क़िब्ला रुख़ होने से मजबूर हो, और ऐसा ही हर वह शख़्स जिससे नमाज़ के अरकान साक़ित हो चुके हों, उन सब का क़िब्ला उनकी कुदरत वाली जेहत है यानी जिस तरफ़ वह रुख़ कर के मजबूरी में नमाज़ पढ़ सकता हो नमाज़ पढ़ेगा। नमाज़ जाइज़ होगी, इन मजबूरों

के लिए क़िब्ला रुख़ होना लाज़िम नहीं है। अगरचे बीमार जो खुद क़िब्ला रुख़ नहीं हो सकता लेकिन उसके पास ऐसा आदमी (तीमारदार) है जो उसको क़िब्ला रुख़ कर सकता है तब भी क़िब्ला रुख़ होना (बीमार व मजबूर के लिए) लाज़िम नहीं है।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–78, आलमगीरी जिल्द–3 सफ़्हा–56)

(इस्तिक़बाले क़िब्ला भी शर्त है, मगर फ़ुक़हा ने सराहत की है कि आजिज़ के लिए जेहत पर क़ुदरत हो काफ़ी है)

मस्अला: मरीज़ के नीचे नापाक कपड़े हैं और ये सूरत है कि जो कपड़ा बिछाते हैं फ़ौरन नापाक हो जाता है तो उसी हालत में नमाज़ पढ़े, और अगर दूसरा बिस्तर नापाक नहीं होता लेकिन बिस्तर (कपड़े वग़ैरा) बदलने में मरीज़ को तकलीफ़ होती है तो बिस्तर न बदलें।

(फ़तावा आलमगीरी जिल्द–3 सफ़्हा–56)

मस्अला: मरीज़ का मजबूरी की हालत में कपड़ा पाक न हो सके और नापाक रह सके तो उसकी नमाज़ सहीह है (उसी हालत में) और अगर कपड़ा पाक बदल सकता था और न बदला तो क़ज़ा लाज़िम होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–433, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–281, बाबुअहकामिलमाज़ूर)

मस्अला: मरीज़ सर्दी वग़ैरा की वजह से अपने तमाम बदन और मुंह को चादर वग़ैरा में छिपा कर नमाज़ पढ़े तो नमाज़ उस मरीज़ की सहीह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–433, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–280 बाबु शुरूतिस्सलात)

बे नमाज़ी की तरफ़ से फ़िदया दें तो वह बरी होगा या नहीं?

मस्अलाः बिला वसीय्यते मैयत के और बिला माल छोड़ने के वरसा के ज़िम्मा कोई कफ़्फ़ारा (मरने वाले की तरफ़ से) वाजिब नहीं है, अगर तबर्रुअन कफ़्फ़ारा उसकी नमाज़ों का अदा करें तो दुरुस्त है और बहुत अच्छा है। शायद अल्लाह तआला उसके गुनाहों से दरगुज़र फ़रमा दे इसमें कुछ हरज नहीं है, अगरचे ये यक़ीन नहीं है कि मैयत बरी हो जाएगी, मगर कुछ उम्मीद बराअत की है और ये फ़िदया का देना नमाज़ छोड़ने पर दलील नहीं बना सकता (माल दारों को) क्योंकि औवल तो तारिके नमाज़ को क्या यक़ीन है कि उसके वरसा फ़िदया अदा करेंगे या नहीं, दूसरे बग़ैर वसीय्यत बग़ैर माल के छोड़े, वारिसों के तबर्रोअ (महज़ अपनी तरफ़) से फ़िदया अदा करने से बराअत यक़ीनी नहीं है। बहरहाल फ़रीज़ा का छोड़ना मासियत कबीरा है, इसका सवाल ज़रूर होगा, फ़िदया अदा न किया, बाक़ी मआफ़ी अल्लाह ताआला के इख़्तियार में है। "وَيَغْفِرُ مَا دُوْنَ ذٰلِكَ لِمَنْ يَّشَآءُ"

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–365, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–685, बाबु क़ज़ाउलफ़वाइत)

वसीयत के बावजूद फ़िदया न दिया तो?

मस्अलाः मैयत के वरसा मैयत के वसीयत कर जाने

और माल के छोड़ जाने के बावजूद अगर वसीयत को सुलुसे माल में से पूरा न करेंगे तो गुनहगार होंगे और मैयत भी मुवाख़ज़ए उख़रवी से बरी न होगी तावक़्तेकि अल्लाह तआला मआफ़ न फ़रावें।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–368, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–685, बाबु कज़ाउलफ़वाइत व फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–98)

नमाज़ों का फ़िदया कितना है?

मस्अला: कफ़्फ़ारा नमाज़ों का मरने के बाद वरसा को देना चाहिए। ज़िन्दगी में कफ़्फ़ारा का हुक्म नहीं है, और कफ़्फ़ारा नमाज़ का पौने दो सेर गंदुम है (यानी एक किलो 633 ग्राम) दिन रात में छः नमाज़ें लेनी चाहिऐं यानी मअ़ वित्र के। पस एक दिन की नमाज़ों का कफ़्फ़ारा पौने दो सेर गेहूं हुए। इख़्तियार है कि ख़्वाह गंदुम दे या नक़द। नक़द रुपये बेहतर है कि उसमें सब हवाइज पूरी हो सकती हैं, और अगर दीनी कुतुब ख़रीद कर देना चाहें तो ये भी दुरुस्त है, लेकिन फिर ये ज़रूरी होगा कि वह किताबें (ज़रूरत मंद ग़रीब) तलबा को तक़्सीम कर दी जाएँ, और उनकी मिल्क कर दी जाएँ। मदारिसे इस्लामिया में जिस तरह कुतुब वक़्फ़ रहती हैं इस तरीक़ा से जाइज़ नहीं है। इससे कफ़्फ़ारा अदा न होगा। मालिक बनाना ज़रूरी है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–364, फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–50)

मस्अलाः इसका मसरफ़ वही है जो ज़कात व सदक़ए फ़ित्र का मसरफ़ है और ज़्यादा मुस्तहिक़ वह लोग हैं जो ज़्यादा हाजतमंद हैं जैसे मक़रूज़ वग़ैरा, और अगर मदरसा में तलबा के वास्ते भेजा जाए तो ये भी अच्छा मसरफ़ है, लेकिन फ़ीस मनी आर्डर डराफ़्ट वग़ैरा इसमें महसूब (हिसाव में शुमार) न होगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–369)

मरीज़ का ज़िन्दगी में नमाज़ों का फ़िदया देना कैसा है?

मस्अलाः शैख़ फ़ानी को (बुढ़ापे व ज़िन्दगी के आख़री स्टेज पर) रोज़ा का फ़िदया देना दुरुस्त है लेकिन नमाज़ का फ़िदया (बदला) खुद उसको (अपनी ज़िन्दगी में) देना दुरुस्त नहीं है और नमाज़ें उस फ़िदया से साक़ित (मआफ़) न होंगी क्योंकि नमाज़ में ये वुसअ़त है कि अगर खड़े होकर न पढ़ सके तो बैठ कर पढ़े और बैठ कर भी न पढ़ सके तो लेट कर पढ़े और अगर रुकूअ़ व सुजूद के साथ नहीं पढ़ सकता तो इशारा से पढे, अलबत्ता उसके मरने के बाद जो नमाज़ें उसके ज़िम्मा रह जाएँ या रोज़े रह जाएँ और वसीय्यत फ़िदया देने की करे और माल भी छोड़े तो उसके वारिसों के ज़िम्मा फ़िदया अदा करना ज़रूरी है और हुक्म उसका ज़कात का सा है कि तमलीके फ़क़ीर (ज़रूरत मंद) उसमें ज़रूरी है। अगर मदारिसे इस्लामिया में तलबए मसाकीन के लिए दिया जाए तो ये भी दुरुस्त है, और इसमें सवाब है क्योंकि इल्मे दीन के लिए तलबा की इमदाद है।

(फ़ताव दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–438, बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–204, किताबुस्सौम)

मस्अला: तौबा से या हज से सिर्फ़ गुनाह मआफ़ होते हैं, फ़राइज़ मआफ़ नहीं होते, जैसे अगर किसी ने हज किया तो तौबा कर ली तो उसके ज़िम्मा कर्ज़दारों का कर्ज़ ऐसा ही वाजिब है जैसे हज करने से पहले था, इसी तरह हुक़ूक़ुल्लाह का भी जो कर्ज़ है (नमाज़ वग़ैरा) वह अदा करने से ही अदा होगा, तौबा से नमाज़ों की ताख़ीर की मासियत मआफ़ होगी और फ़ौरन अदा करना जो लाज़िम होता है, यहाँ तक कि अगर फिर क़ज़ा करनेमें ताख़ीर की तो अज़ सरे नौ गुनहगार होगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–337, शामी जिल्द–2 सफ़्हा–276)

मस्अला: क़ज़ा शुदा नमाज़ों का कफ़्फ़ारा उनका अदा करना है और हक़ तआला शानहू से इज्ज़ और नदामत के साथ तौबा करना है, सदक़ा देना नहीं है। हाँ अगर सदक़ा दे तो चूंकि सदक़ा से ग़ज़बे इलाही दफ़ा होता है तो उम्मीद है कि हक़ तआला शानहू का जो गुस्सा सबबे तर्के नमाज़ के था वह न रहे और किसी ग़रीब की हाजत बरारी से रहमते इलाही मुतवज्जेह हो जाए, बाक़ी अस्ल अदा करना नमाज़ का है, सदक़ा देने से नमाज़ (ज़िन्दगी में) साक़ित न होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–354)

मस्अला: क़ज़ा नमाज़ व रोज़े सिर्फ़ तौबा से मआफ़ नहीं होते बल्कि क़ज़ा उनकी लाज़िम है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–363, रद्दुलमुहतार

जिल्द-1 सफ़्हा-680)

हीलए इस्क़ात

सवालः इस्क़ात यानी हीला जो जनाज़ा की नमाज़ से क़ब्ल या बाद इस तरह दिया जाता है कि गेहूं एक मन नक़द कम अज़ कम सवा रुपया और क़ुरआन मजीद और ग़रज़ हीला देने वालों की ये है कि मुर्दा की तमाम क़ज़ा शुदा नमाज़ रोज़ा हज वग़ैरा का ये कफ़्फ़ारा हो जाता है, और ये जनाज़ा की नमाज़ पढ़ाने वाले को देते हैं और हीला लेने वाले बैठ जाते हैं और हाथ में क़ुरआन शरीफ़ ले लेते हैं और एक बड़ी सी दुआ भी पढ़ते हैं और कहते हैं कि हम ने क़बूल किया।

जवाबः हीला इस्क़ात मज़कूरा वारिसाने मैयत पर वाजिब नहीं और ऐसी वसीयत को भी फ़ुक़हा ने जाइज़ नहीं रखा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द-4 सफ़्हा-330, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द-1 सफ़्हा-679)

□□□

मुतफ़र्रिक़ मसाइल

जिस मुल्क में रात मुख़्तसर हो वहाँ पर नमाज़ का हुक्म?

हासिले सवाल ये है कि बरतानिया में उमूमन शिमाली हिस्सा में अक्सर गर्मी के मौसम में इशा का वक़्त ग्यारह बज कर तीन मिनट पर शुरू होता है और सुब्हे सादिक़ एक बज कर छियालीस मिनट पर हो जाती है। गोया रात की मिक़्दार दो घन्टा तैंतालीस मिनट तक हो जाती है। इमसाल रमज़ानुलमुबारक में ऐसा ही होगा। अब अगर वक़्त शुरू होते ही अज़ान देकर बारह चौदह मिनट पर भी नमाज़ शुरू कर दी जाए तो फ़र्ज़ व तरावीह से फ़रागत तक़रीबन डेढ़ घन्टा में होगी, इस तरह अब रात का हिस्सा कम व बेश सिर्फ़ एक घन्टा बचेगा, इस मुख़्तसर वक़्त में सेहरी खाना पीना और दूसरी ज़रूरीयात पूरी करना और मस्जिद जाना वग़ैरा सब कुछ करना बहुत मुश्किल व दुश्वार होगा तो अमल की क्या सूरत होगी?

तो उसका जवाब ये है कि अज़ीमत तो यही है कि सुन्नत के मुताबिक़ पूरे एक ख़त्म कुरआन पाक के साथ पूरी तरावीह पढ़ कर पूरा माहे मुबारक मुजाहदा में गुज़ार दें, वरना अगर माज़ूरी हो, मसलन कमज़ोरी हो या मरीज़ हो या मुलाज़मत की मजबूरी हो तो "الم تر کیف الخ" से

बीस रकआत तरावीह पूरी कर लें और अगर इसकी भी ताकत या मौका न हो तो ٍ और वित्र के दरमियान महज़ आठ रकअत तरावीह की नीयत से पढ़ लिया करें।

(ब) इस्काट लैंड या जहाँ भी ऐसा हो कि किसी महीना में मसलन मई जून और वस्ते जूलाई तक पूरी रात शफ़के अबयज़ बाद मग़रिब क़ाइम रहती है और सुब्हे सादिक़ होने पर ब्याज़ (सफ़ेदी) फैल कर मुकम्मल रौशनी मुहैया कर देती है तो ऐसे मक़ाम में इशा का वक़्त और सेहर के आख़िरी वक़्त का तअैयुन किस तरह किया जाए और नमाज़ किस तरह और किस वक़्त पढ़ी जाए?

तो उसका हुक्म ये है कि अगरचे अक्सर फ़ुक़हा अहनाफ़ (रह.) ने शफ़के अबयज़ के बाद ही शुरू वक़्ते इशा ब्यान किया है, लेकिन बाज़ मुहक़्क़िक़ीन फ़ुक़हा शफ़के अहमर के ग़ुरूब के बाद से ही वक़्ते इशा की इब्तिदा ब्यान करते हैं।

इसलिए मज़कूरा हालत में शफ़के अहमर के ग़ुरूब होते ही इशा का वक़्त तस्लीम कर के नमाज़े इशा सुब्हे सादिक़ का ब्याज़ शुरू होने से क़ब्ल क़ब्ल अदा कर ली जाए, और रमज़ानुलमुबारक में भी इशा के फ़र्ज़ व वित्र के दरमियान सुब्हे सादिक़ की सफ़ेदी ज़ाहिर होने से पहले तरावीह भी पढ़ लेने की कोशिश की जाए।

अगर बीस रकअत का मौक़ा "الم تر كيف الخ" पढ़ कर भी न मिले तो आठ रकअत ही पढ़ लिया करें, हाँ जहाँ इसका भी मौक़ा न हो तो सिर्फ़ इशा के फ़र्ज़ और वित्र ही पढ़ लिया करें, और अदा की नीयत से पढ़ें जैसा कि मुक़ीमीने बुलग़ार के लिए नमाज़े इशा के अदाएगी की

बहस में फुक़हा (रह.) ने ब्यान फ़रमाया है कि अगर शफ़क़ ख़त्म होने से क़ब्ल ही सुब्हे सादिक़ शुरू हो जाए और इशा का वक़्त न मिले जब भी मग़रिब की नमाज़ और फ़ज्र के दरमियान मग़रिब के बाद कुछ वक़्फ़ा दे कर इशा के फ़र्ज़ और वित्र ब नीयते अदा पढ़ लेना राजेह है।

(निज़ामुलफ़तावा सफ़्हा–47,. बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–475)

जहाँ इशा का वक़्त न मिले तो नमाज़े इशा का हुक्म

सवालः लंदन में बाईस मई से इक्कीस जूलाई तक इन दो माह की रातें सिर्फ़ साढ़े चार घन्टे फ़ी रात की है। उन अैयाम में ग़ुरूबे शफ़क़ नहीं होता। अब इस हाल में नमाज़े इशा के मुतअ़ल्लिक़ क्या हुक्म है? कि इशा का वक़्त ग़ुरूबे शफ़क़ के बाद है? लिहाज़ा मज़कूरा ज़ैल बातों की तफ़सील फ़रमाएँ:

(1) जहाँ वक़्त इशा न हो वहाँ नमाज़े इशा फ़र्ज़ है?

(2) अगर वह फ़र्ज़ होती है तो कब पढ़ी जाए?

(3) क्या तुलूए आफ़ताब के बाद क़ज़ा करे, अगर क़ज़ा हो तो उसका वक़्त मुक़र्रर कर के अज़ान व जमाअ़त के साथ?

जवाबः (इस मस्अले में काफ़ी तफ़सील व इख़्तिलाफ़ है। ख़ुलासा ये है कि) अगरचे इशा का वक़्त वहाँ नहीं आता, लेकिन इशा की नमाज़ वहाँ भी फ़र्ज़ है और दलील ये है कि अल्लाह तआ़ला ने तमाम मुसलमान बंदों पर पाँच वक़्त की नमाज़ फ़र्ज़ फ़रमाई है उनको हर जगह

और हर वक़्त पढ़ना चाहिए जैसा कि हदीसे दज्जाल में वारिद है कि एक दिन साल भर के बराबर होगा, सहाबए किराम (रज़ि.) ने अर्ज़ किया कि नमाज़ों की निस्बत क्या हुक्म है? आँ हज़रत (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि: "उस दिन में साल भर की नमाज़ें पाँचों वक़्त का अंदाज़ा कर के पढ़ो, यानी हर एक चौबीस घन्टे में पाँच नमाज़ें अदा करो।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–61, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–20, किताबुस्सलात)

(2) जब इशा का वक़्त मिलता था और नमाज़े इशा पढ़ी जाती थी, मग़रिब बाद इतने फ़ासिले पर इशा पढ़ी जाए या गिर्दो नवाह में जहाँ इशा का वक़्त होता है और नमाज़े इशा उसके वक़्त पर अदा होती है तो उस हिसाब से पढ़ी जाए। एक सूरत ये भी है कि सुब्हे सादिक़ के बाद इशा और वित्र अदा की जाएँ फिर फ़ज्र के वक़्त में नमाज़े फ़ज्र पढ़ी जाए क्योंकि दुर्रेमुख़्तार में है कि जिसको इशा का वक़्त न मिले वह भी इशा और वित्र का मुकल्लफ़ है यानी इशा और वित्र की अदाएगी उस पर ज़रूरी है वह उन दोनों नमाज़ों का अंदाज़ा कर के पढ़े यानी जिस मौसम पर इशा का वक़्त होता था उस वक़्त मग़रिब के बाद जितने फ़ासिले से इशा की नमाज़ पढ़ी जाती थी उतने फ़ासिले पर इशा की नमाज़ अदा की जाए या अतराफ़ के शहरों और मुमालिक में जिस वक़्त इशा पढ़ी जाती हो उसके मुताबिक़ अमल किया जाए और इशा और वित्र में क़ज़ा की नीयत न की जाए क्योंकि क़ज़ा वह है जिसका वक़्त मिले और फ़ौत हो जाए, यहाँ तो इशा का वक़्त ही नहीं तो फिर क़ज़ा का मस्अला कहाँ रहा।

(दुर्रेमुख़्तार मअ शामी जिल्द–1 सफ़्हा–335)

(3) तुलूए आफ़ताब के बाद भी पढ़ सकते हैं मगर नमाज़े फ़ज्र और इशा में तरतीब मुश्किल है। लिहाज़ा सुब्हे सादिक़ के बाद नमाज़े फ़ज्र से पहले इशा के फ़र्ज़, अज़ान, तकबीर और जमाअत के साथ पढ़े।

मस्अलाः लेकिन वित्र बा जमाअत सिर्फ़ रमज़ानुलमुबारक में ही अदा किए जाते हैं।

(जौहरा नैयरा जिल्द–1 सफ़्हा–44, तफ़सील देखिए फ़तावा रहीमिया सफ़्हा–194 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–93 व निज़ामुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–59 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–44)

जहाँ छः माह दिन और छः माह रात हो तो नमाज़ कैसे पढ़ें?

मस्अलाः जिस मक़ाम पर सूरज छः महीने मुसलसल ग़ुरूब रहता है और छः महीने मुसलसल तुलूअ रहता है उस मक़ाम पर इंसानी आबादी मुश्किल है। बहरहाल वहाँ जो लोग आबाद हैं उनके लिए ये हुक्म है कि जिस वक़्त आफ़ताब ग़ुरूब हो, उस वक़्त से हर चौबीस घन्टा को घड़ी देख कर उनको दिन व रात का मजमूआ क़रार दे कर पाँचों नमाज़ें जिस फ़स्ल व अंदाज़ से पढ़ते हैं पढ़ते रहें। हदीसे दज्जाल से भी इस तरफ़ रौशनी मिलती है और शाह अब्दुलअज़ीज़ साहब (रह.) मुहद्दिस देहवली का रुजहान भी यही मालूम होता है।

फिर इसी तरह जब छः माह मुसलसल तुलूअ रहे,

उस वक़्त भी वही साबिक़ा हिसाब के एतेबार से हर चौबीस घंटा में शब व रोज़ की नमाज़ें अंदाज़ा के लिहाज़ से पढ़ते रहें और उसी तरह हिसाब से जब रमज़ानुलमुबारक का महीना आए तो उसमें रोज़ा भी रखें, (इसी एतेबार से) और जिस तरह दुनिया का अपना हर क़ाम (सोना, जागना, काम करना वग़ैरा) वक़्त के हिसाब से करेंगे। उसी तरह नमाज़ रोज़ा भी हिसाब कर के अदा करेंगे।

(2) जब एक मरतबा कोई नमाज़ पढ़ ली गई तो फिर अगर उसी नमाज़ का दोबरा वक़्त आएगा तो दोबरा नहीं पढ़ी जाएगी, वह ही एक बार की एक दिन में पढ़ी हुई काफ़ी होगी। यानी कोई शख़्स बर्क़ रफ़्तार जहाँ से ज़ुहर की नमाज़ पढ़ कर मश्रिक़ से मग़रिब की तरफ़ सफ़र करता है और मंज़िल पर पहुंचने के बाद वहाँ ज़ुहर का वक़्त होता है तो अब उसको नमाज़े ज़ुहर नहीं पढ़नी चाहिए, क्योंकि जो पढ़ कर आया था वह काफ़ी है।

(निज़ामुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–47, बहवाला मुस्लिम शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–401, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–30)

नमाज़ों में फ़स्ल करने का तरीक़ा

मस्अला: जहाँ मुसलसल कई दिन या कई हफ़्ता या कई माह आफ़ताब ग़ुरूब नहीं होता या तुलूअ़ नहीं होता तो वहाँ भी चौबीस घन्टा का एक दौरा यौमी व लैली (दिन व रात का एक चक्कर) मुतअ़ैयन कर के उसके अजज़ा में पाँचों नमाज़ें अदा करेंगे और नमाज़ों के दरमियान

फ़स्ल व फ़ासिला का वही तनासुब रखेंगे जो यहाँ मोतदिल दिन के मुल्कों में होता है और चौबीस घन्टा का एक दौरा यौमी व लैली मालूम करने के लिए कि उसकी इब्तिदा कब से और किस तरह करें तो उसका आसान और सहल तरीक़ा यही है कि जिस दिन आफ़ताब गुरूब होकर तुलूअ न होना शुरू हो जाए बल्कि मुसलसल गुरूब ही रहे, उस दिन के गुरूब से चौबीस घन्टा की मिक़दार को पूरे एक दिन एक रात की मिक़्दार शुमार कर के उसमें हसबे तसरीहे बाला पाँचों नमाज़ें अदा करें और फिर चौबीस घन्टा के निस्फ़े औवल को रात क़रार दे कर उसमें रात की नामज़ें अदा करें और फिर चौबीस घन्टा के निस्फ़े औवल को रात क़रार दे कर उसमें रात की नमाज़ें और निस्फ़े सानी को दिन क़रार दे कर दिन की नमाज़ें पढ़ते चले जाएँ और दिन बड़ा होते ही जिस दिन आफ़ताब तुलूअ हो कर मुसलसल तुलूअ रहे गुरूब न हो तो उसमें पहला दौरा मुकम्मल करने के लिए सिर्फ़ बारह घन्टा की मिक़्दार पर एक दौरा यौमी व लैली (दिन व रात) मुकम्मल क़रार दें और उस बारह घन्टा में दिन की नमाज़ें अदा करें। इस बारह घन्टा का दौरा ख़त्म होने के बाद फिर चौबीस चौबीस घन्टा की मिक़्दार का दौरा लैली व यौमी (रात व दिन) का मजमूआ मुक़र्रर करते जाएँ और उसके निस्फ़े औवल में रात की नमाज़ें (मग़रिब व इशा व फ़ज्र) पढ़ते जाएँ और निस्फ़ सानी में दिन की नमाज़ें (ज़ुहर व अस्र) पढ़ते जाएँ।

(निज़ामुलफ़तावा जिल्द—1 सफ़हा—59, इमदादुलअहकाम जिल्द—1 सफ़हा—404)

चाँद व मिर्रीख़ पर नमाज़ का हुक्म और तरीक़ा

सवालः हालाते हाज़िरा को देखते हुए बाज़ हज़रात सवाल करते हैं कि आज कल लोग चाँद पर उतरने की बातें करते हैं, तो क्या ये मुमकिन है?

अगर चाँद पर सुकूनत इख़्तियार कर लें तो क्या वहाँ पर नमाज़ पढ़ना सहीह होगा और किस तरफ़ रुख़ कर के नमाज़ पढ़ेंगे?

जवाबः अगर जगह मिल जाए तो जमाअ़त भी कर सकते हैं वरना तन्हा पढ़ लें, क़ज़ा न करें। क़िब्ला नुमा रख कर क़िब्ला मालूम कर सकते हैं, वरना तहर्री (अंदाज़ा और ग़ौर व फ़िक्र) कर के सिम्ते क़िब्ला मुतअय्यन कर लें, अगर तहर्री में ग़लती भी वाक़े हो जाए और तहर्री कर के सिम्ते क़िब्ला मुतअय्यन कर लें तो नमाज़ (फिर भी) अदा हो जाएगी।

नमाज़ अगर (जहाज़ की) सीट से अलाहिदा हो कर किसी ख़ाली जगह क़याम व रुकूअ़ व सज्दा के साथ न पढ़ी जाए तो सीट ही पर बैठे बैठे इशारा से रुकूअ़ व सुजूद कर के पढ़ लें, फिर (चाँद व मिर्रीख़ या दुनिया की) ज़मीन पर उतर कर फ़र्ज़ का इआ़दा कर लें, चाँद क्या बल्कि ज़ोहरा व मिर्रीख़ वग़ैरा पर भी जाना, रहना मुमकिन है, इसमें शरअ़न कोई मानेअ़ नहीं है और वहाँ नमाज़ पढ़ना भी सहीह होगा, बल्कि वहाँ भी नमाज़ पढ़ने का हुक्म और वुजूब इसी तरह बाक़ी रहेगा और नमाज़ क़िब्ला रुख़ ही पढ़नी होगी, क़िब्ला नुमा रख कर या

किसी और ज़रीए से, वरना तहर्री कर के क़िब्ला मुतअय्यन करेंगे और जिस तरह यहाँ (रूए ज़मीन पर) नमाज़ फ़र्ज़ है उसी तरह वहाँ भी फ़र्ज़ रहेगी।

(निज़ामुलफ़तावा जिल्द—1 सफ़्हा—76)

औलाद को नमाज़ पढ़ने के लिए मजबूर करना

मस्अला: बच्चे जब सात साल की उम्र को पहुंच जाएँ तो वालिदैन को चाहिए कि उन बच्चों को नमाज़ पढ़ने की ताकीद शुरू कर दें ताकि उन्हें नमाज़ की आदत पड़ जाए, और जब वह बालिग़ होने के क़रीब हों यानी दस साल की उम्र को पहुंच जाएँ तो उस वक़्त नमाज़ पढ़ने पर मजबूर करने के लिए ताकीदन उनकी पिटाई भी करें, पस बच्चों को शुरू ही से न सिर्फ़ ये कि ताकीद करनी चाहिए, बल्कि नमाज़ के अरकान व शराइत और नमाज़ से मुतअल्लिक़ ज़रूरी अहकाम व मसाइल भी उनको बतलाते और सिखलाते रहना चाहिए।

(मज़ाहिरे हक़ जिल्द—1 सफ़्हा—507, दुर्रेमुख़्तार जिल्द—1 सफ़्हा—8, किताबुस्सलात)

हज़रत अब्दुल्लाह इब्न मसऊद (रज़ि.) फ़रमाते हैं कि बच्चों की नमाज़ की निगरानी किया करो और अच्छी बातों की उनकी आदत डालो। आँ हज़रत (स.अ.व.) का इरशाद मुबारक है कि कोई शख़्स अपनी औलाद को तंबीह करे, ये एक साअ सदक़ा करने से बेहतर है। आप (स.अ.व.) ही का इरशादे मुबारक है कि कोई बाप अपनी औलाद को इससे अफ़ज़ल अतीया नहीं दे सकता कि उसको

अच्छा तरीका तालीम दे।

(फ़ज़ाइले नमाज़ शैख़ ज़करीया (रह.) सफ़्हा–25)

नमाज़ के लिए जगाना कैसा है?

मस्अलाः बिला शुब्हा सुब्ह का वक्त ग़फ़लत का वक़्त है, ग़ाफ़िलों को बेदार करने और नमाज़े बा जमाअत का आदी बनाने के लिए बा हिम्मत लोग निकलते हों तो उनको रोकने की ज़रूरत नहीं है। जब तक ज़रूरत हो ये जगाने का अमल जारी रखा जा सकता है, मगर काम सलीका से होना चाहिए। तमाशा न बना लिया जाए और बाइसे ईज़ा मुस्लिमीन न हो। मस्तूरात और माज़ूरीन मकानों में नमाज़ और ज़िक्रुल्लाह में मशगूल हों तो उनका लिहाज़ रखा जाए, और लोगों को चाहिए कि ग़ाफ़िलीन में अपना शुमार न कराएँ (ख़ुद ही नमाज़ के लिए उठ जाएँ) और लोगों को जगाने की ज़हमत से बचाएँ।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–291, बहवाला कबीरी जिल्द–4 सफ़्हा–361, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–361)

मस्अलाः सोए हुए आदमी को मुस्तहब ये है कि जमाअत से पहले बेदार कर दिया जाए ताकि जमाअत से महरूम न रहे।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–14 किताबुस्सलात)

मस्अलाः अगर किसी को नमाज़ के लिए उठाने में नागवारी हो और उसने नींद की हालत में कह दिया कि मैं नहीं जाऊँगा तो इस सूरत में तजदीदे ईमान व तजदीदे निकाह की ज़रूरत नहीं तौबा व इस्तिग़फ़ार करता रहे,

क्योंकि उसका मक़सद नमाज़ की फ़रज़ीयत से इनकार नहीं, बल्कि उठने से इनकार है। यानी कुछ देर में नींद पूरी होने पर पढूँगा।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–59)

एक साँस में सूरए फ़ातिहा पढ़ना?

मस्अला: फ़र्ज़ नमाज़ों में इमाम का एक साँस में अलहम्दु शरीफ़ पढ़ना कोई कमाल और ख़ूबी की बात नहीं है, और इसकी आदत कर लेना नापसंदीदा है और कराहते तंज़ीही से ख़ाली नहीं। तरतीलन और मआनी में तदब्बुर करते हुए ठहर ठहर कर पढ़ना चाहिए, इसकी ताकीद हदीस शरीफ़ से भी होती है।

अलहासिल फ़र्ज़ नमाज़ में एक साँस में सूरए फ़ातिहा पढ़ने की आदत क़ाबिले तर्क है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–225, बहवाला मिश्कात शरीफ़ जिल्ज–1 सफ़्हा–78)

फ़र्ज़ नमाज़ में बतदरीज पूरा क़ुरआन पढ़ना?

मस्अला: किसी ने फ़र्ज़ नमाज़ में इमाम हो कर तमाम क़ुरआन करीम तीन चार माह में पढ़ा। आख़िर पारा एक एक रकअत में कई कई सूरत और आख़िर रकअत में किसी क़द्र "الٓم" से "مفلحون" तक पढ़ा तो उसमें कुछ हरज नहीं है कि अगर पहली रकअत में क़ुरआन शरीफ़ ख़त्म करे मसलन "قُلْ اَعُوْذُ بِرَبِّ النَّاس" पढ़ी

तो दूसरी रकअत में सूरए बकरा में से कुछ आयतें पढ़ीं। लेकिन फ़राइज़ की एक एक रकअत में कई कई सूरतें पढ़ना तो अच्छा नहीं यानी ख़िलाफ़े औला है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–250)

नमाज़ की हालत में लिखी हुई चीज़ पढ़ ले तो क्या हुक्म है?

मस्अलाः क़स्दन व इरादतन दिल से पढ़ना और समझना मकरूह है अलबत्ता नमाज़ फ़ासिद न होगी, और अगर पढ़ने में ज़बान को हरकत हुई तो ये तलफ़्फ़ुज़ हुआ, उससे नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी और बिला क़स्द व इरादा इत्तिफ़ाक़न नज़र पड़ जाए तो मआफ़ है मकरूह नहीं है मगर नज़र जमाए न रखे।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–7 सफ़्हा–289, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–593, मराक़ियुलफ़लाह सफ़्हा–187, आपके मसाइल जिल्द–3 सफ्हा–313)

वक़्त की तंगी के वक़्त तयम्मुम से नमाज़ पढ़ना?

मस्अलाः कोई सेहत मंद है मगर वक़्त नमाज़ का तंग है, गुस्ल के बाद नमाज़ का वक़्त नहीं रहता तो तंगीए वक़्त की वजह से गुस्ल की जगह तयम्मुम करना जाइज़ नहीं है, अगर पढ़ ली तो वह नमाज़ सहीह नहीं हुई, उसका दोबारा पढ़ना फ़र्ज़ है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–10 सफ़्हा–264)

नमाज़े फ़ज्र के बाद किताब सुनाना कैसा है?

सवाल: सुब्ह की नमाज़ के बाद दुआ से क़ब्ल या बाद मुसल्ले पर बैठ कर रोज़ाना कोई दीनी किताब नमाज़ियों को सुनाना जबकि तिलावते कुरआन और वज़ीफ़ा पढ़ने वालों और मस्बूक़ व लाहिक़ को परेशानी हो, शरअ़न कैसा है?

जवाब: "حامدًا و مصليًا" मुसलमानों में आम्मतन दीन से बेरग़बती और बेअमली है, उसके दूर करने के लिए दीनी मोतबर किताब का सुनाना बहुत मुफ़ीद है, आला दर्जा तो ये है कि सब लोग जमाअ़त से नमाज़ पढ़ें, अगर किसी की रकअ़त रह जाए तो वह अपनी नमाज़ पूरी करे। उसके बाद किताब सुनाई जाए, जिनको कुरआन पाक की तिलावत करना हो वह दूसरे वक़्त भी कर सकते हैं, लेकिन नमाज़ियों का मजमा फिर बग़ैर नमाज़ के जमा नहीं होगा, और अगर दूसरे वक़्त तिलावत न कर सकता हो तो दूसरी जगह या एक तरफ़ को आहिस्ता भी तिलावत कर सकते हैं। इस तरह सब के इत्तिफ़ाक़ के साथ मशवरा से काम हो जाएगा और इनशाअल्लाह ख़ैर व बरकत भी होगी।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–10 सफ़्हा–267)

निस्फ़ शब के बाद इशा की नमाज़ पढ़ना?

मस्अला: निस्फ़ शब के बाद इशा की नमाज़ दुरुस्त

तो है और वह अदा सहीह हो जाती है मगर बिला उज़्र इतनी ताख़ीर करना मकरूह है।

(इमदादुलअहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–407)

नमाज़ में बिस्मिल्लाह पढ़ने का हुक्म

मस्अला: इमाम और मुनफ़िद (तन्हा पढ़ने वाला) हर रकअत के आग़ाज में यानी "سُبْحَانَكَ اللّٰهُمَّ" के बाद "بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْم" कहे, ख़्वाह नमाज़ सिर्री हो या जेह्री (हल्की आवाज़ हो या बुलंद आवाज़ वाली नमाज़ हो) मुक़्तदी तो कुदरती तौर पर बिस्मिल्लाह न कहे गा, क्योंकि हालते इक़्तिदा में (इमाम के पीछे) उसे कुरआन करीम पढ़ना जाइज़ ही नहीं है।

"سبحانك اللهم" के बाद "اعوذ بالله" और بسم الله पढ़नी चाहिए, अगर "اعوذ بالله" याद नहीं रही और बिस्मिल्लाह पढ़ ली तो लाज़िम है कि तऔवुज़ के बाद फिर पढ़े, लेकिन अगर बिस्मिल्लाह पढ़ना याद नहीं रहा और सूरए फ़ातिहा शुरू कर दी तो उसको जारी रखे फिर से बिस्मिल्लाह न पढ़े और सूरए फ़ातिहा के बाद कोई सूरत पढ़ने के वक़्त (नमाज़ में) बिस्मिल्लाह पढ़ना मकरूह तो नहीं है, लेकिन बेहतर यही है कि न पढ़ी जाए। नमाज़ ख़्वाह सिर्री हो या जेह्री सब का यही हुक्म है।

याद रहे कि बिस्मिल्लाह न सूरए फ़ातिहा का जुज़्व है और न किसी भी सूरत का जुज़्व है, अलबत्ता ये कुरआन करीम का जुज़्व है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–407)

नमाज़ में क़िराअत कितनी और कैसे?

मस्अला: नमाज़ में लम्बी क़िराअत जब ही मसनून है कि इमाम जानता हो कि मुक़्तदियों को गिरानी न होगी, लेकिन अगर ये मालूम हो कि उनको गिरानी होगी तो लम्बी क़िराअत मकरूह है। क्योंकि आँ हज़रत (स.अ.व.) ने एक बार फ़ज्र की नमाज़ में मुऔवज़तैन "قل اعوذبرب الفلق" और "قل اعوذبرب الناس" की सूरतों से नमाज़ अदा फ़रमाई। बाद में लोगों ने तअज्जुब से सवाल किया कि आप ने नमाज़ बहुत मुख़्तसर कर दी। आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया: "मैंने एक बच्चा के रोने की आवाज़ सुनी तो मुझे अंदेशा हुआ कि मबादा उसकी माँ आज़माइश में पड़ जाए।"

इस हदीस के मफ़हूम में मकज़ोर, मरीज़ और अह्ले हाजत सब शामिल हैं।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–410)

मस्अला: इमाम का तकबीरों में इतनी ही आवाज़ बुलंद करना जितना ज़रूरी हो सुन्नत है। ज़रूरत से बहुत ज़्यादा ऊँची आवाज़ निकालना मकरूह है, इसमें तकबीरे तहरीमा और दूसरी तकबीरों के दरमियान कोई फ़र्क़ नहीं है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–402)

मस्अला: नमाज़ में तिवाले मुफ़स्सल (यानी लम्बी सूरतें) सूरए हुजरात से सूरए अलबुरूज तक हैं और दरमियानी दरजा की सूरतें सूरए बरूज से लम यकुन तक हैं और छोटी लम यकुन से सूरए नास तक। लम्बी सूरतें फ़ज्र और ज़ुहर में पढ़ी जाएँ (जबकि मुक़्तदियों को गिरानी न

हो) लेकिन जुहर की सूरतें फ़ज्र की सूरतों से छोटी हों, और दरमियानी दर्जा की सूरतें अस्र और इशा में और छोटी सूरतें मग़रिब में पढ़ी जाएँ।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–408)

इमाम के लिए बुलंद आवाज़ का दर्जा क्या है?

सवालः हमारे इमाम साहब बहुत पस्त अवाज़ से क़िराअत करते हैं कि पहली सफ़ वाले भी बहुत ग़ौर से सुनें तब भी उनको सुनाई नहीं देता?

जवाबः इमाम बुलंद अवाज़, खुशइल्हान, तजवीद के मुताबिक़ सहीह सहीह क़िराअत करने वाला होना चाहिए, जो इस क़दर बुलंद आवाज़ से पढ़े कि तमाम मुसल्ली या जमाअ़त का अक्सर हिस्सा उसकी आवाज़ सुन सके और अगर इमाम साहब की आवाज़ इतनी पस्त हो कि तमाम या अक्सर मुसल्ली उनकी आवाज़ न सुन सकें तो कम अज़ कम अगर पहली सफ़ के आस पास के मुसल्ली उनकी आवाज़ सुन सकते हों तो नमाज़ हो जाएगी, मगर ऐसी पस्त आवाज़ वाले को इमाम बनाने की कोशिश न की जाए। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–236, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–498, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–179)

तन्हा नमाज़ पढ़ने वाला कितनी आवाज़ से क़िराअत करे?

सवालः सिर्री नमाज़ में क़िराअत किस तरह करनी

चाहिए। तसहीहहे हुरूफ़ काफ़ी है, या किस कदर आवाज़ होना ज़रूरी है?

जवाब: अहवत कौल ये है कि इस तरह पढ़े कि अपनी आवाज़ खुद सुन सके।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–1 सफ़्हा–237)

जेह्र व सिर की तशरीह

सवाल: अगर नमाज़ में किराअत इतनी आवाज़ से हो कि करीबी शख़्स को आवाज़ भिन भिन की सुनाई दे तो उससे नमाज़ में कोई हरज तो नहीं और किस कदर आवाज़ से जेह्र क़रार पाएगा?

जवाब: "حامدا و مصليا" अगर एक दो आमदी को इस तरह सुनाई दे तो नमाज़ में कोई ख़राबी नहीं है बल्कि सिर ही है। इमाम की आवाज़ को पहली सफ़ उमूमन सुन ले तो ये जेह्र है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–202)

ज़ाल्लीन को दाल्लीन पढ़ना?

सवाल: ज़ाल्लीन को दाल्लीन पढ़ने से नमाज़ होती है या नहीं?

जवाब: अरब के कुर्रा व उलमा भी ज़ाल्लीन को ऐसी सूरत में अदा करते हैं कि दाल मुफ़ख़्ख़म की आवाज़ निकलती है। इसलिए ये कहना मुश्किल है कि उन सब की नमाज़ नहीं होती, हालांकि वह जानने वाले असवात

(आवाज़) व मख़ारिजे हुरूफ़ के हैं।

(फ़तावा दारु... ूम जिल्द–4 सफ़हा–37)

मस्अला: जो शख़्स "ज़ाद" सही अदा करने पर क़ादिर हो कर उस जगह दाल पढ़ेगा, उसकी नमाज़ नहीं होगी (फ़तावा महमूदिया सफ़्हा–186 जिल्ज–2)

मस्अला: नामज़ में "ज़ाद" को "ज़ो" पढ़ने से नमाज़ फ़ासिद हो जाती है या नहीं? तो इस मस्अले के मुतअल्लिक़ ये ज़रूरी है कि क़सदन ज़ो पढ़ने से एहतेराज़ किया जाए, क्योंकि उसमें नमाज़ के फ़ासिद होने की रिवायत मौजूद है बल्कि शरह फ़िक़्ह अकबर में मुहीत से नक़्ल किया है कि तअम्मुद (हमेशा अमल, पढ़ना जान बूझ कर) कुफ़्र है। बावजूद इरादा अदाए "ज़ाद" अज़ मख़रज अगर मुशाबहत "ज़ो" या "दाल" के साथ हो जाए तो नमाज़ सहीह है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–47, बहवाला शरह फ़िक़्ह अकबर सफ़्हा–205, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–592, ज़ल्लतुल क़ारी)

मस्अला: ज़्वाद को उसके मख़रज से पढ़ना चाहिए, न निकल सके तो जैसे अदा हो जाए नमाज़ हो जाती है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–91 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–135, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–591)

होंट बंद कर के क़िराअत करना?

मस्अला: बाज़ लोग नमाज़ में इस तरह क़िराअत करते हैं कि चुप चाप अपने होंट बंद किए रहते हैं और दिल में सोचते और तसव्वुर करते हैं, इस तरह पढ़ने से (दिल

दिल में) क़िराअत का रुक्न अदा नहीं होता है। क़िराअत का रुक्न अदा होने के लिए कम से कम दर्जा ये है कि हुरूफ़ सहीह तौर पर निकलें और उसके पास वाला या ख़ुद अपनी क़िराअत की आवाज़ सुन सके। (सग़ीरी सफ़्हा–150)

मस्अलाः क़िराअत बग़ैर हरकते लब (होंट) मोतबर नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–240, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–497)

मस्अलाः ज़्यादा मोतबर और सहीह ये है कि नमाज़ में अलहम्दु शरीफ़ और सूरत इस तरह पढ़े कि अगर कोई मानेअ़ न हो तो अपने कान में आवाज़ आ जाए, अगर न आए तब भी नमाज़ सहीह हो जाती है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–52, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–498, बाबु फ़िलक़िराअत व फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–197)

(लेकिन होंट बंद कर के दिल ही दिल में न पढ़े, और न ही इतनी आवाज़ से पढ़े, कि क़रीब में नमाज़ पढ़ने वाले को ख़लल हो)। (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अलाः नमाज़ में क़िराअत इस तरह करना चाहिए कि ज़बान से सहीह सहीह हुरूफ़ अदा हों और आवाज़ दूसरों को न सुनाई दे (ताकि ख़लल न हो) दिन की नमाज़ों में (बुलंद आवाज़ से) इस तरह क़िराअत करना कि दूसरों को सुनाई दे मकरूह है, और अगर इस तरह दिल ही दिल में पढ़े कि ज़बान को हरकत न हो और हुरूफ़ भी अदा न हों तो नमाज़ ही नहीं होगी। क्योंकि दिल ही दिल में पढ़ने से नमाज़ नहीं होती, ज़बान से अलफ़ाज़ का अदा करना ज़रूरी है, अपने आपको सुनाई

देना शर्त नहीं है, बल्कि ज़बान से सहीह अलफ़ाज़ का अदा होना शर्त है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–206)

मस्अला: नमाज़ में किराअत अलफ़ाज़ में पढ़ना ज़रूरी है, महज ख़्याल से किराअत करने से नमाज़ न होगी, जब तक ज़बान को हरकत न दी जाए। नीज़ इसी तरह नमाज़ में कुरआन करीम के बजाए किसी आयत का तरजुमा पढ़ना रवा नहीं है।

(हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–74, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–82, शहर वक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–149)

ख़ानए कअ़बा के अन्दर नमाज़ पढ़ने का ब्यान

जैसा कि कअ़बा शरीफ़ के बाहर उसकी मुहाज़ात पर नमाज़ पढ़ना दुरुस्त है वैसा ही कअ़बा मुकर्रमा के अन्दर भी नमाज़ पढ़ना दुरुस्त है। इस्तिक़बाले क़िब्ला हो जाएगा ख़्वाह जिस तरफ़ पढ़े इस वजह से कि वहाँ चारों तरफ़ क़िब्ला है जिस तरफ़ मुंह किया जाए कअ़बा ही कअ़बा है। मगर हाँ जब एक तरफ़ मुंह कर के नमाज़ शुरू की जाए तो फिर हालते नमाज़ में दूसरी तरफ़ फिर जाना जाइज़ नहीं और जिस तरह नफ़्ल नमाज़ जाइज़ है उसी तरह फ़र्ज़ नमाज़ भी। (रद्दुलमुहतार)

मस्अला: कअ़बा शरीफ़ा की छत पर खड़े हो कर अगर नमाज़ पढ़ी जाए तो वह भी सहीह है इसलिए कि जिस मक़ाम पर कअ़बा है वह ज़मीन और उसके मुहाज़ी जो हिस्सा हवा का आसमान तक है सब क़िब्ला है।

क़िब्ला कुछ कअ़बा की दीवारों पर मुनहसिर नहीं, इसीलिए अगर कोई शख़्स किसी बुलंद पहाड़ पर खड़े हो कर नामज़ पढ़े जहाँ कअ़बा की दीवारों से बिल्कुल मुहाज़ात न हो तो उसकी नमाज़ बिलइत्तिफ़ाक़ दुरुस्त है लेकिन चूंकि उसमें कअ़बा की बे ताज़ीमी है और इससे नबी (स.अ.व.) ने मना भी फ़रमाया है, इसलिए मकरूहे तहरीमी होगी।

मस्अला: कअ़बा के अन्दर तन्हा नमाज़ पढ़ना भी जाइज़ है और जमाअ़त से भी, और वहाँ ये भी शर्त नहीं कि इमाम और मुक़्तदियों का मुंह एक ही तरफ़ हो, इसलिए कि वहाँ हर तरफ़ क़िब्ला है। हाँ ये शर्त ज़रूर है कि मुक़्तदी इमाम से आगे बढ़ कर न खड़े हों। अगर मुक़्तदी का मुंह इमाम के मुँह के सामने हो तब भी दुरुस्त है इसलिए कि इस सूरत में वह मुक़्तदी इमाम से आगे न किया जाएगा, आगे जब होता कि जब दोनों का मुंह एक ही तरफ़ होता मगर हाँ उस सूरत में नमाज़ मकरूह होगी, इसलिए कि किसी आदमी की तरफ़ मुंह कर के नमाज़ पढ़ना मकरूह है, लेकिन अगर कोई चीज़ बीच में हाएल कर ली जाए तो ये कराहत न रहेगी।

(दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

मस्अला: अगर इमाम कअ़बा के अन्दर व मुक़्तदी कअ़बा से बाहर हलक़ा बाँधे हुए हों तब भी नमाज़ हो जाएगी। अगर सिर्फ़ इमाम कअ़बा के अन्दर होगा और मुक़्तदी उसके साथ न होगा तो नमाज़ मकरूह होगी इसलिए कि उस सूरत में इमाम का मकाम बक़द्र एक क़द के मुक़्तदियों से ऊँचा होगा।

(रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–158, 159)

क्या सिर्फ़ फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ लेना काफ़ी है?

सवाल: क्या नमाज़ों में सिर्फ़ फ़र्ज़ अदा करने से नमाज़ हो जाती है? जबकि सुन्नत, नफ़्ल, वित्र वाजिब न पढ़े जाएँ? क्योंकि हमारे एक अज़ीज़ का कहना है कि आज के मशीनी दौर में किसी को इतनी फ़ुरसत नहीं कि सुन्नत व नफ़्ल पढ़े। बाज़ हज़रात ग़ैर मुमालिक में सिर्फ़ फ़र्ज़ पढ़ कर नमाज़ ख़त्म करते हैं, अगर उनको मना किया जाए तो कहते हैं कि इंसान की नीयत दुरुस्त होनी चाहिए, और बिल्कुल ही नमाज़ छोड़ देने से तो बेहतर है कि सिर्फ़ फ़र्ज़ पढ़ लिए जाएँ। क्या नमाज़ पढ़ने का ये तरीक़ा दुरुस्त है?

जवाब: फ़र्ज़ तो फ़र्ज़ है और वित्र की नमाज़ वाजिब है। गोया अमलन वह भी फ़र्ज़ है, उसका छोड़ना गुनाह है।

अगर वक़्त पर न पढ़ सके तो क़ज़ा लाज़िम है। सुन्नते मुअक्कदा को छोड़ना बुरा है, और उसके छोड़ने की आदत बना लेनां भी गुनाह है। सुन्नते ग़ैर मुअक्कदा और नवाफ़िल में इख़्तियार है ख़्वाह पढ़े या छोड़ दे।

आज के मशीनी दौर की मसरूफ़ियात के बावजूद ख़ुराफ़ात के लिए "गप शप" के लिए और तफ़रीह के लिए और न मालूम किन किन चीज़ों के लिए वक़्त निकाला जाता है, तो मशीनी दौर की अदीमुलफ़ुरसती का नज़ला नमाज़ पर ही क्यों गिराया जाए?

रहा ये कि "आदमी की नीयत दुरुस्त होनी चाहिए" बिल्कुल बजा है, लेकिन इससे ये कैसे लाज़िम आया कि

आदमी का अमल ख़राब होना चाहिए? नीयत के साथ अमल का दुरुस्त होना भी तो ज़रूरी है, वरना निरी नीयत से क्या होगा। (आपके मसाइल जिल्द–2 सफ़्हा–338)

ज़ेरेनाफ़ के बाल न मूंडने वाले की नमाज़ का हुक्म?

मस्अला: जो शख़्स ज़ेरेनाफ़ के बाल न मूंडे उसकी नमाज़ सहीह है, लेकिन ये फ़ेल बुरा है और चालीस दिन से ज़्यादा मूए ज़ेरेनाफ़ को बाक़ी रखना मकरूह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–50, आलमगीरी मिस्री जिल्द–5 सफ़्हा–368)

क्या संख बजने से नमाज़ में ख़राबी आती है?

मस्अला: नमाज़ के वक़्त ज़िद में संख बजाया जाए और शोर व गुल किया जाए, अगर बज़रीए हुक्काम उसका इन्सिदाद हो सके तो इन्सिदाद ज़रूरी है, क्योंकि अगरचे नमाज़ में किसी के शोर व गुल और संख बजाने से फ़साद नहीं होता, लेकिन नमाज़ियों को तशवीश व परागंदगी की ख़ातिर और अदमे ख़ुशूअ व ख़ुज़ूअ उसकी वजह से ज़रूर होगा। लिहाज़ा ज़रूरी है कि हुक्काम के ज़रीए से उनको नमाज़ के वक़्त बजाने से रोका जाए क्योंकि फ़ुक़हा ने नमाज़ के वक़्त ज़ोर से ज़िक्र को मना किया है कि उससे नमाज़ में परागंदगी होगी और मुमकिन है कि नमाज़ी क़िराअत वग़ैरा भूल जाए। पस जब कि ज़िक्रे जेहर को बवक़्ते नमाज़ मना किया जाता है तो बाजा और संख

बजाना नमाज़ के वक्त ज़ाहिर है कि निहायत बुरा है, लेकिन चूंकि मुसलमानों को कुदरत नहीं है कि अज़खुद उसको रोकें, लिहाज़ा हुक्काम के ज़रीए अगर इन्सिदाद हो सके तो कराया जाए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–54, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–618)

नमाज़ की हालत में नाबीना का रुख़ सहीह करना?

मस्अला: नाबीना अगर बेरुख़ नमाज़ पढ़ रहा हो तो उसको हाथ से भी सीधा करना दुरुस्त है और ज़बान से भी, इससे नमाज़ में कुछ ख़लल न आएगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–103)

(यानी ग़लत रुख़ पढ़ने वाले की नमाज़ में कोई ख़लल न होगा और सीधा करने वाला फ़र्ज़ नमाज़ में है तो उसको एक हाथ के इशारा से (अमले कलील से) सहीह रुख़ कर देना चाहिए और अगर नमाज़ पढ़ने वाला ज़बान से बोलेगा तो बोलने वाले की नमाज़ न होगी)

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अला: अगर एक हाथ के इशारा और हरकत से नमाज़ के अन्दर क़रीब में खड़े हुए नाबीना के रुख़ को ठीक कर दे तो इस क़दर फ़ेल कलील है और फ़ेले कलील से नमाज़ फ़ासिद नहीं होती, और अगर ज़रूरत दोनों हाथों से ठीक करने की हो तो ये फ़ेले कसीर (ज़्यादा काम) है अगर ऐसा करेगा तो ठीक करने वाले की नमाज़ न होगी, और बेहतर यही है कि अगर क़रीब

में खड़े हुए नाबीना के रुख़ को ये नमाज़ी ठीक कर ले तो फिर अज़ सरे नौ नीयत बाँधे, और अगर उसने ठीक न किया तो नाबीना की नमाज़ हो जाती है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–98, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–583)

मस्अलाः नमाज़ की हालत में इंसान या हैवान हमला आवर हो तो नमाज़ तोड़ दे। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–99, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–578)

नमाज़ी को पंखा करना?

मस्अलाः नमाज़ी को अगर कोई शख़्स लिवज्हिल्लाह पंखा करे और नमाज़ी को उससे राहत हो और वह बा इत्मीनान नमाज़ पूरी करे तो इससे नमाज़ में कुछ फ़साद और ख़लल और कराहत न होगी। नमाज़ पढ़ने वाला अगर इससे ख़ुश हो, तब भी उसकी नमाज़ में कुछ फ़साद और कराहत न आएगी और मसाजिद में जो पंखे लगे हुए हैं उनसे किसी की नमाज़ में कुछ कराहत न होगी। अलबत्ता नमाज़ पढ़ते हुए कि ये अम्र ख़िलाफ़े अदब के है, अगरचे नमाज़ में इससे भी कुछ कराहत न आएगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–101)

मस्अलाः नमाज़ पढ़ने में अगर पेशानी पर मिट्टी लग जाए तो नमाज़ में न पोंछे, अगर नमाज़ के बाद साफ़ करे तो कुछ हरज नहीं है, लेकिन अच्छा ये है कि न पोंछे। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–102, गुनयतुलमुस्तमली)

नमाज़ में वसवसों का आना और उसका एलाज

मस्अलाः नमाज़ में दुनयवी ख़्यालात और वसाविस के पैदा होने से नमाज़ में फ़साद नहीं होता, हत्तलवुस्अ वसवसों और ख़्यालात को दफ़ा करें।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–56, बहवाला मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–18)

मस्अलाः नमाज़ में वसाविस व शुकूक व औहाम के दफ़ईया की यही सूरत है कि उसको वसवसए शैतानी समझ कर उसकी तरफ़ इल्तिफ़ात न करें और उस पर अमल न करे और नमाज़ पूरी करे। अहादीस में उसका यही एलाज वारिद हुआ है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–117, मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–19)

मस्अलाः महज़ ख़्यालात आने या दिल से दुआ निकलने से नमाज़ में ख़लल नहीं आता, खुदावंद तआला की अज़मत और जलाल का तसव्वुर कर के नमाज़ पढ़े कि मैं उसको देख रहा हूँ और वह मुझ को देख रहा है और हर रुक्न के आदाब की रिआयत रखी जाए, तो इंशाअल्लाह नमाज़ का हज़ हासिल होगा और ख़्यालात भी परेशान नहीं करेंगे।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–209)

अहादीस से साबित शुदा कलिमात आख़िर सूरत में जमाअ़त की नमाज़ में न कहे जाएँ!

मस्अलाः अलावा आख़िर सूरए फ़ातिहा में आमीन हल्की

आवाज़ से कहने के, सूरए बक़रा के ख़त्म पर आमीन। बनी इसराईल के आख़िर में तकबीर, सूरए मुल्क के आख़िर में "اللّٰهم ربنا ورب العالمين" सूरए क़्यामह व मुरसलात व वत्तीन के आख़िर में कलिमाते मशहूरा व मसनूना, सूरए वज़्ज़ुहा से आख़िर कुरआन तक हर सूरत के आख़िर में तकबीर। बाज़ आयात के आख़िर में कुछ अलफ़ाज़ बतरीक़े मसनून असनाए तिलावत (देख कर पढ़ने में) कहे जाएँ, जैसे सूरए ताहा में "وَقُل رَّبِّ زِدْنِي عِلْمًا" के बाद हज़रत इब्न अब्बास (रज़ि.) "اَللّٰهُمَّ زِدْنِي عِلْمًا وَّ اِيْمَانًا وَّيقينًا" फ़रमाया करते थे वग़ैरा वग़ैरा। ये अज़्कार हनफ़ीया (रह.) के नज़दीक नवाफ़िल (बग़ैर जमाअत) या "منفرداً خارج عن الصلوٰة" (तन्हा देख कर तिलावत करने वाले) पर महमूल हैं, फ़राइज़ और नवाफ़िल की जमाअत (तरावीह वग़ैरा) में दुरुस्त नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–225)

(यानी सूरए फ़ातिहा के ख़त्म पर हल्की आवाज़ से आमीन कहने के अलावा जमाअत की नमाज़ में अलफ़ाज़े मसनूना न कहे जाएँ) (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अला: आयात का जवाब नमाज़ की जमाअत में देना जाइज़ नहीं है, जवाब न देना चाहिए। अलबत्ता ख़ारिजे नमाज़ से अगर कोई आयते मज़कूरा पढ़े तो जवाब देना मसनून व मुस्तहब है, और हुज़ूर अकरम (स.अ.व.) से अक्सर ये, जवाबात नमाज़ से ख़ारिज में ही मन्क़ूल हैं। नमाज़ में अगर कहीं वारिद है तो वह तालीम के लिए है, या इब्तिदाए इस्लाम में था। जब तक नमाज़ में ज़्यादा क़ुयूद न थीं मसलन बातें कर लेते थे, अपनी छूटी हुई

रकअतें जल्दी पढ़ कर इमाम के साथ मिल जाते थे वग़ैर वग़ैरा। रफ़्ता रफ़्ता ये उमूर ममनूअ़ हो गए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–255, बहवाला मिरक़ातुलमफ़ातीह शरह मिश्कात जिल्द–1 सफ़्हा–536, बाबुलकिराअत)

नमाज़े फ़ज्र में क़िराअत की मिक़्दार

मस्अला: सुब्ह में इमाम को इतनी मुख़्तसर क़िराअत "اَلَمْ نَشْرَحْ وَالتِّيْن" वग़ैरा की आदत बना लेना ख़िलाफ़े सुन्नत है और मकरूह है, कोई ख़ास उज़्र न हो तो इमाम और ऐसे ही मुन्फ़रिद (तन्हा पढ़ने वाले के लिए) नमाज़े फ़ज्र में सूरए हुजरात से लेकर सूरए बुरूज तक की सूरतों में से एक एक सूरत एक एक रकअत में पढ़े। ये मसनून और मुस्तहब है, या किसी जगह से दरमियानी दर्जा की कम से कम चालीस आयतें ये कम से कम है, मुतवस्सित दर्जा ये है कि पच्चास आयतों से साठ आयतों तक और इससे बेहतर ये है कि सौ आयतों तक पढ़ें। इस सिलसिला में इमाम और मुक़्तदियों की हिम्मत और शौक़ का लिहाज़ रखना चाहिए, अलबत्ता अगर वक़्त की तंगी, या किसी और ज़रूरत या उज़्र की बिना पर क़िराअत मुख़्तसर करनी पड़े तो कोई मुज़ाएक़ा नहीं है जाइज़ है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–155, कबीरी सफ़्हा–303, शामी सफ़्हा–504)

मस्अला: रमज़ानुलमुबारक में फ़ज्र की नमाज़ (आम दिनों से) वक़्त से पहले पढ़ ली जाए तो कोई हरज नहीं

है, बल्कि औला है कि सब लोग शिरकत कर सकेंगे और जमाअ़त बड़ी होगी। नमाज़ का वक़्त होने पर पढ़ें।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–132)

रकअ़त हासिल करने के लिए दौड़ना?

सवालः इमाम साहब रुकूअ़ करें उस वक़्त लोग रुकूअ़ में शिरकत के लिए दौड़ते हैं जिससे दूसरे नमाज़ियों को भी ख़लल होता है, तो इस तरह दौड़ना शरअ़न कैसा है?

जवाबः सूरते मसऊला में दौड़ना मना है ख़्वाह रुकूअ़ न मिले। हदीस शरीफ़ में है कि नमाज़ के लिए दौड़ते हुए न आओ, इत्मीनान के साथ चल कर आओ, रकअ़त निकल जाए तो उसको बाद में अदा कर लो।

(मुस्लिम शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–220)

इसके अलावा ये भी ख़्याल रहे कि मस्जिद में दौड़ना मस्जिद में एहतेराम के ख़िलाफ़ है, ख़ुसूसन जबकि नमाज़ियों को भी तशवीश हो, जिससे इजतिनाब ज़रूरी है। एक हदीस में है जब तुम इक़ामत सुनो तो नमाज़ के लिए इत्मीनान और वक़ार से चलो, दौड़ो मत।

(बुख़ारी पारा–2 सफ़्हा–88, फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–188)

नमाज़ कब तोड़ी जाए?

मस्अलाः नमाज़ का तोड़ना कभी हराम होता है कभी मुस्तहब, कभी मुबाह और कभी वाजिब, अगर कोई उज़्र

न हो तो नमाज़ तोड़ना हराम होगा, और जमाअत मिलने के लिए तोड़ना मुस्तहब है, और माल ज़ाए हो रहा हो तो नमाज़ की नीयत तोड़ना मुबाह है और जान बचाने के लिए नमाज़ की नीयत तोड़ना वाजिब है।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–649)

मस्अला: नमाज़ का शुरू कर के क़तअ कर देना बे किसी उज़्र के हराम है, ख़्वाह फ़र्ज़ नमाज़ हो या वाजिब या नफ़्ल और अगर माल के ख़ौफ़ से क़तअ कर दी जाए ख़्वाह अपना माल हो या किसी दूसरे मुसलमान भाई का तो जाइज़ है। मसलन कोई नमाज़ पढ़ रहा हो और किसी शख़्स को देखे कि उसका या किसी दूसरे का माल चुराए लिए जाता है, और अगर नमाज़ की तकमील के लिए क़तअ करे तो मुस्तहब है, मसलन कोई शख़्स तन्हा फ़र्ज़ पढ़ रहा हो और जमाअत में शरीक होने की ग़रज़ से जो नमाज़ की तकमील का ज़रीआ है उस फ़र्ज़ को तोड़ दे और अपनी या किसी दूसरे की जान बचाने के लिए क़तअ करना फ़र्ज़ है। अगर कोई शख़्स किसी को नमाज़ की हालत में फ़रयाद रसी के लिए बुलाए तो ऐसी हालत में भी तोड़ देना फ़र्ज़ है, अगरचे ये ने मालूम हो कि उस पर कौन मुसीबत आई है, या मालूम हो और जानता हो कि मैं उसकी मदद कर सकूँगा।

मस्अला: अगर किसी को नमाज़ पढ़ने की हालत में उसके माँ बाप पुकारें तो अगर फ़र्ज़ नमाज़ हो तो न तोड़े, और नफ़्ल हो और वह जानते हों कि नमाज़ में है तो भी न तोड़ना बेहतर है और तोड़ दे तो कुछ मुज़ाएका नहीं, और अगर वह लोग न जानते हों कि नमाज़ में है

तो तोड़ दे इस ख़्याल से कि वह नाखुश न हो जाएँ।

(शामी वग़ैरा, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–126)

मस्अला: जिन हालतों में नमाज़ की नीयत तोड़ने का हुक्म है या उसकी इजाज़त है उन हालतों में नमाज़ में खड़े होने की हालत में नीयत तोड़ेगा, इसलिए कि नमाज़ में बैठना उस वक़्त है जब हलाल होने के लिए हो और यहाँ नमाज़ को क़तअ़ करना और तोड़ना है, हलाल करना नहीं है, लिहाज़ा नमाज़ की नीयत तोड़ने में सिर्फ़ एक सलाम पर इक्तिफ़ा करे ज़्यादा सहीह यही है और इक्तिदा इमाम के पीछे करे (यानी अपनी नमाज़ को खड़े होने की हालत में एक सलाम से तोड़ कर इमाम के साथ जमाअ़त में मिल जाए। (दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–649)

अगर फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ रहा था और फिर उसी फ़र्ज़ की जमाअ़त शुरू हो गई तो?

मस्अला: ये नमाज़ का तोड़ना और इमाम के साथ जमाअ़त में मिलना उस सूरत में है जबकि उसने पहली रकअ़त का सज्दा अभी न किया हो, या सज्दा किया हो मगर वह नमाज़ दो रकअ़त वाली हो जैसे फ़ज्र या तीन रकअ़त वाली हो जैसे मग़रिब और अगर चार रकअ़त वाली में सज्दा किया हो तो उसमें दूसरी रकअ़त बतौर वजूब के मिला ले तो गुनहगार नहीं होगा, फिर इमाम की इक़्तिदा करे ताकि जमाअ़त भी मिल जाए और नफ़्ल का सवाब भी मिल जाए। (दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–645)

(मस्अला का हासिल ये है कि कोई शख़्स फ़र्ज़ नमाज़

तन्हा शुरू कर चुका था, फिर उसी फ़र्ज़ की जमाअ़त शुरू हो गई, तो अगर उसने अब तक पहली रकअ़त का सज्दा नहीं किया था तो उसको चाहिए कि नीयत तोड़ कर जमाअ़त में शरीक हो जाए और अगर पहली रकअ़त का सज्दा कर चुका था तब जमाअ़त शुरू हुई है और ये फ़ज्र नमाज़ थी या मग़रिब की नमाज़ जिसको उसने तन्हा शुरू किया था तो भी नीयत तोड़ कर जमाअ़त के साथ मिल जाए, और अगर वह ज़ुहर या अस्र की नमाज़ थी और पहली रकअ़त का सज्दा कर चुका था उसके बाद जमाअ़त शुरू हुई थी तो अब उस पर वाजिब ये है कि अपनी उस नमाज़ में एक रकअ़त और मिला ले ताकि ये दो रकअ़त नफ़्ल हो जाए और दो रकअ़त पर उसको ख़त्म कर के जमाअ़त में मिल कर फ़र्ज़ अदा कर ले, इस तरह दोनों नमाज़ों का सवाब मिल जाएगा। और अगर फ़ज्र या मग़रिब की नमाज़ में जिस को उसने तन्हा पढ़ना शुरू किया था उसकी दूसरी रकअ़त का सज्दा कर चुका था तब जमाअ़त शुरू हुई थी, तो अब वह अपनी उस नमाज़ को पूरी कर ले, नीयत तोड़ कर जमाअ़त में शामिल न हो, और अगर वह चार रकअ़तों वाली नमाज़ में से तीन रकअ़त पढ़ चुका था तब जमाअ़त शुरू हुई तो अब वह नीयत नहीं तोड़ेगा बल्कि वह उसको तन्हा पूरी करेगा, फिर नफ़्ल की नीयत से इमाम की इक़्तिदा करना चाहे तो करे ताकि जमाअ़त का सवाब हासिल हो जाए, अलबत्ता अस्र व फ़ज्र की नमाज़ होगी तो वह नफ़्ल की नीयत से जमाअ़त में शरीक न होगा, क्योंकि अस्र व फ़ज्र के बाद नफ़्ल नमाज़ पढ़ना मकरूह है, और तीन

रकअ़त पढ़ने का मतलब ये है कि तीसरी रकअ़त का सज्दा कर चुका था फिर जमाअत खड़ी हुई।

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

नमाज़ में क़िब्ला से सीना फिर जाना?

मस्अला: अगर नमाज़ में सीना क़िब्ला की जानिब से हट जाए तो देखना चाहिए कि ऐसा मजबूरी से हुआ या अपने इरादा से हुआ? अगर मजबूरी से हुआ तो नमाज़ बातिल न होगी। अलबत्ता अगर कोई उसी हालत (क़िब्ला से सीना फिरा रहने) में इतनी देर रहे कि नमाज़ का कोई रुक्न अदा किया जा सके तो नमाज़ बातिल हो जाएगी, लेकिन अगर नमाज़ी ने अपने इख़्तियार से ऐसा किया, और बिला किसी सबब के तो नमाज़ बातिल हो जाएगी, वरना नहीं, यानी किसी सबब से ऐसा किया तो नमाज़ बातिल न होगी, ख़्वाह ये क़िब्ला से फिरना थोड़ा हो या बहुत। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–489)

इमाम से पहले किसी रुक्न का अदा करना?

मस्अला: अगर मुक़्तदी ने किसी रुक्न की अदाएगी में इमाम पर सबक़त (पहल) की (मसलन रुकूअ़ में जा कर इमाम के उठने से पहले ही उठ जाए) और फिर इमाम के साथ या उसके बाद उस रुक्न को न दुहराया और इमाम के साथ सलाम न फेरा तो उसकी नमाज़ बातिल हो जाएगी, ख़्वाह ये सबक़त (पहल करना) इरादतन

हो या भूले से हुई हो लेकिन अगर उसी रुक्न को इमाम के साथ या उसके बाद दुहरा लिया, और उस नमाज़ में इमाम के साथ ही सलाम फेरा तो नमाज़ बातिल न होगी।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–492)

मस्अला: नमाज़ ख़त्म होने से पहले ही मुक़्तदी के क़सदन सलाम फेर देने से नमाज़ बातिल हो जाती है, लेकिन अगर कोई शख़्स ये ख़्याल करते हुए कि नमाज़ जो वह (इमाम के साथ) पढ़ रहा है पूरी हो चुकी है और उस भुलावे में सलाम फेर दिया तो उसकी नमाज़ बातिल न होगी जब तक कि सलाम के बाद अमले कसीर न किया हो और कुछ बोला न हो।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–495)

इमाम का किसी की रिआयत से किराअत लम्बी करना?

मस्अला: नमाज़ में शामिल होने वाले (आने वाले) की रिआयत से इमाम का किराअत को तवील करन मकरूहे तहरीमी है यानी अगर उसको पहचानता हो, वरना मकरूहे तंज़ीही है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–115, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–462)

नमाज़ के दौरान आँखें बंद कर लेना?

मस्अला: नमाज़ में आँखें बंद करना भी मकरूह है, हाँ अगर किसी मसलेहत से ऐसा किया हो तो हो सकता है। मसलन ऐसी चीज़ के देखने से आँखें बंद कर लेना

जो इंसान को महव या ग़ाफ़िल कर दे। इसी तरह नमाज़ के दौरान आसमान की तरफ़ आँख उठा कर देखना भी मकरूह है। आँ हज़रत (स.अ.व.) का इरशादे मुबारक है कि नमाज़ की हालत में जो लोग आँखें ऊँची कर के आसमान की तरफ़ देखते हैं उनकी बसारत (निगाह) जाती रहेगी या आँख चौंधी हो जाएगी।

(ब रिवायत बुख़ारी शरीफ़, किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़हा–437, व आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़हा–317)

मस्अला: खुशूअ़ हासिल करने के लिए आँखें बंद कर लेना औला है, बिला कराहत दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–109, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़हा–605, फ़तावा रहीमिया जिल्द–7 सफ़हा–218)

मस्अला: आँख के ऑपरेशन के बाद अगर वाकई रुकूअ़ व सज्दा करने में आँखों में नाक़ाबिले बरदाश्त तकलीफ़ होती हो या आँखों को नुक़सान होता हो तो ऐसी सूरत में बैठ कर नमाज़ अदा कर सकते हैं, रुकूअ़ व सज्दा सर के इशारे से करें, और सज्दा का इशारा रुकूअ़ की बनिस्बत ज़्यादा झुका हुआ होना चाहिए।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–7 सफ़हा–221)

आतिशदान और तस्वीर वाले घर में नमाज़ पढ़ना

मस्अला: तन्नूर या आतिशदान (आग) के सामने, जिसमें अंगारे रौशन हों, नमाज़ पढ़ना मकरूह है क्यों कि ये मजूसियों की इबादत से मुशाबेह है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़हा–438)

(अगर कोई और जगह ही न हो तो मजबूरी है)

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

मस्अलाः किसी जानदार की तस्वीर के सामने नमाज़ पढ़ना मकरूह है, ख़्वाह उसकी तरफ़ तवज्जोह जाती हो या न जाती हो, ये तस्वीर ख़्वाह नमाज़ी के सर के ऊपर या आगे या पीछे या बाएँ या दाएँ या बराबर में हो, निहायत शदीद कराहत इसमें है, कि तस्वीर नमाज़ी के आगे हो। इससे कम कराहत ये है कि वह तस्वीर सर के ऊपर हो, फिर दाएँ जानिब उसके बाद बाएँ जानिब, और फिर पीछे होना है, हाँ अगर तस्वीर छोटी सी हो कि ग़ौर से देखे बग़ैर नज़र न जाए, जैसे कि सिक्का पर होती है (तो वह मकरूह नहीं है) चुनांचे अगर नमाज़ी के पास सिक्के (रुपये, करंसी वग़ैरा) हों तो नमाज़ मकरूह नहीं है और अगर बड़ी तस्वीर सर कटी हुई हो तो नमाज़ मकरूह न होगी। दरख़्त की तस्वीर सामने हो तो नमाज़ मकरूह नहीं होती, ख़्वाह वह तस्वीर जाज़िबे नज़र व जाज़िबे तवज्जोह हो। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–439)

क़ब्र के समाने नमाज़ पढ़ना

मस्अलाः अगर नमाज़ पढ़ने वाले के सामने क़ब्र हो तो नमाज़ मकरूह हो जाती है, क़ब्र के सामने होने का मतलब ये है कि ख़ुशूअ के साथ (नज़र झुकाए हुए) नमाज़ पढ़ने की हालत में नज़र क़ब्र पर पड़ती हो, अगर क़ब्र पीछे की जानिब हो, या ऊपर हो, या जहाँ नमाज़ पढ़ी जा रही हो, उसके नीचे हो तो इस बारे में तहक़ीक़ ये है

कि कोई कराहत नहीं है। वाज़ेह रहे कि कराहत उसी सूरत में है जबकि क़ब्रस्तान में नमाज़ के लिए कोई मख़सूस जगह ऐसी न मुहैया हो जो नजासत और गंदगी से पाक हो। अगर ऐसा हो तो नमाज़ मकरूह नहीं है, लेकिन अंबिया अलैहिमुस्सलाम के मक़बरे इससे मुस्तसना हैं, क्योंकि वहाँ पर (क़ब्र सामने हो तब भी) नमाज़ मकरूह नहीं है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–440, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–93, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–352)

नमाज़ में खिन्कारना या गला साफ़ करना?

मस्अला: नमाज़ में गला साफ़ करने या खिन्कारने से नमाज़ जाती रहती है, जबकि उसमें कम अज़ कम दो हुरूफ़ की आवाज़ पैदा हो जाए। अलबत्ता अगर बिला ज़रूरत ऐसा किया जाए तो नमाज़ बातिल हो जाएगी, हाँ अगर ज़रूरत हो मसलन आवाज़ ठीक हो जाए ताकि क़िराअत में हुरूफ़ अपने मख़ारिज से पूरी तरह अदा किए जा सकें (आवाज़ सहीह हो जाए) या इमाम को ग़लती पर लुक़मा दिया जा सके वग़ैरा तो नमाज़ बातिल न होगी और इसी तरह उस सूरत में जबकि तबई तौर पर खाँसी आ जाए और जब तक ऐसी ज़रूरत रहे यानी बीमारी की वजह से हो तो नमाज़ बातिल न होगी।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–478, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–87, कबीरी सफ़्हा–449)

मस्अला: सिर्फ़ हुस्ने आवाज़ के लिए खांसने से नमाज़ फ़ासिद नहीं होती, अगरचे तीन बार या कम व बेश हो।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–65, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–578)

मस्अलाः नमाज़ में जिस्म को मुख़्तलिफ़ अंदाज़ से (बिला उज़्र) हरकत देना सहीह नहीं है मसलन रुकूअ़ के बाद सीधे खड़े न होना और दोनों सज्दों के दरमियान इत्मीनान से न बैठना तर्के वाजिब है और ऐसी नमाज़ को लौटाना वाजिब है, हाथों को ग़ैर ज़रूरी हरकत देना और सज्दे को जाते हुए दरमियान में ग़ैर ज़रूरी तवक़्क़ुफ़ करना मकरूह है। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–314)

नमाज़ में वुज़ू का टूट जाना?

मस्अलाः अगर किसी नमाज़ पढ़ने वाले को नमाज़ की हालत में हदस लाहिक़ हो जाए यानी नमाज़ के अन्दर ही बेवुज़ू हो जाए तो ऐसे शख़्स को बिला तवक़्क़ुफ़ फ़ौरन ही वुज़ू कर के पहली नमाज़ पर ही अपनी नमाज की बिना करना चाहिए, ख़्वाह ये बात तशह्हुद के बाद ही वाक़ेअ़ हुई हो, नीज़ फुक़हए किराम (रह.) कहते हैं कि नए सिरे से नमाज़ पढ़ना अफ़ज़ल है।

(नमाज़ मसनून सफ़्हा–541, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–82, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–90 कबीरी सफ़्हा–452)

मस्अलाः अगर नमाज़ के दौरान वुज़ू टूट जाए तो नाक पर हाथ रख कर वुज़ू करने के लिए निकल आए, और अगर इमाम को ऐसी हालत पेश आ जाए यानी हदस लाहिक़ हो तो वह अपना नाइब (ख़लीफ़ा) मुक़र्रर कर दे। (हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–82, शरह नक़ाया जिल्द–1

सफ़्हा–90, कबीरी सफ़्हा–453)

मस्अला: अगर किसी शख़्स के पीछे नाबालिग़ बच्चा या औरत है और उस शख़्स को नमाज़ में हदस हो जाए तो उसकी नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी, क्योंकि बच्चा और औरत ख़लीफ़ा (क़ाइम मक़ाम) या नाइब बनाने के अह्ल नहीं हैं। (शरह वक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–162)

नमाज़ में क़हक़हा का हुक्म

मस्अला: बालिग़ नमाज़ी के नमाज़ में क़हक़हा लगाने से नमाज़ फ़ासिद हो जाती है और वुज़ू भी टूट जाता है।

(हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–141, शरह नक़ाया जिल्द–2 सफ़्हा–12, नमाज़ मसनून सफ़्हा–486, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–35)

(रुकूअ़ व सुजूद वाली नमाज़ में क़हक़हा यानी इतनी आवाज़ से हंसा कि साथ वाला आदमी सुन ले, नमाज़ और वुज़ू टूट जाता है) (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

मस्अला: नमाज़ में ज़ेहक (हंसने) से (ऐसी हंसी जिसको ख़ुद सुन ले) सिर्फ़ नमाज़ फ़ासिद होती है, और तबस्सुम (मुस्कुराने) से न नमाज़ टूटती है न वुज़ू।

(शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–12, कबीरी सफ़्हा–142, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–576, आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–319)

तबस्सुम यानी सिर्फ़ मुस्कुराने से जिसमें हंसने की आवाज़ पैदा न हो, उससे न नमाज़ टूटती है और न वुज़ू टूटता है। (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

नमाज़ में सत्र का खुल जाना?

मस्अला: नमाज़ के दौरान सत्र यानी बदन का वह हिस्सा जिसका छिपाना ज़रूरी है, बग़ैर ज़ाती अमल के एक चौथाई खुल जाए, मसलन हवा के झोंके से कपड़ा हट गया और इतनी देर तक खुला रहा कि नमाज़ का एक रुक्न अदा किया जा सके तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। लेकिन इतना ही हिस्सा या इससे कम खुद नमाज़ पढ़ने वाले के अमल से खुल गया तो नमाज़ मअन (फ़ौरन) फ़ासिद हो जाएगी। अगरचे एक रुकन अदा करने की मुद्दत से कम अरसा तक खुला रहा हो।

मस्अला: अगर नमाज़ शुरू करने से पहले ही सत्र का हिस्सा खुला और उस हालत में नमाज़ शुरू कर दी तो नमाज़ की नीयत ही न बंधेगी यानी सहीह न होगी।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–302)

मस्अला: अगर नमाज़ में सत्र (नाफ़ से घुटनों तक) खुल जाए और फ़ौरन छिपा ले, (ढाँप ले) ताख़ीर न हो, तो उससे नमाज़ फ़ासिद नहीं होगी। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–35 व गुनयतुलमुस्तमली सफ़्हा–213)

मस्अला: इसमें कोइ हरज नहीं है (मर्दों के लिए) कि कपड़ा जिस्म से इस क़दर चस्पाँ (चिपका हुआ) हो कि सत्र की हुदूद का इम्तियाज़ हो सके।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–303)

मस्अला: सत्र का खुद अपने से ढाँकना (छिपाना) ज़रूरी नहीं है, चुनांचे अगर किसी नमाज़ के दौरान खुद

अपना सत्र (वह हिस्सा जिसका छिपाना दूसरों से ज़रूरी है) देख लिया तो नमाज़ बातिल न होगी, अगरचे ये फ़ेल मकरूह है। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–104)

मस्अला: कम उम्र बच्चों के लिए कोई सत्र नहीं है, चाहे लड़का हो या लड़की और कम उम्र बच्चे की तारीफ़ चार साल या इससे कम उम्र का बच्चा है। लिहाज़ा ऐसे बच्चे के जिस्म को देखना और हाथ लगाना मुबाह है। इस उम्र से आगे जब तक कि देखने से बुरा ख़्याल न पैदा हो, तब तक बच्चे का सत्र सिर्फ़ उसके आगे और पीछे की शर्मगाह है, लेकिन अगर वह इस हाल को पहुंच जाए कि उसके देखने से बुरा ख़्याल पैदा हो तो उसका सत्र बालिग़ मर्द या औरत के सत्र की मानिन्द है। नमाज़ की हालत में भी और नमाज़ से बाहर भी।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–308)

चराग़ सामने रख कर नमाज़ का हुक्म

मस्अला: नमाज़ की जमाअत के वक़्त अगर सामने हो जैसा कि आम्मतन मसाजिद में जिवारे ग़रबी में चराग़ रखा होता है, तो उससे नमाज़ ख़राब नहीं होती। अगर दाएँ या बाएँ या पीछे चराग़ रखा हो तो किसी को एतेराज़ का मौक़ा नहीं। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–10 सफ़्हा–252, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–438)

मस्अला: अगर क़िब्ला का रुख़ सहीह हो तो अंधेरे में नमाज़ पढ़ना मना नहीं है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–10 सफ़्हा–257)

मस्अलाः साँप, बिच्छू वगैरा मूज़ी जानवरों को नमाज़ की हालत में क़त्ल करना, मारना जाइज़ है।

(शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–96, कबीरी सफ़्हा–354)

अगर सुब्ह की नमाज़ पढ़ने में सूरज निकल आया?

मस्अलाः फ़ज्र की नमाज़ में नीयत बाँधने के बाद या एक रकअ़त पढ़ने के बाद सूरज तुलूअ़ हो गया तो ऐसी हालत में नमाज़ अदा नहीं होगी। (नीज़) अगर सब की नमाज़ फ़ौत हो गई तो जमाअ़त से पढ़ें।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–10 सफ़्हा–274)

मस्अलाः तुलूए आफ़ताब के वक़्त नमाज़ नाजाइज़ है, अगर ऐन नमाज़ में आफ़ताब तुलूअ़ हो जाए तो उस नमाज़ को वहीं ख़त्म कर दे और आफ़ताब बुलंद होने पर क़ज़ा पढ़ें और जब वक़्त तंग हो जाए तो अपनी नमाज़ तन्हा पढ़े, जमाअ़त का इंतिज़ार न करे।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–10 सफ़्हा–261)

सूरज निकलने के कितनी देर बाद नमाज़ पढ़ें?

मस्अलाः जब सूरज निकलना शुरू होता है तो दो मिनट चौबीस सिकन्ड में पूरा निकल आता है, फिर जब उसकी तरफ़ नज़र न की जा सके (यानी निगाह सूरज पर न ठहर सके) और बिल्कुल सफ़ेद हो जाए, तब इशराक़ का वक़्त शुरू हो जाता है, आम्मतन बीस मिनट के बाद बिल्कुल सफ़ेद हो जाता है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–10 सफ़्हा–258)

(उसके बाद क़ज़ा नमाज़ पढ़ सकते हैं)

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अलाः ऐन ज़वाल के वक़्त या यूँ कहिए कि इस्तवा और दोपहर के वक़्त क़ुरआन करीम की तिलावत दुरुस्त है और नवाफ़िल (वग़ैरा) इमाम अबूहनीफ़ा (रह.) के नज़दीक नाजाइज़ हैं। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–73, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–243)

मग़रिब की नमाज़ कब तक अदा की जा सकती है?

मस्अलाः ग़ुरूब के बाद उफ़ुक़ पर जो सुर्ख़ी रहती है उसी को शफ़क़ कहते हैं। जब तक उफ़ुक़ पर सुर्ख़ी मौजूद हो (और ये वक़्त तक़रीबन एक घन्टा तक होता है और कम व बेश भी हो सकता है) तब तक मग़रिब की नमाज़ हो सकती है। अवाम में जो ये मशहूर है, ज़रा सा अंधेरा हो जाए तो कहते हैं कि मग़रिब का वक़्त ख़त्म हो गया, अब इशा के साथ पढ़ लेना, ये ग़लत है। मग़रिब की नमाज़ में क़स्दन ताख़ीर करना मकरूह है, लेकिन अगर किसी मजबूरी से ताख़ीर हो जाए तो शफ़क़ ग़ुरूब होने से क़ब्ल ज़रूर पढ़ लेनी चाहिए, वरना नमाज़ क़ज़ा हो जाएगी, और नमाज़ का क़स्दन क़ज़ा करना गुनाहे कबीरा है। (आपके मसाइल जिल्द–1 सफ़्हा–108)

बढ़े हुए नाख़ुनों के साथ नमाज़ पढ़ना?

मस्अलाः नमाज़ का हुक्म ये है कि अगर नाख़ुनों के

अन्दर कोई ऐसी चीज़ जम जाए जिसकी वजह से पानी अन्दर न पहुंच सके तो न वुज़ू होगा और न नमाज़ होगी, और अगर नाखुन अन्दर से बिल्कुल साफ़ हों तो नमाज़ सहीह होती है। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–182)

टी० वी० वाले कमरा में नमाज़ पढ़ना?

मस्अलाः जिस वक़्त आप नमाज़ पढ़ रहे हैं, उस वक़्त टेलीवीज़न बंद है तो उस कमरा में नमाज़ बिला कराहत सहीह है, और अगर टेलीवीज़न चल रहा है तो ऐसी जगह पर नमाज़ पढ़ना मकरूह है और जो जगह लह्व व लइब के लिए मख़सूस हो उसमें भी नमाज़ मकरूह है। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–184)

ग़ैर मुस्लिम के घर में नमाज़ पढ़ना?

मस्अलाः ज़मीन खुश्क होने के बाद नमाज़ के लिए पाक हो जाती है, और अगर जगह पाक हो तो वहाँ नमाज़ पढ़ सकते हैं, इसलिए ग़ैर मुस्लिम के घर के ख़ाली फ़र्श पर नमाज़ पढ़ने में कोई हरज नहीं, और अगर कपड़ा बिछा लिया जाए तो और भी अच्छा है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–185)

रिश्वत ख़ोर की नमाज़ का हुक्म

मस्अलाः जो शख़्स तनख़्वाह के अलावा रिश्वत लेता

है उसकी नमाज़ कबूल है और नमाज़ का सवाब भी हासिल होगा, लेकिन रिश्वत का गुनाह होगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–27)

गूंगे की नमाज़ का हुक्म?

मस्अला: मादरज़ाद गूंगा, बहरा, जबकि क़िराअत पर क़ादिर नहीं तो क़िराअत उस पर फ़र्ज़ नहीं, बाक़ी जिन अरकान में क़याम व कुऊद वग़ैरा पर क़ादिर है, उनको सब लोगों की तरह अदा करता रहे। अगर उसको इतनी समझ है कि नमाज़ फ़र्ज़ है और फिर नमाज़ को बक़द्रे ताक़त अदा न करेगा तो गुनहगार होगा।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–217, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–363)

नमाज़ी के सामने रौज़ए मुबारक (स.अ.व.) की तस्वीर का होना?

सवाल: मदीना मुनव्वरा का नक़्शा जिसमें रसूलुल्लाह (स.अ.व.) के मज़ार का कुब्बा (गुम्बद) भी है, अगर नमाज़ में सामने लटका हो तो नमाज़ में कुछ ख़राबी तो न होगी?

जवाब: दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–945 से मालूम हुआ कि अगरचे क़ब्र का नमाज़ के सामने होना मकरूह है, लेकिन क़ब्र के नक़्शा का सामने होना कुछ हरज नहीं, क्योंकि नक़्शाए क़ब्र की कोई परस्तिश नहीं करता, अलबत्ता अगर किसी क़ौम की ये रस्म भी साबित हो जाए तो फिर

उसमें भी कराहत हो जाएगी।

(इमदादुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–440)

नमाज़ में नामे मुबारक (स.अ.व.) सुन कर दुरूद पढ़ना?

सवालः अगर इमाम ने नमाज़ में आयत "وَمَا مُحَمَّدٌ اِلَّا رَسُوْل" पढ़ी और किसी मुक़्तदी ने ये सोच कर कि आँ हज़रत (स.अ.व.) का नाम मुबारक सुन कर दुरुद शरीफ़ पढ़ना चाहिए, उसने पढ़ दिया तो?

जवाबः उसका ख़्याल सहीह है कि नामे मुबारक सुन कर दुरुद शरीफ़ पढ़ना चाहिए। अहादीस में इसकी बहुत ताकीद आई है, लेकिन ये हुक्म ख़ारिजे नमाज़ का है। नमाज़ में ये हुक्म नहीं है। पस अगर नमाज़ में दुरुद शरीफ़ पढ़ा है तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी, जैसे कि किसी ने इमाम से अल्लाह तआला का नाम सुन कर "جَلَّ جَلَالُه" कह दिया, ये ख़्याल करते हुए कि अल्लाह पाक का नाम सुन कर ताज़ीमी लफ्ज़ कहना चाहिए। या इमाम से किसी आयत को सुन कर "صدق الله ورسوله" कह दिया, इन सूरतों में नमाज़ फ़ासिद हो जाती है क्योंकि इन सब सूरतों में क़स्दे जवाब मलहूज़ है। अगर बग़ैर क़स्दे जवाब के दुरूद शरीफ़ पढ़ा है तो नमाज़ फ़ासिद नहीं हुई, क्योंकि दुरूद शरीफ़ ऐसी चीज़ नहीं जिसके पढ़ने से नमाज़ फ़ासिद हो जाए, बल्कि नमाज़ में उसको मुस्तक़िल्लन पढ़ा जाता है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ्हा–127, आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–320)

फ़ज्र की नमाज़ पढ़ कर कपड़ों पर मनी देखी?

मस्अला: अगर किसी को एहतेलाम हो जाए और उसे सुब्ह को याद न रहे, और उसने फ़ज्र की नमाज़ अदा की, फिर दोपहर को उसने नजासत देखी तो अगर फज्र के बाद नहीं सोया तो नमाज़े फ़ज्र का लौटाना लाज़िम है। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–136)

नमाज़ के बाद सफ़ से कुछ पीछे हो जाना?

सवाल: बसा औक़ात बाज़ जगह तलबा व असातिज़ा जमाअ़त में शरीक रहते हैं, जब इमाम सलाम फेरता है तो जो तालिबे इल्म अपने उस्ताद के पास होता है वह पीछे खिसक जाता है ये फे़ल कैसा है?

जवाब: "حامدًا و مصليًا" बराबर बैठे रहना भी दुरुस्त है। पीछे खिसक कर बैठना भी अदबन दुरुस्त है। ये न इस्रार की चीज़ है न इनकार की।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–211)

मस्अला: जमाअ़त के इख़्तिताम पर बाज़ मुक़्तदी सफ़ से ज़रा सरक कर क़िब्ला रू बैठ कर तस्बीह पूरी कर के इमाम के साथ दुआ़ में शिरकत कर के फ़ारिग़ हो जाते हैं तो ऐसा करने से वह मुनाफ़िक़ भी नहीं और गुनहगार भी नहीं। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–259)

□□□

चौबीस घन्टा की नमाज़ें एक नज़र में

फ़र्ज़ नमाज़ें

फ़र्ज़ नमाज़ें दिन रात में जुमा के दिन पन्द्रह और दूसरे दिनों में सत्तरह रकआत हैं। दो रकअत फ़ज्र के वक़्त, चार रकअत जुहर के वक़्त, और जुमे के दिन बजाए चार रकअत के दो। चार अस्र के वक़्त तीन मग़रिब के वक़्त, चार इशा के वक़्त। ये नमाज़ें फ़र्ज़े ऐन हैं और जनाज़े की नमाज़ फ़र्ज़े किफ़ाया है।

वाजिब नमाज़ें

शरीअत की तरफ़ से तीन नमाज़ें वाजिब हैं, वित्र और ईदैन, वित्र तीन रकअत हर रोज़ इशा के बाद और ईदैन दो दो रकअत साल भर के बाद, इनके अलावा जो नमाज़ नज़्र की जाए वह भी वाजिब है और हर नफ़्ल बाद शुरू कर देने के वाजिब हो जाती है। यानी उसका तमाम करना और फ़ासिद हो जाने में उसकी क़ज़ा ज़रूरी है।

मसनून नमाज़ें

फ़ज्र के वक़्त फ़र्ज़ से पहले दो रकअत, जुहर के

वक़्त छः रकअ़त, चार फ़र्ज़ से पहले दो फ़र्ज़ के बाद, मग़रिब के वक़्त दो रकअ़त, फ़र्ज़ के बाद, इशा के वक़्त दो रकअ़त फ़र्ज़ के बाद, नमाज़े तहज्जुद, तहीयतुलमस्जिद, नमाज़े तरावीह बीस रकअ़त, नमाज़े एहराम, नमाज़े कुसूफ़ दो रकअ़त, नमाज़े खुसूफ़ दो रकअ़त।

मुस्तहब नमाज़ें

वित्र के बाद दो रकअ़त, सुन्नते वुज़ू दो रकअ़त, नमाज़े सफ़र दो रकअ़त, नमाज़े इस्तिख़ारा दो रकअ़त, नमाज़े हाजत दो रकअ़त, सलातुल अव्वाबीन छः रकअ़त, सलातुत तस्बीह चार रकअ़त, नमाज़े तौबा दो रकअ़त नमाज़े क़त्ल दो रकअ़त।

नमाज़े तहज्जुद

नमाज़े तहज्जुद सुन्नत है, नबी करीम (स.अ.व.) हमेशा उसको पढ़ा करते थे और अपने असहाब को उसके पढ़ने की बहुत तरग़ीब देते थे। उसके फ़ज़ाइल बहुत अहादीस में वारिद हैं, नबी (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि बाद फ़र्ज़ नमाज़ों के नमाज़े शब (तहज्जुद) का मरतबा है। (मुस्लिम)

बाज़ फ़ुक़हा ने उस नमाज़ को मुस्तहब लिखा है मगर सहीह ये है कि सुन्नत है। हज़राते सुफ़िया (रह.) फ़रमाते हैं कि कोई शख़्स बेनमाज़े तहज्जुद के दरजए विलायत को नहीं पहुंचता, इसमें शक नहीं कि ये नमाज़ तमाम सुलहाए उम्मत का मामूल है, सहाबा (रज़ि.) से

लेकर इस वक़्त तक बल्कि एक हदीस में है कि अलगी उम्मत वाले भी इस नमाज़ को पढ़ते थे।

नमाज़े तहज्जुद का वक़्त इशा के बाद है। सुन्नत ये है कि इशा की नमाज़ पढ़ कर सो रहे, उसके बाद उठ कर नमाज़े तहज्जुद पढ़े।

(शामी वग़ैरा, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–43)

मस्अला: तहज्जुद का वक़्त सुब्हे सादिक़ से पहले पहले रहता है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–304, बहवाला मिश्कात जिल्द–1 सफ़्हा–105)

बेहतर ये है कि नमाज़े तहज्जुद निस्फ़ शब के वक़्त पढ़े। कम से कम तहज्जुद की नमाज़ दो रकअ़त और ज़्यादा से ज़्यादा दस रकअ़त मनकूल है और अक्सर मामूल नबी (स.अ.व.) का आठ रकअ़त पर था, एक सलाम से दो दो रकअतें।

बाज़ कुतुबे फ़िक़्ह में इस नमाज़ की आठ रकअ़तें इंतिहाई तादाद लिखी है, मगर अहादीस से मालूम होता है कि दस रकअ़त भी हुज़ूर (स.अ.व.) ने पढ़ी हैं। शरह सफ़रुस्सआ़दत में शैख़ अब्दुलहक़ मुहद्दिस देहवली (रह.) ने इसको बहुत उम्दा तफ़सील से ब्यान फरमाया है।

तहज्जुद की नमाज़ इस नीयत से पढ़े:

"نَوَيْتُ اَنْ اُصَلِّيَ رَكْعَتَي صَلٰوةِ التَّهَجُّدِ سُنَّةَ النَّبِيِّ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّم"

मैंने ये इरादा किया कि दो रकअ़त नमाज़े तहज्जुद नबी (स.अ.व.) की सुन्नत पर पढ़ूं। नबी (स.अ.व.) कभी आधी रात को क़भी इससे कुछ पहले कभी इसके बाद तहज्जुद के लिए उठते तो इस दुआ़ को जो बेदारी के वक़्त आपका मामूल थी, पढ़ते हुए दोनों हाथ मुंह पर

मलते ताकि नींद का असर जाता रहा है।

वह दुआ ये है:

"اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِیْ اَحْیَانَا بَعْدَ مَا اَمَاتَنَا وَ اِلَیْهِ النُّشُوْرُ"

तरजुमा: अल्लाह का शुक्र है कि हमें बाद मौत (ख़्वाब) के ज़िन्दा (बेदार) किया और उसी की तरफ़ सब का रुजूअ है। इसके अलावा और भी मुख़्तलिफ़ दुआएँ हज़रत (स.अ.व.) से मनक़ूल हैं। (सफ़रुस्सआदत)

उसके बाद मिसवाक फ़रमाते, मिसवाक में मुबालग़ा करना हज़रत (स.अ.व.) की आदत थी। बाद मिसवाक के वुज़ू फ़रमाते। बाज़ रिवायात में है कि मिसवाक और वुज़ू करते बाज़ में है कि उससे पहले आसमान की तरफ़ नज़र उठा कर देखते और सूरए आलेइमरान की आख़िरी दस आयतें जिनकी इब्तिदा "اِنَّ فِیْ خَلْقِ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ" से है तिलावत फ़रमाते और बाज़ रिवायात में है "رَبَّنَا مَا خَلَقْتَ هٰذَا بَاطِلًا" से "لَا تُخْلِفُ الْمِیْعَادَ" तक पढ़ते, उसके बाद नमाज़ शुरू करते, नमाज़ पढ़ने में आपकी आदत मुख़्तलिफ़ थी, कभी छः रकअत पढ़ते और हर दो रकअत के बाद सो रहते, सो कर उठने के बाद फिर उसी तरह मिसवाक और वुज़ू करते और आयतों की तिलावत फ़रमाते, अक्सर आदत आप (स.अ.व.) की आठ रकअत पढ़ने की थी, इसी वासते फ़ुक़हा ने आठ रकअतें इख़्तियार की हैं, वित्र की नमाज़ हज़रत (स.अ.व.) तहज्जुद के बाद पढ़ते थे, और अगर फ़ज्र का वक़्त आ जाता तो उसके बाद फ़ज्र की सुन्नतें भी पढ़ लेते फिर थोड़ी देर लेट रहते। उसके बाद फ़ज्र की नमाज़ पढ़ने तशरीफ़ ले जाते।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–44, क़ुरआन करीम

अलमुज़्ज़म्मिल पारह–29, बुख़ारी जिल्द–1 सफ़हा–153 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़हा–531)

सवालः जो नमाज़ी तहज्जुद गुज़ार हैं, वह तहज्जुद के वक़्त वित्र अदा करते हैं। अगर वित्र पहले ही इशा के वक़्त पढ़ लें तो इसमें कुछ हरज तो नहीं? क्योंकि बाज़ कहते हैं कि वित्र के बाद सुब्ह तक कोई नमाज़ नफ़्ल नहीं होती है?

जवाबः इसमें कुछ हरज नहीं है कि जो लोग तहज्जुद गुज़ार हैं वह भी वित्र को इशा के बाद पढ़ लें। बल्कि ये "اَحْـــوَط" है, फिर अगर उठें तो तहज्जुद पढ़ लें। ये बात ग़लत है कि वित्र के बाद फिर नफ़्लें न पढ़ी जाएँ।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–165, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़हा–442)

मस्अलाः तहज्जुद का वक़्त सुब्ह सादिक़ से पहले पहले रहता है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–304)

मस्अलाः तहज्जुद और तरावीह आँ हज़रत (स.अ.व.) से साबित है, रमज़ान और ग़ैर रमज़ान में ग्यारह रकअ़त तहज्जुद मअ़ वित्र से ज़्यादा नहीं पढ़ते थे, यानी अक्सर ये आदते मुबारका थी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–253)

मस्अलाः आँ हज़रत (स.अ.व.) ने चूंकि अक्सर आठ रकअ़त तहज्जुद पढ़ी हैं, और तीन रकअ़त वित्र, इसलिए फ़ुक़हाए अहनाफ़ (रह.) ने आठ रकअ़त पर मुवाज़बत को मुस्तहब फ़रमाया है और अगर गुंजाइश न हो तो दो या चार रकअ़त भी काफ़ी हैं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–304 व शामी

जिल्द–1 सफ़्हा–641)

मस्अला: जो शख़्स पिछली रात में तहज्जुद पढ़ने पर कादिर न हो तो वह इशा की नमाज़ के बाद वित्र से पहले या वित्र के बाद तहज्जुद की नीयत से पढ़ ले।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–302)

नीज़ तहज्जुद की नफ़्लों में किराअत बुलंद आवाज़ से मुस्तहब है। (बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–498, फ़स्ल फ़िलकिराअत)

मस्अला: नमाज़े तहज्जुद की कज़ा नहीं है, लेकिन दोपहर से पहले पढ़ लेना अच्छा है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–311, बहवाला मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–110)

(ये उन लोगों के लिए है जो मुस्तकिल बारह महीने तहज्जुद पढ़ते हैं, अगर किसी वजह से आँख नहीं खुल सकी तो वह अफ़सोस न करें कि तहज्जुद की नमाज़ नहीं पढ़ी, अगर दोपहर से पहले पहले पढ़ लें तो उम्मीद है कि सवाब से महरूम नहीं रहेंगे)

(मुहम्मद रफ़अत कासमी गुफ़िरलहू)

मस्अला: बाज़ लोगों का ख़्याल है कि नमाज़े तहज्जुद पढ़ कर सोना न चाहिए, वरना तहज्जुद जाता रहता है, सो उसकी कुछ अस्ल नहीं है और बहुत आदमी इसी वजह से तहज्जुद से महरूम हैं कि सुब्ह तक जागना मुश्किल है और सोने को ममनूअ समझते हैं। हालाँकि तहज्जुद की नमाज़ पढ़ कर सो रहना दुरुस्त है।

(अग़लातुलअवाम सफ़्हा–57)

(हाँ इसका ख़्याल रहे कि फ़ज्र की नमाज़ कज़ा न

हो जाए) (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

मस्अला: सलातुलऔवाबीन व इशराक़ व चाश्त सब में सिर्फ़ नफ़्ल नमाज़ की नीयत कर लेना काफ़ी है, किसी ख़ास नमाज़ और वक़्त का नाम लेना कुछ ज़रूरी नहीं है। अगर ले ले तो बेहतर है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–309)

शुकराने की नमाज़ का तरीक़ा

मस्अला: जिस वक़्त कोई बड़ी नेमत हासिल हो या कोई मुसीबत ज़ाएल हो तो बेहतर है कि शुक्रिया के लिए दो रकअत नमाज़ (कम अज़ कम) अदा करे, अगर ये न हो तो सज्दए शुक्र भी मुस्तहब है, लेकिन नमाज़ के बाद सज्दए शुक्र करना मकरूह व ममनूअ है क्योंकि ना वाक़िफ़ लोग उसको मसनून या वाजिब एतेक़ाद करेंगे।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–125)

मस्अला: शुकराने की नमाज़ का न वक़्त मुकर्रर है न तादाद, अलबत्ता मकरूह वक़्त नहीं होना चाहिए और तादाद दो से कम न होनी चाहिए।

मस्अला: नीज़ दुलहन (बीवी) के आँचल पर नमाज़े शुकराना पढ़ना महज़ रस्म है। शुकराने की नमाज़ आम मामूल के मुताबिक़ पढ़ी जा सकती है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–80)

मस्अला: नमाज़े औवाबीन व इशराक़ व चाश्त सब में सिर्फ़ नफ़्ल नमाज़ की नीयत कर लेना काफ़ी है, किसी ख़ास नमाज़ और वक़्त का नाम लेना ज़रूरी नहीं है।

आवाम को लम्बी लम्बी नीयत बतला कर परेशान करना जिहालत है और जौन सी भी सूरत चाहे पढ़े।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–309, बहवाला कबीरी सफ़्हा–225)

नमाज़े चाश्त

नमाज़े चाश्त मुस्तहब है, इख़्तियार है कि चाहे चार रकअतें पढ़े चाहे चार से ज़्यादा, नबी करीम (स.अ.व.) से चार रकअत भी मनकूल है, और ये भी मनकूल है कि कभी चार से ज़्यादा भी पढ़ लेते थे, तिबरानी की एक हदीस में बारह रकअत तक मनकूल हैं। (मराक़ियुलफ़लाह)

नमाज़े चाश्त का वक़्त आफ़ताब के अच्छी तरह निकल आने के बाद ज़वाल से पहले तक रहता है।

(मराक़ियुलफ़लाह)

नमाज़े चाश्त इस नीयत से पढ़ी जाए:

"نَوَيْتُ اَنْ اُصَلِّیَ اَرْبَعَ رَكَعَاتٍ صَلٰوةِ الضُّحٰى
سُنَّةَ النَّبِيِّ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ"

तरजुमा: मैंने ये इरादा किया कि चार रकअत नमाज़े चाश्त नबी (स.अ.व.) की सुन्नत पढ़ूँ।

यहाँ तक जो नमाज़ें मज़कूर हुईं वह थीं जिनको नबी (स.अ.व.) हमेशा इल्तिज़ाम से पढ़ा करते थे, कभी तर्क न फ़रमाते थे और बाक़ी नमाज़ें जो आप (स.अ.व.) पढ़ते थे उनके लिए कोई ख़ास सबब होता था, मसलन तहीयतुल मस्जिद, मस्जिद में जाने के लिए पढ़ते थे। नमाज़े ख़ुसूफ़ व कुसूफ़, चाँद गरहन, सूरज गरहन के सबब से व अला

हाज़लक़यास।

तालिबे सवाब और पैरूए सुन्नत को चाहिए कि इन नमाज़ों को बे कसी उज़्रे क़वी के न छोड़े। अगर ख़्याल किया जाए तो कोई बड़ी बात नहीं। दिन रात में फ़राइज़ वग़ैरा मिला कर सिर्फ़ छियालीस रकअ़तें होती हैं। सत्तरह रकअ़तें फ़र्ज़, तीन रकअ़त वित्र, बारह रकअतें मुअक्कदा सुन्नतें जो पंजवक़्ती नमाज़ों के साथ पढ़ी जाती हैं, आठ रकअ़त नमाज़े तहज्जुद, चार रकअ़त नमाज़े चाश्त।

मगर अफ़सोस हम लोगों की कम हिम्मती और सुस्ती के सामने फ़राइज़ ही का अदा होना दुश्वार है। अल्लाह तआ़ला फ़रमता है:

"وَاِنَّهَا لَكَبِيْرَةٌ اِلَّا عَلَى الْخٰشِعِيْنَ الَّذِيْنَ يَظُنُّوْنَ اَنَّهُمْ مُلٰقُوْا رَبِّهِمْ"

तरजुमा: बेशक नमाज़ का पढ़ना बहुत दुश्वार है मगर उन लोगों को जिन्हें अपने परवरदिगार से मिलने का यक़ीन है। पस अस्ल वजह हमारी सुस्ती और कम हिम्मती की ही है कि हमें क़यामत के आने और सवाब व अज़ाब के मिलने का पूरा यक़ीन नहीं है। "اَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ جَمِيْعِ مَا كَرِهَ اللّٰهُ" बाज़ उलमा ने लिखा है कि जो हर शाम व रोज़ इतने मरतबा रब्बे करीम का दरवाज़ा तलब और अदब के हाथों से खोलना चाहे, बेशक उस पर सआ़दत व रहमत का दरवाज़ा बहुत जल्दी खुल जाएगा।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़हा–45 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़हा–526)

मस्अला: नमाज़े इशराक़ की पूरी फ़ज़ीलत और मुकम्मल सवाब का मुस्तहिक़ वह शख़्स है जो नमाज़े फ़ज्र मस्जिद में बा जमाअ़त अदा करे या बवज्हे माज़ूरी घर में पढ़े

और उसी जगह बैठा रहे और ज़िक्रे इलाही में मशगूल रहे फिर मकरूह वक़्त निकल जाने के बाद दो रकअ़त या चार रकअ़त अदा करे।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–17)

तहीयतुल मस्जिद

ये नमाज़ उस शख़्स के लिए सुन्नत है जो मस्जिद में दाख़िल हो। (दुर्रेमुख़्तार) इस नमाज़ से मक़्सूद मस्जिद की ताज़ीम है जो दरहक़ीक़त ख़ुदा ही की ताज़ीम है इसलिए कि मकान की ताज़ीम साहबे मकान के ख़्याल से हुआ करती है, पस ग़ैर ख़ुदा की ताज़ीम किसी तरह इससे मक़्सूद नहीं। मस्जिद में आने के बाद बैठने से पहले दो रकअ़त नमाज़ पढ़ ले, बशर्तेकि कोई मकरूह वक़्त न हो। (दुर्रेमुख़्तार, बह्रुर्राइक़, शामी वग़ैरा)

अगर मकरूह वक़्त हो तो सिर्फ़ चार मरतबा इन कलिमात को कह ले: "سُبْحَانَ اللّٰهِ وَالْحَمْدُ لِلّٰهِ وَلَا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ" और बद इसके कोई दुरूद शरीफ़ पढ़ ले।

(दुर्रेमुख़्तार, मराक़ियुलफ़लाह)

इस नमाज़ की नीयत यह है: "نَوَيْتُ اَنْ اُصَلِّیَ رَكْعَتَيْنِ تَحِيَّةَ الْمَسْجِدِ" मैंने ये इरादा किया कि दो रकअ़त नमाज़ तहीयतुलमस्जिद पढ़ूं।

दो रकअ़त की कुछ तख़सीस नहीं, अगर चार रकअ़त पढ़ी जाएँ तब भी कुछ मुज़ाएक़ा नहीं। अगर मस्जिद में आते ही कोई फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ी जाए या और कोई सुन्नत अदा की जाए तो वही फ़र्ज़ या सुन्नत तहीयतुल मस्जिद

के क़ाएम मक़ाम हो जाएगी, यानी उसके पढ़ने से तहीयतुल मस्जिद का सवाब भी मिल जाएगा, अगरचे इसमें तहीयतुल मस्जिद की नीयत नहीं की गई।

(दुर्रेमुख़्तार, मराक़ियुलफ़लाह, शामी वग़ैरा)

अगर मस्जिद में जाकर कोई शख़्स बैठ जाए और उसके बाद तहीयतुल मस्जिद पढ़े तब भी कुछ हरज नहीं, मगर बेहतर ये है कि बैठने से पहले पढ़ ले।

(दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

नबी (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि जब तुम में से कोई मस्जिद जाया करे तो जब तक दो रकअ़त नमाज़ न पढ़ ले, न बेठे। (सहीह बुख़ारी, सहीह मुस्लिम)

अगर मस्जिद में कई मरतबा जाने का इत्तिफ़ाक़ हो तो सिर्फ़ एक मरतबा तहीयतुल मस्जिद पढ़ लेना काफ़ी है ख्वाह पहली मरतबा पढ़ ले या अख़ीर में।

(दुर्रेमुख़्तार, शामी इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–45, किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–527, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–236, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–635, फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–226)

सुन्नते वुज़ू

बाद वुज़ू के जिस्म खुश्क होने से पहले दो रकअ़त नमाज़ मुस्तहब है। (दुर्रेमुख़्तार, मराक़ियुल फ़लाह)

अगर चार रकअ़तें पढ़ी जाएँ तब भी कुछ हरज नहीं और कोई फ़र्ज़ या सुन्नत वग़ैरा पढ़ ली जाएँ, तब भी काफ़ी है, सवाब मिल जाएगा।

(मराक़ियुलफ़लाह, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–45)

मस्अला: औरतें भी तहीयतुल वुज़ू पढ़ सकती हैं।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–81)

मस्अला: मस्जिद के आदाब में से ये है कि मस्जिद में दाख़िल होने वाला शख़्स बैठने से पहले दो रकअत तहीयतुल मस्जिद पढ़ ले, औवलन बैठ जाना मसनून नहीं है बल्कि ख़िलाफ़े सुन्नत है, हाँ किसी उज़्र की वजह से बैठे तो हरज नहीं। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–229)

नबी (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि जो शख़्स अच्छी तरह वुज़ू कर के दो रकअत नमाज़ ख़ालिस दिल से पढ़ लिया करे, उसके लिए जन्नत वाजिब हो जाती है। (सहीह मुस्लिम) नबी (स.अ.व.) ने शबे मेराज में हज़रत बिलाल (रज़ि.) के चलने की आवाज़ अपने आगे जन्नत में सुनी, सुब्ह को उनसे दरयाफ़्त फ़रमाया कि तुम कौन सा ऐसा नेक काम करते हो कि कल मैंने तुम्हारे चलने की आवाज़ जन्नत में अपने आगे सुनी। हज़रत बिलाल (रज़ि.) ने अर्ज़ किया कि या रसूलुल्लाह! जब मैं वुज़ू करता हूँ तो दो रकअत नमाज़ पढ़ लिया करता हूँ। (सहीह बुख़ारी)

ग़ुस्ल के बाद ये दो रकअतें मुस्तहब हैं इसलिए कि हर ग़ुस्ल के साथ वुज़ू भी ज़रूर हो जाता है।

(रद्दुलमुतहार, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–46, किताबुलफ़िक़्ह सफ़्हा–530)

नमाज़े सफ़र

जब कोई शख़्स अपने वतन से सफ़र करने लगे तो

उसके लिए मुस्तहब है कि दो रकअत नमाज़ घर में पढ़ कर सफ़र करे और जब सफ़र से आए तो मुस्तहब है कि पहले मस्जिद में जाकर दो रकअत नमाज़ पढ़ ले उसके बाद अपने घर जाए। (दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

नबी अकरम (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि कोई अपने घर में उन दो रकअ़तों से बेहतर कोई चीज़ नहीं छोड़ता जो सफ़र करते वक़्त पढ़ी जाती हैं। (तिबरानी)

नबी (स.अ.व.) जब सफ़र से तशरीफ़ लाते तो पहले मस्जिद जा कर दो रकअत नमाज़ पढ़ लेते थे।

(सहीह मुस्लिम)

मुसाफ़िर को ये भी मुस्तहब है कि असनाए सफ़र जब किसी मंज़िल पर पहुंचे और वहाँ क़याम का इरादा हो तो क़ब्ल बैठने के दो रकअ़त नमाज़ पढ़ ले।

(शामी वग़ैरा, इल्मुलफ़िक़्ह सफ़्हा–46, किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–530, मसाइले सफ़र में तफ़सील देखिए मरत्तबा अहक़र)

नमाज़े इस्तिख़ारा

जब किसी को कोई काम दरपेश हो और उसके करने न करने में तरद्दुद हो या इसमें तरद्दुद होकि वह काम किस वक़्त किया जाए, मसलन किसी को सफ़रे हज दरपेश हो तो उसके करने न करने में तरद्दुद नहीं हो सकता, इसलिए कि हज़ इबादत है और इबादत के करने न करने में तरद्दुद कैसा, हाँ उसमें तरद्दुद हो सकता है कि सफ़रे हज़ आज किया जाए या कल तो ऐसी हालत

में मुस्तहब है कि दो रकअ़त नमाज़े इस्तिख़ारा पढ़ी जाए उसके बाद जिस तरफ़ तबीअ़त को रग़बत हो वह काम किया जाए। (दुर्रेमुख़्तार, मराक़ियुलफ़लाह)

बेहतर ये है कि सात मरतबा तक नमाज़े इस्तिख़ारा की तकरार के बाद काम किया जाए।

(शामी, मराक़ियुलफ़लाह)

नबी अकरम (स.अ.व.) सहाबा (रज़ि.) को नमाज़े इस्तिख़ारा की इस एहतेमाम से तालीम फ़रमाते थे जैसे क़ुरआन मजीद की तालीम में आपका एहतेमाम होता था।

(बुख़ारी, तिर्मिज़ी, अबूदाऊद वग़ैरा)

नमाज़े इस्तिख़ारा इस नीयत से शुरू की जाए:

"نَوَیْتُ اَنْ اُصَلِّیَ رَکْعَتَیْ صَلٰوةِ الْاِسْتِخَارَةِ"

मैंने ये नीयत की कि दो रकअ़त नमाज़े इस्तिख़ारा पढ़ूँ, फिर बदस्तूरे मामूल दो रकअ़त नमाज़ पढ़ कर ये दुआ पढ़ी जाए:

"اَللّٰهُمَّ اِنِّیْ اَسْتَخِیْرُکَ بِعِلْمِکَ وَاَسْتَقْدِرُکَ بِقُدْرَتِکَ وَاَسْئَلُکَ
مِنْ فَضْلِکَ الْعَظِیْمِ فَاِنَّکَ تَقْدِرُ وَلَا اَقْدِرُ وَتَعْلَمُ وَلَا اَعْلَمُ وَاَنْتَ عَلَّامُ
الْغُیُوْبِ ـ اَللّٰهُمَّ اِنْ کُنْتَ تَعْلَمُ اَنَّ هٰذَا الْاَمْرَ خَیْرٌ لِّیْ فِیْ دِیْنِیْ وَمَعَاشِیْ
وَعَاقِبَةِ اَمْرِیْ وَعَاجِلِهٖ وَاٰجِلِهٖ فَاقْدِرْهُ لِیْ وَیَسِّرْهُ لِیْ ثُمَّ بَارِکْ لِیْ فِیْهِ وَاِنْ
کُنْتَ تَعْلَمُ اَنَّ هٰذَا الْاَمْرَ شَرٌّ لِّیْ فِیْ دِیْنِیْ وَمَعَاشِیْ وَعَاقِبَةِ اَمْرِیْ وَعَاجِلِهٖ
وَاٰجِلِهٖ فَاصْرِفْهُ عَنِّیْ وَاصْرِفْنِیْ عَنْهُ وَاقْدِرْ لِیَ الْخَیْرَ حَیْثُ کَانَ ثُمَّ رَضِّنِیْ بِهٖ"

और लफ़्ज़ "اَمر" की जगह अपनी हाजत ज़िक्र करे, मसलन सफ़र के लिए इस्तिख़ारा करना हो तो "هٰذَا السَّفَر" कहे और निकाह के लिए इस्तिख़ारा करना हो तो "هٰذَا النِّکَاح" कहे, किसी चीज़ की ख़रीद व फ़रोख़्त के लिए करना हो तो "هٰذَا الْبَیْع" कहे। "وعلیٰ هذا القیاس" बाज़

मशाइख़ से मनकूल है कि बाद इस दुआ के पढ़ने के बा वुज़ू किब्ला रू होकर सो जाए, और ख़्वाब में सफ़ेदी या सबज़ी देखे तो समझ ले कि ये काम अच्छा है, करना चाहिए, और अगर सियाही या सुर्ख़ी देखे तो समझ ले कि ये काम बुरा है न करना चाहिए। (शामी)

अगर किसी वजह से नमाज़ न पढ़ सकता हो मसलन उजलत की वजह से या औरत हैज़ व निफ़ास के सबब से तो सिर्फ़ दुआ पढ़ कर काम शुरू करे।

(तहतावी वग़ैरा)

मुस्तहब है कि दुआ के पहले अल्लाह तआ़ला की तारीफ़ और दुरूद शरीफ़ भी पढ़ लिया जाए।

(इल्मुलफ़िक़्ह सफ़्हा–57, हुज्जतुलल्लाहिल बालिग़ा सफ़्हा–19, बुख़ारी सफ़्हा–155, तिर्मिज़ी सफ़्हा–90, किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–531)

अगर एक दिन में मालूम न हो सके तो तीन दिन या सात दिन तक ये अमल करे, इंशाअल्लाह मालूम हो जाएगा।

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

नमाज़े हाजत

जब किसी को कोई हाजत या ज़रूरत पेश आए ख़्वाह वह हाजत बिलवास्ता अल्लाह तआ़ला से हो या ब वास्ता किसी बंदे से उस हाजत का पूरा होना मक़्सूद हो, मसलन किसी को नौकरी की ख़्वाजिश हो या किसी औरत से निकाह करना चाहता हो तो उसको मुस्तहब है कि दो रकअ़त नमाज़ पढ़ कर दुरुद शरीफ़ पढ़े और अल्लाह

तआ़ला की तारीफ़ कर के इस दुआ़ को पढ़े:

"لَآ اِلٰـهَ اِلَّا اللّٰـهُ الْحَلِيْـمُ الْكَرِيْمُ سُبْحَانَ اللّٰهِ رَبِّ
الْعَرْشِ الْعَظِيْمِ اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ اَسْاَلُكَ مُوْجِبَاتِ
رَحْـمَتِكَ وَعَـزَائِمَ مَغْفِـرَتِكَ وَالْغَنِيْمَةَ مِنْ كُلِّ بِرٍّ
وَالسَّلَامَةَ مِنْ كُلِّ اِثْمٍ لَا تَدَعْ لِيْ ذَنْبًا اِلَّا غَفَرْتَهٗ وَلَا حَاجَةً
لَكَ فِيْهَا رِضًى اِلَّا قَضَيْتَهَا يَا اَرْحَمَ الرَّاحِمِيْنَ ."

इस दुआ के बाद जो हाजत उसको दरपेश हो उसका सवाल अल्लाह तआ़ला से करे, ये नमाज़ हाजत रवाई के लिए मुजर्रब है, बाज़ बुज़ुरगों ने अपनी ज़रूरतों में इसी तरीक़ा से नमाज़ पढ़ कर अल्लाह तआ़ला से अपनी हाजत ब्यान की उनका काम पूरा हो गया। (शामी)

एक मरतबा नबी (स.अ.व.) की ख़िदमत में एक नाबीना हाज़िर हुए कि या रसूलुल्लाह (स.अ.व.) मेरे लिए दुआ़ फ़रमाइये कि अल्लाह तआ़ला मुझे बीनाई इनायत फ़रमाए। हज़रत (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि अगर तुम सब्र करो तो बहुत सवाब होगा, अगर कहो तो मैं दुआ़ करूँ, उन्होंने ख़्वाहिश की कि आप दुआ़ फ़रमाइये, उस वक़्त आप ने उनको ये नमाज़ तालीम फ़रमाई।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़हा–38, कित्ताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़हा–532)

सलातुल औवाबीन

नमाज़े औवाबीन मुस्तहब है, नबी अकरम (स.अ.व.) ने इसके बहुत फ़ज़ाएल ब्यान फ़रामए हैं। नमाज़े औवाबीन छः रकअ़त पढ़नी चाहिए, तीन सलाम से, नमाज़े मग़रिब

के बाद।

(मराक़ियुलफ़लाह, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–48, तिर्मिज़ी सफ़्हा–89, इब्ने माजा सफ़्हा–98)

सलातुत्तस्बीह

सलातुत्तस्बीह मुस्तहब है, सवाब उसका अहादीस में बेशुमार है। ये नमाज़ नबी करीम (स.अ.व.) ने हज़रत अब्बास (रज़ि.) को तालीम फ़रमाई थी और फ़रमाया था कि ऐ चचा इसको पढ़ने से तमाम गुनाह मआफ़ हो जाते हैं अगले पिछले, नए पुराने, अगर तुम से हो सके तो हर रोज़ उसको एक मरतबा पढ़ लिया करो, वरना हफ़्ते में एक बार, वरना महीने में एक दफ़ा और ये भी न हो सके तो तमाम उम्र में एक बार। (तिर्मिज़ी)

बाज़ मुहक़्क़िक़ीन का क़ौल है कि इस क़दर फ़ज़ीलत मालूम हो जाने के बाद फिर भी अगर कोई इस नमाज़ को न पढ़े तो मालूम होता है कि वह दीन की कुछ इज़्ज़त नहीं करता। (शामी)

हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ि.) से पूछा गया कि इस नमाज़ के लिए कोई ख़ास सूरत भी तुम को याद है उन्होंने कहा हाँ "الھاکم التکاثر، والعصر، قل یا ایھا الکافرون، قل ھو اللہ احد"

ससातुत्तस्बीह की चार रकअतें नबी करीम (स.अ.व) से मनकूल हैं, बेहतर है कि चारों रकअतें एक सलाम से पढ़ी जाएँ। अगर दो सलाम से पढ़ी जाएँ तब भी दुरुस्त है। हर रकअत में पचहत्तर मरतबा तस्बीह कहना चाहिए,

पूरी नमाज़ में तीन सौ मरतबा।

नमाज़ सलातुत्तस्बीह के पढ़ने की तरकीब ये है कि पहले नीयत करे। "نَوَيْتُ اَنْ اُصَلِّيَ اَرْبَعَ رَكْعَاتِ صَلٰوةَ التَّسْبِيْحِ"

तरजुमाः मैंने ये इरादा किया कि चार रकअत नमाज़ सलातुत्तस्बीह पढ़ूँ, तकबीरे तहरीमा कह कर हाथ बाँध ले और "سُبْحَانَكَ اللّٰهُمَّ" पढ़ कर पन्द्रह मरतबा कहे "سُبْحَانَ اللّٰهِ وَالْحَمْدُ لِلّٰهِ وَلَا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَاللّٰهُ اَكْبَرُ" फिर "اَعُوْذُ بِاللّٰهِ" और "بِسْمِ اللّٰهِ" पढ़ कर "اَلْحَمْدُ" और सूरत पढ़े, उसके बाद दस मरतबा वही तस्बीह रुकूअ़ में पढ़े, फिर रुकूअ़ से उठ कर "سَمِعَ اللّٰهُ لِمَنْ حَمِدَهٗ و رَبَّنَا لَكَ الْحَمْدُ" के बाद दस बार वही तस्बीह पढ़े, फिर सज्दे में जाए और दोनों सज्दों में "سُبْحَانَ رَبِّيَ الْاَعْلٰى" के बाद और सज्दों के दरमियान दस दस मरतबा वही तस्बीह पढ़े। फिर दूसरी रकअ़त में अलहम्दु से पहले पन्द्रह मरतबा, और बाद अलहम्दु और दूसरी सूरत के दस मरतबा, और रुकूअ़ और क़ौमा और दोनों सज्दों और उनके दरमियान में दस दस दफ़ा उसी तस्बीह को पढ़े। इसी तरह तीसरी और चौथी रकअ़त में भी पढ़े।

एक दूसरी रिवायत में इस तरह वारिद हुआ है कि "سُبْحَانَكَ اللّٰهُمَّ" के बाद इस तस्बीह को न पढ़े, बल्कि बाद अलहम्दु और सूरत के पन्द्रह मरतबा और दूसरे सज्दे के बाद बैठ कर दस मरतबा, इसी तरह दूसरी रकअ़त में भी अलहम्दु और सूरत के बाद दस मरतबा और बाद अत्तहीयात के दस मरतबा, फिर उसी तरह तीसरी रकअ़त में भी, और चौथी रकअ़त में बाद दुरुद शरीफ के दस मरतबा और बाक़ी तस्बीह बदतस्तूर पढ़े, ये दोनों तरीक़े

तिर्मिज़ी शरीफ़ में मज़कूर हैं, इख़्तियार है कि इन दोनों रिवायतों में से जिस रिवायत को चाहे इख़्तियार करे और बेहतर है कि कभी इस रिवायत के मुवाफ़िक़ अमल करे और कभी उस रिवायत के, ताकि दोनों रिवायतों पर अमल हो जाए। (शामी)

इसकी तस्बीहें चूंकि एक ख़ास अदद के लिहाज़ से पढ़ी जाती हैं यानी हालते क़याम में पच्चीस या पन्द्रह मरतबा और बाक़ी हालतों में दस दस मरतबा, इसलिए कि उसकी तस्बीहों के गिनने की ज़रूरत होगी और अगर ख़्याल उनकी गिनती की तरफ़ रहेगा तो नमाज़ में ख़ुशूअ न होगा, लिहाज़ा फ़ुक़हा ने लिखा है कि उनके गिनने के लिए कोई अलामत मुक़र्रर कर दे मसलन जब एक दफ़ा कह चुके तो अपने हाथ की उंगली को दबावे, फिर दूसरी को इसी तरह तीसरी चौथी पाँचवीं को जब छटा अदद पूरा हो जाए तो दूसरे हाथ की पाँचों उंगलियाँ यके बाद दीगरे उसी तरह दबावे, इस तरह पूरे दस अदद हो जाएँगे, और अगर पन्द्रह मरतबा कहना हो तो एक हाथ की उंगलियाँ ढीली कर के फिर दबावे, पन्द्रह अदद पूरे हो जाएँगे, उंगलियों के पोरों पर न गिनना चाहिए। (शामी)

अगर कोई शख़्स सिर्फ़ अपने ख़्याल में अदद याद रख सके बशर्तेकि पूरा ख़्याल उसी तरफ़ न हो जाए तो और भी बेहतर है। (शामी)

अगर भूले से किसी मक़ाम की तस्बीहें छूट जाएँ तो उनको उस दूसरे मक़ाम में अदा कर ले जो पहले मक़ाम से मिला हुआ हो बशर्तेकि ये दूसरा मक़ाम ऐसा न हो जिसमें दुगनी तस्बीहें पढ़ने से उसके बढ़ जाने का ख़ौफ़

हो और उसका बढ़ जाना पहले मक़ाम से मना हो मसलन क़ौमा का रुकूअ़ से बढ़ा देना मना है। पस रुकूअ़ की छूटी हुई तकबीरें क़ौमा में न अदा की जाएँ बल्कि पहले सज्दे में और इसी तरह दोनों सज्दों की दरमियानी नशिस्त का सज्दों से बढ़ा देना मना है, लिहाज़ा पहले सज्दे की छूटी हुई तकबीरें दरमियान में न अदा की जाएँ बल्कि दूसरे सज्दे में।

(शामी, इल्मुलफ़िक्ह जिल्द–2 सफ़्हा–50, इब्न माजा सफ़्हा–99, तिर्मिज़ी सफ़्हा–95, तफ़सील देखिए मसाइल शबे बाराअत व शेबे क़द्र)

नमाज़े तौबा

जिस शख़्स से कोई गुनाह सरज़द हो जाए उसको मुस्तहब है कि दो रकअ़त नमाज़ पढ़ कर अपने उस गुनाह के मआफ़ कराने के लिए अल्लाह तआ़ला से दुआ़ करे। (तहतावी, शामी वग़ैरा)

हज़रत सिद्दीक़ अकबर (रज़ि.) नबी अकरम (स.अ.व.) से रिवायत करते हैं कि आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि किसी मुसलमान से कोई गुनाह सरज़द हो जाए और उसके बाद फ़ौरन तहारत कर के दो रकअ़त नमाज़ पढ़े, फिर अल्लाह तआ़ला से मग़फ़िरत चाहे, अल्लाह तआ़ला जल्लाशानहू उसके गुनाह बख़्श देगा। फिर आप (स.अ.व.) ने बतौर सनद के इस आयत की तिलावत फ़रमाई:

"وَالَّذِيْنَ اِذَا فَعَلُوْا فَاحِشَةً اَوْ ظَلَمُوْٓا اَنْفُسَهُمْ ذَكَرُوا اللّٰهَ فَاسْتَغْفَرُوْا لِذُنُوْبِهِمْ الاٰية"

इस आयत का मतलब ये है कि जब कोई शख़्स किसी

गुनाह में मुब्तला हो जाए फिर अल्लाह का ज़िक्र करे और अपने गुनाह की मआफ़ी चाहे तो अल्लाह उसे बख़्श देता है। चूंकि नमाज़ भी अल्लाह तआला का एक उम्दा ज़िक्र है, इसलिए ये नमाज़ इस आयत से समझी जाती है।

नमाज़े क़त्ल

जब कोई मुसलमान क़त्ल किया जाता हो तो उसको मुस्तहब है कि दो रकअत नमाज़ पढ़ कर अपने गुनाहों की मग़फ़िरत की अल्लाह तआला से दुआ करे ताकि यही नमाज़ व इस्तिग़फ़ार दुनिया में उसका आख़िरी अमल रहे।

(तहतावी, मराक़ियुलफ़लाह वग़ैरा)

एक मरतबा नबी अकरम (स.अ.व.) ने अपने अस्हाब में से चंद क़ारियों को क़ुरआन मजीद की तालीम के लिए कहीं भेजा था, अस्नाए राह कुफ़्फ़ारे मक्का ने उन्हें गिरफ़्तार किया, सिवा हज़रत ख़ुबैब (रज़ि.) के और सब को वहीं क़त्ल कर दिया, हज़रत ख़ुबैब (रज़ि.) को मक्का में ले जा कर बड़ी धूम और बड़े एहतेमाम से शहीद किया। जब ये शहीद होने लगे तो उन्होंने उन लोगों से इजाज़त लेकर दो रकअत नमाज़ पढ़ी, उसी वक़्त से ये नमाज मुस्तहब हो गई। (मिश्कात, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–51, बुख़ारी जिल्द–1 सफ़्हा–428 व तहतावी सफ़्हा–219)

नमाज़े तरावीह

नमाज़े तरावीह रमज़ान में सुन्नते मुअक्कदा है, मर्दों

के लिए भी और औरतों के लिए भी। (दुर्रेमुख़्तार)

जिस रात को रमज़ान का चाँद देखा जाए, उसी रात से तरावीह शुरू की जाए और जब ईद का चाँद देखा जाए छोड़ दी जाए।

नमाज़े तरावीह रोज़ा की ताबेअ़ नहीं है, जो लोग किसी वजह से रोज़ा न रख सकें उनको भी तरावीह का पढ़ना सुन्नत है, अगर न पढ़ेंगे तो तर्के सुन्नत का गुनाह उन पर होगा। (मराकियुलफ़लाह)

मुसाफ़िर और वह मरीज़ जो रोज़ा न रखता हो, और उसी तरह हैज़ व निफ़ास वाली औरतें अगर तरावीह के वक़्त ताहिर हो जाएँ और इसी तरह वह काफ़िर जो उस वक़्त इस्लाम लाए उन सबको तरावीह पढ़ना सुन्नत है, अगरचे उन लोगों ने रोज़ा नहीं रखा। (मराकियुलफ़लाह) नमाज़े तरावीह का वक़्त बाद नमाज़े इशा के शुरू होता है और सुब्ह की नमाज़ तक रहता है। नमाज़े इशा से पहले अगर तरावीह पढ़ी जाए तो उसका शुमार तरावीह में न होगा।

इसी तरह अगर कोई शख़्स इशा के बाद तरावीह पढ़ चुका हो और बाद पढ़ चुकने के मालूम हो कि इशा की नमाज़ में कुछ सह्व हो गया, जिसकी वजह से इशा की नमाज़ नहीं हुई तो उसको इशा की नमाज़ के बाद तरावीह का भी इआदा करना चाहिए। (दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा)

वित्र को बाद तरावीह का पढना बेहतर है, अगर पहले पढ़ ले तब भी दुरुस्त है। (दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा) नमाज़े तरावीह को बाद तिहाई रात के निस्फ़ शब से पहले पढ़ना मुस्तहब है और निस्फ़ शब के बाद ख़िलाफ़े औला है।

(तहतावी हाशिया, मराक़ियुलफ़लाह)

नमाज़े तरावीह की बीस रकअ़त बइजमाए सहाबा (रज़ि.) साबित हैं, हर दो रकअ़त एक सलाम से, बीस रकअ़तें दस सलाम से। (दुर्रेमुख़्तार, बहरुर्राइक़ वग़ैरा)

नमाज़े तरावीह में चार रकअ़त के बाद इतनी देर तक बैठना जितनी देर में चार रकअ़तें पढ़ी गई हैं मुस्तहब है, हाँ अगर इतनी देर तक बैठने में लोगों को तकलीफ़ हो और जमाअ़त के कम हो जोने का ख़ौफ़ हो तो इससे कम बैठे। इस बैठने की हालत में इख़्तियार है चाहे नवाफ़िल पढ़े चाहे तस्बीह वग़ैरा पढ़े, चाहे चुप बैठा रहे, मक्का मुअ़ज़्ज़मा में लोग बजाए बैठने के तवाफ़ किया करते हैं। मदीना मुनव्वरा में चार रकअ़त नमाज़ पढ़ लेते हैं, बाज़ फ़ुक़हा ने लिखा है कि बैठने की हालत में ये तस्बीह पढ़े:

"سُبْحَانَ ذِی الْمُلْکِ وَالْمَلَکُوْتِ سُبْحَانَ ذِی الْعِزَّةِ وَالْعَظْمَةِ
وَالْقُدْرَةِ وَالْکِبْرِیَاءِ وَالْجَبَرُوْتِ سُبْحَانَ الْمَلِکِ الْحَیِّ الَّذِیْ لَایَمُوْتُ
سُبُّوْحٌ قُدُّوْسٌ رَبُّنَا وَرَبُّ الْمَلَائِکَةِ وَالرُّوْحِ لَآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ نَسْتَغْفِرُ اللّٰهَ
وَنَسْئَلُکَ الْجَنَّةَ وَنَعُوْذُبِکَ مِنَ النَّارِ (شامی)

अगर इशा की नमाज़ जमाअ़त से न पढ़ी गई हो तो तरावीह भी जमाअ़त से न पढ़ी जाए, इसलिए कि तरावीह इशा की ताबेअ़ है, हाँ जो लोग जमाअ़त से इशा की नमाज़ पढ़ कर तरावीह जमाअ़त से पढ़ रहे हैं उनके साथ शरीक हो कर उसको भी तरावीह का जमाअ़त से पढ़ लेना दुरुस्त हो जाएगा जिसने इशा की नमाज़ बग़ैर जमाअ़त के पढ़ी है, इसलिए कि वह उन लोगों का ताबेअ़ समझा जाएगा, जिनकी जमाअ़त दुरुस्त है।

(दुर्रेमुख़्तार, शामी वग़ैरा)

अगर कोई शख़्स मस्जिद में ऐसे वक़्त पहुंचे कि इशा की नमाज़ हो गई हो तो उसे चाहिए कि पहले इशा की नमाज़ पढ़ ले फिर तरावीह में शरीक हो और उस दरमियान में तरावीह की कुछ रकअ़तें हो जाएँ तो उनको बाद वित्र पढ़ने के पढ़े। (दुर्रेमुख़्तार)

महीने में एक मरतबा कुरआन मजीद का तरतीब वार तरावही में पढ़ना सुन्नते मुअक्कदा है लोगों की काहिली या सुस्ती से उसको तर्क न करना चाहिए। हाँ अगर ये अंदेशा हो कि पूरा कुरआन मजीद पढ़ा जाएगा तो लोग नमाज़ में न आएँगे और जमाअ़त टूट जाएगी या उनको बहुत नागवार होगा तो बेहतर है कि जिस क़दर लोगों को गिराँ न गुज़रे, उसी क़दर पढ़ा जाए, बाक़ी "अलम तरकैफ़ा" से अख़ीर तक की दस सूरतें पढ़ दी जाएँ, हर रकअ़त में एक सूरत फिर जब दस रकअ़तें हो जाएँ तो उन्हीं सूरतों को दोबारा पढ़ दे या और जो सूरतें चाहे पढ़े।

(दुर्रेमुख़्तार, मराक़ियुलफ़लाह, बह्ररुर्राइक़, शामी)

एक कुराआन मजीद से ज़्यादा न पढ़े तावक़्ते कि लोगों का शौक़ न मालूम हो जाए।

एक रात में पूरे कुरआन मजीद का पढ़ना जाइज़ है बशर्तेकि लोग निहायत शौक़ीन हों कि उनको गिराँ न गुज़रे, अगर गिराँ गुजरे और नागवार हो तो मकरूह है।

तरावीह में किसी सूरत के शुरू पर एक मरतबा बिस्मिल्लाह बुलंद आवाज़ से पढ़ देना चाहिए इसलिए कि बिस्मिल्लाह भी कुरआन मजीद की एक आयत है अगरचे किसी सूरत का जुज़्व नहीं है, पस अगर बिस्मिल्लाह बिल्कुल न पढ़ी जाएगी तो कुरआन मजीद के पूरे होने में

एक आयत की कमी रह जाएगी और अगर आहिस्ता आवाज़ से पढ़ी जाएगी तो मुक्तदियों का कुरआन मजीद पूरा न होगा।

तरावीह का रमज़ान के पूरे महीना में पढ़ना सुन्नत है अगरचे कुरआन मजीद क़ब्ल महीना तमाम होने के ख़त्म हो जाए, मसलन पन्द्रह रोज़ में पूरा कुरआन मजीद पढ़ दिया जाए तो बाक़ी ज़माने में भी तरावीह का पढ़ना सुन्नते मुअक्कदा है। और "कुलहुवल्लाह" का तरावीह में तीन मरतबा पढ़ना जैसा कि आज कल दस्तूर है मकरूह है। नमाज़े तरावीह इस नीयत से पढ़े:

"نَوَيْتُ اَنْ اُصَلِّيَ رَكْعَتَيْ صَلوٰةِ التَّرَاوِيْحِ سُنَّةُ النَّبِيِّ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ وَاَصْحَابِهٖ"

तरजुमा: मैंने ये इरादा किया कि दो रकअत नमाज़े तरावीह पढ़ूँ जो नबी (स.अ.व.) और उनके सहाबा (रज़ि.) की सुन्नत है।

नमाज़े तरावीह पढ़ने का भी वही तरीक़ा है जो और नमाज़ों में ब्यान हो चुका। नमाज़े तरावीह की फ़ज़ीलत और उसका सवाब मुहताजे ब्यान नहीं, रमज़ानुलमुबारक की रातों में जो इबादत की जाए उसका सवाब अहादीस में बहुत वारिद है। एक सहीह हदीस का मज़मून है कि जो शख़्स रमज़ान की रातों में ख़ास अल्लाह तआला के वास्ते सवाब समझ कर इबादत करे, उसके अगले पिछले सब गुनाह बख़्श दिए जाते हैं। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़हा–54, किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़हा–544, तफ़सील देखिए अहक़र की मुरत्तब करदा किताब मुकम्मल व मुदल्लल मसाइले तरावीह)

नमाज़े एहराम

जो शख़्स हज करना चाहे उसके लिए हज का एहराम बाँधते वक़्त दो रकअ़त नमाज़ पढ़ना सुन्नत है।

(मराक़ियुलफ़लाह, तहतावी वग़ैरा)

इस नमाज़ की नीयत यूँ की जाए:

"نَوَيْتُ اَنْ اُصَلِّيَ رَكْعَتَى الْاِحْرَامِ سُنَّةَ النَّبِيِّ عَلَيْهِ الصَّلٰوةُ وَالسَّلَامُ"

तरजुमा: मैंने ये इरादा किया कि दो रकअ़त नमाज़ एहराम नबी अलैहिस्सलाम की सुन्नत पढ़ूँ।

नमाज़े कुसूफ़ व ख़ुसूफ़

कुसूफ़ सूरज गरहन को और ख़ुसूफ़ चाँद गरहन को कहते हैं, इसकी क़िराअत आहिस्ता होनी चाहिए।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–226)

कुसूफ़ के वक़्त दो रकअ़त नमाज़ मसनून है।

नबी करीम (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि कुसूफ़ और ख़ुसूफ़ अल्लाह तआ़ला की क़ुदरत की निशानियाँ हैं। इससे मक़्सूद बंदों को ख़ौफ़ दिलाना है, पस जब तुम उसे देखो तो नमाज़ पढ़ो।

नमाज़े कुसूफ़ व ख़ुसूफ़ पढ़ने का वही तरीक़ा है जो और नवाफ़िल का है। नमाज़े कुसूफ़ जमाअ़त से अदा की जाए, बशर्तेकि इमामे जुमा या हाकिमे वक़्त या उसका नाइब इमामत करे। (मराक़ियुलफ़लाह वग़ैरा)

नमाज़े कुसूफ़ में वह सब शर्तें मोतबर हैं जो जुमा के

लिए हैं सिवा ख़ुतबा के (तहतावी मराक़ियुलफ़लाह)। नमाज़े कुसूफ़ के लिए अज़ान या इक़ामत नहीं बल्कि अगर लोगों को जमा करना मक़्सूद हो तो पुकार दिया जाए।

(मराक़िउलफ़लाह वग़ैरा)

नमाज़े कुसूफ़ में बड़ी बड़ी सूरतों को मिस्ल सूरए बक़रा वग़ैरा का पढ़ना और रुकूअ़ और सज्दों का बहुत देर तक अदा करना मसनून है।

और क़िराअत आहिस्ता पढ़े, (बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–2 सफ़हा–37, बहवाला शरह तनवीर सफ़हा–117, फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़हा–226)

नमाज़ के बाद इमाम को चाहिए कि दुआ़ में मसरूफ़ हो जाए और सब मुक़्तदी आमीन आमीन कहें, जब तक गरहन मौक़ूफ़ न हो जाए, दुआ़ में मसरूफ़ रहना चाहिए हाँ अगर ऐसी हालत में आफ़ताब ग़ुरूब हो जाए या किसी नमाज़ का वक़्त आ जाए तो अलबत्ता दुआ़ को मौक़ूफ़ कर के नमाज़ में मशग़ूल हो जाना चाहिए।

ख़ुसूफ़ के वक़्त भी दो रकअ़त नमाज़ मसनून है, मगर उसमें जमाअ़त मसनून नहीं, इसी तरह जब कोई ख़ौफ़ या मुसीबत पेश आए तो नमाज़ पढ़ना मसनून है, मसलन सख़्त आँधी चले या ज़लज़ला आए या बिजली गिरे या सितारे बहुत टूटें या बर्फ़ बहुत गिरे, या पानी बहुत बरसे या कोई मरज़े आ़म मिस्ल हैज़ा वग़ैरा के फैल जाए या किसी दुश्मन वग़ैरा का ख़ौफ़ हो मगर उन औक़ात में जो नमाज़ें पढ़ी जाएँ उनमें जमाअ़त न की जाए हर शख़्स अपने घर में तन्हा पढ़े नबी (स.अ.व.) को जब कोई मुसीबत या रंज होता तो नमाज़ में मशग़ूल हो जाते।

(मराक़ियुलफ़लाह वग़ैरा)

जिस क़दर नमाज़ें यहाँ बयान हो चुकीं, उनके अलावा भी जिस क़दर नवाफ़िल की कसरत की जाए बाइसे सवाब व तरक़्क़ीए दरजात है खुसूसन उन औक़ात में जिनकी फ़ज़ीलत अहादीस में वारिद हुई है और उनमें इबादत करने की तरग़ीब नबी अकरम (स.अ.व.) ने फ़रमाई है मिस्ल रमज़ान के अख़ीर अशरे की रातों और शाबान की पन्द्रहवीं तारीख़ के उन औक़ात की बहुत फ़ज़ीलतें और उनमें इबादत का बहुत सवाब अहादीस में वारिद हुआ है, हम ने अहादीस के ख़्याल से उनकी तफ़सील ब्यान नहीं की।

इस्तिसक़ा के सिलसिले में सब से बड़ी चीज़ तौबा, इस्तिग़फ़ार, इज्ज़ व नियाज़ और बारगाहे खुदावंदी में बंदों की गिरया वज़ारी है, जो नमाज़ के अलावा और सूरतों से भी हो सकती है, लेकिन अगर नमाज़ पढ़ना ही तय हो जाए तो फिर ज़रूरी है कि बस्ती या शहर के तमाम छोटे बड़े मुसलमान शहर से बाहर ईदगाह या किसी वसीअ़ मैदान में जमा हों, पूरे इख़लास और दिल की गिड़गिड़ाहट के साथ तौबा और इस्तिग़फ़ार करते रहें, जब इजतिमा हो जाए तो जमाअ़त से दो रकअ़त नमाज़ पढ़ी जाएं, इमाम साहब क़िराअत जेह्र से करें, सलाम फ़ेरने के बाद एक खुतबा पढ़ा जाए, उसके बाद दूसरा खुतबा वही पढ़ा जाए जो जुमा के खुतबए ऊला के बाद पढ़ा जाता है। दोनों खुतबों के दरमियान जलसा भी करें, फिर दुआ मांगें। क़ल्बे रिदा सिर्फ़ इमाम साहब करें, मुक़्तदी क़ल्बे रिदा न करें यानी मुक़्तदी हज़रात चादर को न पलटें।

(अबूदाऊद, ज़ादुलमआद व हिस्ने हसीन)

नबी (स.अ.व.) से इस्तिसका की जो दुआएँ मनकूल हैं मिनजुमला उनके एक दुआ ये है:

"اَللّٰهُمَّ اسْقِنَا غَيْثًا مُغِيْثًا نَافِعًا غَيْرَ ضَارٍّ اٰجِلًا غَيْرَ عَاجِلٍ اَللّٰهُمَّ اسْقِ عِبَادَكَ وَبَهَائِمَكَ وَانْشُرْ رَحْمَتَكَ وَاَحْيِ بَلَدَكَ الْمَيِّتَ اَللّٰهُمَّ اَنْتَ اللّٰهُ لَآ اِلٰهَ اِلَّا اَنْتَ الْغَنِيُّ وَنَحْنُ الْفُقَرَآءُ اَنْزِلْ عَلَيْنَا الْغَيْثَ وَاجْعَلْ مَا اَنْزَلْتَ لَنَا قُوَّةً وَّ بَلَاغًا اِلٰى حِيْنٍ"

इस्तिसका की दुआ का अरबी ज़बान में या ख़ास इन्ही अलफ़ाज़ से होना कुछ ज़रूरी नहीं।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–57, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–121, कबीरी जिल्द–1 सफ़्हा–427, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–5 सफ़्हा–239, मिश्कात जिल्द–1 सफ़्हा–132, तफ़सील देखिए ख़ुतबाते मासूरा)

ख़ौफ़ की नमाज़

जब किसी दुश्मन का सामना होने वाला हो ख़्वाह वह दुश्मने इंसान हो या कोई दरिंदा जानवर या कोई अज़दहा वग़ैरा और ऐसी हालत में सब मुसलमान या बाज़ लोग भी मिल कर जमाअ़त से नमाज़ पढ़ न सकें और सवारियों से उतरने की भी मोहलत न हो तो सब लोगों को चाहिए कि सवारियों पर बैठे बैठे इशारों से तन्हा नमाज़ पढ़ लें, इस्तिक़बाले क़िब्ला भी उस वक़्त शर्त नहीं, हाँ अगर एक दो आदमी एक ही सवारी पर बैठे हों तो वह दोनों जमाअ़त कर लें और अगर उसकी भी मोहलत न हो तो माज़ूर हैं, उस वक़्त नमाज़ न पढ़ें, इत्मीनान के बाद उसकी क़ज़ा पढ़ लें।

और अगर ये मुमकिन हो कि कुछ लोग मिल कर जमाअत से नमाज़ पढ़ सकें, अगरचे सब आदमी न पढ़ सकते हों तो ऐसी हालत में उनको जमाअत न छोड़नी चाहिए। इस क़ाएद से नमाज़ पढ़ें कि तमाम मुसलमानों के दो हिस्से कर दिए जाएँ, एक हिस्सा दुश्मन के मुक़ाबले में रहे और दूसरा हिस्सा नमाज़ शुरू कर दे, अगर तीन या चार रकअत की नमाज़ हो, जैसे ज़ुहर, अस्र, मग़रिब और इशा बशर्तेकि कि ये लोग मुसाफ़िर न हों और क़स्र न करें तो जब इमाम दो रकअत नमाज़ पढ़ कर तीसरी रकअत के लिए खड़ा होने लगे वरना एक ही रकअत के बाद ये हिस्सा चला जाए जैसे फ़ज्र, जुमा, ईदैन की नमाज़ या ज़ुहर, अस्र, इशा की नमाज़ क़स्र की हालत में, और दूसरा हिस्सा वहाँ से आकर इमाम के साथ बक़िया नमाज़ पढ़े, इमाम को उन लोगों के आने का इंतिज़ार करना चाहिए, फिर जब बक़िया नमाज़ इमाम तमाम कर चुके तो तन्हा सलाम फेर दे और ये लोग दुश्मन के मुक़ाबले में चले जाएँ और पहले लोग फिर यहाँ आकर अपनी बक़िया नमाज़ बे क़िराअत के तमाम कर लें, इसलिए कि वह लोग लाहिक़ हैं, फिर ये लोग दुश्मन के मुक़ाबले में चले जाएँ और दूसरा हिस्सा यहाँ आकर अपनी नमाज़ क़िराअत के साथ तमाम करे, इसलिए कि वह लोग मस्बूक़ हैं। हालते नमाज़ में दुश्मन के मुक़ाबले में जाते वक़्त वहाँ से नमाज़ तमाम करने के लिए आते वक़्त पा प्यादा चलना चाहिए, अगर सवार हो कर चलेंगे तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी, इसलिए कि ये अमले कसीर है और अमले कसीर की उसी क़द्र इजाज़त दी गई है जिसकी सख़्त ज़रूरत

हो, अगर इमाम तीन या चार रकअत वाली नमाज़ में पहले हिस्से के साथ एक रकअत दूसरे के साथ दो या तीन रकअत पढ़ेगा तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। (शामी)

दूसरे हिस्से का इमाम के साथ बक़िया नमाज़ पढ़ कर चला जाना और पहले हिस्से का फिर यहाँ आकर अपनी नमाज़ तमाम करना उसके बाद दूसरे हिस्सा का यहीं आकर नमाज़ तमाम करना मुस्तहब और अफ़ज़ल है। ये भी जाइज़ है कि पहला हिस्सा नमाज़ पढ़ कर चला जाए और दूसरा हिस्सा इमाम के साथ बक़िया नमाज़ पढ़ कर अपनी नमाज़ वहीं तमाम कर ले, तब दुश्मन के मुक़ाबले में जाए जब ये लोग वहाँ पहुंच जाएँ तो पहला हिस्स अपनी नमाज़ वहीं पढ़ ले यहाँ न आए।

(दुर्रेमुख़्तार, शामी वग़ैरा)

ये तरीक़ा नमाज़ पढ़ने का उस वक़्त के लिए है कि जब सब लोग एक ही इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ना चाहते हों मसलन कोई बुज़ुर्ग शख़्स हो और सब चाहते हों कि उसी के पीछे नमाज़ पढ़ें वरना बेहतर ये है कि एक हिस्सा एक इमाम के साथ पूरी नमाज़ पढ़ ले और दुश्मन के मुक़ाबला में चला जाए, फिर दूसरा हिस्सा दूसरे शख़्स को इमाम बना कर पूरी नमाज़ पढ़ ले।

अगर ये ख़ौफ़ हो कि दुश्मन बहुत ही क़रीब है और जल्द यहाँ पहुंच जाएगा और इस ख़्याल से उन लोगों ने पहले क़ाएदे से नमाज़ पढ़ी, बाद उसके ये ख़्याल ग़लत निकला तो उनको उस नमाज़ का इआदा कर लेना चाहिए, इसलिए कि वह नमाज़ निहायत सख़्त ज़रूरत के वक़्त ख़िलाफ़े क़यास अमले कसीर के साथ शुरू की गई है,

बेज़रूरते शदीद इस कदर अमले कसीर मुफ़सिदे नमाज़ है।

अगर कोई नाजाइज़ लड़ाई हो तो इस वक़्त उस तरीक़ा से नमाज़ पढ़ने की इजाज़त नहीं। मसलन बाग़ी लोग बादशाहे इस्लाम पर चढ़ाई करें या किसी दुनयावी ग़रज़ से कोई किसी से लड़े तो ऐसे लोगों के लिए इस कदर अमले कसीर मआफ़ न होगा।

नमाज़ ख़िलाफ़े जिहते क़िब्ले की तरफ़ शुरू कर चुके हों कि इतने में दुश्मन भाग जाए तो उनको चाहिए कि फ़ौरन क़िब्ले की तरफ़ फिर जाएँ वरना नमाज़ न होगी।

अगर इत्मीनान से क़िब्ले की तरफ़ नमाज़ पढ़ रहे हों और उसी हालत में दुश्मन आ जाए तो फ़ौरन उनको दुश्मन की तरफ़ फिर जाना चाहिए और उस वक़्त इस्तिक़बाले क़िब्ला शर्त न रहेगा।

अगर कोई शख़्स दरिया में तैर रहा हो, और नमाज़ का वक़्ते अख़ीर हो जाए तो उसको चाहिए कि अगर मुमकिन हो तो थोड़ी देर तक अपने हाथ पैर को जुम्बिश न दे और इशारों से नमाज़ पढ़ ले।

मस्अलाः नमाज़े जुमा इस नीयत से पढ़ा जाए कि मैंने ये इरादा किया कि दो रकअ़त फ़र्ज़ नमाज़ जुमा पढ़ूँ, बेहतर ये है कि जुमा की नमाज़ एक मक़ाम में एक ही मस्जिद में सब लोग जमा होकर पढ़ें अगरचे एक मक़ाम की मुतअ़द्दद मसाजिद में भी नमाज़े जुमा जाइज़ है।

मस्अलाः अगर कोई क़अ़दए अख़ीरा में अत्तहीयात पढ़ते वक़्त या सज्दए सह्व के बाद आ कर मिले तो उसकी शिरकत सहीह हो जाएगी और उसको जुमा की नमाज़ तमाम करनी चाहिए यानी दो रकअ़त पढ़ने से

जुहर की नमाज़ उसके ज़िम्मा से उतर जाएगी।

(बहरुर्राइक, दुर्रेमुख़्तार, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–153)

मस्अला: शौवाल के महीने की पहली तारीख़ को ईदुलफ़ित्र कहते हैं और ज़िलहिज्जा की दसवीं तारीख़ को ईदुलअज़हा। ये दोनों इस्लाम में ईद और ख़ुशी के दिन हैं, इन दिनों में दो दो रकअ़त नमाज़ बतौर शुक्रिया के पढ़ना वाजिब है, जुमे की नमाज़ के सेहत व वजूब के जो शराइत है वही सब ईदैन की नमाज़ में भी हैं, सिवाए ख़ुत्बे के, जुमा की नमाज़ में ख़ुत्बा शर्त है और ईदैन की नमाज़ में शर्त नहीं है। जुमा का ख़ुत्बा फ़र्ज़ है, ईदैन का ख़ुत्बा सुन्नत, मगर ईदैन के ख़ुत्बा का सुनना भी मिस्ल जुमा के वाजिब है, जुमा का ख़ुत्बा नमाज़ से पहले पढ़ना ज़रूरी है, और ईदैन का नमाज़ के बाद मसनून है।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–154)

तफ़सील देखिए "मसाइले नमाज़े जुमा" और "मसाइले ईदैन व क़ुर्बानी")

नमाज़े इश्क़

मस्अला: नमाज़े इश्क़ बाज़ हज़रात जो कि इस तरह पढ़ते हैं कि क़याम में बीस दफ़ा अल्लाह का ज़िक्र करते हैं, उसके बाद दस दस दफ़ा क़ौमा, सज्दा और जलसा में पढ़ते हैं, इसकी शरीअ़त में कुछ अस्ल नहीं है और तरीक़त में भी वही इबादत मोतबर है जो शरीअ़त से साबित हो और शरअ़न जाइज़ हो। ये ख़िलाफ़े तरीक़े सुन्नत है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–233)

सज्दए सह्व का ब्यान

नमाज़ के सुनन व मुस्तहब्बात अगर तर्क हो जाएँ (यानी छूट जाएँ तो उससे नमाज़ में कोई ख़राबी नहीं आती, यानी नमाज़ सहीह हो जाती है और नमाज़ के फ़राइज़ में से कोई चीज़ अगर सहवन या अमदन छूट जाए तो नमाज़ फ़ासिद हो जाती है, जिसका कोई तदारुक नहीं, जिसकी वजह से नमाज़ का लौटाना ज़रूरी होता हैं, नमाज़ के वाजिबात में से अगर कोई चीज़ अमदन छोड़ दी जाए तो उसका भी तदारुक नहीं हो सकता और नमाज़ फ़ासिद हो जाती है, और अगर नमाज़ के वाजिबात में से कोई चीज़ अमदन नहीं बल्कि सहवन छूट जाए तो उसका तदारुक हो सकता है, और वह तदारुक ये है कि क़अदए अख़ीरा में पूरी अत्तहीयात पढ़ने के बाद दाहिनी तरफ़ एक मरतबा सलाम फेर कर दो सज्दे कर लिए जाएँ, और सज्दा के बाद फिर क़अदए किया जाए और अत्तहीयात और दुरुद शरीफ़ और दुआ़ हसबे मामूल पढ़ कर फिर सलाम फेरा जाए, इन सज्दों को सज्दए सह्व कहा जाता है।

इतनी बात समझ लीजिए कि सरकारे दो आलम (स.अ.व.) के उन अक़वाल में जो शरई चीज़ों की ख़बर देने और दीनी अहकाम के ब्यान से मुतअ़ल्लिक़ हैं न कभी सह्व हुआ है और न ये मुमकिन है। हाँ आप (स.अ.व.) के अफ़आल में सह्व होता था, वह भी इस हिकमत व मसलिहत के पेशे नज़र कि उम्मत के लोग इस तरह सह्व के

मसाइल सीख लें।

(मज़ाहिरे हक़ जिल्द–2 सफ़्हा–21)

सज्दए सह्व के उसूल

मस्अला: सज्दए सह्व हसबे जैल वजूहात से वाजिब होता है:

(1) नमाज़ के वाजिबात में से किसी वाजिब को तर्क कर दे। (छोड़ दे)

(2) किसी वाजिब को उसके महल से मुअख़्ख़र कर दे।

(3) किसी वाजिब की ताख़ीर एक रुक्न की मिक़्दार कर दे।

(4) किसी वाजिब को दो मरतबा अदा कर ले।

(5) किसी वाजिब को मुतग़ैयर कर दे जैसे जेह्री (बुलंद आवाज़ वाली) नमाज़ में आहिस्ता और आहिस्ता वाली नमाज़ में बुलंद आवाज़ से क़िराअत कर दे।

(6) नमाज़ के फ़राइज़ में से किसी फ़र्ज़ को उसके महल से मुअख़्ख़र कर दे।

(7) किसी फ़र्ज़ को उसके महल (जगह) से मुक़द्दम कर दे।

(8) किसी फ़र्ज़ को मुकर्रर (यानी दो मरतबा भूले से अदा कर ले) (मसाइले सज्दए सह्व सफ़्हा–62, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–678)

मस्अला: सह्व (भूल) की वजह से अगर नमाज़ में कोई ऐसी ख़राबी हो गई हो, मसलन किसी रुक्न को

मुक़द्दम या मुअख़्ख़र कर दिया या रुकूअ़ क़िराअत से पहले कर दिया, या सज्दा रुकूअ़ से पहले कर दिया, या एक रुक्न को मुकर्रर कर दिया तो दो सज्दे सह्व के वाजिब होंगे।

(शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–111, कबीरी सफ़्हा–455, नमाज़े मसनून सफ़्हा–513)

मस्अला: दरअस्ल सज्दए सह्व तर्के वाजिब से ही लाज़िम होता है, मगर चूंकि ताख़ीरे वाजिब में भी तर्के वाजिब लाज़िम आता है, इसलिए ताख़ीरे वाजिब से भी सह्व लाज़िम आता है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–375)

मस्अला: नमाज़ के सुनन और मुस्तहब्बात के तर्क से नमाज़ में कुछ ख़राबी नहीं आती, यानी नमाज़ सहीह हो जाती है, हाँ जिन सुनन के छोड़ देने से नमाज़ में कराहते तहरीमा आ जाती है उनके तर्क से अलबत्ता नमाज़ का इआदा कर लेना चाहिए, इसलिए कि जो नमाज़ कराहत के साथ अदा की जाए उस नमाज को लौटाना वाजिब है। (शामी)

मस्अला: सज्दए सह्व कर लेने से वह ख़राबी जो वाजिब के छूट जाने से पेश आई थी वह दूर हो जाती है ख़्वाह जिस क़दर भी वाजिब छूट गए हों, दो सज्दे सह्व के काफ़ी हैं यहाँ तक कि अगर किसी से नमाज़ के तमाम वाजिबात छूट गए हों, उसको भी दो ही सज्दे करने चाहिएँ, दो से ज़्यादा सज्दए सह्व मशरूअ नहीं है।

मस्अला: सज्दए सह्व करने के बाद अत्तहीयात पढ़ना भी वाजिब है। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–*17, दुर्रेमुख़्तार

जिल्द–1 सफ़्हा–681)

सज्दा सह्व का तरीक़ा

मस्अला: सज्दा सह्व किसी नुक़्सान की वजह से हो या किसी ज़्यादती की वजह से उसके अदा करने का तरीक़ा अहनाफ़ (रह.) के नज़दीक ये है कि आख़िरी क़अ्दा में तशह्हुद (अत्तहीयात) पढ़ने के बाद पहले दाहिनी तरफ़ (एक ही) सलाम फेरे उसके बाद दो सज्दे करे, फिर तशह्हुद (अत्तहीयात) दुरूद शरीफ़ और दुआ बदस्तूद पढ़ कर नमाज़ से निकलने के लिए (दोनों तरफ़) सलाम फेरे। (मसाइले सज्दए सह्व सफ़्हा–67, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–104, कबीरी सफ़्हा–471, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–110)

मस्अला: अफ़ज़ल यही है कि दाहिनी तरफ़ सलाम फेरने के बाद ये सज्दे किए जाएँ, अगर बग़ैर सलाम फेरे या सामने ही सलाम कह कर सज्दे कर लिए जाएँ तब भी जाइज़ है। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–117)

मस्अला: सज्दए सह्व करना था, लेकिन दोनों तरफ़ सलाम फेर दिया, तब भी कुछ हरज नहीं फिर भी सज्दए सह्व दोनों तरफ़ फेरने के बाद कर ले। अगर बोला न हो। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–386, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–575, फ़तावा रहीमिया जिल्द–7 सफ़्हा–246)

मस्अला: अगर किसी ने पहले बाईं तरफ़ सलाम फेर दिया, उसके बाद सज्दए सह्व किया तो उस पर (मज़ीद)

सज्दए सह्व इस ग़लती की वजह से वाजिब नहीं है।

(आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–65)

मस्अला: सज्दए सह्व के लिए दो सज्दे वाजिब हैं, अगर सज्दए सह्व में बजाए दो सज्दों के एक ही सज्दा किया तो ये काफ़ी नहीं है, लिहाज़ा नमाज़ क़ाबिले इआदा है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–36, बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–136)

मस्अला: अगर इमाम ने सज्दए सह्व किया उसके बाद किसी शख़्स ने आकर जमाअत में शिरकत की तो वह इमाम के सलाम फेरने के बाद उसी नीयत और उसी तहरीमा से अपनी नमाज़ पूरी कर ले।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–183, तहतावी जिल्द–1 सफ़्हा–256)

मस्अला: मस्बूक़ (जिसकी रकअत रह गई हो) सज्दए सह्व में तो इमाम की मुताबिअत करेगा मगर उसके साथ सलाम नहीं फेरेगा, अगर मुक़्तदी ने ये बात याद होते हुए कि मेरी नमाज़ बाक़ी है सलाम फेर दिया तो उसकी नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी, और अगर भूले से सलाम फेर दिया है तो नमाज़ फ़ासिद न होगी और सज्दए सह्व भी लाज़िम न होगा क्योंकि वह इस वक़्त मुक़्तदी है और मुक़्तदी पर उसकी ग़लती से सज्दए सह्व लाज़िम नहीं होता। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–379, कबीरी सफ़्हा–465, फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–23, बहवाला बदाएउस्सनाए जिल्द–1 सफ़्हा–176 व फ़ताव महमूदिया जिल्द–10 सफ़्हा–170)

मस्अला: जब इमाम दूसरी तरफ़ का सलाम शुरू करे

तो मस्बूक़ (जिसकी रकअ़त रह गई हो) खड़ा हो जाए, एक तरफ़ सलाम फेरने पर खड़ा न हो, क्योंकि हो सकता है कि इमाम के ज़िम्मा सज्दए सह्व हो।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–293, व फ़तावा महमूदिया जिल्द–10 सफ़्हा–270, और दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–559, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–394)

ये भी हो सकता है कि सज्दए सह्व में इमाम के साथ लौटना पड़ जाए। (रफ़अ़त क़ासमी)

मस्अला: अगर किसी ने बजाए दाहिनी जानिब के, बाएँ जानिब सलाम फेर दिया तो फ़क़त दाहिनी जानिब सलाम फेर ले, बाएँ जानिब सलाम फेरने की ज़रूरत नहीं है और न ही सज्दए सह्व की ज़रूरत है, नमाज़ सहीह है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–247, जौहरा नैयरा सफ़्हा–55)

दोबारा बाईं जानिब सलाम फेरना उस पर लाज़िम नहीं है। (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

इमाम को ग़लती बताने का हुक्म

मस्अला: अगर इमाम नमाज़ में कोई आयत भूल जाए, मसलन पढ़ते पढ़ते अटक गया या पस व पेश में पड़ गया तो मुक़्तदी के लिए जो उसके पीछे नमाज़ पढ़ रहा है जाइज़ है कि बता दे, लेकिन सिर्फ़ ग़लती बताना मक़्सूद हो, अपनी क़िराअत मक़्सूद न हो, क्योंकि इमाम के पीछे क़ुरआन पढ़ना मकरूहे तहरीमी है।

वाज़ेह हो कि मुक़्तदी के लिए इमाम को लुक़्मा देने

(ग़लती बताने) में पेश दस्ती मकरूह है, यानी जल्दी नहीं करनी चाहिए और इसी तरह इमाम के लिए भी मकरूह है कि मुक़्तदी की रहनुमाई का मतवक़्क़े हो। उसे चाहिए कि किसी और सूरत में से ज़रूरी क़िराअत कर ले, या कोई और सूरत पढ़ ले, या फिर रुकूअ में चला जाए, बशर्तेकि मिक़्दारे फ़र्ज़ या वाजिब क़िराअत पूरी हो चुकी हो।

मुक़्तदी का इमाम के सिवा किसी और को ग़लती बताना, मसलन अपने जैसे किसी दूसरे मुक़्तदी को या किसी और इमाम को जो उसका इमाम नहीं है, या तन्हा नमाज़ पढ़ने वाले को या किसी शख़्स को जो नमाज़ में नहीं है, जाइज़ नहीं है, इससे नमाज़ बातिल हो जाएगी, लेकिन अगर तिलावत के इरादा से न कि बताने की ग़रज़ से कुछ पढ़ा तो नमाज़ बातिल न होगी, ताहम ऐसा करना मकरूहे तहरीमी है। इसी तरह कोई नमाज़ी दूसरे के बताने पर अमल करे तो नमाज़ जाती रहेगी, हाँ इमाम अपने मुक़्तदी का लुक़्मा (ग़लती) ले सकता है, इससे नमाज़ बातिल नहीं होती। पस इमाम या मुनफ़रिद (तन्हा पढ़ने वाला) कोई आयत भूल जाए और कोई दूसरा (जो नमाज़ में शामिल न हो नमाज़ के बाहर से) बता दे और उसके बताए पर अमल करे तो नमाज़ बातिल हो जाएगी, लेकिन अगर ख़ुद ही उसको भूली हुई आयत वग़ैरा याद आ जाए तो उस पर अमल करने से नमाज़ बातिल न होगी।

मस्अला: अगर इमाम लुक़्मा (ग़लती) न ले तो लुक़्मा देने वाले और इमाम की नमाज़ फ़ासिद न होगी। नमाज़ सहीह होगी, सज्दए सह्व भी ज़रूरत नहीं है, अगर ग़लती

से सज्दए सह्व कर लिया तब भी नमाज़ सहीह होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–58)

मस्अला: वाज़ेह हो कि जिस तरह क़िराअत में किसी दूसरे के बताए पर अमल करने से नमाज़ जाती रहती है, उसी तरह किसी और की (जो नमाज़ में शामिल नहीं है) बताई हुई किसी बात पर भी अमल करने से नमाज़ जाती रहती है, मसलन सफ़ में कोई जगह ख़ाली है और किसी ने (बाहर से) नमाज़ी से कहा कि इस जगह को पुर कर लो, और नमाज़ी ने उसका कहना मान लिया। तो नमाज़ बातिल हो जाएगी। अगर ऐसी सूरत हो तो चाहिए कि क़द्रे तवक़्क़ुफ़ करे और फिर बखुशी खुद यानी किसी के कहने की बिना पर नहीं बल्कि खुद वह काम कर ले।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–481, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–97, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–92, कबीरी सफ़्हा–440, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–33)

मस्अला: अगर इमाम बक़द्रे तीन आयत के बाद सूरए फ़ातिहा के पढ़ चुका है तो लुक़्मा देने (बताने) का इंतिज़ार करना मकरूह है, बल्कि फ़ौरन रुकूअ़ करना चाहिए, और अगर तीन आयत से पहले भूल गया तो बेहतर ये है कि किसी दूसरी जगह से पढ़ना शुरू करे, अगर ऐसा न किया, और दूसरी जगह से पढ़ना शुरू नहीं किया तो जब मुक़्तदी पर साबित हो जाए कि इमाम को आगे याद नहीं आ रहा है तो लुक़्मा दे दे, बग़ैर मोहलत के लुक़्मा देना मकरूह है, नमाज़ बहरहाल सहीह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–106, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–650, फ़तावा रहीमिया जिल्द–1

सफ़्हा–155, फ़तावा आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–99)

मस्अला: नमाज़ में अगर इमाम को हदस (वुज़ू टूट जाए) हो जाए तो ख़लीफ़ा बनाना दुरुस्त है, ज़रूरी नहीं है, अगर अवाम मसाइल से नावाकिफ़ हैं तो ऐसी हालत में इस्तीनाफ़ (नमाज़ का दोहराना) अफ़ज़ल है। पस पहले नमाज़ को क़तआ कर दे और कोई अमल मुनाफ़ी कर ले, फिर वुज़ू के बाद अज़ सरे नौ नमाज़ शुरू करे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–401, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–562)

मस्अला: अगर इमाम सज्दे की हालत में फ़ौत हो जाए तो वह नमाज़ फ़ासिद हो गई फिर किसी को इमाम बना कर अज़ सरे नौ नमाज़ पढ़नी चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–70, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–553)

मस्अला: अगर इमाम ने नापाकी की हालत या बग़ैर वुज़ू नमाज़ पढ़ा दी तो इमाम को चाहिए कि हत्तलबुस्अ जो जो मुक़्तदियों में से याद आ जाएँ उनको इत्तिला कर दे कि फ़लाँ वक़्त की नमाज़ का इआदा कर लें, क्योंकि वह नमाज़ नहीं हुई थी और जो याद न आए उनकी नमाज़ हो गई। उसके इत्तिला न होने में कुछ हरज नहीं है, अगर कभी याद आ जाएँ तो उनको भी इत्तिला कर दी जिए, और ख़ुद इमाम को भी उस नमाज़ का इआदा करना चाहिए और इस गुनाह से तौबा व इस्तिग़फ़ार करे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–77, फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–364, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–553, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–525)

नमाज़ में किराअत की ग़लती का क़ाएदए कुल्लिया

मस्अलाः नमाज़ की क़िराअत में ग़लती वाक़ेअ होने के सिलसिले में फ़ुक़हा ने ये क़ाएदा कुल्लिया लिखा है कि वह ग़लती जिससे माना में ऐसा ज़बरदस्त तग़ैयुर हो गया हो कि उसके एतिक़ाद से कुफ़्र लाज़िम आता हो तो नमाज़ हर जगह फ़ासिद हो जाएगी, ख़्वाह तीन आयत के पहले ऐसी ग़लती हुई हो या तीन आयत के बाद। और वह ग़लती जिससे हर्फ़ की हैअत में फ़र्क़ आ गया हो, मसलन ज़ेर, ज़बर, पेश बदल जाए या तशदीद, तख़फ़ीफ़ या मद व क़स्र में फ़र्क़ हो जाए तो नमाज़ फ़ासिद न होगी, अलबत्ता अगर बहुत तग़ैयुर हो जाए तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

इसी तरह किसी हर्फ़ में तग़ैयुर हो जाए जिसके सबब मुराद से बहुत दूर माना बन जाएँ, जब भी नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी, वरना नहीं, ख़्वाह तग़ैयुर एक हर्फ़ में हो या ज़्यादा में। इसी तरह एक हर्फ़ की जगह दूसरा हर्फ़ पढ़ दिया और माना बदल गया, पस अगर उन दोनों हरफ़ों में किसी मशक़्क़त के बग़ैर फ़र्क़ कर सकता था, अगर नहीं किया तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। और अगर उन दोनों हरफ़ों में फ़र्क़ करना दुश्वार रहा जैसे "सीन" और "साद" में और "ज़ा" और "ज़ाद" में और "तो" और "ता" में पस अगर किसी ने क़स्दन ऐसा पढ़ा है तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। और अगर बिला क़स्द इस तरह ज़बान से निकल गया, या ऐसा ना वाक़िफ़ और

जाहिल है कि उन दोनों में फ़र्क को नहीं जानता था तो नमाज़ हो जाती है।

इसी तरह अगर किसी ने कोई लफ़्ज़ ज़्यादा कर के पढ़ दिया और माना में तग़ैयुर हो गया तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी, ख़्वाह वह ज़ाएद लफ़्ज़ कुरआन शरीफ़ में किसी जगह आया हो या न आया हो, और अगर उस लफ़्ज़ के ज़्यादा करने से माना में तग़ैयुर नहीं हुआ, लेकिन कुरआन शरीफ़ में कहीं वह लफ़्ज़ मौजूद है तो नमाज़ बिलइत्तिफ़ाक़ दुरुस्त है। और अगर वह लफ़्ज़ कुरआन करीम में किसी जगह नहीं आया तो इसमें इख़्तिलाफ़ है। इमाम अबू यूसुफ़ (रह.) के नज़दीक नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी और दूसरे अइम्मा किराम (रह.) के नज़दीक नमाज़ फ़ासिद नहीं होती है।

बहरहाल मज़कूरा सूरतों में उलमाए मुतअख़्ख़िरीन अक्सर जगह गुंजाइश पैदा करते हैं और आसानी का लिहाज करते हैं और नमाज़ के दुरुस्त होने का हुक्म देते हैं और मुतक़द्दिमीन हज़रात नमाज़ को लौटाने को कहते हैं और नमाज़ जैसी अहम इबादत में एहतियात का लिहाज़ करते हैं।

लिहाज़ा नमाज़ पढ़ने वालों को इन मसाइल में एहतियात से काम लेना बेहतर है, और ज़रूरत के वक़्त अपने मक़ामी उलमा की तरफ़ रुजूअ करना चाहिए।

(मसाइले सज्दए सह्व सफ़्हा–42 बहवाला शामी सफ़्हा–444, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–72, 78 बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–592)

मस्अला: नमाज़ की क़िराअत में ऐसी ग़लती हुई जिससे नमाज़ का फ़ासिद होना लाज़िम आता हो लेकिन फिर

उसकी तसहीहह कर ली तो नमाज़ सहीह हो गई, अगर ग़लती की इसलाह नहीं होगी तो नमाज़ का लौटाना ज़रूरी होगा। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–308)

मस्अला: लफ़्ज़ "अना" ज़मीर मुतकल्लिम जो कि कुरआन शरीफ़ में बरस्मे ख़त बइस्बाते "अलिफ़" है तो "अना" को बइस्बाते "अलिफ़" पढ़ने से अगरचे नमाज़ हो जाएगी लेकिन ये लह्न (ग़लती) फ़िलक़िराअत होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–73, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–589)

मस्अला: जिन मौक़ों में "रा" और "लाम" को पुर कर के पढ़ना चाहिए वहाँ पर बारीक पढ़ने से नमाज़ सहीह है, नमाज़ में कुछ ख़लल नहीं हुआ।

मस्अला: जिस जगह "मीम" और "नून गुन्ना" कर के पढ़ा जाता है उस जगह "मीम" और "नून" को ज़ाहिर कर के पढ़े तो ये ज़ाहिर है कि हसबे क़ाएदए तजवीद उस जगह मद नहीं है लिहाज़ा ये लह्न है और ख़ता है मगर नमाज़ हो जाती है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–80, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–592)

ख़वास को इस मस्अला में बहुत एहतियात करनी चाहिए, क्योंकि जान बूझ कर इस तरह पढ़ने से नमाज़ में ख़लल वाक़ेअ होगा। (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

नमाज़ में ख़िलाफ़े तरतीब पढ़ना?

मस्अला: किसी ने दूसरी रकअत में ख़िलाफ़े तरतीब पहले की सूरत पढ़ दी, मसलन पहली रकअत में "قُل

"يٰاَيُّهَا الْكَافِرُوْنَ" पढ़ी और दूसरी रकअत में "اَلَمْ تَرَ كَيْفَ" पढ़ी, पस अगर भूल कर ऐसा किया है तो नमाज़ बिला कराहत दुरुस्त है, और अगर क़स्दन ख़िलाफ़े तरतीब पढ़ा तो नमाज़ मकरूह हुई। और अगर सह्वन हो जाए तो कुछ हरज नहीं, और दोनों सूरतों में से किसी में सज्दए सह्व वाजिब नहीं है और नमाज़ बहरहाल सहीह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–110, फ़तावा दारुलउलूम ज़िल्द–4 सफ़्हा–419, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–510, फ़तावा महमूदिया जिल्द–10 सफ़्हा–227)

मस्अला: एक एक रकअत में कई कई सूरतें पढ़ना फ़राइज़ में नामुनासिब है, नवाफ़िल में मुज़ाएक़ा नहीं।

(तहतावी जिल्द–1 सफ़्हा–194, फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–156, फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–46)

मस्अला: अगर किसी ने दूसरी रकअत में भूल कर ख़िलाफ़े तरतीब शुरू की और शुरू करते ही याद आ गया फिर उसने उसे छोड़ कर दूसरी सूरत तरतीब की रिआयत से पढ़ी तो उसकी नमाज़ दुरुस्त है मगर मकरूह हुई (तंज़ीही) और उस पर सज्दए सह्व वाजिब नहीं। अलबत्ता उसके लिए वह सूरत छोड़ कर दूसरी सूरत शुरू करना बेहतर नहीं। (शामी जिल्द–1 सफ़्हा–510)

मस्अला: दरमियान में छोटी सूरत छोड़ दी मसलन पहली रकअत में "اَرَاَيْتَ الَّذِىْ" और दूसरी में "قُلْ يٰاَيُّهَا الْكَافِرُوْنَ" पढ़ी यानी दरमियान में "اِنَّا اَعْطَيْنَا" की सूरत छोड़ दी तो ये मकरूहे तंज़ीही है, सज्दा करना वाजिब नहीं है। (शामी सफ़्हा–425)

मस्अला: नमाज़ में क़िराअत करते हुए भूले से किसी

लफ़्ज़ का तरजुमा पढ़ दिया तो नमाज़ फ़ासिद हो गई और सज्दए सहव से वह नमाज़ सहीह न होगी, उसको दोबारा पढ़ना ज़रूरी है। (शामी जिल्द–1 सफ़्हा–340)

तजवीद की रिआयत के बग़ैर पढ़ना?

मस्अला: अगर किसी ने बुलंद आवाज़ वाली नमाज़ में तजवीद की रिआयत किए बग़ैर कुरआन मजीद पढ़ा तो उससे सज्दए सह्व वाजिब नहीं होता, अलबत्ता अगर कोई ऐसी ग़लती की है जिससे नमाज़ में फ़साद आता है तो उसकी नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिलद–4 सफ़्हा–419, अलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–66, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–90)

एक सूरत को दो रकअत में पढ़ना?

मस्अला: अगर किसी ने दो रकअतों में एक ही सूरत दोबारा पढ़ ली तो उस पर सज्दए सह्व वाजिब नहीं है।

(मसाइले सज्दए सह्व सफ़्हा–32, शामी जिल्द–2 सफ़्हा–510)

मस्अला: बेहतर ये है कि हर रकअत में पूरी पूरी (छोटी) सूरत पढ़े। अगर एक रकअत में किसी सूरत का कुछ हिस्सा पढ़े तो ये भी जाइज़ है, लेकिन बिला ज़रूरत ये अफ़ज़ल नहीं है।

(आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–40, फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–177)

मस्अला: एक ही रुकूअ़ को मुकर्रर दोनों रकअ़तों में पढ़ने से नमाज हो जाएगी और सज्दए सह्व वाजिब नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–405, फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–95)

मस्अला: जो लोग औवल रकअ़त में रुकूअ़ और दूसरी रकअ़त में सूरत जो रुकूअ़ से बड़ी नहीं होती, पढ़ते हैं, इसमें कुछ कराहत नहीं है, अलबत्ता फ़ज़ीलत इसमें है कि दोनों रकअ़तों में पूरी सूरत पढ़ी जाए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–235, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–510)

मस्अला: एक रकअ़त में दो सूरतें पढ़ना ख़िलाफ़े औला है, मगर नमाज़ हो जाती है, और ख़िलाफ़े औला से मुराद कराहते तंज़ीही है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–255, बहवाला फ़तहुलक़दीर जिल्द–1 सफ़्हा–299)

मस्अला: वक़्त की तंगी के वक़्त फ़ज्र की नमाज़ में छोटी सूरतें दुरुस्त हैं। एक मरतबा आँ हज़रत (स.अ.व.) ने सुब्ह की नमाज़ में "قُلْ اَعُوْذُ بِرَبِّ الْفَلَقِ اور قُلْ اَعُوْذُ بِرَبِّ النَّاس" पढ़ी है। पस मालूम हुआ कि जब कि वक़्त थोड़ा हो या सफ़र वग़ैरा में उजलत हो तो छोटी सूरतों का फ़ज्र की नमाज़ में पढ़ना दुरुस्त है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–237, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–505)

रमुज़े औक़ाफ़ पर ठहरने और न ठहरने की बहस

सवाल: "(١) اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۙ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ (٢) مِنْ

شَرِّالْوَسْوَاسِ الْخَنَّاسِ ، الَّذِیْ یُوَسْوِسُ (۳) عَلٰی کُلِّ شَیْءٍ قَدِیْرٌ ، نِ الَّذِیْ خَلَقَ الْمَوْتَ وَالْحَیٰوۃَ. الآیہ."

आयत "۵" पर अगर साँस ख़त्म या बंद हो जाने की वजह से वक़्फ़ करे और अख़ीर लफ़्ज़ को न दुहरा कर आगे पढ़ता चले तो नमाज़ में क्या ख़लल है? नीज़ तसीरी मिसाल में अगर वक़्फ़ कर लिया हो तो आगे "الَّذِیْ" कह कर पढ़ा जाए या "نِ الَّذِیْ" कह कर?

जवाबः आयत "۵" पर बज़रूरत वक़्फ़ कर देने में कुछ हरज नहीं है और लफ़्ज़ मा क़ब्ल को दुहराने की ज़रूरत नहीं है और नमाज़ में कुछ ख़लल नहीं है। (अगर दुहरा लिया तो) और तीसरी मिसाल में "اَلَّذِیْ" और "نِ الَّذِیْ" पढ़ना दोनों तरह दुरुस्त है। मगर वक़्फ़ में "اَلَّذِیْ" पढ़ना चाहिए। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–227)

बाज़ लफ़्ज़ों में दो क़िराअतें

सवालः कुरआन शरीफ़ में बाज़ जगह छोटे हुरूफ़ लिखे हुए होते हैं मसलन "یَبْصُطُ ، ھُمُ الْمُصَیْطِرُوْنَ. عَلَیْھِمْ بِمُصَیْطِرٍ" उनमें से कौन सा हुरूफ़ दो मरतबा पढ़ा जाए?

जवाबः लफ़्ज़ "یَبْصُطُ" और "ھُمُ الْمُصَیْطِرُوْنَ" और "عَلَیْھِمْ بِمُصَیْطِرٍ" के ऊपर "सीन" लिखने से मक़्सूद ये है कि ये लफ़्ज़ "सीन" से पढ़ा गया है और "साद" से भी यानी तिलावत करने वाला ख़्वाह "सीन" पढ़े ख़्वाह "साद" नमाज़ सहीह है, और ये मतलब नहीं है कि ऐसे कलिमात को दो दफ़ा पढ़े, बल्कि जिस क़ारी का इत्तिबा करे उसी के मुवाफ़िक़ पढ़े।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द--2 सफ़्हा–234, बहवाला जलालैन सूरए गाशिया सफ़्हा–498)

सेगए वाहिद को जमा और जमा को वाहिद पढ़ना?

मस्अला: नमाज़ में बवक़्ते क़िराअत वाहिद को बसेग़ए जमा और जमा को बसेग़ए वाहिद पढ़ना मसलन आयत को आयात पढ़ना ग़लती है, अमदन ऐसा करना दुरुस्त नहीं है, और अगर ग़लती से ऐसा पढ़ा गया तो नमाज़ सहीह है यानी नमाज़ हो जाती है, मगर ऐसा करना न चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–247, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–591 व ज़लतुलक़ारी)

क़िराअत में सह्व (भूल हो जाने) के मसाइल

मस्अला: नमाज़ में पढ़ते पढ़ते भूल जाए या मुतशाबेहा लग कर दूसरी जगह की दो तीन आयात पढ़े और फिर याद आने पर या भूलने की वजह से इब्तिदा से क़िराअत करे तो नमाज़ हो जाती है और सज्दए सह्व वाजिब नहीं है और ग़लती से अगर सज्दए सह्व कर लिया तब भी नमाज़ हो गई।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–393, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–560 व शामी जिल्द–1 सफ़्हा–182)

मस्अला: नमाज़े जुमा में इमाम ने पहली रकअ़त में सूरए दहर शुरू की, निस्फ़ सूरत पढ़ कर आगे न पढ़

सका, दो बारा, सेह बारा, पढ़ कर औवल से जब पूरी हुई, ऐसी सूरत में नमाज़ हो गई, सज्दए सह्व लाज़िम नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–374)

मस्अला: मुक़्तदी ने बार बार लुक़मा दिया जिसमें एक रुक्न की मिक़्दार (तीन मरतबा सुब्हानल्लाह पढ़ने के बराबर है) ताख़ीर हो गई तो इस सूरत में भी सज्दए सह्व वाजिब नहीं और न लुक़मा देने वाले की नमाज़ फ़ासिद होगी। (शामी जिल्द–1 सफ़्हा–418)

मस्अला: बक़द्रे वाजिब क़िराअत के बाद क़िराअत में ग़लती से सज्दए सह्व नही आता, लेकिन अगर ग़लती ऐसी है जो मुफ़सिदे सलात (नमाज़ को तोड़ने वाली) है तो नमाज़ का लौटाना लाज़िम है।

(फ़ताव दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–378)

मस्अला: अगर कोई शख़्स सूरए फ़ातिहा (अलहम्दु शरीफ़) या दूसरी सूरत छोड़ जाए और उसी रकअत के रुकूअ में या बाद रुकूअ के याद आ जाए तो उसको चाहिए कि खड़ा हो जाए और छूटी हुई सूरत को पढ़ ले और फिर रुकूअ करे और सज्दए सह्व करे, इसलिए कि रुकूअ अदा करने में ताख़ीर हो गई। और अगर सूरए फ़ातिहा वग़ैरा छूट जाए और दूसरी रकअत में याद आ जाए तो अगर दूसरी सूरत छूटी है तो उसको पढ़ ले और सूरए फ़ातिहा छूटी हो तो उसको न पढ़े, वरना एक रकअत में दो सूरए फ़ातिहा हो जाएगी और तकरार सूरए फ़ातिहा की मशरूअ नहीं। इस सूरत में भी सज्दए सह्व करना चाहिए।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–117, फ़तावा रहीमिया

जिल्द–1 सफ़्हा–156, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–627)

मस्अला: पहली दो रकअ़तों में सूरए फ़ातिहा के तकरार (दो मरतबा सूरए फ़ातिहा पढ़ने) से सज्दए सह्व लाज़िम होगा। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–396, फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–21)

मस्अला: अगर कोई शख़्स सूरए फ़ातिहा से पहले दूसरी सूरत पढ़ जाए और उसी वक़्त उसको ख़्याल आ जाए तो चाहिए कि सूरए फ़ातिहा के बाद फिर सूरत पढ़े और सज्दए सह्व करे, इसलिए कि दूसरी सूरत का सूरए फ़ातिहा के बाद पढ़ना वाजिब है और यहाँ उसके ख़िलाफ़ हुआ है। (इल्मुलफ़िक़्ह सफ़्हा–117, आलमगीरी सफ़्हा–65, फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–17)

नमाज़ में सूरए फ़ातिहा या सिर्फ़ सूरत पढ़ी?

मस्अला: अगर किसी ने सिर्फ़ सूरए फ़ातिहा पढ़ी या सिर्फ़ कोई सूरत पढ़ी और रुकूअ़ में चला गया तो इन दोनों सूरतों में सज्दए सह्व वाजिब होगा।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ्हा–424, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–413)

मस्अला: अगर किसी ने सूरए फ़ातिहा के बाद सिर्फ़ छोटी दो आयतें पढ़ीं और भूल कर रुकूअ़ में चला गया तो उस पर सज्दए सह्व वाजिब होगा और अगर क़स्दन रुकूअ़ में चला जाए तो नमाज़ को दोबारा पढ़ना ज़रूरी है।

(अलामगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–65, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–408)

(क्योंकि छोटी तीन आतयें या बड़ी एकआयत ज़रूरी है)
(मुहम्मद रफ़्अत क़ासमी)

मस्अला: अगर पहली या दूसरी रकअ़त में सूरए फ़ातिहा से पहले सूरत पढ़ी तो सज्दए सह्व करना होगा।
(कबीरी सफ़्हा–471)

नीज़ फ़राइज़ की तरह नवाफ़िल (व सुनन वग़ैरा) में भूल जाने से सज्दए सह्व करना होगा।
(फ़तावा दारुलउलूम सफ़्हा–409, कबीरी सफ़्हा–471)

सूरए फ़ातिहा दो मरतबा पढ़ ली?

मस्अला: अगर किसी ने फ़र्ज़ की पहली या दूसरी रकअ़त में भूल कर दो मरतबा अलहम्दु शरीफ़ पढ़ ली या अक्सर हिस्सा दोबारा लौटाया तो उन दोनों सूरतों में सज्दए सह्व वाजिब होगा और अगर फ़र्ज़ की तीसरी या चौथी रकअ़त में दो मरतबा अलहम्दु पढ़ दी तो सज्दए सह्व वाजिब नहीं, ये मस्अला फ़र्ज़ों का है, लेकिन अगर नवाफ़िल की तीसरी या चौथी रकअ़त में अलहम्दु दो मरतबा पढ़ ली तो सज्दए सह्व करना वाजिब होगा।

मस्अला: अगर किसी ने सूरए फ़ातिहा का अक्सर हिस्सा पढ़ लिया और थोड़ा सा हिस्सा भूल गया तो उस पर सज्दए सह्व वाजिब नहीं और अगर थोड़ा सा हिस्सा पढ़ा और अक्सर हिस्सा रह गया तो उस पर सज्दए सह्व वाजिब है।

(आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–65, फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–168, फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–190,

जिल्द–2 सफ़्हा–185)

सूरए फ़ातिहा के बजाए कोई सूरत पढ़ ली?

मस्अलाः अगर किसी ने पहली या दूसरी रकअत में सूरए फ़ातिहा नहीं पढ़ी और भूल कर दूसरी कोई सूरत शुरू कर दी, फिर याद आया तो सूरत छोड़ कर पहले सूरए फ़ातिहा पढ़े और फिर उसके बाद कोई सूरत मिलाए और अख़ीर में सज्दए सह्व करे, इसी तरह अगर सूरए फ़ातिहा छोड़ कर मुकम्मल कोई सूरत पढ़ ली, या रुकूअ में चला गया या रुकूअ से भी उठ गया, तो इन सब सूरतों में लौट कर सूरए फ़ातिहा पढ़े और फिर तरतीब के मुताबिक़ बक़िया काम करे और अख़ीर में सज्दए सह्व कर ले। (मसाइले सज्दए सह्व सफ़्हा–29, आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–65)

मस्अलाः अलहम्दु शरीफ़ को सूरत से पहले पढ़ना वाजिब है। अगर सूरत का कोई जुमला भी अलहम्दु से पहले पढ़ा गया तो सज्दए सह्व लाज़िम होगा।

(शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–112)

मस्अलाः फ़र्ज़ की पहली दो रकअतों को क़िराअत के लिए मुतऐयन करना भी वाजिब है।

(शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–70, कबीरी सफ़्हा–295)

मस्अलाः अगर पहली रकअतों में फ़ातिहा के बाद सूरत न पढ़ी तो आख़िरी रकअतों में फ़ातिहा के बाद सूरत पढ़े और फिर आख़िर में सज्दए सह्व करे।

(शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–112)

मस्अला: चार रकअत वाली फ़र्ज़ नमाज़ की तीसरी और चौथी रकअत में सूरए फ़ातिहा के बाद और सूरत पढ़े तो सज्दए सह्व लाज़िम नहीं है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–22, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–427)

फ़ातिहा के बाद जिस सूरत का इरादा किया वह नहीं पढ़ी?

मस्अला: किसी ने सूरए फ़तहा पढ़ने के बाद एक सूरत पढ़ने का इरादा किया, लेकिन ग़लती से दूसरी सूरत पढ़ डाली तो उस पर सज्दए सह्व वाजिब नहीं है।

(आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–65)

मस्अला: कोई सूरत शुरू की फिर दूसरी सूरत पढ़ी तो इस सूरत में नमाज़ सहीह है और सज्दए सह्व भी लाज़िम नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–375)

अत्तहीयात के बजाए फ़ातिहा या फ़ातिहा के बाद अत्तहीयात पढ़ ली?

मस्अला: अत्तहीयात के बजाए फ़ातिहा पढ़ दी याद आने पर अत्तहीयात पढ़ी तो सज्दए सह्व नहीं है, मगर तफ़सील ये है कि अगर सूरए फ़ातिहा तशह्हुद की जगह पढ़ी या पहले सूरए फ़ातिहा पढ़ी फिर तशह्हुद तो दोनों सूरतों में सज्दए सह्व आएगा और अगर पहले तशह्हुद पढ़ा फिर फ़ातिहा तो सज्दए सह्व नहीं लाज़िम होगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–402, फ़तावा

रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–242)

मस्अला: अगर किसी शख़्स ने पहली रकअत में सूरए फ़ातिहा के बाद अत्तहीयात पढ़ डाली तो उस पर सज्दए सह्व करना वाजिब है और अगर सूरए फ़ातिहा से पहले अत्तहीयात पढ़ी तो सज्दए सह्व वाजिब नहीं है।

(आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–66)

फ़ातिहा के बाद देर तक ख़ामोश खड़ा रहा?

मस्अला: किसी ने सूरए फ़ातिहा पढ़ी और चुप हो गया और एक लम्बी आयत या तीन छोटी आयतों के बराबर ख़ामोश खड़ा रहा, उसके बाद सूरत मिलाई तो उस पर सज्दए सह्व लाज़िम है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–487, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–693, आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–393)

ताख़ीर फ़र्ज़ या वाजिब का सबब हो जाए?

मस्अला: अगर कोई शख़्स नमाज़ में ऐसा फ़ेल करे जो ताख़ीरे फ़र्ज़ या वाजिब का सबब हो जाए तो उसको भी सज्दए सह्व करना चाहिए। मसलन (1) सूरए फ़ातिहा के बाद कोई शख़्स इस क़दर ख़ामोश रहे जिस में कोई रुक्न अदा हो सके। (2) कोई शख़्स क़िराअत के बाद उतनी ही देर तक ख़ामोश खड़ा रहे। (3) कोई शख़्स क़अदए ऊला में अत्तहीयात के बाद उतनी ही देर तक

ख़ामोश चुप बैठा रहे या दुरूद शरीफ़ पढ़े या कोई दुआ मांगे, इन सब सूरतों में सज्दए सह्व वाजिब होगा।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–120, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–401, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–427)

मस्अला: नमाज़ी के लिए क़िराअत, रुकूअ, सुजूद में तरतीब क़ाइम रखना भी वाजिब है, पहले क़याम, फिर तहरीमा, फिर क़िराअत, फिर रुकूअ, दोनों सज्दे और आख़िर में क़अ़दा। (शरह नक़ाय जिल्द–1 सफ़्हा–69, हिदया जिल्द–1 सफ़्हा–63)

फ़र्ज़ की अख़ीर रकअ़तों में कुछ नहीं पढ़ा?

मस्अला: अगर फ़र्ज़ की ख़ाली रकअ़तों में यानी तीसरी या चौथी रकअ़त में किसी ने सूरए फ़ातिहा नहीं पढ़ी तो उस पर सज्दए सह्व वाजिब नहीं है।

(अगर कुछ भी न पढ़े बल्कि ख़ामोश खड़ा रहा तो नमाज़ दुरुस्त है और सज्दए सह्व वाजिब नहीं है)

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अला: अगर फ़र्ज़ की तीसरी या चौथी रकअ़त में सूरए फ़ातिहा के बाद कोई सूरत भूले से या क़स्दन पढ़ ली तो सज्दए सह्व वाजिब नहीं है।

(शामी जिल्द–1 सफ़्हा–478, आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–95)

मस्अला: चार फ़र्ज़ की अख़ीर की दो रकअ़त में सूरत मिलाने से सज्दए सह्व लाज़िम नहीं आता क्योंकि अख़ीरैन में इकतिफ़ा फ़ातिहा पर वाजिब नहीं है, कि

ज़्यादती से तर्क वाजिब होता हो बल्कि सूरत मिलाने और न मिलाने का इख़्तियार दिया गया है, अगरचे न पढ़ना सूरत का औला (बेहतर) और मसनून है, बख़िलाफ़ क़अदए ऊला के उसमें इकतिफ़ा तशह्हुद पर और दुरूद शरीफ़ न पढ़ना वाजिब है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–396 व जिल्द–4 सफ़्हा–375, फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–55)

फ़र्ज़ की पहली रकअ़तों में सूरत मिलाना भूल जाए?

मस्अला: फ़र्ज़ की पहली दो रकअ़तों में या एक रकअ़त में सूरत मिलाना भूल जाए तो सज्दए सह्व लाज़िम आता है, क्योंकि सूरत मिलाना वाजिब है और उसके तर्क से सज्दए सह्व लाज़िम आता है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–399, आलमगीरी मिस्री जिल्द–1 सफ़्हा–118)

मस्अला: सुन्नत या नफ़्ल या फ़र्ज़ की पहली रकअ़त में सूरए फ़ातिहा के बाद सूरत मिलाना भूल जाए और रुकूअ़ कर दे तो अब क़ौमा कर के (यानी खड़े हो कर) सज्दे में जाए और आख़िर में सज्दए सह्व करे। मज़कूरा सूरत में बेहतर ये है कि लौट कर सूरत पढ़े फिर रुकूअ़ करे और आख़िर में सज्दए सह्व करे। गो ये सूरत भी दुरुस्त है कि रुकूअ़ के बाद सज्दा में चला जाए और आख़िर में सज्दए सह्व कर ले।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–398, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–683 व 499, इमदादुलफ़तावा

जिल्द–1 सफ़्हा–531)

मस्अलाः अगर रुकूअ मुकर्रर (दो मरतबा) किया या तीन सज्दे कर लिए या तशह्हुद के बाद चार रकअ़त वाली नमाज़ में दुरुद शरीफ़ पढ़ लिया, जिसकी वजह से तीसरी रकअ़त के क़याम में ताख़ीर हो गई तो सज्दए सह्व लाज़िम होगा। (शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–111, कबीरी सफ़्हा–452)

मस्अलाः फ़र्ज़ की तीसरी या चौथी या दोनों रकअ़तों में ग़लती से सूरत मिला ली तो नमाज़ सहीह है और सज्दए सह्व की ज़रूरत नहीं है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–405, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–427, फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–177)

आहिस्ता वाली नमाज़ में बुलंद आवाज़ से क़िराअत करना?

मस्अलाः अगर आहिसता आवाज़ की नमाज़ (जुहर, अस्र) में कोई शख़्स बुलंद आवाज़ से क़िराअत कर जाए या बुलंद आवाज़ की नमाज़ में इमाम आहिस्ता आवाज़ से क़िराअत करे तो उसको सज्दए सह्व करना चाहिए, हाँ अगर आवाज़ की नमाज़ (फ़ज्र, मग़रिब, इशा) में बहुत थोड़ी क़िराअत बुलंद आवाज़ से की जाए जो नमाज़ सहीह होने के लिए काफ़ी न हो मसलन दो तीन लफ़्ज़ बुलंद आवाज़ से निकल जाएँ तो कुछ हरज नहीं।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–118, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–105, कबीरी सफ़्हा–464, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–294,

फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–15)

मस्अला: अगर इमाम ने जेहरी नमाज़ में भूल कर आहिस्ता पढ़ना शुरू किया और छोटी तीन आयतें पढ़ने के बाद उसे याद आया, या किसी ने लुक़मा दिया तो उसको सूरए फ़ातिहा शुरू से बुलंद आवाज़ के साथ पढ़ना ज़रूरी है और आख़िर में सज्दए सह्व भी करे।

मस्अला: अगर इमाम ने ज़ुहर या अस्र की नमाज़ में छोटी तीन आयतें बुलंद आवाज़ से पढ़ दीं और उसके बाद याद आया कि ये आहिस्ता क़िराअत वाली नमाज़ है तो जिस क़दर पढ़ चुका है उसके बाद आहिस्ता आवाज़ से पढ़े, शुरू से आवाज़ के साथ क़िराअत दुहराने की ज़रूरत नहीं है।

(शामी जिल्द–1 सफ़्हा–694, मसाइले सज्दए सह्व सफ़्हा–33)

मस्अला: अगर कोई इमाम इशा की आख़ीर रकअत में जेह्र (बुलंद आवाज़ से क़िराअत) करे तो इस सूरत में सज्दए सह्व लाज़िम होगा, क्योंकि इशा की आख़िरी रकअतों में अगर क़िराअत करे तो सिर (आहिस्ता) लाज़िम है, नीज़ ज़ुहर की अख़ीरैन में जेह्र करने से भी सज्दए सह्व लाज़िम होगा। क्योंकि इशा की आख़िर रकअतों में अगरचे क़िराअत वाजिब नहीं है लेकिन अगर क़िराअत करे तो इख़फ़ा (आहिस्ता पढ़ना) लाज़िम है।

नीज़ ज़ुहर की आख़िरी रकअतों में जेह्र करने से भी सज्दए सह्व लाज़िम होगा। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–389, बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–141, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–497)

मस्अलाः जिसमें जेहर वाजिब नहीं है, उसमें तर्के जेहर से सज्दए सह्व लाज़िम न होगा और जिसमें जेहर वाजिब है उसमें तर्के जेहर से सज्दए सह्व लाज़िम होगा, मगर जुमा व ईदैन में सज्दए सह्व का हुक्म नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–403)

मस्अलाः इमाम के लिए फ़ज्र, मग़रिब, इशा, जुमा ईदैन, तरावीह और सिर्फ़ रमज़ानुलमुबारक में वित्र की नमाज़ में बुलंद आवाज़ से क़िराअत वाजिब है, इसी तरह ज़ुहर व अस्र की नमाज़ में आहिस्ता आवाज़ से क़िराअत वाजिब है।

(हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–73, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–83)

मस्अलाः मुनफ़रिद यानी तन्हा नमाज़ पढ़ने वाला अगर जेहरी नमाज़ में आहिस्ता से और आहिस्ता वाली नमाज़ में बुलंद आवाज़ से क़िराअत कर दे तो उस पर सज्दए सह्व वाजिब नहीं है।

(आलमगीरी सफ़्हा–82, मसाइल सज्दए सह्व सफ़्हा–32, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–682)

”والحاصل ان الجهر فی الجهرية لا یجب علی المنفرد اتفاقاً و انما الخلاف فی وجوب الاخفاء علیه فی السرّية وظاهر الرواية عدم الوجوب کما صرح بذالک فی التتار خانية عن المحیط و کذافی الذخیرة و شروحه الهداية و النهاية والكفاية والعناية و معراج الدراية وصرّحوابان وجوب السهو علیه اذاجهر فیما یخافت فیه وانما هو علی الامام فقط (شامی صفحہ۴۹۸)“

इमाम पर जेहरी नमाज़ में जेहर और सिर्री नमाज़ में सर वाजिब है इसलिए उसके तर्क पर सज्दए सह्व वाजिब होगा। मुनफ़रिद को इख़्तियार है चाहे ज़ोर से यानी बुलंद

आवाज़ से किराअत करे या आहिस्ता आवाज़ से।

मस्अला: जेह्री (बुलंद आवाज़ से किराअत वाली) नमाज़ में इमाम के सलाम फेरने के बाद जब मस्बूक़ अपनी छूटी हुई रकअतें पूरी करने के लिए उठे तो उसको इख़्तियार है, जी चाहे तो ज़ोर से किराअत करे और अगर जी चाहे तो आहिस्ता आवाज़ से किराअत करे। मस्बूक़ अपनी बाक़ी माँदा रकअत में मुनफ़रिद (तन्हा नमाज़ पढ़ने वाले) की हैसियत रखता है। अलबत्ता ज़ोर से पढ़ने की सूरत में जेह्र के अदना दर्जा पर अमल करे। (मसाइले सज्दए सह्व सफ़्हा–90, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–498)

सज्दए तिलावत की ताख़ीर से सज्दए सह्व का हुक्म

मस्अला: नमाज़ में अगर कोई शख़्स आयते सज्दा पढ़े तो फ़ौरन सज्दए तिलावत करना वाजिब है। अगर छोटी तीन आयतों या एक लम्बी आयत के बाद सज्दए तिलावत किया तो सज्दए तिलावत कर के अख़ीर में सज्दए सह्व करना वाजिब है। और अगर तीन आयतों से कम पढ़ कर ही सज्दए तिलावत कर लिया है तो फिर सज्दए सह्व वाजिब नहीं है।

(मसाइले सज्दए सह्व सफ़्हा–54, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–721, फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–169)

मस्अला: अगर सज्दए तिलावत उस रकअत में करना भूल गया जिसमें सज्दे की आयत पढ़ी थी तो दूसरी तीसरी रकअत में जब याद आए कर ले और फिर सज्दए सह्व करे। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–424,

बहवाला अलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–132)

मस्अला: अगर आयते सज्दा की तिलावत के फ़ौरन बाद या दो तीन आयत पढ़ कर रुकूअ़ किया और उसमें नीयत सज्दए तिलावत की कर ली तो सज्दए तिलावत अदा हो जाएगा और मुक़्तदियों को भी नीयत करने की ज़रूरत है बग़ैर नीयत के उनके ज़िम्मा से सज्दए तिलावत अदा न होगा और तीन आयात से ज़्यादा में फ़ौरियत मुनक़्ता हो जाती है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–423, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–717)

मस्अला: इमाम साहब सज्दा की आयत भूल गए और मुक़्तदी ने पढ़ कर लुक़्मा दिया है और इमाम ने वह आयत पढ़ कर सज्दए तिलावत किया तो ये सज्दा काफ़ी है, इस सूरत में दो सज्दे वाजिब नहीं हैं।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–49)

शक की वजह से सज्दए सहव करना?

मस्अला: अगर किसी पर सज्दए सहव वाजिब नहीं हुआ, महज़ शक और शब्हा की वजह से सज्दए सह्व न करना चाहिए और अगर इत्तिफ़ाक़ से ग़लती से सज्दए सह्व कर लिया तो नमाज़ हो जाएगी, लौटाने की ज़रूरत नहीं है और आइंदा महज़ शुब्हा और शक में सज्दए सह्व न करना चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–56, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–560, इमदादुलअहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–544)

मस्अला: अगर सज्दए सह्व वाजिब हो और न किया तो नमाज़ लौटाना वाजिब है।

(फतावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–414, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–424)

मस्अला: और जब ये इल्म न हो कि इस भूल से सज्दए सह्व लाज़िम है या नहीं तो सज्दए सह्व कर लेना अहवत है यानी सज्दए सह्व कर लेने में एहतियात है।

(फतावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–378)

मस्अला: और अगर किसी शख़्स से सह्व हो गया था, और सज्दए सह्व करना उसको याद नहीं रहा, यहाँ तक कि नमाज़ ख़त्म करने की ग़रज़ से सलाम फेर दिया, उसके बाद उसको सज्दए सह्व का ख़्याल आया तो अब भी सज्दए सह्व कर सकता है, तावक़्ते कि क़िब्ले से न फ़िरे या कलाम न करे।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–120)

सज्दए सह्व में तमाम नमाज़ें बराबर हैं

मस्अला: नमाज़ फ़र्ज़ हो या वाजिब व सुन्नत या नफ़्ल, तमाम नमाज़ों में सज्दए सह्व का हुक्म यक्साँ है, अलबत्ता नमाज़े ईदैन और जुमा में जबकि मजमा बहुत ज़्यादा हो और सज्दए सह्व करने से नमाज़ियों में इंतिशार पैदा हो जाए और तशवीश में पड़ जाएँ और नमाज़ें ख़राब कर लें तो ऐसी सूरत में सज्दए सह्व मआफ़ हो जाता हैं, इसी तरह अगर किसी जगह नमाज़े तरावीह में भी मजमा कसीर हो और सज्दए सह्व करने से नमाज़ियों में इंतिशार और

नमाज़ में फ़साद का क़वी अंदेशा हो तो सज्दए सह्व मआफ़ हो जाएगा और नमाज़ को लौटाने की भी ज़रूरत न होगी। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–22, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–695)

सुन्नत व नवाफ़िल में पहले क़अ़दा का हुक्म

सवालः चार रकअ़त वाली सुन्नत के क़अ़दए ऊला या दो रकअ़त वाली सुन्नत व नफ़्ल के अन्दर अत्तहीयात भूल जाए, फिर उस हालत में बैठ कर सज्दए सह्व कर के नमाज़ पूरी करे तो उसकी नमाज़ हो गई या नहीं?

जवाबः "حامدا ومصليا" चार रकअ़त वाली सुन्नत में क़अ़दए ऊला और तशह्हुद (अत्तहीयात) वाजिब है, उसके छूटने से सज्दए सह्व लाज़िम है और नफ़्ल में दो रकअ़त पर क़अ़दा फ़र्ज़ है, उसके तर्क से नमाज़ दुरुस्त न होगी, पस अगर तीसरी रकअ़त के लिए खड़ा हो गया तो सज्दा से पहले पहले जब याद आ जाए फ़ौरन बैठ जाए और सज्दए सह्व कर के नमाज़ पूरी करे। अगर तीसरी रकअ़त का सज्दा कर चुका है तो चौथी रकअ़त भी उसके साथ मिलाए और सज्दए सह्व कर के नमाज़ पूरी कर दे, लेकिन इस सूरत में दो रकअ़त मोतबर होगी और पहली दो रकअ़त क़ाएदा छूटने की वजह से फ़ासिद होगी और उसी तहरीमा पर शुफ़अ़ए सानिया की बिना सहीह होगी, मगर सज्दए सह्व ज़रूरी है। तशह्हुद बहरहाल वाजिब है, उसके तर्क से सज्दए सह्व लाज़िम होगा। क़ुऊद (बैठना) वाजिब है अगर सह्वन छोड़ दिया और तीसरी रकअ़त के

लिए खड़ा हो गया, उसके बाद याद आया तो बैठना नहीं चाहिए, अगर बैठेगा तो उसमें फ़ुक़हा के दो क़ौल हैं। एक ये कि नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी, क्योंकि फ़र्ज़ को तर्क कर के वाजिब की तरफ़ औद किया। दूसरा क़ौल ये है कि फ़ासिद न होगी क्योंकि यहाँ फ़र्ज़ को तर्क नहीं किया बल्कि मुअख़्ख़र किया है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–189, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–779)

मस्अला: दुआए क़ुनूत वाजिब है, अगर भूल जाए तो सज्दए सह्व कर लेने से नमाज़ सहीह हो जाएगी।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–368)

क़िराअत में दरमियान से आयत का छूटना?

मस्अला: जेह्री नमाज़ के अन्दर क़िराअत के दौरान तीन आयत पढ़ने के बाद अगर पूरी आयत छोड़ दी गई या कुछ अलफ़ाज़े क़ुरआनिया छोड़ दिए गए और उसके छोड़ने से माना के अन्दर कोई तब्दीली पैदा न हुई तो ऐसी सूरत में न नमाज़ का इआदा वाजिब है न सज्दए सह्व लाज़िम है, नमाज़ दुरुस्त है। (आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–372, अलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–65)

अगर रकअ़त की तादाद में शक हो गया तो?

मस्अला: अगर कोई शख़्स भूल गया और उसको याद नहीं रहा कि उसने तीन रकअ़त पढ़ी हैं या चार?

अगर उसका भूलना पहली मरतबा हुआ है तो उसके लिए नए सिरे से यानी दोबारा नमाज़ पढ़नी अफ़ज़ल है, और अगर बार बार शक हुआ करता है (भूलता है) तो फिर गुमाने ग़ालिब पर अमल करना चाहिए, यानी जितनी रकअतें उसको ग़ालिबे गुमान से याद पड़ें, उसी क़द्र रकअतें समझे कि पढ़ चुका है। और अगर ग़ालिबे गुमान किसी तरफ़ न हो तो कमी की जानिब को इख़्तियार करे मसलन किसी को ज़ुहर की नमाज़ में शक हो कि तीन पढ़ चुका है या चार और ग़ालिबे गुमान किसी तरफ़ न हो तो उसको चाहिए कि तीन रकअतें शुमार करे और एक रकअत और पढ़ कर नमाज़ पूरी करे और इन सब सूरतों में सज्दए सहव करना चाहिए।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–120, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–108, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–113, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–394, किताबुलफ़िक्हा जिल्द–1 सफ़्हा–721)

मस्अला: अगर शक नमाज़ी को इस तरह मशगूल कर दे कि एक रुक्न की मिक़्दार (तीन मरतबा सुब्हानल्लाह कहने तक) शक में गुज़र जाए और शक की हालत में क़िराअत व तस्बीह में मशगूल नहीं था, तो शक की इन तमाम सूरतों में उस पर सज्दए सहव वाजिब होगा, ख़्वाह उसने ज़न्ने ग़ालिब पर अमल किया हो, और उसकी वजह से सोचने में देर हुई हो, ये सज्दए सहव रुक्न के मुअख़्ख़र होने की वजह से वाजिब हुआ है।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–696)

मस्अला: अगर किसी ने भूल कर फ़ज्र की नमाज़

दो रकअ़त के बजाए चार रकअ़त पढ़ ली, या अस्र की नमाज़ चार रकअ़त के बजाए छः रकअ़त पढ़ ली, पस अगर क़अ़दए अख़ीरा कर के ज़ाइद रकअ़तें पढ़ी हैं तो उसका फ़र्ज़ अदा हो गया और दो रकअ़त ज़ाइद नफ़्ल हो जाएगी, अलबत्ता अख़ीर में सज्दए सह्व करना वाजिब होगा, और पढ़ने वाले पर कोई गुनाह नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–402, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–700)

(फ़ज्र और अस्र के बाद नफ़्ल नमाज़ पढ़ना मकरूह है और इस सूरत में ज़ाइद रकअ़त नफ़्ल पढ़ना हो रहा है तो इस पर मुफ़्ती साहब (रह.) फ़रमाते हैं कि पढ़ने वाले पर कोई गुनाह नहीं है, क्योंकि मकरूह जब है जब कि क़स्दन पढ़े और अगर भूल कर या किसी मजबूरी से पढ़ ली तो मकरूह नहीं है) (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

मस्अला: इमाम जब कि चौथी रकअ़त में न बैठा और पाँचवीं रकअ़त में खड़ा हो कर रुकूअ़ व सज्दा कर के बैठा कि क़अ़दए अख़ीरा के फ़ौत होने की वजह से इमाम की नमाज़ नहीं हुई और जब इमाम की नमाज़ नहीं हुई तो किसी भी मुक़्तदी की नहीं हुई।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–405, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–142, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–560, बाबुलइमामत)

(क़अ़दए अख़ीरा में बैठना ज़रूरी है अगर बग़ैर बैठे उठेगा तो नमाज़ न होगी) (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

मस्अला: इमाम अगर चौथी रकअ़त में बक़द्र तशह्हुद बैठ कर सह्वन खड़ा हो गया और पाँचवीं रकअ़त का

सज्दा भी क़र लिया तो छटी रकअत मिला ले और सज्दए सह्व करे, फ़र्ज़ उसके पूरे हो गए। अगर कोई शख़्स पाँचवीं या छटी रकअत में इस इमाम का मुक़्तदी हुआ तो मुक़्तदी की नमाज़ न होगी, क्योंकि इमाम की वह दो रकअत नफ़्ल हैं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–418, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–701)

मस्अला: चौथी रकअत में अत्तहीयात पढ़ कर पाँचवीं रकअत के लिए खड़ा हो गया तो अगर पाँचवीं रकअत का सज्दा करने से पहले पहले याद आ जाए तो लौट आए और सज्दए सह्व करे, और अगर पाँचवीं रकअत का सज्दा कर लिया तो उसको चाहिए कि वह छटी रकअत भी मिला ले और अख़ीर में सज्दए सह्व कर ले, उसके चार फ़र्ज़ सहीह हो जाएँगे और अख़ीर की दो रकअतें नफ़्ल हो जाएँगी।

(अलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–67, फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–168)

क़अ्दए ऊला में भूल कर सलाम फेर दिया?

मस्अला: अगर किसी ने क़अ्दए ऊला में भूल कर एक तरफ़ या दोनों तरफ़ सलाम फेर दिया, उसके फ़ौरन बाद याद आया, पस अगर कोई बात चीत नहीं की तो तीसरी रकअत के लिए खड़ा हो जाए, क्योंकि सह्वन सलाम फेर देने से नमाज़ फ़ासिद नहीं होती, बाक़ी रकआत पढ़ कर अख़ीर में सज्दए सह्व कर ले।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–412, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–575, फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–169)

मस्अला: पहला क़अ्दा वाजिब है और अगर नमाज़ का वाजिब भूल जाए तो नमाज़ फ़ासिद नहीं होती बल्कि सज्दए सह्व लाज़िम आता है, इसलिए अगर कोई शख़्स भूल से खड़ा हो गया तो अब न बैठे, बल्कि आख़िर में सज्दए सह्व कर ले। नमाज़ सहीह हो जाएगी।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–371)

मस्अला: आख़िरी क़अ्दा फ़र्ज़ है, अगर कोई शख़्स भूल कर खड़ा हो जाए तो जब तक पाँचवीं रकअ़त का सज्दा नहीं किया तो उसको लौट आना चाहिए, फ़र्ज़ में ताख़ीर की वजह से उस पर सज्दए सह्व वाजिब है, लेकिन अगर पाँचवीं रकअ़त का सज्दा कर लिया तो फ़र्ज़ नमाज़ बातिल हो जाएगी एक और रकअ़त मिला कर नमाज़ पूरी कर ले और फ़र्ज़ नमाज़ फिर नए सिरे से पढ़े। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–372)

मस्अला: पहली या तीसरी रकअ़त में भूल कर बैठ गया, फिर दूसरी या चौथी रकअ़त के लिए खड़ा हो गया, पस अगर एक रुक्न की मिक़्दार बैठा रहा तो अख़ीर में सज्दए सह्व वाजिब होगा।

(आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–65)

मस्अला: अगर पहला क़अ्दा किए बग़ैर तीसरी रकअ़त के लिए खड़ा हो जाए तो अगर बिल्कुल सीधा खड़ा हो जाए तो वापस न आए और अख़ीर में सज्दए सह्व कर ले, और अगर बिल्कुल सीधा नहीं खड़ा हुआ था तो वापस बैठ जाए, ऐसी सूरत में सज्दए सह्व वाजिब नहीं होगा।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–119, कबीरी सफ़्हा–459, शरह नक़ाया सफ़्हा–112, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–106, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–388, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–685)

मस्अला: इमाम दो रकअ़त के बाद बैठ गया और मुक़्तदी भूले से खड़ा हो गया, इमाम के साथ क़अ़दा में नहीं बैठा तो मुक़्तदी पर वाजिब है कि वह भी बैठ जाए और बैठ कर अत्तहीयात पढ़े।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–686)

मस्अला: अगर किसी ने ज़ुहर के फ़र्ज़ में दो ही रकअ़त के बाद ये समझ कर कि मैं चार रकअ़तें पढ़ चुका हूँ, सलाम फेर दिया और सलाम फेरने के बाद ख़्याल आया तो उसको चाहिए कि दो रकअ़तें और पढ़ कर नमाज़ को पूरी कर दे और सज्दए सह्व कर ले।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–120)

(बशर्तेकि बोला न हो यानी कलाम न किया हो और क़िब्ला से न फिरा हो) (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

अगर क़याम की हालत में अत्तहीयात पढ़ ली?

मस्अला: अगर कोई शख़्स हालते क़याम में अत्तहीयात पढ़ जाएं तो अगर पहली रकअ़त हो, और सूरए फ़ातिहा से पहले पढ़े तो कुछ हरज नहीं है, इसलिए कि तहरीमा और सूरए फ़ातिहा के दरमियान में कोई ऐसी चीज़ पढ़ना चाहिए जिसमें अल्लाह तआ़ला की तारीफ़ हो और अत्तहीयात भी उसी क़िस्म से है। और अगर क़िराअत के

बाद पढ़े या दूसरी रकअ़त में पढ़े ख़्वाह क़िराअत से पहले या क़िराअत के बाद तो उसको सज्दए सह्व करना चाहिए इसलिए कि क़िराअत के बाद फ़ौरन रुकूअ़ करना वाजिब है, और दूसरी रकअ़त की इब्तिदा भी क़िराअत से करना वाजिब है।

मस्अला: अगर कोई शख़्स क़ौमा भूल जाए या सज्दों के दरमियान में जल्सा न करे (यानी न बैठे) तो उसको भी सज्दए सह्व करना चाहिए।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–118)

अगर क़अ़दए अख़ीरा भूल जाए?

मस्अला: अगर कोई शख़्स क़अ़दए अख़ीरा भूल कर खड़ा हो जाए, सज्दा करने से पहले याद आ जाए तो उसको बैठ जाना चाहिए और सज्दए सह्व कर ले और अगर सज्दा कर चुका हो तो फिर नहीं बैठ सकता बल्कि उसकी ये नमाज़ अगर फ़र्ज़ की नीयत से पढ़ता था तो नफ़्ल हो जाएगी और उसको इख़्तियार है कि उस एक रकअ़त के साथ दूसरी रकअ़त और मिला ले ताकि ये रकअ़त भी ज़ाये न हो और दो रकअ़तें ये भी नफ़्ल हो जाएँ। अगर अस्र और फ़ज्र के फ़र्ज़ में ये वाक़िया पेश आए तब भी दूसरी रकअ़त मिला सकता है, इसलिए कि अस्र और फ़ज्र के फ़र्ज़ों के बाद नफ़्ल मकरूह है और ये रकअ़तें फ़र्ज़ नहीं रहीं बल्कि नफ़्ल हो गई हैं। बस गोया फ़र्ज़ से पहले नफ़्ल पढ़ी गई और इसमें कुछ कराहत नहीं, मग़रिब के फ़र्ज़ में सिर्फ़ यही रकअ़त काफ़ी है,

दूसरी रकअत न मिलाए वरना पाँच रकअतें हो जाएँगी और नफ़्ल में ताक़ रकअतें मनकूल नहीं और इस सूरत में सज्दए सह्व की ज़रूरत नहीं होगी।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–119, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–687)

मस्अला: अगर कोई शख़्स क़अदए अख़ीरा में इस क़दर बैठने के बाद जिसमें अत्तहीयात पढ़ी जा सके खड़ा हो जाए (बग़ैर अत्तहीयात के) तो अगर सज्दा न कर चुका हो तो बैठ जाए और सज्दए सह्व कर ले। इसलिए कि सलाम के अदा करने में जो वाजिब था ताख़ीर हो गई, और अगर सज्दए सह्व कर चुका हो तो उसको चाहिए कि एक रकअत और मिला ले ताकि ये रकअत ज़ाए न हो, इस सूरत में उसकी वह रकअतें अगर फ़र्ज़ की नीयत की थी तो फ़र्ज़ ही रहेंगी, नफ़्ल न होंगी। क्योंकि क़अदए अख़ीरा बिल्कुल नहीं भूला बल्कि जितनी देर में अत्तहीयात पढ़ते हैं बैठा रहा।

अस्र और फ़ज्र के फ़र्ज़ में भी दूसरी रकअत मिला सकता है इसलिए कि बाद अस्र और फ़ज्र के फ़र्ज़ों के क़स्दन नफ़्ल पढ़ना मकरूह है, अगर सहवन पढ़ ली जाए तो कुछ कराहत नहीं है। इस सूरत में फ़र्ज़ के बाद जो दो रकअतें पढ़ी गई हैं ये उन सुन्नातें के क़ाइम मक़ाम नहीं हो सकतीं जो फ़र्ज़ के बाद ज़ुहर व मग़रिब व इशा के वक़्त मसनून हैं क्योंकि उन सुन्नतों को नई तहरीमा से अदा करना नबी करीम (स.अ.व.) से मनकूल है।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–119, हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–107, बहर जिल्द–2 सफ़्हा–103, आलमगीरी जिल्द–1

सफ़्हा–66, फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–46, फ़तावा महमूदिया जिल्द–10 सफ़्हा–271, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–689, फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–195)

तीन हालतों का एक हुक्म

सवालः अगर आख़िरी रकअ़त में तशह्हुद के बाद खड़ा हो गया और फिर बैठ गया तो फिर तशह्हुद पढ़े या सलाम फेर कर तशह्हुद सज्दए सह्व का पढ़े। एक सूरत ये कि पूरा खड़े होने के बाद फ़ौरन बैठ गया। दूसरी शक्ल ये कि कुछ पढ़ कर, तीसरी ख़त्मे सूरत के बाद, हर तीन हालत का एक हूक्म है या मुख़्तलिफ़?

जवाबः हर सेह हालात में बैठ कर फिर तशह्हुद पढ़े और सज्दए सह्व कर के फिर तशह्हुद वग़ैरा पढ़ कर सलमा फेरे। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–383, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–700)

मस्अलाः नमाज़ के अन्दर आख़िरी क़अ़दा कर के नमाज़ी खड़ा हो गया और फिर याद आने पर बैठा तो अब सज्दए सह्व के वास्ते दोबारा अत्तहीयात पढ़ने की ज़रूरत नहीं है क्योंकि क़अ़दा व तशह्हुद पहले हो चुका बैठते ही सलाम फेर कर सज्दए सह्व कर ले फिर अत्तहीयात वग़ैरा पढ़ कर सलाम ख़त्म का फेरे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–415, बहवाला शामी सफ़्हा–700)

मस्अलाः क़अ़दए अख़ीरा में तशह्हुद और दुरूद शरीफ़ के बाद कुछ देर तक सुकूत किया (ख़ामोश रहा) और

सलाम नहीं फेरा तो सज्दए सह्व वाजिब नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–400, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–707)

मस्अला: क़अ़दए अख़ीरा में दो मरतबा अत्तहीयात पढ़ने से सज्दए सह्व वाजिब नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–377, अलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–119)

क़अ़दा (बैठने) में सह्व के मसाइल

मस्अला: फ़र्ज़ या वाजिब या सुनने मुअक्कदा चार रकअ़त वाली नमाज़ में दूसरी रकअ़त के तशह्हुद के बाद भूल कर अगर अत्तहीयात के बाद चंद अलफ़ाज़ दुरूद शरीफ़ के पढ़ ले तो उस पर सज्दए सह्व वाजिब है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–1 सफ़्हा–412, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–694, कबीरी सफ़्हा–460, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–478)

मस्अला: नमाज़े वाजिब मसलन वित्र में वही हुक्म है जो नमाज़े फ़र्ज़ में है, वित्र की तीन रकआ़त मिस्ले मग़रिब के है, इसमें क़अ़दए ऊला वाजिब है। पस उसमे अगर क़अ़दए ऊला में तशह्हुद के बाद दुरूद शरीफ़ पढ़ लिया तो सज्दए सह्व लाज़िम होगा और सुनन में भी, चार रकअ़त वाली में भी सज्दए सह्व हैं, और क़अ़दए ऊला के तर्क में वही अहकाम हैं जो फ़र्ज़ के क़अ़दए ऊला के तर्क में, कि अगर बैठने के ज़्यादा क़रीब हो तो बैठ जाए और अगर ज़्यादा क़रीब खड़े होने के हो तो न बैठे और अख़ीर में सज्दए सह्व कर ले।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–394, शामी जिल्द–1 सफ़हा–623, दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़हा–686)

मस्अला: अगर कोई शख़्स पूरा दुरुद शरीफ़ या उसका निस्फ़ "اَللّٰهُمَّ بَارِكْ" से "حَمِيْدٌ مَّجِيْدٌ" तक मुकर्रर (दोबारा) क़अदए अख़ीरा में पढ़े, उस पर सज्दए सह्व वाजिब नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–392, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़हा–445)

मस्अला: अगर किसी ने निस्फ़ दुरुद शरीफ़ पढ़ कर भूले से दुआए मासूरा शुरू कर दी फिर ख़्याल आए तो उसके लिए बेहतर ये है कि दुआ छोड़ कर पहले दुरुद शरीफ़ पूरा पढ़े और उस पर सज्दए सह्व वाजिब नहीं है।

(शामी जिल्द–1 सफ़हा–445)

मस्अला: अगर मस्बूक़ (जिसकी कुछ रक्अत रह गई थीं) इमाम के पीछे क़अदए अख़ीरा में अत्तहीयात पढ़ कर दुरुद शरीफ़ और दुआए मासूरा वग़ैरा भी पढ़ ली तो उस पर बाद में सज्दए सह्व वाजिब नहीं है।

(मसाइले सज्दए सह्व सफ़हा–91)

मस्अला: मुक़्तदी ने इमाम के पीछे अगर सह्वन तशह्हुद नहीं पढ़ा तो इआदा लाज़िम नहीं और अगर अमदन छोड़ा है तो नमाज़ तो इस सूरत में भी हो गई, मगर लौटाना नमाज़ का ज़रूरी है ताकि तर्के वाजिब अमदन से जो ख़लल आ गया है वह दूर हो जाए।

(इमदादुल अहकाम जिल्द–1 सफ़हा–483)

मस्अला: अगर किसी ने क़अदए ऊला या क़ाएदए अख़ीरा में अत्तहीयात पढ़ी और उसका कुछ हिस्सा छूट गया तो उस पर सज्दए सह्व वाजिब है ख़्वाह फ़र्ज़

नमाज़ हो या नफ़्ल। (आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–66)

मस्अला: क़अ्दए ऊला में अगर किसी ने दो मरतबा अत्तहीयात पढ़ ली तो सज्दए सह्व करना वाजिब है।

मस्अला: अगर किसी ने क़अ्दए अख़ीरा में दो मरतबा अत्तहीयात पढ़ ली तो सज्दए सह्व करना वाजिब नहीं है।

मस्अला: अगर क़अ्दए ऊला में अत्तहीयात पढ़ कर कुछ देर तक ख़ामोश बैठा रहा, अगर उसकी ये ख़ामोशी एक रुक्न (तीन मरतबा सुब्हानल्लाह कहने) के बाराबर है तो उस पर सज्दए सह्व वाजिब है और अगर एक रुक्न से कम ख़ामोशी रही तो सज्दए सह्व वाजिब नहीं है।

(फ़तावा आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–66)

मस्अला: अगर कोई शख़्स अत्तहियात पढ़ना भूल गया और दुरूद शरीफ़ वग़ैरा पढ़ कर याद आया तो तशह्हुद पढ़े और सज्दए सह्व करे, फिर तशह्हुद वग़ैरा पढ़ कर सलाम फेर दे। (आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–66)

मस्अला: अत्तहीयात कुल वाजिब है, अक्सर या बाज़ हिस्सा छूट जाने से भी सज्दए सह्व लाज़िम होता है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–20)

मस्अला: अगर किसी के ज़िम्मा सज्दए सह्व वाजिब था उसको अत्तहीयात पढ़ कर सज्दए सह्व करना याद न रहा, यहाँ तक कि दुरूद शरीफ़ पढ़ने के बाद याद आया तो याद आते ही उसी वक़्त सज्दए सह्व कर ले, फिर अत्तहीयात वग़ैरा पढ़ कर सलाम फेरे।

(आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–66)

मस्अला: अगर किसी ने क़अ्दए अख़ीरा में अत्तहीयात,

दुरूद शरीफ़ वग़ैरा पढ़ने के बाद सलाम नहीं फेरा बल्कि किसी सोच में देर तक ख़ामोश रहा तो उस पर सज्दए सह्व वाजिब नहीं है।

(शामी सफ़्हा–707, फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–19, आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–82)

मस्अला: अगर इमाम के पीछे नमाज़ में किसी ने अत्तहीयात नहीं पढ़ी तो उसका लौटाना ज़रूरी नहीं है और न मुक़्तदी पर सज्दए सह्व वाजिब है।

(शामी जिल्द–1 सफ़्हा–695)

मस्अला: अगर इमाम ने सलाम फेर दिया और मुक़्तदी की अत्तहीयात अभी तक ख़त्म नहीं हुई थी तो मुक़्तदी को चाहिए कि अपनी अत्तहीयात पूरी कर के सलाम फेरे और अगर दुरूद व दुआए मासूरा रह गई हो तो उसके रह जाने से कोई हरज नहीं है, इमाम के साथ ही सलाम फेरे और अगर इमाम तीसरी रकअ़त के लिए खड़ा हो जाए तो जिसकी अत्तहीयात रह गई हो उसको अत्तहीयात पूरी कर के खड़ा होना बेहतर है और अगर पूरी किए बग़ैर ही इमाम के साथ खड़ा हो गया जब भी नमाज़ हो जाएगी।

(मसाइले सज्दए सह्व सफ़्हा–69, इमदादुल फ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–511)

मस्अला: अगर नमाज़ में किसी पर सज्दए सह्व वाजिब हुआ उसने सज्दए सह्व करने के बाद अत्तहीयात पढ़ने के बजाए सूरए फ़ातिहा पढ़ डाली तो उस पर दोबारा सज्दए सह्व वाजिब नहीं है। सूरए फ़ातिहा के बाद फिर तशह्हुद वग़ैरा पढ़ कर नमाज़ पूरी करे उसकी नमाज़

सहीह और दुरुस्त है। (आलमगीरी जिल्द–1 सफ़हा–66)

मस्अला: अगर किसी ने रुकूअ या सज्दा में अत्तहीयात पढ़ ली तो उस पर सज्दए सह्व वाजिब नहीं है।

(तहतावी जिल्द–1 सफ़हा–250)

मस्अला: अगर आख़िरी अत्तहीयात के बाद सह्व (ग़लती) हो जाए तो सज्दए सह्व वाजिब नहीं है, नमाज़ पूरी होगी। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़हा–368)

मस्अला: अगर अत्तहीयात की जगह कोई सूरत पढ़ ली या अत्तहीयात ग़लत पढ़ ली तो इस सूरत में सज्दए सह्व वाजिब है। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़हा–370)

अज़्कार और तस्बीहात में सह्व के मसाइल

मस्अला: अगर किसी ने नमाज़ में "اَعُوذُبِاللّٰہِ" या "بِسْمِ اللّٰہِ" या सना "سُبْحَانَكَ اللّٰهُمَّ" छोड़ी तो सज्दए सह्व वाजिब नहीं है।

(फ़तावा आलमगीरी जिल्द–1 सफ़हा–65, आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़हा–365)

मस्अला: अगर कोई शख़्स रुकूअ या सज्दा की तस्बीह पढ़ने के बजाए बिस्मिल्ला हिर्रहमानिर्रहीम पढ़ ले तो उस पर सज्दए सह्व वाजिब नहीं है।

(हिदाया जिल्द–1 सफ़हा–140)

मस्अला: अगर किसी ने बुलंद आवाज़ से "اَعُوذُبِاللّٰہِ" या "بِسْمِ اللّٰہِ" या "آمِين" कह दी तो उस पर सज्दए सह्व वाजिब नहीं है।

मस्अला: अगर किसी शख़्स ने नमाज़ की हालत में

दूसरे शख़्स से फ़ातिहा सुनी, और उसके वलज़्ज़ाल्लीन कहने पर नमाज़ी ने आमीन कह दी तो आमीन कहने वाले की नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। इसी तरह किसी शख़्स के दुआ मांगने पर नमाज़ की हालत में आमीन कह दी तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

(मसाइले सज्दए सह्व सफ़्हा–76)

मस्अला: अगर कोई शख़्स "سَمِعَ اللّٰهُ لِمَنْ حَمِدَهٗ" को इस तरह पढ़ता हो कि "لِــمَــن" सुनाई देता हो तो इस तरह पढ़ना उस शख़्स का ब एतेबार क़िराअत के ग़लत है, सहीह नहीं है, क़िराअत के क़ाएदा में ये है कि ज़म्मा और कसरा (पेश और ज़ेर) में सिर्फ़ बू "वाव" और "या" की आ जाए न ये कि सरीह "वाव" और "या" यानी "هوليمن" पढ़ा जाए ये बिल्कुल ग़लत है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–88)

मस्अला: रुकूअ में इतनी देर ठहरना कि हर अज़्व अपने मौक़ा पर बरक़रार हो जाए और एक मरतबा "سُبْحَانَ رَبِّيَ الْعَظِيْم" कहा जा सके वाजिब है। अगर भूल कर उसको छोड़ दिया तो सज्दए सह्व वाजिब होगा, और अगर क़स्दन ऐसा किया तो दोबारा नमाज़ पढ़ना ज़रूरी है। (तहतावी जिल्द–1 सफ़्हा–166)

(यानी रुकूअ में तस्बीह पढ़ना तो सुन्नत है, लेकिन एक तस्बीह की मिक़्दार रुकूअ में ठहरना कि हर अज़्व अपने मौक़ा पर बरक़रार हो जाए वाजिब है, अगर भूल कर इतनी देर भी रुकूअ में न ठहर सका तो सज्दए सह्व वाजिब है, और अगर क़स्दन ऐसा किया तो नमाज़ दोबारा पढ़नी होगी) (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

रुकूअ व सज्दा में सह्व के मसाइल

मस्अला: एक रकअत में दो रुकूअ करने से भी सज्दए सह्व वाजिब होता है और सज्दए सह्व न किया तो नमाज़ लौटानी पड़ेगी, लेकिन अगर ये मस्अला नमाज़े ईदैन में पेश आ जाए तो बवज्हे इज़्दिहामे कसीर के तर्के सज्दए सह्व से नमाज़ सहीह है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–379, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–705)

मस्अला: कोई शख़्स सूरए फ़ातिहा और सूरत पढ़ने के बाद रुकूअ में जाने के बजाए भूल कर सज्दा में चला गया, और दूसरी रकअत से पहले याद आया तो उसको चाहिए कि उसी वक़्त उठ कर रुकूअ करे और फिर दोबारा सज्दा करे और अख़ीर में सज्दए सह्व करे और अगर दूसरी रकअत से पहले याद नहीं आया तो दूसरी रकअत का रुकूअ पहली रकअत का रुकूअ तसव्वुर किया जाएगा और ये दूसरी रकअत भी पहली रकअत समझी जाएगी और ये दूसरी रकअत कलअदम हो जाएगी। उसके एवज़ में और रकअत उसको पढ़ना होगी, और इस सूरत में भी सज्दए सह्व करना वाजिब है।

(इल्मुफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–119, आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–67, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–416)

मस्अला: अगर किसी रकअत में भूल कर दो सज्दों के बजाए तीन सज्दे करे तो इससे सज्दए सह्व वाजिब हो जाता है। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–371)

मस्अला: अगर कोई शख़्स किसी रकअत में एक ही

सज्दा करे और दूसरा सज्दा भूल जाए और दूसरी रकअ़त में या दुसरी रकअ़त के बाद क़अ़दए अख़ीरा में अत्तहीयात पढ़ने से पहले याद आ जाए तो उस सज्दे को अदा करे और सज्दए सह्व करे और अगर क़अ़दए अख़ीरा में अत्तहीयात पढ़ने के बाद याद आए तो उस सज्दे को अदा कर के फिर अत्तहीयात पढ़े और सज्दए सह्व करे।

(बह्र जिल्द–2 सफ़्हा–94, फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–222, इल्मुलफ़िक्ह जिल्द–2 सफ़्हा–118, अलमगीरी मिस्री सफ़्हा–118, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–378, कबीरी सफ़्हा–455)

मस्अला: अगर भूले से इमाम तीसरे सज्दे में चला गया तो मुक़्तदी उसका इत्तिबा न करें अलबत्ता इमाम पर सज्दए सह्व वाजिब होगा और सज्दए सह्व में मुक़्तदी इत्तिबा करेंगे। (शामी जिल्द–1 सफ़्हा–439. फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–416)

मस्अला: अगर किसी ने नमाज़ में किसी रुक्न को मुक़द्दम या मुअख़्ख़र कर दिया मसलन पहले सज्दा कर लिया बाद में रुकूअ़ कर लिया, या किसी रुक्न को मुकर्रर कर लिया मसलन दो रुकूअ़ कर लिए तो उस पर सज्दए सह्व वाजिब होगा।

(फ़तावा आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–66)

इमाम के साथ रुकूअ़ या सज्दा रह गया तो?

मस्अला: इमाम के पीछे नमाज़ में अगर किसी का रुकूअ़ या सज्दा छूट जाए तो उसे चाहिए कि जिस

वक़्त याद आए फ़ौरन रुकूअ या सज्दा कर के इमाम के साथ हो जाए, और अगर उस वक़्त नहीं किया तो इमाम के सलाम फेरने के बाद रुकूअ या सज्दा कर के फिर सज्दए सह्व (खुद) करे, अगर इन दोनों सूरतों में से कोई सूरत इख़्तियार नहीं की तो उसकी नमाज़ न होगी और उस नमाज़ को दोबारा पढ़ना ज़रूरी होगा।

(मसाइले सज्दए सह्व बहवाला आलमगीरी जिल्द–1 सफ़हा–66)

मस्अला: इमाम के पीछे कोई वाजिब छूट जाए मसलन अत्तहीयात के, तो उसका इआदा बाद में नहीं है और सज्दए सह्व भी उस पर वाजिब नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–404, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़हा–695)

मस्अला: अगर इमाम पर सज्दए सह्व वाजिब हो, और उसे सज्दए सह्व करना याद नहीं रहा तो मुक़्तदियों पर सज्दए सह्व वाजिब न होगा।

(आलमगीरी जिल्द–1 सफ़हा–66)

मस्अला: अगर जमाअ़त में मुक़्तदी से सह्व (ग़लती) हो तो न मुक़्तदी पर सज्दए सह्व वाजिब है और न इमाम पर।

(हिदाया जिल्द–1 सफ़हा–106, कबीरी सफ़हा–464)

मस्अला: अगर इमाम भूल जाए तो मुक़्तदी पर भी उसकी इक़्तिदा की वजह से सज्दए सह्व वाजिब होगा।

(शरह नक़ाया सफ़हा–112)

मस्अला: मुक़्तदी को अपने इमाम से पहले कोई फ़ेल शुरू करना मकरूहे तहरीमी है। (बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–11

सफ़्हा–66, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–429)

मस्अलाः रुकूअ़ छूट गया या सिर्फ़ एक ही सज्दा किया तो नमाज़ के अन्दर अन्दर फ़ौत शुदा रुकूअ और सज्दा अदा कर ले, और फिर आख़िर में सज्दए सह्व कर ले तो नमाज़ की इसलाह हो जाएगी।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–25, आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–81)

मस्अलाः अगर कोई शख़्स क़िराअत करने के बाद और रुकूअ़ में जाने से पहले एक रुक्न की मिक़्दार यानी जितनी देर में तीन मरतबा सुब्हानअल्लाह पढ़ा जा सके, खड़ा सोचता रहा तो उस पर सज्दए सह्व वाजिब है।

(अलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–65, फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–18)

अगर रुकूअ़ में सज्दा की तस्बीह पढ़ दी?

मस्अलाः अगर किसी ने रुकूअ़ में सज्दा की तस्बीह या सज्दा में रुकूअ़ की तस्बीह पढ़ दी तो उस पर सज्दए सह्व वाजिब नहीं है, अलबत्ता मकरूहे तंज़ीही है, याद आ जाए तो फिर रुकूअ़ या सज्दा की तस्बीह कह ले ताकि सुन्नत के मुताबिक़ हो जाए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–385, दुर्रेमुख़्तार बर हाशिया शामी जिल्द–1 सफ़्हा–461, आपके मसाइल जिल्द–1 सफ़्हा–315)

मस्अलाः रुकूअ़ की तस्बीह सज्दा में कह रहा था, सज्दा ही में याद आने पर सज्दा की तस्बीह कहनी

चाहिए ताकि सुन्नत के मुवाफ़िक़ हो।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–385)

मस्अलाः नमाज़ में ब मजबूरी ज़मीन पर हाथ टेक कर उठने में कोई हरज नहीं है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़हा–315)

मस्अलाः रुकूअ़ में बजाए तस्बीह के कोई "بسم الله الرحمن الرحيم" पढ़ जाए तो सज्दए सह्व लाज़िम नहीं आता क्योंकि रुकूअ़ की तस्बीह वाजिब नहीं है और तशह्हुद (अत्तहीयात) वाजिब है। उसमें ऐसा करने से यानी तशह्हुद छोड़ने से सज्दए सह्व लाज़िम होगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–396, हिदाया जिल्द–1 सफ़हा–140, बाब सुजूदुस्सह्व)

मस्अलाः नमाज़ में तकबीरे तहरीमा फ़र्ज़ है। उसके अलावा बाक़ी नमाज़ की तकबीरात सुन्नत हैं। इसलिए अगर रुकूअ़ को जाते हुए तकबीर भूल गया तो नमाज़ हो गई, सज्दए सह्व भी लाज़िम नहीं है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़हा–315)

अगर सज्दा करने में शक हो गया?

मस्अलाः अगर किसी शख़्स को नमाज़ में ये शक हो कि मैंने एक सज्दा किया या दो, पस ऐसी सूरत में अगर किसी तरफ़ ज़न्ने ग़ालिब नहीं है तो एक सज्दा और करे और अख़ीर में सज्दए सह्व करे।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़हा–103, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़हा–418)

सज्दए सह्व में शक हो गया तो?

मस्अला: अगर किसी पर सज्दए सह्व वाजिब था लेकिन क़अदए अख़ीरा में उसको सज्दए सह्व के बारे में शक हो गया कि मैंने सज्दए सह्व किया या नहीं किया तो ऐसी सूरत में ग़लबए ज़न पर अमल कर ले, और अगर किसी जानिब रुजहान न होता हो तो ऐसी सूरत में सज्दए सह्व करे। (मसाइले सज्दए सह्व सफ़्हा–48, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–529)

तकबीरात का सहीह तरीक़ा

सवाल: तकबीरे तहरीमा कब कहे, हाथ बाँधने से पहले या हाथ बाँध कर (1) अगर इमाम कान तक हाथ उठाने के बाद जब नाफ़ तक पहुंचे उस वक़्त तकबीर तहरीमा कहे तो नमाज़ सहीह होगी या नहीं? (2) अगर इमाम साहब का हाथ नाफ़ तक पहुंचे उस वक़्त तकबीरे तहरीमा का एक जुज़ कहे और हाथ बाँधने के बाद दूसरा जुज़ तो नमाज़ सहीह होगी या नहीं? ग़रज़ ये कि तकबीरे तहरीमा कब शुरू करे और कब ख़त्म करे, नीज़ रुकूअ व सुजूद की तकबीरात का सहीह तरीक़ा क्या है?

जवाब (1): तकबीरे तहरीमा या तकबीरे ऊला और रफ़ए यदैन के बारे में तीन क़ौल हैं: (1) पहले रफ़ए यदैन करे यानी दोनों हाथ कानों तक उठा कर तकबीर (अल्लाहुअकबर) शुरू करे और तकबीर ख़त्म होते ही हाथ

बाँध ले। (2) तकबीर और रफ़ए यदैन दोनों एक साथ शुरू करे और एक साथ ख़त्म करे। (3) पहले तकबीर शुरू कर के हाथ उठा कर एक साथ ख़त्म कर दे।

(बहरुर्राइक़ जिल्द–1 सफ़हा–305, शामी जिल्द–1 सफ़हा–465)

मज़कूरा तीनों सूरतों में से पहली और दूसरी सूरत अफ़ज़ल है, तीसरी सूरत भी जाइज़ है मगर मामूल बिहा नहीं है। (हिदाया जिल्द–1 सफ़हा–84)

और जौहरा में है कि असह ये है कि औवलन नमाज़ी दोनों हाथ उठाए, जब दोनों हाथ कान के मुहाज़ात में पहुंच कर क़रार पकड़ें तब तकबीर शुरू करे।

(जौहरा जिल्द–1 सफ़हा–49)

सूरते मसऊला में नमाज़ हो गई, लेकिन हाथ बाँधने तक तकबीर को मुअख़्ख़र करने की आदत ग़लत और मकरूह है। ये सना (सुब्हानकल्लाहुम्मा) पढ़ने का महल (जगह) है न तकबीर कहने का, तकबीर हाथ बाँधने तक ख़त्म होनी चाहिए। हाथ बाँधने तक मुअख़्ख़र करने में ये भी ख़राबी है कि ऊँचा सुनने वाला और बहरा मुक़्तदी इमाम के रफ़ए यदैन को देख कर तकबीरे तहरीमा कह लेगा तो इमाम से पहले तकबीर कहने की बिना पर उसकी इक़्तिदा और नमाज़ सहीह न होगी, क्योंकि अगर तकबीर का पहला लफ्ज़ "अल्लाह" कहने में मुक़्तदी सबक़त करे या लफ़्ज़ "अल्लाह" इमाम के साथ शुरू करे मगर लफ़्ज़ "अकबर" इमाम के ख़त्म करने से पहले ख़त्म कर दे, तब भी इक़्तिदा सहीह न होगी। लिहाज़ा इमाम को ये आदत छोड़ देनी चाहिए।

(दुर्रेमुख्तार, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–448)

जवाब (2): रुकूअ व सुजूद की तकबीरात का मसनून तरीक़ा ये है कि रुकूअ के लिए झुकने के साथ तकबीर शुरू करे और (रुकूअ में पहुंचते ही) ख़त्म करे, इसी तरह सज्दा में जाते वक़्त भी तकबीर शुरू करे और (सज्दे में पहुंचते ही) ख़त्म करे, रुकूअ व सुजूद में पहुंच कर तकबीर कहना ख़िलाफ़े सुन्नत और मकरूह है और इसमें दो कराहत लाज़िम आती हैं, एक कराहत तर्के महल की क्योंकि ये तकबीरें तकबीराते इंतिक़ाल कहलाती हैं, रुकूअ की तरफ़ मुनतक़िल होने यानी रुकूअ के लिए झुकने और सज्दे में जाने के वक़्त उनको कहना चाहिए था, ये उनका महल था जिसको तर्क कर दिया। दूसरी कराहत अदाए बे महल की यानी जिस वक़्त तकबीर कह रहा है वह "سُبْحَانَ رَبِّيَ الْعَظِيْم يا سُبْحَانَ رَبِّيَ الْاَعْلٰى" कहने का वक़्त था, तकबीर कहने का वक़्त नहीं था, उस वक़्त तकबीर बे महल है।

(मुनयतुलमुसल्ली सफ़्हा–88, कबीरी सफ़्हा–345)

मुख़्तसर ये कि इमाम का ये अमल ख़िलाफ़े सुन्नत है। उन्हें सुन्नत के मुताबिक़ अमल करना लाज़िम है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–233 व जिल्द–3 सफ़्हा–2)

तकबीरे तहरीमा के बाद हाथ बाँधे या छोड़ दे?

मस्अला: तकबीरे तहरीमा के बाद और वित्र में दुआए कुनूत से क़ब्ल, इसी तरह नमाज़े ईदैन की पहली रकअत

में तीसरी तकबीर के वक़्त हाथ उठा कर बाँध लिए जाएँ। हाथ छोड़ कर फिर बाँधना किसी से साबित नहीं है, इख़्तिलाफ़ इस बात में है कि सना और किराअत पढ़ने की हालत में हाथ बाँधे जाएँ या छोड़े रखे।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–37, नूरुलईज़ाह सफ़्हा–76 व इमदादुलअहकाम जिल्द–1 सफ़्हा–465)

मस्अला: अगर तकबीरे तहरीमा खड़े खड़े कही और फिर तवक़्क़ुफ़ न किया, क़याम और तकबीर दोनों का फ़र्ज (इतनी मिक़्दार खड़े रहने से) अदा हो चुका, बाद इसके क़याम में तवक़्क़ुफ़ करना उसको लाज़िम नहीं, इसलिए कि जिस क़दर क़याम पाया गया वह ही काफ़ी है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–314, फ़तावा क़ाज़ी ख़ाँ जिल्द–1 सफ़्हा–47)

(यानी मुक़्तदी ने क़याम की हालत में तकबीरे तहरीमा कही, उसके बाद बिला तवक़्क़ुफ़ रुकूअ़ में चला गया और इमाम को रुकूअ़ में पा लिया तो बहालते क़याम तकबीर कहने की मिक़्दार काफ़ी है)

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

मस्अला: अगर किसी ने तकबीरे तहरीमा बहालते क़याम नहीं कही बल्कि झुकते हुए और रुकूअ़ में जाते हुए कही है इसलिए वह नमाज़ में दाख़िल न होगा, जब दाख़िल होना नमाज़ में सहीह न हुआ तो रकअ़त कैसे मोतबर होगी बल्कि नमाज़ ही सहीह न होगी। इसलिए कि नमाज़ में दाख़िल होने की शर्त तकबीर का हालते क़याम में कहना है, लिहाज़ा अगर क़याम में "अल्लाह" कहा और रुकूअ़ में "अकबर" कहा तो नमाज़ में दाख़िल

न होगा।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–315, फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–121)

मस्अलाः बाज़ मुक़्तदी ऐसी ग़लती कर लेते हैं जिससे उनकी नमाज़ फ़ासिद हो जाती है मसलन इमाम के तकबीरे तहरीमा यानी "अल्लाहुअकबर" कहने से पहले मुक़्तदी अल्लाहुअकबर कह देते हैं, या इमाम के लफ़्ज़ "अल्लाह" ख़त्म होने से पहले ही लफ़्ज़ "अल्लाह" कह देते हैं।

इन दोनों सूरतों में नमाज़ का शुरू करना सहीह नहीं होता, उन मुक़्तदियों को चाहिए कि वह फिर दोबारा "अल्लाहुअकबर" कह कर इमाम के पीछे नमाज़ की नीयत बाँधें। (सग़ीरी सफ़्हा–143)

मस्अलाः जब कोई इमाम के साथ रुकूअ़ में आकर शामिल हो तो तकबीरे तहरीमा कह कर हाथ बाँधना मसनून है। अगर हाथ न बाँधे और वैसे ही रुकूअ़ या सज्दे में चला गया तो भी नमाज़ सहीह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–399, बहरुर्राइक जिल्द–1 सफ़्हा–320)

मस्अलाः जब इमाम रुकूअ़ में हो तो आने वाले को तकबीरे तहरीमा कह कर फिर दूसरी तकबीर कह कर रुकूअ़ में जाना चाहिए, ये तरीक़ा मसनून है लेकिन अगर सिर्फ़ तकबीरे तहरीमा कह कर बग़ैर दूसरी तकबीर कहे रुकूअ़ में चला गया और इमाम के साथ शरीक हो गया तो वह रकअ़त उसको मिल गई और नमाज़ भी सहीह हो गई। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–398, शामी

जिल्द–1 सफ़्हा–443)

मस्अला: मुक़्तदियों को हर रुक्न का इमाम के साथ ही बिला ताख़ीर अदा करना सुन्नत है। तहरीमा भी इमाम की तहरीमा के साथ करें, रुकूअ़ भी इमाम के रुकूअ़ के साथ, क़ौमा भी उसके क़ौमा के साथ, सज्दा भी उसके सज्दे के साथ, ग़र्ज़ेकि हर फ़ेल उसके हर फ़ेल के साथ। हाँ अगर क़अ़दए ऊला में इमाम क़ब्ल इसके खड़ा हो जाए कि मुक़्तदी अत्तहीयात तमाम करें तो मुक़्तदियों को चाहिए कि अत्तहीयात तमाम कर के खड़े हों, इसी तरह क़अ़दए अख़ीरा में अगर इमाम क़ब्ल इसके कि मुक़्तदी अत्तहीयात तमाम करें, सलाम फेर दे तो मुक़्तदियों को चाहिए कि अत्तहीयात तमाम कर के सलाम फेरें, हाँ रुकूअ़ सज्दे वग़ैरा में अगर मुक़्तदियों ने तस्बीह न पढ़ी हो तब भी इमाम के साथ ही खड़ा होना चाहिए।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–98)

बाद में आने वाला रुकूअ़ में किस तरह जाए?

मस्अला: हुक्म ये है कि बाद में आने वाला शख़्स खड़ा होने की हालत में तकबीरे तहरीमा (अल्लाहुअकबर) कह कर रुकूअ़ में चला जाए, तकबीर के बाद क़याम की हालत में ठहरना कोई ज़रूरी नहीं। फिर अगर इमाम को ऐन रुकूअ़ की हालत में जा मिला, तो रकअ़त मिल गई ख़्वाह उस रुकूअ़ में जाने के बाद इमाम फ़ौरन ही उठ जाए और उसको रुकूअ़ की तस्बीह पढ़ने का मौक़ा भी न मिले। (जब भी रकअ़त का मिलना शुमार होगा) और

अगर ऐसा हुआ कि उसके रुकूअ में पहुंचने से पहले इमाम रुकूअ से उठ गया तो रकअत नहीं मिली।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–291)

रुकूअ व सुजूद की तस्बीहात ज़ोर से पढ़ें या आहिस्ता?

मस्अला: फर्ज़ वग़ैरा में सना और रुकूअ व सुजूद की तस्बीहात वग़ैरा या तिलावते कुरआन करीम, ज़िक्र व औराद और वज़ीफ़ा वग़ैरा इस क़दर ज़ोर से पढ़ना कि दूसरों की तवज्जोह बटे, नमाज़ पढ़ने वालों को ख़लजान हो वह भूल जाएँ या उनके ख़ुशूअ व ख़ुजूअ में, या एतेकाफ़ करने वालों की यकसूई में फ़र्क़ आए, या सोने वालों की नींद में ख़लल पड़े। (इस तरह पढ़ना) दुरुस्त नहीं, गुनाह का मूजिब है। (यानी बाज़ हज़रात की आदत होती है कि नमाज़ों में सना और रुकूअ व सुजूद की तस्बीहात व तकबीराते इंतिक़ालात वग़ैरा ज़ोर से पढ़ते हैं कि करीब वालों को हरज होता है) लिहाज़ा ऐसी आदत छोड़ देनी चाहिए कि हरज हो। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–23 व शामी जिल्द–1 सफ़्हा–618)

तकबीरात में सह्व के मसाइल

मस्अला: एक रुक्न से दूसरे रुक्न में जाते वक़्त मसलन रुकूअ या सज्दा में जाते वक़्त या सज्दा से उठते वक़्त जो तकबीरात यानी "अल्लाहुअकबर" कही जाती हैं, उन तकबीरों में से कोई तकबीर कहना भूल गया तो उस पर

सज्दा वाजिब नहीं, अलबत्ता ईदैन की नमाज़ों में दूसरी रकअत में रुकूअ की तकबीर छोड़ दी तो सज्दए सहव वाजिब होगा, मगर चूंकि ईदैन की नमाज़ों में मजमा ज़्यादा होता है इसलिए सज्दए सहव राजेह कौल के मुताबिक़ नहीं है। (फ़तावा आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–65, आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–371)

मस्अला: किसी शख़्स ने तकबीरे तहरीमा के साथ नमाज़ शुरू की और क़िराअत भी कर ली, उसके बाद तकबीरे तहरीमा के बारे में शक हुआ, तो उसने दोबारा तकबीरे तहरीमा कही और क़िराअत फिर दोबारा शुरू की, उसके बाद ख़्याल आया कि तकबीरे तहरीमा तो शुरू में कह ली थी तो उसके ऊपर अख़ीर में सज्दए सहव वाजिब है।

(मसाइले सज्दए सहव सफ़्हा–70, बहवाला मब्सूत जिल्द–1 सफ़्हा–232)

मस्अला: अगर इमाम भूल कर पहली रकअत या तीसरी में बैठ गया पीछे से किसी मुक़्तदी ने लुक़मा दिया या ख़ुद ही याद आया तो इमाम को खड़े होते वक़्त तकबीर कहते हुए खड़ा होना चाहिए।

(कबीरी सफ़्हा–313)

मस्बूक़ व लाहिक़ की तारीफ़ और मुतअल्लिक़ा मसाइल

मस्बूक़ उस शख़्स को कहते हैं जिसको नमाज़ का कुछ हिस्सा या अक्सर हिस्सा इमाम के साथ न मिल सके, मस्बूक़ का हुक्म ये है कि उसका जितना हिस्सा

नमाज़ का इमाम के साथ रह गया हो वह इमाम के सलाम फेरने के बाद पढ़ेगा, ये बिल्कुल मुनफ़रिद (तन्हा नमाज़ पढ़ने वाले) के हुक्म में होता है, जिस तरह मुन्फ़रिद आदमी नमाज़ पढ़ने में सना "سبحانک اللھم" तऔवुज़ "اعوذباللہ" तस्मिया "بسم اللہ" और क़िराअत करता है, उसी तरह ये भी बाक़ी माँदा नमाज़ में करेगा, और अगर कोई सह्व हो जाए तो उसको सज्दए सह्व भी करना होगा।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–96)

मुदरिक वह शख़्स जिसको शुरू से आख़िर तक किसी के पीछे जमाअत से नमाज़ मिले, और उसको मुक़्तदी और मूतिम भी कहते हैं।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–7)

लाहिक़ वह होता है जो इमाम के साथ इब्तिदा में शरीक होता है, लेकिन किसी उज़्र की वजह से या बग़ैर उज़्र के इमाम के साथ इक़्तिदा करने के बाद उसकी बाज़ रकआत या तमाम रकआत रह जाएँ, मसलन ग़फ़लत की वजह से, या भीड़ की वजह से, या हदस लाहिक़ होने (बेवुज़ू हो जाने) की वजह से, या बिला उज़्र के, मसलन अपने इमाम से पहले रुकूअ, सुजूद कर लिया, और इस तरह वह रकअत रह गई, या मुक़ीम शख़्स जो मुसाफ़िर इमाम की इक़्तिदा में नमाज़ पढ़ रहा है, या नमाज़े ख़ौफ़ में पहली एक या दो रकअतें इमाम के साथ पढ़ता है ये लाहक़ होगा। इसका हुक्म मुक़्तदी का सा हुक्म होता है, ये बाक़ी माँदा नमाज़ में क़िराअत नहीं करेगा, न सज्दए सह्व करेगा (अगर भूल गया और सज्दए सह्व उस पर वाजिब हुआ) और न उसका फ़र्ज़ इक़ामत

की नीयत से तब्दील होगा। ऐसा शख़्स मस्बूक़ के बरअक्स पहले उस हिस्सा की क़ज़ा करेगा जो इमाम के साथ पढ़ने से रह गया है, और अगर जमाअत बाक़ी है तो ये इमाम के साथ शरीक होगा।

लाहिक़ से जो रकआत रह गई हैं उनमें वह मुक़्तदी समझा जाएगा और इमाम के साथ जैसे मुक़्तदी क़िराअत नहीं करता, ऐसे ही लाहिक़ भी क़िराअत नहीं करेगा बल्कि सुकूत (ख़ामोशी) इख़्तियार करेगा, और ख़मोश खड़ा रहेगा, और अगर उससे सज्दए सह्व हो जाए तो सज्दए सह्व करने की ज़रूरत नहीं।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–96)

मस्अला: मस्बूक़ से जो रकअतें रह गई हों उनको इस तरह अदा करे: पहले क़िराअत वाली रकअत पढ़े और फिर वह रकअत जो बग़ैर क़िराअत के हों, और क़अ़दा में उन रकआत के मुताबिक़ बैठना होगा, जो इमाम के साथ पढ़ी हैं। मसलन ज़ुहर की तीन रकआत होने के बाद वह इमाम के साथ शरीके नमाज़ हुआ हो। उसको एक ही रकअत इमाम के साथ मिली हो, अब ये दूसरी रकअत में सूरए फ़ातिहा और उसके साथ दूसरी सूरत मिला कर पढ़ेगा और फिर क़अ़दा में बैठेगा, और फिर दूसरी रकअत में भी सूरए फ़ातिहा के बाद और सूरत मिलाएगा क़अ़दा न करेगा, क्योंकि उसकी ये तीसरी रकअत बनती है, चौथी रकअत में सूरए फ़ातिहा के बाद सूरत न मिलाए और क़अ़दा में बैठे, ये आख़िरी क़अ़दा होगा।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–721, इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–97, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3

सफ़्हा–377, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–558 व फ़ातवा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–344)

नोटः तफ़सील आगे मस्अला में आ रही है।

मस्अलाः मुक़्तदी चार रकअ़त वाली नमाज़ में जमाअ़त के साथ एक रकअ़त पाए तो इमाम के सलाम फेरने के बाद औवल की दो रकअ़त में क़िराअत पढ़ेगा, और आख़िर की एक रकअ़त में सिर्फ़ अलहम्दु पढ़े।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–384)

मस्अलाः अगर चार रकअ़त वाली नमाज़ में जमाअ़त के साथ सिर्फ़ दो रकअत मिली है तो इमाम के सलाम के बाद बाक़ी दो रकअ़त में अलहम्दु और सूरत दोनों पढ़े।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–388, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–557)

मस्अलाः अगर एक रकअ़त रह गई हो तो उठ कर (इमाम के सलाम के बाद) जिस तरह रकअ़त पढ़ी जाती है "سبحانک اللهم" से शुरू कर दे और सूरए फ़ातिहा और दीगर सूरत पढ़ कर रकअ़त पूरी करे, और अगर दो रकअ़तें रह गई हों तो उठ कर पहली दो रकअ़तों की तरह पढ़े यानी पहली रकअ़त में "سبحانک اللهم" से शुरू करे और सूरए फ़ातिहा के बाद कोई सूरत पढ़ कर रुकूअ़ करे, दूसरी रकअ़त सूरए फ़ातिहा से शुरू करे, और अगर तीन रकअ़त रह गई हों तो पहली रकअ़त में सुब्हानकल्लाहुम्मा शुरू कर के सूरए फ़ातिहा और सूरत पढ़े और उस रकअ़त पर क़अ़दा करे। दूसरी रकअ़त में सूरए फ़ातिहा और सूरत पढ़े, और तीसरी रकअ़त में सिर्फ़ सूरए फ़ातिहा पढ़े और आख़िरी क़अ़दा करे।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–290)

मस्अलाः जिसको मग़रिब की दो रकअ़त इमाम के साथ मिली तो वह क़अ़दा में इमाम के साथ सिर्फ़ अत्तहीयात पढ़ कर ख़ामोश बैठा रहे, फिर जब एक रकअ़त बाक़ी माँदा अदा करे, उस वक़्त सब पढ़े।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–393, गुनयतुलमुस्तमली सफ़्हा–441)

मस्अलाः मग़रिब की नमाज़ में जब इमाम के साथ एक रकअ़त आख़िर की मिली तो बाक़ी दोनों रकअ़तों में बैठना और अत्तहीयात पढ़नी होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–396, फ़तावा रहीमिया जिल्द–4 सफ़्हा–344)

मस्अलाः जिस शख़्स को चार रकअ़त वाली नमाज़ में मसलन ज़ुहर या अस्र में एक रकअ़त इमाम के साथ मिले तो वह शख़्स इमाम के सलाम फेरने के बाद अपनी बाक़ी माँदा रकआ़त इस तरह अदा करे कि उठ कर तऔ़वुज़ और सना पढ़ कर अलहम्दु और सूरत उस रकअ़त में पढ़े और रुकूअ़ व सज्दा कर के बैठ जाए और अत्तहीयात पढ़े, क्योंकि उसकी दूसरी रकअ़त हो गई एक इमाम के साथ और एक ख़ुद उठ कर पढ़ी। अत्तहीयात पढ़ कर उठ जाए और अलहम्दु और सूरत पढ़ कर रुकूअ़ व सज्दए करे। ये उसकी तीसरी रकअ़त हुई, सज्दा के बाद फ़ौरन उठ कर चौथी रकअ़त सिर्फ़ अलहम्दु के साथ पढ़े, ये चौथी रकअ़त हो गई। रुकूअ़ व सज्दा कर के अत्तहीयात और दुरुद शरीफ़ और दुआ़ (रब्बना आतिना वग़ैरा) पढ़ कर सलाम फेर दे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़हा–397, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़हा–557)

मस्अला: अस्र की एक रकअ़त पाने वाले को इमाम के सलाम फेरने के बाद एक रकअ़त पढ़ कर क़अ़दा दरमियानी करना होगा, और फिर दो रकअ़त पढ़ कर आख़िर में बैठना होगा। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़हा–396, बहवाला रद्दुलमुहतार सफ़हा–557)

मस्अला: अगर मस्बूक़ से रकअ़त में कोई फ़र्ज़ छूट गया, अगर उसने उस फ़र्ज़ का इआ़दा नहीं किया तो नमाज़ फिर से पढ़े। (फ़तावा दारुलउलूम ज़िल्द–3 सफ़हा–390, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़हा–411)

मस्अला: अगर किसी को मग़रिब की नमाज़ इमाम के साथ सिर्फ़ एक रकअ़त मिली और दो रकअ़तें छूट गईं तो इमाम के सलाम फेरने के बाद अपनी दो रकअ़त इस तरह पूरी की कि दरमियानी क़अ़दए ऊला नहीं किया तो उस पर सज्दए सह्व वाजिब है। अगर सज्दए सह्व न किया तो नमाज़ को दोबारा पढ़ना ज़रूरी है।

(फ़तावा दारुलउलूम सफ़हा–397, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़हा–695)

मस्अला: इमाम पर सज्दए सह्व वाजिब था, उसने सज्दए सह्व किया, उसके बाद अत्तहीयात पढ़ने की हालत में किसी ने इक़्तिदा की तो ये इक़्तिदा दुरुस्त और सहीह है। बाद में उसके ज़िम्मा सह्व वाजिब नहीं है।

(शामी जिल्द–1 सफ़हा–526)

मस्अला: इमाम पर सज्दए सह्व वाजिब था इसलिए उसने सज्दए सह्व किया, जब दूसरे सज्दा में था तो

किसी ने आकर उसकी इक़्तिदा की, यानी दूसरे सज्दए सह्व के सज्दा में आकर शरीक हो गया तो पहले सज्दा की क़ज़ा उसके ज़िम्मा नहीं है। (आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–66 व मसाइले सज्दए सह्व सफ़्हा–86)

मस्अला: जो शख़्स जमाअत में कुछ रकअत होने के बाद शामिले नमाज़ हुआ, और इमाम के सलाम फेरने के बाद उसने अपनी नमाज़ पूरी कर ली। अगर किसी सबब से इमाम की नमाज़ नहीं हुई तो मस्बूक़ (बाद में शरीक होने वाले) की भी नमाज़ उस सूरत में न होगी, यानी मस्बूक़ की नमाज़ इमाम की नमाज़ की सेहत पर मौक़ूफ़ है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–319, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–553)

मस्अला: मस्बूक़ को हुक्म ये है कि जिस वक़्त रकअत बाक़ी माँदा पढ़ने के लिए खड़ा हो, उस वक़्त सना व तऔवुज़ पढ़े और जिस वक़्त इमाम के साथ शरीक हो उस वक़्त न पढ़े चाहे क़िराअत जेह्री हो या सिर्री, फिर जब अपनी रकअत पूरी करने के लिए खड़ा हो उस वक़्त पढ़े।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–392, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–456)

मस्अला: अगर जेह्री नमाज़ तन्हा पढ़े तो आवाज़ से पढ़ना अफ़ज़ल है। जब कि दूसरों के लिए जेह्र यानी बुलंद आवाज़ से क़िराअत करना तकलीफ़ देह न हो।

मस्अला: अगर सब की नमाज़ें क़ज़ा हो गई हों तो फिर इमाम ज़ोर से ही पढ़े। (हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–74, शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–82)

मस्अलाः मस्बूक़ (कुछ रकअत निकलने के बाद शामिल होने वाले) ने अगर सह्वन (भूले से) इमाम के साथ सलाम फेर दिया ख़्वाह एक तरफ़ या दोनों तरफ़ इस तरह कि मस्बूक़ का सलाम इमाम के सलाम के कुछ बाद वाक़ेअ हुआ जैसा कि आदत है, यानी बाद में ही सलाम फेरा जाता है, तो मस्बूक़ उठ कर अपनी बाक़ी रकआत पूरी कर सकता है, नमाज़ उसकी फ़ासिद नहीं हुई।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–398, दुर्रेमुख़्तार बाब सुजूदुस्सह्व जिल्द–1 सफ़्हा–696)

इमदादुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–512, फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–185)

मस्अलाः मस्बूक़ ने इमाम के साथ सलाम फेर दिया, अगर वह मस्बूक़ दूसरे के बतलाने से और याद दिलाने से उठा और ख़ुद भी उसको याद दिलाने से याद आ गया और इसी बिना पर वह उठा तो सज्दए सह्व करने से उसकी नमाज़ हो गई, और ऐसी हालत में ऐसा ही करना चाहिए कि अगर कोई शख़्स बतला दे और याद दिला दे तो ख़ुद याद कर के अपनी याद पर इस फ़ेल को करे ताकि नमाज़ में कुछ ख़लल न हो। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–393, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–581, फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–130)

(अगर बतलाने और याद दिलाने पर फ़ौरन खड़ा हो गया, अपनी याद से काम न लिया तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी, ऐसी हालत में ये ही शक्ल करनी चाहिए कि बतलाने पर अपनी याददाश्त पर ज़ोर डाल कर अपनी राए के मुताबिक़ उठ कर नमाज़ पूरी कर के सज्दए सह्व

कर ले) (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी गुफ़िरलहू)

मस्अलाः मस्बूक़ बग़ैर किसी कलाम किए और कुछ बोले बग़ैर अगर उठ गया (रकअत पूरी करने के लिए) अगरचे सलाम फेर दिया और हाथ उठा कर (अरबी में) दुआ भी माँग ली, उसकी नमाज़ हो गई। आख़िर में सज्दए सह्व कर ले। (यानी बाक़ी माँदा रकअ़त पूरी कर के) (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–382, रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–560, बाबुलइस्तिख़लाफ़)

बाक़ी माँदा नमाज़ पढ़ने वाले की इक़्तिदा करना?

मस्अलाः मस्बूक़ की इक़्तिदा (जो शख़्स इमाम के सलाम के बाद अपनी बाक़ी माँदा नमाज़ पूरी करने के लिए खड़ा हुआ और कोई आ कर उसके पीछे नीयत बाँध ले) दुरुस्त नहीं है, वह बहालते इन्फ़िराद बाद फ़राग़े इमाम के दूसरों का इमाम नहीं हो सकता।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–376)

(यानी अपनी बक़िया नमाज़ पूरी करने की हालत में किसी का इमाम नहीं हो सकता है, क्योंकि वह ख़ुद इमामे साबिक़ का मुक़्तदी है अपनी रकअ़त पूरी कर रहा है।

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी गुफ़िरहलू)

एक मस्बूक़ को देख कर दूसरा मस्बूक़ अपनी फ़ौत शुदा रकअ़तें पूरी करे?

सवालः दो आदमी एक साथ जमाअ़त में शरीक हुए,

इमाम के सलाम के बाद अपनी बक़िया रकअतों में शक हुआ कि कितनी रकअतें फ़ौत हुई हैं? तो उसने अपने साथी को देख कर उसके मानिन्द अपनी नमाज़ ख़त्म की तो नमाज़ सहीह हुई या दुहरानी पड़ेगी?

जवाबः सूरते मसऊला में नमाज़ सहीह होगी, दुहराने की ज़रूरत नहीं है, हाँ अगर उसने साथी की इमाम की हैसियत से इक़्तिदा की है तो नमाज़ न होगी।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–138, बहवाला दुर्रेमुख़्तार मअ़ शामी जिल्द–1 सफ़्हा–558)

हरम शरीफ़ में भीड़ के वक़्त मस्बूक़ के लिए हुक्म

सवालः हरम शरीफ़ में हुज्जाज को अक्सर दरवाज़े में जहाँ से लोगों की आमदोरफ़्त है नमाज़ के लिए जगह मिलती है और जिसकी रकअ़त निकल जाती है इमाम के सलाम फेरने के बाद उसको पढ़ना दुश्वार हो जाता है, लोग बाहर निकलने की कोशिश करते हैं। ऐसी हालात में मस्बूक़ इमाम के सलाम फेरने से पहले खड़े हो कर अपनी फ़ौत शुदा नमाज़ जल्दी से पढ़ कर इमाम के सलाम के बाद लोगों के उठने से पहले फ़ारिग़ हो जाए तो नमाज़ सहीह हो जाएगी या नहीं?

जवाबः ऐसे हालात में जब कि फ़ौत शुदा रकअ़तें पढ़ने का इमकान न हो तो इमाम के हमराह क़अ़दए अख़ीरा में मिक़्दारे तशह्हुद बैठ कर खड़ा हो जाए और अपनी फ़ौत शुदा रकअ़तें जल्दी से अदा कर ले, नमाज़ सहीह हो जाएगी। कबीरी सफ़्हा–439 में है कि "ख़तरा

है कि लोग उसके सामने से गुज़रेंगे या इस तरह का कोई और ख़दशा है तो उस वक़्त ये बात मकरूह नहीं है कि इमाम जब क़अ़दए अख़ीरा में अत्तहीयात पढ़ने की मिक़्दार बैठ चुके यानी इतनी देर गुज़र जाए जितनी देर में अत्तहीयात पढ़ी जा सकती है तो वह (मुक़्तदी) खड़ा हो जाए, मगर इसका पूरा ख़्याल रखे कि इससे पहले यानी जितनी देर में अत्तहीयात पढ़ी जाती है उससे पहले हरगिज़ खड़ा न हो।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–136)

मस्अला: ईदैन, जुमा वग़ैरा के हुजूम (भीड़) में तंगी की वजह से पिछली सफ़ वाले अगली सफ़ वालों की (अगर जगह न हो तो) पुश्त पर भी सज्दा कर सकते हैं। (शरह नक़ाया जिल्द–1 सफ़्हा–79, कबीरी सफ़्हा–286)

नोट: इन दोनों मसाइल का हर जगह फ़ाएदा न उठाया जाए ताकि अवामुन्नास परेशानी में मुब्तला न हो जाएँ। (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्बूक़ पर सज्दए सह्व का हुक्म

मस्अला: मस्बूक़ जिसकी रकअ़त इमाम के साथ रह गई हो वह अपने इमाम के साथ हर हाल में सज्दए सह्व करेगा, ख़्वाह ये भूल इमाम से उसके मिलने से पहले हुई हो, या उसके मिलने के बाद हुई (इमाम के साथ सलाम नहीं फेरेगा बल्कि सिर्फ़ सज्दए सह्व में शरीक होगा) सज्दए सह्व के बाद जब इमाम सलाम फेरेगा तो उसके बाद मस्बूक़ अपनी छूटी हुई रकअ़तों को पूरा करेगा। और

अगर मस्बूक़ अपनी उन छूटी हुई रकअ़तों में जिनको वह इमाम के सलाम फेरने के बाद पूरी कर रहा है, कोई सज्दए सह्व वाजिब करने वाली ग़लती हो जाए, तो उसमें तन्हा अलग से सज्दए सह्व करेगा, इसलिए कि ये अपनी उन रकअ़तों में मुनफ़रिद (तन्हा नमाज़ पढ़ने वाले) के हुक्म में है।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–683, फ़तावा दारुलउलूम ज़िल्द–4 सफ़्हा–391, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–557, फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–55, मब्सूत जिल्द–1 सफ़्हा–229)

यानी अलग से उसको आख़िर में दोबारा सज्दए सह्व करना वाजिब होगा। (रफ़अ़त)

मुनफ़रिद व मुक़्तदी पर सज्दए सह्व का हुक्म

मस्अला: वाजिब के छोड़ने से सज्दए सह्व मुनफ़रिद पर भी वाजिब होता है और मुक़्तदी पर भी, मगर मुक़्तदी पर उसके इमाम के सह्व की वजह से सज्दए सह्व वाजिब होता है। अगर उसका इमाम सज्दए सह्व करेगा तो उसकी पैरवी में मुक़्तदी को भी करना होगा, मुक़्तदी के ख़ुद अपने सह्व (ग़लती) से उस पर सज्दा वाजिब नहीं होता है (यानी इमाम के पीछे अगर मुक़्तदी से कोई वाजिब छूट जाए तो मुक़्तदी पर सज्दए सह्व नहीं है, हाँ मस्बूक़ पर है, यानी जिसकी रकअ़त रह गई हो) न सलाम से पहले न सलाम के बाद क्योंकि अगर सलाम से पहले मुक़्तदी सज्दए सह्व करेगा तो इमाम की मुख़ालफ़त लाज़िम

आएगी और इमाम के सलाम के बाद वह नमाज़ से निकल चुका होगा। (दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–683, आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–364)

मुक़ीम, मुक़्तदी, मुसाफ़िर इमाम के पीछे सज्दए सह्व कैसे करे?

सवालः एक मुक़ीम, एक मुसाफ़िर इमाम की इक़्तिदा में नमाज़ पढ़ रहा था, इमाम से भूल (ग़लती) हो गई और उसने सज्दए सह्व किया, तो अब सवाल ये है कि मुक़ीम मुक़्तदी क्या करे?

जवाबः इसमें दो क़ौल हैं। पहला तो ये है कि वह अपने इमाम के साथ सज्दए सह्व करे और उसके सलाम फेरने के बाद अपनी बक़िया रकअतें पूरी करे।

और दूसरा क़ौल ये है कि मुक़ीम मुक़्तदी सज्दए सह्व में इमाम की पैरवी न करे, बल्कि सलाम के बाद जब वह अपनी बक़िया दो रकअतें पूरी कर ले तब वह सज्दए सह्व करे। (दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–684)

लाहिक़ पर सज्दए सह्व का हुक्म

मस्अलाः लाहिक़ पर भी (जो इमाम के साथ नमाज़ में तकबीरे तहरीमा से शरीक होता है, लेकिन किसी उज़्र की वजह से यानी वुज़ू टूट जाने की वजह से कुछ रकअतें निकल गईं तो अपने इमाम के भूल हो जाने से सज्दए सह्व वाजिब होता है मगर लाहिक़ अपनी नमाज़

के आख़िर में सज्दए सह्व करेगा, अगरचे उसने सज्दए सह्व कर लिया था तो भी अपनी नमाज़ के आख़िर में दोबारा सज्दए सह्व करेगा, इसलिए कि मिलने के वक़्त उसने अज़्म किया था कि वह पूरी नमाज़ में अपने इमाम की पैरवी करेगा और जब उसके इमाम ने अख़ीर में सज्दए सह्व किया है तो ये भी ऐसा ही करेगा।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़हा–684)

मस्अला: अगर कोई शख़्स लाहिक़ भी हो और मस्बूक़ भी मसलन कुछ रकअ़तें हो जाने के बाद शरीक हुआ हो और बाद शिरकत के फिर कुछ रकअ़तें उसकी चली जाएँ तो उसको चाहिए कि पहले अपनी उन रकअ़तों को अदा करे जो बाद शिरकत के गई हैं जिनमें वह लाहिक़ है, उसके बाद अगर जमाअ़त बाक़ी हो तो उसमें शरीक हो जाए, वरना बाक़ी नमाज़ भी पढ़ ले, मगर उसमें इमाम की मुताबअ़त का ख़्याल रखे बाद उसके अपनी उन रकअ़तों को अदा करे जिनमें मस्बूक़ है।

मिसाल: अस्र की नमाज़ में एक रकअ़त हो जाने के बाद कोई शरीक हुआ और शरीक होने के बाद ही उसका वुज़ू टूट गया और वुज़ू करने गया, उस दरमियान में नमाज़ ख़त्म हो गई तो उसको चाहिए कि पहले उन तीनों रकअ़तों को अदा करे जो बाद शरीक होने के गई हैं फिर उस रकअ़त को जो उसके शरीक होने से पहले हो चुकी थी और उन तीनों रकअ़तों को मुक़्तदी की तरह अदा करे यानी क़िराअत न करे और उन तीन की पहली रकअ़त में क़अ़दा करे, इसलिए कि ये इमाम की दूसरी रकअ़त है और इमाम ने उसमें क़अ़दा किया था, फिर

दूसरी रकअ़त में भी क़अ़दा करे। इसलिए कि ये उसकी दूसरी रकअ़त है, फिर तीसरी रकअ़त में भी क़अ़दा करे इसलिए कि ये इमाम की चौथी रकअ़त है, इमाम ने उसमें क़अदा किया था फिर उस रकअ़त को अदा करे जो उसके शरीक होने से पहले हो चुकी थीं और उसमें भी क़अ़दा करे इसलिए कि ये उसकी चौथी रकअ़त है, और इस रकअ़त में उसको क़िराअत भी करना होगी इसलिए कि इस रकअ़त में वह मस्बूक़ है और मस्बूक़ अपनी गई हुई रकअ़तों के अदा करने में मुनफ़रिद का हुक्म रखता है। (इल्मुलफ़िक्ह जिल्द–2 सफ़्हा–97, रद्दुलमुहतार वग़ैरा व नमाज़े मसनून सफ़्हा–128)

मस्अला: नमाज़े ख़ौफ़ में पहला गिरोह लाहिक़ का हुक्म रखता है जो अपनी बाक़ी माँदा एक या दो रकअ़त बग़ैर क़िराअत के अदा करेगा, और नमाज़े ख़ौफ़ में दूसरा गिरोह मस्बूक़ का हुक्म रखता है जो अपनी बाक़ी माँदा नमाज़ मुनफ़रिद की तरह पढ़ेगा।

(नमाज़े मसनून सफ़्हा–827 ता 828)

इसी तरह जो मुक़ीम शख़्स मुसाफ़िर इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ता है वह मुसाफ़िर इमाम की नमाज़ ख़त्म करने के बाद ही लाहिक़ होगा। (बहवाला मुस्लिम जिल्द–1 सफ़्हा–220 व एलाउस्सुनन सफ़्हा–376)

इमाम ने सलाम के कुछ देर बाद सज्दए सह्व किया तो मस्बूक़ क्या करे?

मस्अला: इमाम पर सज्दए सह्व वाजिब था, उसको

याद नहीं रहा, उसने दोनों तरफ़ सलाम फेर दिया और मस्बूक़ (बाद में शामिल होने वाला) अपनी छूटी हुई रकअतें पूरी करने के लिए खड़ा हो गया, उसके बाद इमाम को याद आया कि मुझ पर सज्दए सह्व वाजिब था (इमाम ने कलाम नहीं किया और क़िब्ला से भी नहीं हटा था) लिहाज़ा इमाम फ़ौरन सज्दए सह्व में चला गया तो उस मस्बूक़ को चाहिए कि अगर उस रकअत का सज्दा न किया हो तो लौट आए और इमाम के साथ सज्दा में शरीक हो जाए और फिर जिस वक़्त इमाम आख़िरी सलाम फेरे तो उठ कर बक़िया अपनी नमाज़ पूरी कर ले।

और इस दरमियान जो मस्बूक़ ने क़याम, क़िराअत और रुकूअ़ किया है वह कलअदम तस्व्वुर किया जाएगा, और अगर मुक़्तदी ने लौट कर इमाम के साथ सह्व नहीं किया जब भी नमाज़ सहीह हो जाएगी, लेकिन अख़ीर में सज्दए सह्व करना वाजिब होगा, अलबत्ता अगर वह मस्बूक़ अपनी बाक़ी माँदा रकअ़त का सज्दा कर चुका है तो फिर न लौटे, ऐसी सूरत में अगर लौटेगा तो उसकी नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

(फ़तावा आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–66)

मस्अला: अगर किसी मस्बूक़ ने इमाम के साथ सज्दए सह्व नहीं किया और उठ कर अपनी बक़िया रकअ़तें पूरी करने लगा और फिर उससे भी कोई सह्व (ग़लती) हो गया तो एक ही मरतबा अख़ीर में सज्दए सह्व कर लेना काफ़ी है, अलबत्ता वह मस्बूक़ सलाम का इंतिज़ार किए बग़ैर उठ जाने पर गुनहगार होगा।

(फ़तावा आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–66)

इमाम को सह्व होने के बाद वुज़ू भी टूट गया?

मस्अला: किसी इमाम को नमाज़ में सह्व हुआ और उसके बाद उसको हदस भी लाहिक़ हो गया यानी वुज़ू भी टूट गया, इमाम ने सफ़ में से एक मस्बूक़ को (जिसकी रकअ़त निकल गई हो) अपनी जगह ख़लीफ़ा (इमाम) बना दिया तो वह मस्बूक़ सलाम तक नमाज़ पूरी कर दे लेकिन सलाम न फेरे, जिस वक़्त सलाम फेरना हो तो किसी मुदरिक को (जिसको पूरी नमाज़ मिली है) आगे कर दे और वह मुदरिक आकर अगर सज्दए सह्व करे और फिर अत्तहीयात वग़ैरा पढ़ कर सलाम फेरे तो मस्बूक़ भी उसके साथ सज्दए सह्व करेगा। (आलमगीरी सफ़्हा–66)

नमाज़ में हदस (बेवुज़ू) हो जाने का ब्यान

नमाज़ में अगर हदस हो जाए तो अगर हदसे अकबर हो जाएगा तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी और अगर हदसे असग़र होगा तो दो हाल से ख़ाली नहीं इख़्तियारी होगा या बेइख़्तियारी यानी उसके वजूद में या उसके सबब में बंदों के इख़्तियार को दख़ल होगा या नहीं, अगर इख़्तियारी होगा तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी, मसलन कोई शख़्स नमाज़ में क़हक़हा के साथ हंसे, या अपने बदन में कोई ज़र्ब लगा कर ख़ून निकाल ले, या अमदन इख़राजे रीह करे, या कोई शख़्स छत के ऊपर चले और उस चलने

के सबब से कोई पत्थर वग़ैरा छत से गिर कर किसी नमाज़ पढ़ने वाले के सर में लगे और ख़ून निकल आए, इन सब सूरतों में नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी, इसलिए कि ये तमाम अफ़आल बंदों के इख़्तियार से सादिर हुए हैं और अगर बेइख़्तियारी होगा तो उसमें दो सूरतें हैं। या नादिरुलवक़ूअ होगा जैसे क़हक़हा, जुनून, बेहोशी, वग़ैरा या कसीरुलवक़ूअ जैसे ख़ुरूजे रीह, पेशाब, पाख़ाना, मज़ी वग़ैरा। अगर नादिरुलवक़ूअ होगा तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी, अगर नादरिलवक़ूअ न होगा तो नमाज़ फ़ासिद न होगी, बल्कि उस शख़्स को इख़्तियार है कि बाद उस हदस के रफ़अ करने के उसी नमाज़ को तमाम कर ले और अगर नमाज़ का इआदा कर ले तो बेहतर है।

इस सूरत में नमाज़ फ़ासिद न होने की चंद शर्तें हैं:

(1) किसी रुक्न को हालते हदस में अदा न करे।

(2) किसी रुक्न को चलने की हालत में अदा न करे। मसलन जब वुज़ू को जाए या वुज़ू कर के लौटे तो क़ुरआन मजीद की तिलावत न कर ले, इसलिए कि क़िराअत नमाज़ का रुक्न है।

(3) कोई ऐसा फ़ेल जो नमाज़ के मुनाफ़ी हो न करे न कोई ऐसा फ़ेल करे जिससे एहतेराज़ मुमकिन हो।

(4) बाद हदस के बग़ैर किसी उज़्र के बक़द्र अदा करने किसी रुक्न के तवक़्कुफ़ न करे बल्कि फ़ौरन वुज़ू करने के लिए जाए, हाँ अगर किसी उज़्र से देर हो जाए तो कुछ मुज़ाएक़ा नहीं, मसलन सफ़ें ज़्यादा हों और ख़ुद पहली सफ़ में हो और सफ़ों को फाड़ कर आना मुश्किल हो।

(5) मुक़्तदी को हर हाल में और इमाम को अगर

जमाअत बाक़ी हो तो बाक़ी नमाज़ वहीं पढ़ना जहाँ पहले शुरू की थी।

(6) इमाम को किसी ऐसे शख़्स को ख़लीफ़ा करना जिसमें इमामत की सलाहियत न हो।

मुनफ़रिद को अगर हदस हो जाए तो उसको चाहिए कि फ़ौरन सलाम फेर कर वुज़ू कर ले और जिस क़दर जल्द मुमकिन हो वुज़ू से फ़राग़त करे मगर वुज़ू तमाम सुनन और मुस्तहब्बात के साथ करना चाहिए और उस दरमियान में कोई कलाम वग़ैरा न करे, पानी अगर क़रीब मिल सके तो दूर न जाए, हासिल ये कि जिस क़दर हरकत सख़्त ज़रूरी हो उससे ज़्यादा न करे, बाद वुज़ू के चाहे वहीं अपनी नमाज़ तमाम कर ले चाहे जहाँ पहले था वहाँ जाकर पढ़े।

मस्अला: इमाम को अगर हदस हो जाए अगरचे क़अदए अख़ीर में हो तो उसको चाहिए कि फ़ौरन सलाम फेर कर वज़ू करने के लिए चला जाए और बेहतर ये है कि अपने मुक़्तदियों में जिस को इमामत के लाइक़ समझता हो, उसको अपनी जगह पर खड़ा कर दे, मुदरिक को ख़लीफ़ा करना बेहतर है, अगर मस्बूक़ को कर दे तब भी जाइज़ है, और उस मस्बूक़ को इशारे से बतला दे कि इतनी रकअतें वग़ैरा मेरे ऊपर बाक़ी हैं, रकअतों के लिए उंगली से इशारा करे, मसलन एक रकअत बाक़ी हो तो एक उंगली उठा दे, दो रकअत बाक़ी हों तो दो उंगली। रुकूअ़ बाक़ी हो तो घुटने पर हाथ रख दे, सज्दा बाक़ी हो तो पेशानी पर, क़िराअत बाक़ी हो तो मुंह पर, सज्दए तिलावत बाक़ी हो तो पेशानी और ज़बान पर, सज्दए

सह्व करना हो तो सीने पर, फिर जब खुद वुज़ू कर चुके तो अगर जमाअ़त बाक़ी हो तो जमाअ़त में आकर अपने ख़लीफ़ा का मुक़्तदी बन जाए, और जमाअ़त हो चुकी हो तो अपनी नमाज़ तमाम कर ले, ख़्वाह जहाँ वुज़ू किया है वहीं या जहाँ पहले था वहाँ, अगर पानी मस्जिद के अन्दर हो तो फिर ख़लीफ़ा करना ज़रूरी नहीं, चाहे करे और चाहे न करे, बल्कि जब खुद वुज़ू कर के आए फिर इमाम बन जाए और इतनी देर तक मुक़्तदी उसके इंतिज़ार में रहें। (शामी वग़ैरा)

मस्अला: ख़लीफ़ा कर देने के बाद इमाम नहीं रहता बल्कि अपने ख़लीफ़ा का मुक्तदी हो जाता है, लिहाज़ा अगर जमाअ़त हो चुकी हो तो इमाम अपनी नमाज़ लाहिक़ की तरह तमाम करे। अगर इमाम किसी को ख़लीफ़ न करे बल्कि मुक़्तदी लोग किसी को अपने में से ख़लीफ़ा कर दें या खुद कोई मुक़्तदी आगे बढ़ कर इमाम की जगह पर खड़ा हो जाए और इमाम की नीयत कर ले, तब भी दुरुस्त है, बशर्तेकि इमाम मस्जिद से बाहर निकल चुका हो और अगर नमाज़ मस्जिद में न होती हो तो सफ़ों से या सुतरे से आगे न बढ़ा हो, अगर उन हुदूद से आगे बढ़ चुका हो तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी।

अगर मुक़्तदी को हदस हो जाए उसको भी फ़ौरन सलाम फेर कर वुज़ू करना चाहिए, बाद वुज़ू के अगर जमाअ़त बाक़ी हो तो जमाअ़त में शरीक हो जाए, वरना अपनी नमाज़ तमाम करे।

मस्अला: मुक़्तदी को हर हाल में अपने मक़ाम पर जा कर नमाज़ पढ़ना चाहिए, ख़्वाह जमाअ़त बाक़ी हो या

नहीं। अगर इमाम मस्बूक़ को अपनी जगह पर खड़ा कर दे तो उसको चाहिए कि जिस क़दर रकअतें वग़ैरा इमाम पर बाक़ी थीं, उनको अदा कर के किसी मुदरिक को अपनी जगह कर दे, ताकि वह सलाम फेर दे और ये मस्बूक़ फिर अपनी गई हुई रकअतों को अदा करने में मसरूफ़ हो।

मस्अलाः अगर किसी की क़अदए अख़ीरा में बाद उसके कि बक़द्रे अत्तहीयात के बैठ चुका हो जुनून हो जाए या हदसे अकबर हो जाए या अमदन हदसे असग़र (यानी वुज़ू तोड़ ले) कर ले, या बेहोश हो जाए या क़हक़हा के साथ हंसे तो नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी और फिर उस नमाज़ का लौटाना ज़रूरी होगा।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–111 ता 113)

इस मस्अला की तफ़सील देखिए अहक़र की मुरत्तब करदा किताब "मसाइले इमामत"। (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

इमाम ने सूरए नास पढ़ी तो मस्बूक़ कौन सी पढ़े?

मस्अलाः एक शख़्स मग़रिब की नमाज़ में दूसरी रकअत में शामिल हुआ और इमाम ने दूसरी रकअत में "قُلْ اَعُوْذُ بِرَبِّ النَّاسِ" पढ़ी तो इस सूरत में मस्बूक़ को अपनी बाक़ी माँदा रकअत में इख़्तियार है। पूरे कुरआन शरीफ़ में से जो सूरत चाहे और जहाँ से चाहे पढ़े क्योंकि क़िराअत के सिलसिले में बाक़ी माँदा नमाज़ इब्तिदा के हुक्म में होती है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–377, बहवाला

दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़हा–557)

मस्अला: जिन रकअतों को आप इमाम के सलाम फेरने के बाद पूरी करेंगे उनमें आप इमाम के ताबेअ़ नहीं बल्कि अपनी अकेले नमाज़ पढ़ने के हुक्म में है, इसलिए उन रकअतों में आपको अपनी क़िराअत की तरतीब मलहूज़ रखना ज़रूरी नहीं है मसलन अगर आप की दो रकअतें रह गई हैं तो पहली रकअ़त में आप ने जो सूरत पढ़ी है दूसरी रकअ़त में उसके बाद वाली सूरत पढ़ें, इससे पहले की न पढ़ें, लेकिन इमाम की क़िराअत की तरतीब का लिहाज़ आपके ज़िम्मा ज़रूरी नहीं है। पस इमाम ने जो सूरतें पढ़ी हैं आप बक़िया रकअ़त में उससे पहले की सूरत भी पढ़ सकते हैं और बाद की भी।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–212)

मस्अला: अहनाफ़ (रह.) का मसलक ये है कि मस्बूक़ जो रकआ़त इमाम के सलाम फेरने के बाद पढ़ता है वह क़िराअत के लिहाज़ से औवल हैं यानी हुकमन उसकी नमाज़ का पहला हिस्सा है, अगरचे हिस्सन वह आख़िर है, और तशहहुद के एतेबार से ये आख़िर हैं और इमाम के साथ जो रकअ़तें उसने पाई हैं वह तशहहुद के एतेबार से औवल हैं, क़िराअत के एतेबार से आख़िर हैं।

(नमाज़ मसनून सफ़्हा–831, किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–701)

जमाअ़त के लौटाने में नए नमाज़ी का शिरकत करना?

मस्अला: अगर फ़र्ज़ के छूटने की वजह से नमाज़

का इआदा हुआ है (यानी नमाज़ दोबारा पढ़ी गई) तो उसमें शरीक होना नए नमाज़ी का दुरुस्त है, क्योंकि पहली नमाज़ बातिल होगी। और अगर वाजिब के छूटने की वजह से इआदा हुआ है तो नए आदमी की शिरकत दुरुस्त नहीं है, क्योंकि फ़र्ज़ पहली नमाज़ से अदा हो चुका है और ये सिर्फ़ तकमील है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–10 सफ़्हा–268, तहतावी जिल्द–1 सफ़्हा–134, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–51, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–426)

मस्अला: अगर किसी शख़्स (या इमाम) के ज़िम्मा सज्दए सह्व वाजिब हुआ था और वह भूल गया, भूल कर अदा नहीं कर सका, तो वह नमाज़ नाक़िस होगी, उसका लौटाना ज़रूरी है, लेकिन दोबारा लौटाने की सूरत में वह नमाज़ नफ़्ल होगी, फ़र्ज़ उसका अदा हो चुका है गो वह नाक़िस अदा हुआ। ये दोबारा नमाज़ तकमीले सवाब के लिए होगी, यही वजह है कि जमाअत के साथ अगर दोबारा पढ़ी गई और उसी हालत में किसी ने फ़र्ज़ की नीयत से इमाम की इक़्तिदा की तो उस मुक़्तदी का फ़र्ज़ अदा न होगा, उसको दोबारा नमाज़ पढ़ना ज़रूरी होगा। (मसाइले सज्दए सह्व सफ़्हा–47, बहवाला शामी सफ़्हा–424, फ़तावा रहीमिया जिल्द–1 सफ़्हा–136 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–2 सफ़्हा–217)

मस्अला: बिला ताख़ीर नमाज़ शुरू करें तो इक़ामत यानी तकबीर के लौटाने की ज़रूरीत नहीं, पहली इक़ामत काफ़ी है, और अगर ताख़ीर हो गई है तो इक़ामत (तकबीर) दोबारा कहे।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–21, शामी जिल्द–1 सफ़्हा–372)

मस्अला: अगर दोबारा तकबीर कह दी तो फिर भी कुछ हरज नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–110, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–1 सफ़्हा–371)

ख़त्म शुद

बारगाहे एज़दी में दस्त ब दुआ हूँ कि इस ख़िदमत से अवाम व ख़्वास को ज़्यादा से ज़्यादा इस्तिफ़ादा का मौक़ा इनायत फ़रमाएँ और ख़ाकसार की मेहनत को फ़लाहे दारैन का ज़रीआ बना कर आइंदा भी दीनी ख़िदमत की मक़्बूलियत्त का मौक़ा इनायत फ़रमाता रहे। (आमीन)

"اَللّٰهُمَّ اجْعَلْهُ خَالِصاً لِوَجْهِكَ الْكَرِيْمِ وَتَقَبَّلْ مِنِّيْ اِنَّكَ اَنْتَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ ـ رَبِّ اجْعَلْنِيْ مُقِيْمَ الصَّلٰوةِ وَمِنْ ذُرِّيَّتِيْ رَبَّنَا وَتَقَبَّلْ دُعَآءِ. رَبَّنَا اغْفِرْلِيْ وَلِوَالِدَيَّ وَلِلْمُؤْمِنِيْنَ يَوْمَ يَقُوْمُ الْحِسَابُ"

मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू
ख़ादिमुत्तदरीस दारुलउलूम देवबंद
यू0 पी0 (इंडिया)
मुअर्रख़ा 27, रमज़ानुलमुबारक 1416 हिजरी
मुताबिक़ 17, फ़रवरी 1696 ई0

फ़ज़ाएल व आदबे दुआ

مسمّٰی بہ احکام الرّجاء فی احکام الدعاء

यानी कुरआन करीम और हदीस शरीफ़
में दुआ के जो तरीके और आदाब तालीम
फ़रमाए गए हैं उन पर मुकम्मल और जामेअ।

किताब "अहकामे दुआ" से इंतिख़ाब और तरतीबे जदीद के साथ (इदारा)

अहादीस मोतबरा में दुआ के लिए मुफ़स्सला ज़ैल आदाब की तालीम फ़रमाई गई है, जिनको मलहूज़ रख कर दुआ करना बिला शुब्हा कलीदे कामियाबी है, लेकिन अगर कोई शख़्स किसी वक़्त उन तमाम या बाज़ आदाब को जमा न कर सके तो ये नहीं चाहिए कि दुआ ही को छोड़ दे, बल्कि दुआ हर हाल में मुफ़ीद ही मुफ़ीद है और हर हाल में हक़ तआला से क़बूल की उम्मीद है।

ये आदाब मुख़्तलिफ़ अहादीस में वारिद हुए हैं, पूरी हदीस नक़्ल करने मे रिसाला तवील होता है इसलिए सिर्फ़ ख़ुलासए मज़मून और उस किताब के हवाले पर इक्तिफ़ा किया जाता है जिसमें ये हदीस सनद के साथ मौजूद है।

अदब (1) खाने पीने, पहनने और कमाने में हराम से बचना (रवाहु मुस्लिम व तिर्मिज़ी अन अबी हुरैरा (रज़ि.))

अदब (2) इख़्लास के साथ दुआ करना यानी दिल से ये समझना कि सिवाए अल्लाह तआला के कोई हमारा मक़सद पूरा नहीं कर सकता। (अलहाकिम फ़िलमुस्तदरक)

अदब (3) दुआ से पहले कोई नेक काम करना और बवक़्ते दुआ उसका इस तरह ज़िक्र करना कि या अल्लाह मैंने आपकी रज़ा के लिए फ़लाँ अमल किया है, आप उसकी बरकत से मेरा फ़लाँ काम कर दीजिए।

(मुस्लिम, तिर्मिज़ी, अबूदाऊद)

अदब (4) पाक व साफ़ होकर दुआ करना।

(सुनने अरबआ, इब्ने हब्बान, मुस्तदरक हाकिम)

अदब (5) वुज़ू करना। (सिहाहेसित्ता अन अबी मूसा अलअशअरी)

अदब (6) दुआ के वक़्त क़िब्ला रू होना। (सिहाहेसित्ता अन अब्दुल्लाह इब्ने ज़ैद बिन आसिम (रज़ि.)

अदब (7) दोज़ानू होकर बैठना। (अबूअवाना सअद बिन वक़ास रज़ि.)

अदब (8) दुआ के औवल व आख़िर में अल्लाह तआला की हम्द व सना करना। (सिहाहेसित्ता अन अनस रज़ि.)

अदब (9) इसी तरह औवल व आख़िर में नबी करीम (स.अ.व.) पर दुरूद भेजना। (अबूदाऊद, तिर्मिज़ी, नसई, इब्ने हब्बान, मुस्तदरक)

अदब (10) दुआ के लिए दोनों हाथ फैलाना।

(तिर्मिज़ी, तुस्तदरक, हाकिम)

अदब (11) दोनों हाथों को मोंढों के बराबर उठाना।

(अबूदाऊद, मुसनद अहमद, हाकिम)

अदब (12) अदब व तवाज़ोअ के साथ बैठना।

(मुस्लिम अबूदाऊद, तिर्मिज़ी, नसई)

अदब (13) अपनी मुहताजी और आजिज़ी को ज़िक्र करो। (तिर्मिज़ी)

अदब (14) दुआ के वक़्त आसमान की तरफ़ नज़र न उठाना। (मुस्लिम)

अदब (15) अल्लाह तआला के असमाए हुसना और सिफ़ाते आलिया ज़िक्र कर के दुआ करना। (इब्न हब्बान, मुस्तदरक) असमाए हुसना आख़िरे रिसाला में लिख दिए गए हैं, वहाँ देख लिया जाए।

अदब (16) अलफ़ाज़े दुआ में क़ाफ़िया बंदी के तकल्लुफ़ से बचना। (बुख़ारी)

अदब (17) दुआ अगर नज़्म में हो तो गाने की सूरत से बचना। (हिस्न यरमुज़ मासूफ़)

अदब (18) दुआ के वक़्त अंबिया अलैहिमुस्सलाम और दूसरे मक़बूल व सालेह बंदों के साथ तवस्सुल करना यानी ये कहना कि या अल्लाह इन बुज़ुर्गों के तुफ़ैल से मेरी दुआ क़बूल फ़रमा। (बुख़ारी, बज़्ज़ार हाकिम)

अदब (19) दुआ में आवाज़ पस्त करना।

(सिहाहेसित्ता अ़न अबी मूसा रज़ि.)

अदब (20) उन दुआवों के साथ दुआ करना जो आँ हज़रत (स.अ.व.) से मनकूल हैं, क्योंकि आप ने दीन व दुनिया की कोई हाजत छोड़ी नहीं जिसकी दुआ तालीम न फ़रमाई हो। (अबूदाऊद, नसई, अ़नअबी बकरतुस्सक़फ़ी)

अदब (21) ऐसी दुआ करना जो अक्सर हाजाते दीनी व दुनयवी को हावी व शामिल हो। (अबूदाऊद)

अदब (22) दुआ में औवल अपने लिए दुआ करना

और फिर अपने वालिदैन और दूसरे मुसलमान भाईयों को शरीक करना। (मुस्लिम)

अदब (23) अगर इमाम हो तो तन्हा अपने लिए दुआ न करे बल्कि सब शोरकाए जमाअत को दुआ में शरीक करले। (अबूदाऊद, तिर्मिज़ी, इब्न माजा)

रिवायत: अबूदाऊद में है कि जो इमाम अपने नफ़्स को दुआ में ख़ास करे उसने क़ौम से ख़्यानत की। मुराद ये है कि नमाज़ के अन्दर इमाम ऐसी दुआ न माँगे जो सिर्फ़ उसकी ज़ात के साथ मख़्सूस हो, मसलन ये कहे कि "اللّٰهم اشف ابنی" यानी ऐ अल्लाह मेरे बेटे को शिफ़ा दे या "ارجع الیّ ضالّتی" यानी मेरी गुमशुदा चीज़ को वापस दे दे बल्कि ऐसी दुआ मांगे जो सब मुक़्तदियों को शामिल हो सके जैसे "اللّٰهم اغفرلی[1] وارحمنی" वग़ैरा...........

"هذا ما افاده شیخنا حکیم الامة حضرت مولانا اشرف علی دامت برکاتهم و لشراح الحدیث فیه مقالات یا باها نسق الحدیث والله اعلم۔

अदब (24) अज़्म के साथ दुआ करे (यानी यूँ न कहे कि या अल्लाह अगर तू चाहे तो मेरा काम पूरा कर दे। (सिहाहेसित्ता)

अदब (25) रग़बत व शौक़ के साथ दुआ करे। (इब्न हब्बान, अबूअवाना अन अबी हुरैरा रज़ि.)

अदब (26) जिस क़दर मुमकिन हो हुज़ूरे क़ल्ब की कोशिश करे और क़बूले दुआ की उम्मीद क़वी रखे। (मुस्तदरक हाकिम)

---

(1) इसमें सेग़ा मुफ़रद होने की वजह से शुब्हा न किया जावे क्योंकि सेग़ा मुफ़रद में भी जमाअत की नीयत की जा सकती है।

अदब (27) दुआ में तकरार करना यानी बार बार दुआ करना (बुख़ारी, मुस्लिम) और कम से कम मरतबा तकरार का तीन मरतबा है। (अबूदाऊद, इब्नुस्सुन्नी)

(फ़) एक ही मजलिस में तीन मरतबा दुआ को मुकर्रर करे या तीन मजलिसों में तकरार, दोनों तरह तकरारे दुआ सादिक़[1] है।

अदब (28) दुआ में इलहाह व इसरार करे।

(नसई, हाकिम, अबूअवाना)

अदब (29) किसी गुनाह या क़तअ रहमी की दुआ न करे। (मुस्लिम, तिर्मिज़ी)

अदब (30) ऐसी चीज़ की दुआ न करे जो तय हो चुकी है (मसलन औरत ये दुआ न करे कि मैं मर्द हो जाऊँ, या तवील आदमी ये दुआ न करे कि पस्त क़द हो जाऊँ। (नसई)

अदब (31) किसी मुहाल चीज़ की दुआ न करे। (बुख़ारी)

अदब (32) अल्लाह तआला की रहमत को सिर्फ़ अपने लिए मख़सूस करने की दुआ न करे।

(बुख़ारी, अबूदाऊद, नसई, इब्न माजा)

अदब (33) अपनी सब हाजात सिर्फ़ अल्लाह तआला से तलब करे। (मख़लूक़ पर भरोसा न करे)।

(तिर्मिज़ी, इब्न हब्बान)

अदब (34) दुआ करने वाला भी आख़िर में आमीन

---

(1) लेकिन ये तकरार इंफ़िरादन हो जमाअत के साथ दुआए सानिया और सालिसा जो बाज़ बिलाद में राइज है उसका सुबूत सहाबा व ताबईन और सलफ़ से नहीं है उसका इल्तिज़ाम बिदअत है।

कहे और सुनने वाला भी।

(बुख़ारी, मुस्लिम, अबूदाऊद, नसई)

अदब (35) दुआ के बाद दोनों हाथ अपने चेहरे पर फेरे। (अबूदाऊद, तिर्मिज़ी, इब्न हब्बान, इब्न माजा)

अदब (36) मक़बूलियते दुआ में जल्दी न करे यानी ये न कहे कि मैंने दुआ की थी अबतक क़बूल क्यों नहीं हुई। (बुख़ारी, मुस्लिम, अबूदाऊद, नसई, इब्न माजा)

औक़ाते इजाबत

(यानी दुआ क़बूल होने के ख़ास वक़्त)

शुरू रिसाला में बहवाला हदीस बतलाया गया है कि दुआ हर वक़्त क़बूल हो सकती है और हर वक़्त मक़बूलियत की तवक़्क़ो है, मगर जो औक़ात इस जगह लिखे जाते हैं उनमें मक़बूल हो जाने की तवक़्क़ो बहुत ज़्यादा है, इसलिए उन औक़ात को ज़ाए न करना चाहिए।

शबे क़द्रः रमज़ानुलमुबारक के अशरए अख़ीरा की ताक़ रातें यानी 21, 23, 25, 27, 29 और उनमें भी सब से ज़्यादा सत्ताईसवीं रात क़ाबिले एहतेमाम है।

(तिर्मिज़ी, नसई, इब्न माज, मुस्तदरक)

यौमे अरफ़ाः यौमे अरफ़ा भी मक़बूलियते दुआ के लिए निहायत मुबारक व मख़सूस दिन है। (तिर्मिज़ी)

रमज़ानुलमुबारकः रमज़ान के तमाम दिन और रात बरकात व ख़ैरात के साथ मख़सूस हैं, सब में दुआ क़बूल की जाती है। (बज़्ज़ार अन उबादा इब्न सामित रज़ि.)

शबे जुमाः शबे जुमा भी निहायत मुबारक और

मक़बूलियते दुआ के लिए मख़सूस है।

(तिर्मिज़ी, हाकिम, अन इब्न अब्बास रज़ि.)

रोज़ जुमाः (अबूदाऊद, नसई, इब्न माजा, इब्न हब्बान, हाकिम)।

हर रातः हर रात में ये औक़ात क़ुबूलियते दुआ के लिए मख़सूस हैं: इब्तिदाई तिहाई रात (अहमद, अबू यअ़ला) आख़िरी तिहाई रात (मुस्नदे अहमद) आधी रात (तिबरानी) सहर का वक़्त (सिहाहेसित्ता)।

साअ़ते जुमाः अहादीसे सहीहहा में है कि जुमा के रोज़ एक घड़ी ऐसी आती है कि उसमें जो दुआ की जावे क़बूल होती है, मगर उस घड़ी के तअ़ैयुन में रिवायात और अक़वाले उलमा मुख़्तलिफ़ हैं और मुहक़्क़िक़ीन के नज़्दीक फ़ैसला ये है कि ये घड़ी जुमा के दिन दाएर साएर रहती है। कभी किसी वक़्त में आती है, मगर तमाम औक़ात में से ज़्यादा रिवायात और अक़वाले सहाबा (रज़ि.) व ताबईन (रह.) वग़ैरहुम से दो वक़्तों को तरजीह साबित होती है:

औव्वल जिस वक़्त से इमाम ख़ुतबा के लिए बैठे नमाज़ से फ़ारिग़ होने तक।

(मुस्लिम, अन अबी मूसा अलअशअरी रज़ि. व नववी)

(फ़) मगर दरमियाने ख़ुतबा में दुआ ज़बान से न करें कि ममनूअ़ है, बल्कि दिल दिल में दुआ माँगे, या ख़ुतबा में जो दुआएँ ख़तीब करता है उन पर दिल में आमीन कहता जावे। और दूसरा वक़्त अस्र के वक़्त ग़ुरूबे आफ़ताब तक है। (तिर्मिज़ी, अहमद, अन अब्दुल्लाह इब्न सलाम रज़ि. व तिर्मिज़ी वग़ैरा)

(फ) इसलिए साहबे हाजत को चाहिए कि दोनों वक़्तों को दुआ में मशगूल रखे कि इतनी बड़ी नेअमत के मुक़ाबला में दोनों वक़्त थोड़ी देर रहना कोई मुश्किल चीज़ नहीं फ़क़त वल्लाहु सुब्हानहू व तआला अअ़लमु।

मक़बूलियते दुआ के ख़ास हालात

जिस तरह मख़सूस औक़ात मक़बूलियते दुआ में असर रखते हैं उसी तरह इंसान के बाज़ हालात को भी हक़ तआला ने मक़बूलियते दुआ के लिए मख़सूस फ़रमाया जिनमें कोई दुआ रद नहीं की जाती, वह हालात ये हैं:

- अज़ान के वक़्त। (अबूदाऊद, मुस्तदरक)
- अज़ान व इक़ामत के दरमियान।
  (अबूदाऊद, तिर्मिज़ी, नसई, इब्न माजा)
- हैया अलस्सलाह हैया अल्लफ़लाह के बाद, उस शख़्स के लिए जो किसी मुसीबत में गिरफ़्तार हो उस वक़्त दुआ करना बहुत मुजर्रब व मुफ़ीद है (मुस्तदरक)
- जिहाद में सफ़ बाँधने के वक़्त।
  (इब्न हब्बान, तिबरानी, मुअत्ता)
- जिहाद में घमसान लड़ाई के वक़्त। (अबू दाऊद)
- फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद। (तिर्मिज़ी, नसई)
- सज्दा की हालत में। (मुस्लिम, अबूदाऊद, नसई) मगर फ़राइज़ में नहीं।
- तिलावते क़ुरआन के बाद। (तिर्मिज़ी) और बिलख़ुसूस ख़त्मे क़ुरआन के बाद (तिबरानी, अबूयअ़ली) और बिलख़ुसूस पढ़ने वाले की दुआ बनिस्बत सुनने वालों

के ज़्यादा मकबूल है। (तिर्मिज़ी, तिबरानी)

○ आबे ज़मज़म पीने के वक़्त। (मुस्तदरक, हाकिम)

○ मैयत के पास हाज़िर होते वक़्त, यानी जो शख़्स नज़्अ की हालत में हो उसके पास आने के वक़्त भी दुआ क़बूल होती है। (मुस्लिम व सुनने अरबआ)

○ मुर्ग़ के आवाज़ करने के वक़्त।

(बुख़ारी, मुस्लिम, तिर्मिज़ी, नसइ)

○ मुसलमानों के इजतिमा के वक़्त।

(सिहाहेसित्ता अन अतफ़ीयतुल अनसारीया)

○ मजालिस ज़िक्र में। (बुख़ारी, मुस्लिम, तिर्मिज़ी)

○ इमाम के वलज़्ज़ाल्लीन कहने के वक़्त।

(मुस्लिम, अबूदाऊद, नसई, इब्न माजा)

(फ़) बज़ाहिर इमाम जज़री की मुराद इससे वह हदीस है जो अबूदाऊद ने बाबुत्तशह्हुद में ज़िक्र की है "واذاقرأ غير المغضوب عليهم ولا الضالين فقولوا آمين. يحييكم الله تعالىٰ" यानी इमाम वलज़्ज़ाल्लीन कहे तो तुम आमीन कहो, हक़ तआला तुम्हारी दुआ क़बूल फ़रमाएँगे। इससे मालूम हुआ कि उस मौक़ा पर दुआ से मुराद सिर्फ़ आमीन कहना है, दूसरी दुआएँ मुराद नहीं। (और आमीन भी आहिस्ता से दिल में कहना बेहतर है)

○ इक़ामते नमाज़ के वक़्त। (तिबरानी इब्न मरदूया)

○ बारिश के वक़्त। (अबूदाऊद, तिबरानी, इब्न मरदूया अन सहल इब्न सअदुस्साअदी) इमाम शाफ़ई (रह.) किताबुलउम में फ़रमाते हैं कि मैंने बहुत से सहाबा व ताबईन का ये अमल सुना है कि बारिश के वक़्त ख़ुसूसियत से दुआ माँगते थे।

○ बैतुल्लाह पर नज़र पड़ने के वक़्त। (तिर्मिज़ी व तिबरानी)

○ सूरए इनआम की आयते करीमा: "وَإِذَا جَآءَتْهُمْ اٰيَةٌ قَالُوْا لَنْ نُّؤْمِنَ حَتّٰى نُؤْتٰى مِثْلَ مَآ اُوْتِىَ رُسُلُ اللّٰهِ اَللّٰهُ اَعْلَمُ حَيْثُ يَجْعَلُ رِسَالَتَهٗ" में दोनों इस्मुल्लाह के दरमियान जो दुआ की जाए वह भी मक़बूल होती है। इमाम जज़री (रह.) फ़रमाते हैं हम ने इसका बारहा तजरबा किया है और बहुत से उलमा से इसका मुजर्रब होना मनकूल है।

मकानाते इजाबत

(यानी दुआ क़बूल होने की ख़ास जगहें)

तमाम मक़ामाते मुतबर्रका में मक़बूलियते दुआ की ज़्यादा उम्मीद है, और हज़रत हसन बसरी (रज़ि.) ने अह्ले मक्का की तरफ़ एक ख़त में तहरीर फ़रमाया कि मक्का मुकर्रमा में पन्द्रह जगह दुआ की मक़बूलियत मुजर्रब है। (1) तवाफ़ में और (2) मुलतज़म के पास (यानी दरवाज़ए बैतुल्लाह और हजरे असवद के दरमियान जो जगह है उसमें और (3) मीज़ाबे रहमत यानी बैतुल्लाह शरीफ़ के परनाला के नीचे, और (4) बैतुल्लाह के अन्दर और (5) चाह ज़मज़म के पास और (6) सफ़ा व (7) मरवा पहाड़ों के ऊपर और (8) सई करने के मैदान में (जो सफ़ा व मरवा के दरमियान है) और (9) मक़ाम इब्राहीम के पीछे और (10) अरफ़ात में और (11) मुज़दलिफ़ा में और (12) मिना में और तीनों जमरात के पास (जमरात वह तीन पत्थर हैं जो मिना में नसब किए हुए हैं जिन पर हुज्जाज

कंकरियाँ मारते हैं) इमाम जज़री (रह.) फ़रमाते हैं कि अगर सरवरे आलम (स.अ.व.) के हुज़ूर में (यानी रौज़ए अक़दस के पास दुआ क़बूल न होगी तो कहाँ होगी)

वह लोग जिनकी दुआ ज़्यादा क़बूल होती है

○ मुज़तरः यानी मुसीबत ज़दा की दुआ बहुत जल्द क़बूल हाती है। (बुख़ारी, मुस्लिम, अबूदाऊद)

○ मज़लूमः अगरचे फ़ासिक़ व फ़ाजिर हो, उसकी दुआ भी क़बूल होती है। (मुस्नदे अहमद, बज़्ज़ार इब्न अबी शैबा) बल्कि अगर मज़लूम काफ़िर भी हो तो उसकी भी दुआ रद नहीं होती। (मुस्नदे अहमद इब्न हब्बान)

○ वालिद की दुआः औलाद के लिए (अबूदाऊद, तिर्मिज़ी, इब्न माजा)

○ आदिल बादशाह की दुआ भी मक़बूल होती है (तिर्मिज़ी, इब्न माजा, इब्न हब्बान)

○ नेक आदमी की दुआ मक़बूल है (बुख़ारी, मुस्लिम, इब्न माजा)

○ औलाद जो वालिदैन की फ़रमाँबरदार हो उसकी भी दुआ क़बूल होती है (मुस्लिम)

○ मुसाफ़िर की दुआ भी मक़बूल है (अबूदाऊद, इब्न माज, बज़्ज़ार)

○ रोज़ादार की दुआ रोज़ा इफ़्तार करने के वक़्त (तिर्मिज़ी, इब्न माजा, इब्न हब्बान)

○ ग़ाएबाना दुआ एक मुसलमान की दुसरे मुसलमान के लिए भी मक़बूल है (मुस्लिम, अबूदाऊद, इब्न अबी शैबा)

○ हुज्जाज की दुआ जब तक वह वतन में वापस आवें। (जामेअ अबू मन्सूर)

हदीसे सहीहह में है कि तमाम परेशानी और मुश्किलात के वक़्त रसूले करीम (स.अ.व.) दुआए कुनूत नाज़िला पढा करते थे। फज्र की नमाज़ की दुसरी रकअत में रुकूअ के बाद इमाम बुलंद आवाज से ये दुआ पढे और नमाज़ी आमीन कहेंगे। इस दुआ के लिए तकबीर न हो और न हाथ उठाए जाएँ। दुआ के बाद तकबीर कह कर इमाम के साथ नमाज़ी सज्दा में जाएँ, ये दुआ हिस्ने हसीन शरीफ़ और सारी कुतुबे हदीस में भी है, अह्ले इल्म से भी मालूम हो सकती है। (बंदा मुहम्मद शफ़ीअ अफ़ल्लाहु अन्हो, फ़ी यौमे आशूरा 1381 हिजरी)

"اللّٰهم تقبل دعواتنا وامن روعاتنا واقل عن عشراتنا
واٰخر دعوانا ان الحمد للّٰه رب العٰلمين "

(अहकाम व फ़ज़ाइले दुआ)

حُكْمُ الإِقْسَاطِ فِي حِيْلَةِ الإِسْقَاط

मैयत की नमाज, रोज़ा, हज और ज़कात और मरने के बाद दूसरे हुकूक़ के अदा करने का शरई तरीक़ा!

हीलए इस्क़ात की शरई हैसियत

بسم الله الرحمٰن الرحيم

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ وَكَفٰى وَسَلَامٌ عَلٰى عِبَادِهِ الَّذِيْنَ اصْطَفٰى

मैयत की फ़ौत नमाज़, रोज़ा, हज, ज़कात और दूसरे वाजिबात व फ़राइज़ की अदाएगी या कफ़्फ़ारा किस तरह

किया जा सकता है, जिससे वह गुनाह से सुबुकदोश हो जाए, इसका ब्यान कुतुबे फ़िक्ह में तफ़सील के साथ मौजूद है, जिसका कुछ खुलासा फ़ाएदए अवाम के लिए इस रिसाला के आख़िर में लिख दिया जाएगा।

लेकिन आज कल बहुत से शहरों और देहात में लोगों ने एक रस्म निकाली है जिसको "दौर" या "इस्क़ात" कहते हैं, और जाहिलों को ये बतलाया जाता है कि इस रस्म के ज़रीए तमाम उम्र की नमाज़, रोज़ों और ज़कात व हज और तमाम फ़राइज़ व वाजिबात से सुबुकदोशी हो जाती है और रस्म को ऐसी सख़्त पाबंदी के साथ किया जाता है जैसे तजहीज़ व तकफ़ीन का कोई अहम फ़र्ज़ हो जो कोई नहीं करता उसको तरह तरह के ताने देते हैं।

बिला शुब्हा फ़िक्ह के कलाम में दौर व इस्क़ात की सूरतें मज़कूर हैं, लेकिन वह जिन शराइत के साथ मज़कूर हैं, अवाम न उन शराइत को जानते हैं, न उनकी कोई रिआयत की जाती है, बल्कि फ़ौत शुदा फ़राइज़ व वाजिबात से मुतअल्लिक़ा तमाम अहकामे शरईया को नज़र अंदाज़ कर के इस रस्म को तमाम फ़राइज़ व वाजिबात से सुबुकदोशी का एक आसान नुस्ख़ा बना लिया गया है जो चंद पैसों में हासिल हो जाता है, फिर किसी को क्या ज़रूरत रही कि उम्र भर नमाज़ रोज़ा की मेहनत उठाए।

इस मस्अला के मुतअल्लिक़ कुछ अरसा हुआ कि एक सवाल मख़दूम हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद हसन साहब दामत बरकातुहुम जामिआ अशरफ़ीया लाहौर के पास आया है, आप ने जवाब लिखने के लिए मेरे सिपुर्द फ़रमाया, ये जवाब किसी क़द्र मुफ़स्सल और काफ़ी हो गया,

इसलिए कि रस्म में इब्तिलाए आ़म के पेश नज़र मुनासिब मालूम हुआ कि उसको बसूरते रिसाला शाए कर दिया जाए, खुदा करे कि ये मुसलमानों को जाहिलाना रुसूम से बचाने में मुफ़ीद साबित हो। "والله الموفق والمعين"

अलइस्तिफ़्ता

क्या फ़रमाते हैं उलमाए दीन व मुफ़्तियाने शरए मतीन अन्दर ईं मस्अला कि हमारे एलाक़े में एक हीला मरौवज है जिसकी हक़ीक़त ये है कि जनाज़ा के बाद कुछ लोग दाएरा बनाते हैं, मैयत के वारिस एक कुरआन शरीफ़ और उसके साथ कुछ नक़द बाँधते हैं, और दाएरा में लाते हैं, इमामे मस्जिद जो दाएरा में होता है वह लेता है, और ये अलफ़ाज़ उस पर पढ़ता है:

"كل حق من حقوق الله من الفرائض والواجبات والكفارات والمنذورات بعضها اديت و بعضها لم تؤد الأن عاجز عن ادائها واعطيتك هذه المنحة الشريفة على هذه النقودات في حيلة الاسقاط رجاءً من الله تعالى ان يغفرله"

और एक दूसरे की मिल्क करता है, तीन दफ़ा उसको फेरा जाता है, बादहु निस्फ़ इमाम को और निस्फ़ गुरबा को तक़्सीम किया जाता है, ज़ैद एक इमामे मस्जिद है, उसने इस मरौवजा हीला को छोड़ दिया है और कहता है कि इस मरौवजा हीला का सुबूत अदिल्लए शरईया से कोई नहीं, लिहाज़ा ये बात बिदअ़त है। ज़ैद के तर्क पर ज़ैद को लोग मलामत करते हैं, और ज़ैद के बावजूद हनफ़ी मज़हब होने के उसको वहाबी कहते हैं और इस

हीला के जवाज़ पर आबा व अजदाद की दलील लाते हैं, क्या ज़ैद हक़ पर है या बातिल पर, इस मरौवजा हीला का क्या हुक्म है, ज़ैद इस रिवाज और इस इलतिज़ाम व इसरार को ख़त्म करने का शरअन हक़दार और मुसैयिब होगा या नहीं। नीज़ बाज़ सूरतों में मुशतरक तर्का में से रुपये लाया जाता है, जिसमें बाज़ वारिस मौजूद नहीं होते, नीज़ बाज़ दफ़ा यतीम बच्चे रह जाते हैं, क्या ये माल हीला में लाया जा सकता है या नहीं और दाएरा वाले ले सकते हैं या नहीं? "بینوا بالدلائل الشرعیة"

अल-जवाब

हीलए इस्क़ात या दौर बाज़ फ़ुक़हाए किराम ने ऐसे शख़्स के लिए तजवीज़ फ़रमाया था जिसके कुछ नमाज़ रोज़े वग़ैरा इत्तिफ़ाक़न फ़ौत हो गए, क़ज़ा करने का मौक़ा नहीं मिला, और मौत के वक़्त वसीयत की, लेकिन उसके तर्का में इतना माल नहीं जिससे तमाम फ़ौत शुदा नमाज़ रोज़ा वग़ैरा का फ़िदया अदा किया जा सके, ये नहीं कि उसके तर्का में माल मौदूज हो उसको तो वारिस बाँट खाएँ, और थोड़े से पैसे लेकर ये हीला हवाला कर के खुदा व ख़ल्क़ को फ़रेब दें, दुर्रेमुख़्तार, शामी वग़ैरा कुतुबे फ़िक़्ह में इसकी तसरीह मौजूद है, और साथ ही इस हीला की शराइत में उसकी तसरीहात वाज़ेह तौर पर फ़रमाई हैं कि जो रक़म किसी को सदक़ा के तौर पर दी जाए उसको उस रक़म का हक़ीक़ी तौर पर मालिक व मुख़्तार बना दिया जाए कि जो चाहे करे, ऐसा न हो कि

एक साथ एक हाथ से दूसरे के हाथ में देने का महज़ एक खेल किया जाए, जैसा उमूमन आज कल इस हीला में किया जाता है, कि न देने वाले का ये क़स्द होता है कि जिसको वह दे रहे हैं वह सहीह माना में उसका मालिक व मुख़्तार है और न लेने वाले को ये तसव्वुर व ख्याल हो सकता है कि जो रक़म मेरे हाथ में दी गई है मैं उसका मालिक व मुख़्तार हूँ।

दो तीन आदमी बैठते हैं और एक रक़म को बाहमी हेरा फेरी का एक टोटका सा कर के उठ जाते हैं और समझते है कि हम ने मैयत का हक़ अदा कर दिया, और वह तमाम ज़िम्मादारियों से सुबुकदोश हो गया, हालांकि इस लग़्व हरकत से मैयत को न तो कोई सवाब पहुंचा, न उसके फराइज़ का कफ़्फ़ारा अदा हुआ, करने वाले मुफ़्त में गुनाहगार हुए।

रसाइले इब्न आब्दीन में इस मस्अला पर एक मुस्तकिल रिसाला मिन्नतुलजलील के नाम से शामिल है उसमें तहरीर है:

ويجب الاحترازمن ان يديرها اجنبي الابوكالة كماذكرنا وان يكون الوصي اوالوارث كما علمت، ويجب الاحتراز من ان يلاحظ الوصي عند دفع الصرة للفقير الهزل اوالحيلة بل يجب ان يدفعها عازما على تمليكها منه حقيقة لا تخيلا ملاحظا ان الفقير اذا ابى عن هبتها الى الوصي كان له ذلك ولا يجبر على الهبة (منة الجليل فی اسقاط ما على الذمة من كثيرٍ وقليل۔ جزو رسائل ابن عابدين جلد-١، صفحه-٢٢٥)

अलग़रज़ इस हीला की इब्तिदाई बुनयाद मुमकिन है कि कुछ सहीह और क़वाएदे शरईया के मुताबिक़ हो लेकिन जिस तरह का रिवाज और इलतिज़ाम आज कल चल

गया है, वह बिलाशुब्हा नाजाइज़ और बहुत से मफ़ासिद पर मुशतमल क़ाबिले तर्क है, चंद मफ़ासिद इजमाली तौर पर लिखे जाते हैं:

(1) बहुत मवाकेअ में इसके लिए जो कुरआन मजीद और नक़द रखा जाता है वह मैयत के मुतरूका माल में से होता है और उसके हक़दार वारिस बाज़ मौजूद नहीं होते या नाबालिग़ होते हैं तो उनके मुशतरका सरमाया को बग़ैर उनकी इजाज़त के इस काम में इस्तेमाल करना हराम है, हदीस में है "لا يحل مال امرء مسلم الا بطيب نفس منه" और नाबालिग़ तो अगर इजाज़त भी दे दे तो वह शरअन मोतबर है, और वली ना बालिग़ को ऐसे तबर्रुआत में उसकी तरफ़ से इजाज़त देने का इख़्तियार नहीं बल्कि ऐसे काम में उस माल को ख़र्च करना हराम है कुरआन शरीफ़ की आयते करीमा "ان الذين ياكلون اموال اليتمٰى ظلما انما ياكلون فى بطونهم نارا" (तरजुमा) "जो लोग यतीमों के माल जुलमन ख़र्च करते हैं वह अपने पेट में आग भरते हैं।" से साबित है कि ऐसे माल का देना और लेना दोनों हराम हैं।

(2) अगर बिलफ़र्ज़ माल मुशतरक न हो या सब वारिस बालिग़ हों, और सब से इजाज़त भी ली जावे तो तजरबा शाहिद है कि ऐसे हालात में ये मालूम करना आसान नहीं होता कि उन सब ने बतीबे ख़ातिर इजाज़त दी है या बिरादरी और कुम्बा के तानों के ख़ौफ़ से इजाज़त दी है, और इस क़िस्म की इजाज़त हसब तसरीहे हदीसे मज़कूर कलअदम है।

(3) और अगर बिलफ़र्ज़ ये सब बातें भी न हों सब

बालिग़ वरसा ने बिल्कुल ख़ुशदिली के साथ इजाज़त दे दी हो या किसी एक ही शख़्स वारिस या ग़ैर वारिस ने अपनी मिल्क ख़ास से उसका इंतिज़ाम किया है तो मफ़ासिदे जैल से वह भी ख़ाली नहीं। मसलन उस हीला की फ़िक़्ही सूरत ये हो सकती है कि जिस शख़्स को औवल ये कुरआन और नक़द दिया जाता है उसकी मिल्क कर दिया जाए और पूरी वज़ाहत से उसको बतला दिया जाए कि अब तुम मालिक व मुख़्तार हो जो चाहो करो, फिर वह अपनी ख़ुशी से बिला किसी रस्मी दबाव या लिहाज़ व मरौवत के मैयत की तरफ़ से किसी दूसरे शख़्स को उसी तरह दे दे और मालिक बना दे और फिर वह शख़्स उसी तरह किसी तीसरे चौथे को दे दे लेकिन मरौवजा रस्म में इसका कोई लिहाज़ नहीं होता, औवल तो जिस को दिया जाता है, न देने वाला य समझता है कि उसकी मिल्क हो गया, और वह उस में मुख़्तार है न लेने वाले को उसका कोई ख़तरा पैदा होता है, जिसकी खुली अलामत ये है कि अगर ये शख़्स उस वक़्त ये नक़द लेकर चल दे और दूसरे को न दे तो देने वाले हज़रात हरगिज़ उसको बरदाश्त न करें, और ज़ाहिर है इस सूरत में तमलीक सहीह नहीं होती, और बिदूने तमलीक के कोई क़ज़ा या कफ़्फ़ारा या फ़िदया मआफ़ नहीं होता, इसीलिए ये हरकत बेकार हो जाती है।

(4) मज़कूरा सूरत में ये भी ज़रूरी है कि जिस शख़्स को मालिक बनाया जाए वह मसरफ़े सदक़ा हो, साहबे निसाब न हो, मगर आम तौर पर इसका कोई लिहाज़ नहीं रख जाता, उमूमन अइम्मए मसाजिद जो साहबे

निसाब होते हैं, उन्ही के ज़रीए ये काम किया जाता है इसलिए भी ये सारा कारोबार लग़्व व ग़लत हो जाता है, मैयत को इससे कोई फ़ाएदा नहीं पहुंचता।

(5) और अगर बिलफ़र्ज़ मसरफ़े सदक़ा का भी सहीह इंतिख़ाब कर लिया जाए और उनको पूरा मस्अला भी मालूम हो कि वह क़ब्ज़ा करने के बाद अपने आप को मालिक व मुख़्तार समझे फिर मैयत की ख़ैर ख़्वाही के पेशे नज़र वह दूसरे को और इसी तरह दूसरा तीसरे चौथे को देता चला जाए तो आख़िर में वह जिस शख़्स के पास पहुंचता है वह उसका मालिक व मुख़्तार है, उससे वापस लेकर आधा इमाम को आधा दूसरे फुक़रा को तक़्सीम करना मिल्क ग़ैर में बिला उसकी इजाज़त के तसर्रुफ़ करना है, जो ज़ुल्म और हराम है, हसबे तसरीहे हदीस मज़कूर।

(6) और बिलफ़र्ज़ ये आख़िरी शख़्स उसकी तक़्सीम और हिस्से बख़रे लगाने पर आमादा भी हो जाए और फ़र्ज़ करो कि उसमें दबाव से नहीं दिल से ही राज़ी हो जाए तो फिर भी इस तरह के हीले का हर मैयत के लिए इलतिज़ाम करना और जैसे तजहीज़ व तकफ़ीन जैसे वाजिबात शरईया हैं, उस तरह उसी दरजा में उसको एतेक़ादन ज़रूरी समझना या अमलन ज़रूरी के दरजा में इलतिज़ाम करना यही "احداث فی الدین" है, जिसको इसत्तिलाहे शरीअत में बिदअत कहते हैं, और जो अपनी हैसियत से शरीअत में तरमीम व इज़ाफ़ा है "نعوذ باللہ"

नीज़ इस हीला के इलतिज़ाम से अवामुन्नास और जुहला की ये जुरअत भी बढ़ सकती है कि तमाम उम्र भी

न नमाज़ पढ़ें, न रोज़ा रखें न हज करें न ज़कात दें, मरने के बाद चंद पैसों के ख़र्च से ये सारे मफ़ाद हासिल हो जाएँगे, जो सारे दीन की बुनियाद मुनहदिम कर देने के मुतरादिफ़ है, अल्लाह तआला हम सब मुसलमानों को दीन के सहीह रास्ता पर चलने और सुन्नते रसूल (स.अ.व.) के इत्तिबा की तौफ़ीक अता फरमाए।

मज़कूरुस्सद्र इजमाली मफ़ासिद को देख कर भी ये फ़ैसला कर लेना किसी मुसलमान के लिए दुश्वार नहीं कि ये हीले हवाले और उसकी मरौवजा रुसूम सब नावाकिफ़ीयत पर मबनी हैं मैयत को इससे कोई फ़ाएदा नहीं, और करने वाले बहुत से गुनाहों में मुब्तला हो जाते हैं, "واللہ سبحانہ و تعالیٰ اعلم"

बंदा मुहम्मद शफ़ी अफ़ल्लाहु अन्हु
7 रबीउल औवल 1370 हिजरी

मसाइले फ़िदयए नमाज़ व रोज़ा वग़ैरा

मस्अला जिस शख़्स ने नमाज़ रोज़ा या हज ज़कात वग़ैरा की कोई वसीयत की तो ये वसीयत उसके तर्का के सिर्फ़ एक तिहाई हिस्सा में जारी करना वारिसों पर लाज़िम होगा, एक तिहाई तर्का से जाएद की वसीयत हो तो वह सब वारिसों की इजाज़त व रजामंदी पर मौक़ूफ़ है, अगर वह सब या उनमें कोई इजाज़त न दे तो मुशतरका तर्का से वसीयत पूरी नहीं की जा सकती, और अगर वारिसों में कोई नाबालिग़ है तो उसकी इजाज़त भी मोतबर नहीं, उसके हिस्सा पर एक तिहाई से जाएद की वसीयत

का कोई असर न पड़ना चाहिए। (हिदाया आलमगीरी, शामी वग़ैरा) मस्अला जिस शख़्स ने वसीयत की हो और माल भी इतना छोड़ा हो कि उसके एक तिहाई में सारी वसीयतें पूरी हो सकें तो वसी और वारिसों के ज़िम्मा वाजिब है कि उस वसीयत को पूरा करें, उसमें कोताही करें या, मैयत का माल मौजूद होते हुए उसके नमाज़ रोज़ा के फ़िदया में हीला हवाला पर एतेमाद कर के माल को खुद तक़्सीम कर लें तो गुनाह उनके ज़िम्मा रहेगा। मस्अला वसीयत करने की सूरत में वाजिबात व फ़राइज़ की अदाएगी की ये सूरत होगी:

(1) हर रोज़ की नमाज़ें वित्र समेत छः लगाई जाएँगी और हर नमाज़ का फ़िदया पौने दो सेर गंदुम या उसकी क़ीमत होगी, यानी एक दिन की नमाज़ों का फ़िदया साढ़े दस सेर गंदुम या उसकी क़ीमत होगी।

(2) हर रोज़ा का फ़िदया पौने दो सेर गंदुम या उसकी क़ीमत होगी, रमज़ान के रोज़ों के अलवा अगर कोई नज़्र (मिन्नत) मानी हुई है तो उसका भी फ़िदया देना होगा।

(3) ज़कात जितने साल की और जितनी मिक़्दार माल की रही है उसका हिसाब कर के अदा करना होगा।

(4) हज फ़र्ज़ अगर अदा नहीं कर सका तो मैयत के मकान से किसी को हज्जे बदल के लिए भेजा जाएगा और उसका पूरा किराया वग़ैरा और तमाम मसारिफ़े ज़रूरिया अदा करने होंगे।

(5) किसी इंसान का क़र्ज़ है तो उसको हक़ के मुताबिक़ अदा करना होगा।

(6) जितने सदक़तुलफ़ित्र रहे हों हर एक के पौने दो सेर गंदुम या उसकी क़ीमत अदा की जाए।

(7) क़ुर्बानी कोई रह गई हो तो उस साल में एक बकरे या एक हिस्सा गाए की क़ीमत का अंदाज़ा कर के सदक़ा किया जाए। (मिन्नतुलजलील)

(8) सज्दए तिलाव रह गए हों तो एहतियात इसमें है कि हर सज्दा के बदले पौने दो सेर गंदुम या उसकी क़ीमत का सदक़ा किया जाए।

(9) अगर फ़ौत शुदा नमाज़ या रोज़ों की सहीह तादाद मालूम न हो तो तख़मीना से हिसाब किया जाएगा।

ये सब अहकाम उस सूरत के हैं जिसमें मरने वाले ने वसीयत कर दी हो और बक़द्र वसीयत माल छोड़ा हो। और अगर वसीयत ही नहीं की या अदाए वसीयत के मुताबिक़ काफ़ी तर्का नहीं है तो वारिसों पर उसके फ़राइज़ व वाजिबात का फ़िदया अदा करना लाज़िम नहीं, हाँ वह अपनी ख़ुशी से हमदर्दी करना चाहें तो मूजिबे सवाब है।

बंदा मुहम्मद शफ़ी अफ़ाउल्लाहु अन्हु
मुहर्रमुलहराम (कराची)
अलजवाब सहीहुन, अबूअहमद अज़ीज़ुद्दीन
ख़तीब जामा मस्जिद, रावलपिंडी
अलजवाब सवाबुन, मुहम्मद हसन
ख़ादिम जामिआ अशरफ़ीया (लाहौर)
अलजवाब सहीहुन, ख़ैर मुहम्मद जालंधरी
ख़ैरुलमदारिस (मुलतान शहर)
ये रस्म निहायत क़बीह और वाजिबे तर्क है।

बंदा एहतिशामुलहक थानवी
لله در المجيب اتى بتحقيق عجيب
मुहम्मद ज़ियाउल हक
मदरसा अशरफ़ीया (लाहौर)
(हीलए इस्क़ात)

ज़मीमा

क़ौमा और जल्सा की कोताहियाँ

आम तौर पर नमाज़ में चार जगहों पर हम से कोताही होती है:

एक रुकूअ में, दूसरे सज्दे में, तीसरे क़ौमा में, चौथे जल्सा में, जहाँ तक रुकूअ और सज्दा का तअल्लुक है, वह तो किसी न किसी तरह हम अदा कर ही लेते हैं, अगरचे अक्सर सुन्नत के मुताबिक़ नहीं करते, लेकिन "क़ौमा" और "जलसा" में बहुत ज़्यादा कोताही पाई जाती है।

रुकूअ और सज्दा फ़र्ज़ है और क़ौमा और जलसा वाजिब हैं। रुकूअ से सीधा खड़ा होने को क़ौमा कहते हैं और दोनों सज्दे के दरमियान बैठने को जल्सा कहते हैं, क़ौमा का हुक्म ये है कि जब हम रुकूअ कर के खड़े हों, तो बिल्कुल सीधे खड़े हो जाएँ, उसके बाद सज्दे में जाएँ, जल्सा में हुक्म ये है कि पहला सज्दा अदा करने के बाद कमर सीधी कर के इत्मीनान से बैठ जाएँ। फिर दूसरे सज्दा में जाएँ।

लेकिन आप हज़रात ने देखा होगा कि बाज़ लोग

जल्दी की वजह से इन दोनों जगहों पर अपनी कमर सीधी नहीं होने देते, रुकूअ़ से ज़रा सा सर उठाएँगे और अभी कमर आधी सीधी और आधी टेढ़ी होगी, बस फ़ौरन उसी वक़्त सज्दा में चले जाएँगे, इसी तरह एक सज्दा कर के जब बैठेंगे, तो अभी पूरी तरह बैठने भी नहीं पाएँगे, और कमर भी सीधी नहीं होगी कि फ़ौरन दूसरे सज्दे में चले जाएँगे। इस जल्द बाज़ी ने क़ौमा को ख़राब कर दिया और जल्सा को भी ख़राब कर दिया है।

याद रखें! क़ौमा में कमर को मालूमी सा सीधा कर के ज़रा सी गर्दन उठा कर और खड़े होने का सिर्फ़ हलका सा इशारा कर के सज्दे में चले जाने से नमाज़ फ़ासिद हो जाती है, और नमाज़ को लौटाना वाजिब हो जाती है, इसलिए सख़्ती के साथ इससे परहेज़ करें और उसकी तफ़सील समझें।

क़ौमा और जल्सा में तीन दरजात

क़ौमा के अन्दर तीन दर्जे हैं और जल्सा के अन्दर भी तीन दर्जे हैं, एक दर्जा फ़र्ज़ का है, एक दर्जा वाजिब का है, और एक दर्जा सुन्नत का है। (मआ़रिफ़ुस्सुनन)

और फ़र्ज़ का हुक्म ये है कि अगर वह छूट जाए तो नमाज़ नहीं होती। जैसे रुकूअ़ छोड़ने और सज्दा छोड़ने से नमाज़ नहीं होती, इसलिए कि फ़र्ज़ छूट रहा है, और फ़र्ज़ की तलाफ़ी सज्दए सह्व करने से भी नहीं हो सकती, लिहाज़ा अगर फ़र्ज़ अदा नहीं किया तो सिरे से नमाज़ ही नहीं होगी, दोबारा पढ़नी पड़ेगी।

वाजिब का हुक्म ये है कि अगर वह भूल से छूट जाए तो सज्दए सह्व करने से नमाज़ दुरुस्त हो जाएगी, और अगर जान बूझ कर वाजिब छोड़ दिया तो नमाज़ नहीं होगी, दोबारा पढ़नी होगी।

और सुन्नत का हुक्म ये है कि अगर उसको अदा करे तो वह बाइसे अज्र व सवाब है, बल्कि सुन्नत पर अमल करने से अमल के अन्दर नूरानियत पैदा हो जाती है, मक़बूलियत और महबूबियत पैदा हो जाती है, और सरकारे दोआलम (स.अ.व.) की हैअत और आप का नमूना और आपके फ़ेल की नक़्ल की बदौलत वह अमल भी अल्लाह तआ़ला के यहाँ पास हो जाता है, और अगर सुन्नत अदा नहीं की, सिर्फ़ फ़र्ज़ व वाजिब अदा कर लिए तो यही कहा जाएगा कि नमाज़ हो गई।

अब क़ौमा के तीन दरजात की तफ़सील सुनिए:

क़ौमा का फ़र्ज़ दर्जा: जब नमाज़ी रुकूअ़ से खड़ा होता है तो अपने जिस्म को सीधा करने के लिए जिस्म के ऊपर वाले हिस्से को हरकत देता है, जिस जगह पर जा कर वह हरकत ख़त्म हो जाए और नमाज़ी का जिस्म बिल्कुल सीधा हो जाए, तो बस फ़र्ज़ अदा हो गया, इसी तरह जब पहला सज्दा कर के आप सीधे बैठ गए, और जहाँ जाकर ये हरकत ख़त्म हो जाए और नमाज़ी बिल्कुल सीधा बैठ जाए तो बस फ़र्ज़ अदा हो गया। लिहाज़ा अगर किसी शख़्स ने अभी अपनी कमर सीधी ही नहीं की थी और उसकी अभी ये हरकत ख़त्म नहीं हुई थी कि फ़ौरन दूसरे सज्दे में चला गया या रुकूअ़ से अभी सीधा न हुआ था कि सज्दा में चला गया तो इस सूरत में

क़ौमा और जल्सा का फ़र्ज़ अदा नहीं हुआ और जब फ़र्ज़ अदा न हुआ तो नमाज़ भी नहीं होगी।

क़ौमा का वाजिब दर्जाः दूसरा दर्जा वाजिब है, वह ये कि रुकूअ़ से उठने के बाद इतनी देर खड़े रहें, जितनी देर में एक मरतबा अल्लाहुअकबर या सुब्हानल्लाह कह सकें, इतनी मिक़्दार सीधा खड़े रहना वाजिब है, इसी तरह जल्सा में भी एक सज्दए करने के बाद इतनी देर बैठना वाजिब है जितनी देर में एक मरतबा सुब्हानल्लाह कह सकें। अगर किसी ने इसमें कोताही की, और एक सज्दा अदा करने के बाद फ़ौरन ही दूसरा सज्दा कर लिया, और एक तस्बीह की मिक़्दार भी नहीं बैठा, या क़ौमा के अन्दर एक तस्बीह की मिक़्दार के बराबर खड़े रहने के बजाए फ़ौरन सज्दा में चला गया, तो इस सूरत में वाजिब दर्जा छोड़ दिया अगर जान बूझ कर छोड़ दिया या मस्अला मालूम न होने की वजह से ऐसा किया हो तो चूंकि अहकामे शरीअ़त में जिहालत मोतबर नहीं इसलिए दोनों सूरतों में उसको नमाज़ दोबारा लौटानी पड़ेगी, अलबत्ता अगर भूल कर एक तस्बीह की मिक़्दार के बराबर न क़ौमा किया और न जलसा किया तो ऐसी सूरत में सज्दए सह्व करना ज़रूरी है, सज्दए सह्व करने से नमाज़ दुरुस्त हो जाएगी। अगर सज्दए सह्व नहीं किया तो नमाज़ दोबारा पढ़ना ज़रूरी है। उसका इआ़दा वाजिब है।

नमाज़ में ठहराव और सुकून ज़रूरी हैः इसलिए मेरे अज़ीज़! हम लोगों से आम तौर पर क़ौमा का वाजिब दर्जा छूट जाता है, और इस तरफ़ तवज्जोह नहीं रहती,

न मर्दों को तवज्जोह रहती है और न ख़्वातीन को तवज्जोह रहती है, ज़रा भी कोई उजलत का काम सामने आता है तो हम इतनी तेज़ी से नमाज़ अदा कर लेते हैं कि उसमें क़ौमा और जल्सा बराए नाम ही होता है, और इसमें इस बात का ख़तरा रहता है कि कहीं वाजिब दर्जा न छूट गया हो, बल्कि बाज़ औक़ात दर्जए फ़र्ज़ भी छूट जाता हो तो कुछ बईद नहीं, लिहाज़ा ये ज़रूरी है कि हमारी इंफ़िरादी नमाज़ में इमाम के साथ पढ़ी जाने वाली नमाज़ से भी ज़्यादा ठहराव हो। लेकिन मआमला बिल्कुल उलटा है, इमाम के पीछे तो हमें मजबूरन इत्मीनान के साथ नमाज़ पढ़नी पड़ती है, लेकिन इंफ़िरादी नमाज़ को अपने मामूल के मुताबिक़ निहायत जल्दबाज़ी के साथ अदा करते हैं हालांकि होना ये चाहिए कि हमारी इंफ़िरादी नमाज़ इमाम के साथ पढ़ी जाने वाली नमाज़ से ज़्यादा सुकून व इत्मीनान और वक़ार के साथ अदा हो।

रुकूअ, सज्दा , क़ौमा और जल्सा का बराबर होना

एक हदीस में है कि सरकारे दो आलम (स.अ.व.) का रुकूअ, सज्दा क़ौमा और जल्सा तक़रीबन सब बराबर होते थे, लिहाज़ा जितना वक़्फ़ा रुकूअ और सज्दा में होता था, उतना ही वक़्फ़ा क़ौमा और जल्सा में होता था, अलबत्ता क़याम और क़अदा तवील होता था, इसलिए कि क़याम के अन्दर तिलावत होती थी, और क़अदा के अन्दर तशह्हुद पढ़ना होता था, इसलिए ये दोनों अरकान तो रुकूअ सज्दा के मुक़ाबले में तवील होते थे, लेकिन

बाक़ी चारों अरकान यानी क़ौमा, जल्सा, रुकूअ़ और सज्दा तक़रीबन बराबर होते थे, अलबत्ता कभी कभार किसी रुक्न में इतना तवील वक़्फ़ा भी होता था कि देखने वालों को ये ख़्याल होता था कि कहीं ऐसा तो नहीं है कि हुज़ूरे अक़्दस (स.अ.व.) भूल गए हों या कहीं हुज़ूरे अक़्दस (स.अ.व.) की रूह परवाज़ कर गई हो।

क़ौमा और जल्सा का मसनून दर्जा

इन अहादीस की रौशनी में क़ौमा और जल्सा का जो मसनून दर्जा मालूम होता है वह ये है कि क़ौमा के अन्दर आदमी इतनी देर वक़्फ़ा करे, जितनी देर में तीन मरतबा "सुब्हानल्लाह" कह सके, इसी तरह जल्सा में भी इतनी देर वक़्फ़ा करना मसनून है जितनी देर में तीन मरतबा "सुब्हानल्लाह" कहा सके।

ख़ुलासा ये कि क़ौमा और जल्सा का फ़र्ज़ दर्जा ये है कि रुकूअ़ से उठने के बाद और पहले सज्दा से उठने के बाद आदमी अपनी कमर बिल्कुल सीधी कर ले, और जिस्म की हरकत अपनी जगह पर जा कर ख़त्म हो जाए। ये दर्जा फ़र्ज़ है, और एक तस्बीह के बराबर तवक़्क़ुफ़ करना वाजिब है और तीन तस्बीह के बराबर वक़्फ़ा करना सुन्नत है।

सुन्नत पर अमल की बरकत

और सुन्नत पर अमल करने की ऐसी बरकत है कि

आप जहाँ कहीं किसी फ़र्ज़ व वाजिब वाले अमल में सुन्नत पर अमल करेंगे तो एक तो इस अमल में सहूलत और आसानी होगी, और दूसरे उसके ज़रीए फ़र्ज़ की अदाएगी हो जाएगी और वाजिब की अदाएगी भी हो जाएगी और सब से बड़ी चीज़ जो हासिल होगी वह ये कि:

तेरे महबूब की या रब शबाहत लेके आया हूँ
हकीकत इसको तू कर दे, मैं सूरत लेके आया हूँ

कम अज़ कम हमारी नमाज़ की सूरत तो महबूब (स.अ.व.) की नमाज़ की सी बन जाएगी, और सुन्नत ये है कि कौमा और जल्सा दोनों जगहों पर कम अज़ कम तीन मरतबा "सुब्हानल्लाह" कहने की मिक्दार के बराबर वक्फ़ा करें, इसी वजह से रुकूअ में भी सुन्नत ये है कि कम अज़ कम तीन मरतबा "सुब्हान रब्बियल अज़ीम" कहा जाए, और सज्दा में भी सुन्नत ये है कि कम अज़ कम तीन मरतबा "सुब्हान रब्बियल आला" कहा जाए, इस तरह चारों चीज़ों का वक्फ़ा तक़रीबन बराबर हो गया, और हुज़ूरे अक्दस (स.अ.व.) की इस हदीस के मुताबिक़ हो गया, जिसमें ये फ़रमाया गया है कि हुज़ूरे अक्दस (स.अ.व.) की नमाज़ के ये चारों अरकान तक़रीबन बराबर हुआ करते थे।

सुकून से नमाज़ अदा करने की ताकीद

एक मरतबा हुज़ूरे अक्दस (स.अ.व.) की मस्जिदे नबवी में एक साहब तशरीफ़ लाए उन्होंने आकर जल्दी जल्दी नमाज़ पढ़ी, और नमाज़ से फ़ारिग़ होने के बाद हुज़ूर

(स.अ.व.) की ख़िदमत में हाज़िर हो कर सलाम किया। आँ हज़रत (स.अ.व.) ने सलाम का जवाब देने के बाद फ़रमाया कि: ثم فصل فانک لم تصل

तुम जाकर दोबारा नमाज़ पढ़ो, इसलिए कि तुम ने नमाज़ नहीं पढ़ी।

चुनांचे वह साहब गए और जाकर दोबारा उसी तरह जल्दी जल्दी नमाज़ पढ़ी जैसे पहले पढ़ी थी। नमाज़ के बाद फिर हुज़ूरे अक़्दस (स.अ.व.) की ख़िदमत में हाज़िर हुए और सलाम अर्ज़ किया। आँ हज़रत (स.अ.व.) ने सलाम का जवाब देने के बाद फिर वही फ़रमाया कि:

ثم فصل فانک لم تصل

तुम जाकर दोबारा नमाज़ पढ़ो, इसलिए कि तुम ने नमाज़ नहीं पढ़ी।

वह साहब फिर गए, और उसी तरह जल्दी जल्दी नमाज़ पढ़ी, और फिर आकर हाज़िरे ख़िदमत होकर सलाम किया। आँ हज़रत (स.अ.व.) ने सलाम का जवाब दिया, और फ़रमाया कि दोबारा जाकर नमाज़ पढ़ो, इसलिए कि तुम ने नमाज़ नहीं पढ़ी।

अब उन साहब ने कहा कि या रसूलुल्लाह ! मुझे तो इसी तरह नमाज़ पढ़नी आती है, आप ही इरशाद फ़रमाएँ कि मुझे किस तरह नमाज़ पढ़नी चाहिए? ताकि मैं उस तरीक़े से नमाज़ अदा करूँ।

उसके बाद आँ हज़रत (स.अ.व) ने इरशाद फ़रमाया कि जब तुम नमाज़ के लिए खड़े हो तो इत्मीनान के साथ क़ुरआन करीम की तिलावत करो, क़िराअत करो, उसके बाद इत्मीनान के साथ रुकूअ करो, और फिर जब

क़ौमा करो तो पूरे इत्मीनान और सुकून के साथ खड़े रहो, उसके बाद जब तुम सज्दे में जाओ तो सज्दे में भी तुम पर इत्मीनान और सुकून की कैफ़ियत तारी रहे, और सज्दे के बाद जब तुम जल्सा करो, तो जल्सा में भी तुम पर इत्मीनान और ठहराव की कैफ़ियत बाक़ी रहे, इसी तरह बाक़ी नमाज़ भी ठहर ठहर कर इत्मीनान और सुकून के साथ अंजाम दो। ये आप (स.अ.व) ने उन साहब को तालीम दी।

इस हदीस में भी हुज़ूरे अक़्दस (स.अ.व) ने रुकूअ, सज्दा, क़ौमा और जल्सा को ख़ास तौर पर ज़िक्र फ़रमाया है, ये चारों अरकान भी निहायत इत्मीनान के साथ अदा हों और बाक़ी नमाज़ भी सुकून और इत्मीनान के साथ अंजाम पाए, मगर ज़्यादा तर उजलत इन्हीं चारों अरकान में पाई जाती है।

रुकूअ व सज्दा की तस्बीहात की मिक़्दार

सज्दा और रुकूअ में तो तस्बीह मुक़र्रर है, कि तीन तस्बीह से कम न करें, और ये अदना दर्जा है। इससे ज़्याद भी पढ़ सकते हैं पाँच मरतबा सात मरतबा या नौ मरतबा या ग्यारह मरतबा पढ़ लें और जितना ज़्यादा हो जाए उतना बेहतर है। अलबत्ता दरमियाना दर्जा अफ़ज़ल है, इसलिए कि हुज़ूरे अक़्दस (स.अ.व) का इरशाद है: خیر الامور اوساطها यानी दरमियाना दर्जा बेहतर है। लिहाज़ा अदना दर्जे से ऊपर रहना चाहिए। लिहाज़ा हमारी आम नमाज़ों में रुकूअ और सज्दा की तस्बीह कम अज़ कम

पाँच मरतबा होनी चाहिए।

कौमा की दुआ

कौमा के अन्दर हुज़ूरे अक़्दस (स.अ.व.) से कुछ दुआएँ मनकूल हैं। वह दुआएँ याद कर लेनी चाहिएँ इसलिए कि एक तरफ़ तो वह हुज़ूरे अक़्दस (स.अ.व.) की माँगी हुई दुआएँ हैं, वह सरकारी दुआएँ हैं। अल्लाह तआला ने वह दुआएँ हुज़ूरे अक़्दस (स.अ.व.) पर इल्का फ़रमाईं, और उनके ज़रीए हुज़ूर (स.अ.व.) ने अल्लाह तआला से माँगा और अल्लाह तआला ने अ़ता फ़रमा दिया। इसी तरह जो उम्मती भी उनको पढ़ कर अल्लाह तआला से माँगेगा, तो अल्लाह तआला उसको भी (इंशा अल्लाह तआला) नवाज़ देंगे, कौमा के अन्दर एक दुआ बहुत ही आसान है, जिसका वाक़िआ बड़ा अजीब व ग़रीब है।

फ़रिश्तों का झपटना

वह ये कि एक मरतबा नबीए अकरम (स.अ.व.) सहाबए किराम को नमाज़ पढ़ा रहे थे, नमाज़ के दौरान जब आप (स.अ.व.) ने कौमा के अन्दर "سمع الله لمن حمده" कहा तो एक सहाबी (रज़ि.) ने उनके पीछे "ربنا لك الحمد" कहने के बाद "حمدًا كثيرًا طيبًا مباركًا فيه" के कलिमात भी कहे, जब हुज़ूरे अक़्दस (स.अ.व.) नमाज़ से फ़ारिग़ हुए तो आप (स.अ.व.) ने सहाबए किराम (रज़ि.) से पूछा कि कौमा के अन्दर ये कलिमात किस ने कहे

थे? जिन सहाबी (रज़ि.) ने वह कलिमात अदा किए थे, उन्होंने कहा कि हुज़ूर! ये कलिमात मैंने अदा किए थे, हुज़ूर अक़्दस (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि जिस वक़्त तुम ने ये कलिमात अदा किए, उस वक़्त मैंने देखा कि तीस फ़रिश्ते इस कलिमे को लेने के लिए लपके। ताकि सब से पहले वह उस कलिमा को ले कर सवाब लिखीं।

इससे मालूम हुआ कि ये मुबारक कलिमात हैं, और इनके पढ़ने से तीन मरतबा "सुब्हानल्लाह" कहने का वक़्फ़ा भी हासिल हो जाता है, और इनको याद करना भी आसान है। इसलिए इनको याद कर लेना चाहिए। और नमाज़ में क़ौमा के अन्दर इन कलिमात को पढ़ लेना चाहिए: "ربنا لك الحمد حمدًا كثيراً طيباً مباركاً فيه" इनके पढ़ने से दर्जाए फ़र्ज़ भी अदा हो जाए। वाजिब दर्जा भी अदा हो जाएगा और सुन्नत दर्जा भी अदा हो जाएगा। वैसे तो और दुआऐं भी मनकूल हैं लेकिन उनमें से ये दुआ और ये कलिमात बहुत आसान हैं।

दोनों सज्दों के दरमियान की दुआ

और दो सज्दों के दरमियान भी मुख़्तलिफ़ दुआएँ मनकूल हैं, उनमें से एक दुआ बहुत सहल और आसान है, जो हज़रत अली (रज़ि.) से मनकूल है कि जब हज़रत अली (रज़ि.) पहला सज्दा कर के बैठते थे तो उस वक़्त ये पढ़ते थे: اللهم اغفرلی۔ اللهم اغفرلی۔ اللهم اغفرلی۔ ऐ अल्लाह, मुझे बख़्श दीजिए। ऐ अल्लाह, मेरी मग़फ़िरत फ़रमा दीजिए। ये कलिमात तीन मरतबा पढ़ लें, और

तीन मरतबा पढ़ने में जलसा का फ़र्ज़ दर्जा भी अदा हो जाएगा, वाजिब दर्जा भी अदा हो जाएगा, और सुन्नत दर्जा भी अदा हो जाएगा, और अगर हो सके तो वह दुआ भी पढ़ लें जो अबूदाऊद शरीफ़ में मनकूल है कि हुज़ूरे अक़्दस (स.अ.व.) दो सज्दों के दरमियान ये दुआ पढ़ा करते थे:

"اللهم اغفرلی وارحمنی وعافنی واهدنی وارزقنی"

ऐ अल्लाह! मेरी बख़शिश फ़रमा। ऐ अल्लाह! मुझ पर रहम फ़रमा, ऐ अल्लाह! मुझे आफ़ियत अता फ़रमा और हिदायत अता फ़रमा और मुझे रोज़ी अता फ़रमा, यानी रिज़्के जिस्मानी भी अता फ़रमा, और रिज़्के रूहानी भी अता फ़रमा।

ये कलिमात कितने प्यारे और कितने आसान हैं, और दुनिया व आख़िरत की तमाम भलाईयाँ इसमें जमा हो गई हैं।

दूसरी रिवायात में और भी कलिमात हैं। लेकिन ये कलिमात आसान तरीन हैं। और अगर याद न हों तो "اللهم اغفرلی" तो सब को याद होगा। लिहाज़ा आज ही तमाम ख़्वातीन व हज़रात इस बात का तहैया कर लें कि जब वह नमाज़ में क़ौमा करें तो क़ौमा में "حمداً كثيراً طيباً مباركاً فيه" पढ़ा करें, और जब पहला सज्दा कर के बैठेंगे तो तीन मरतबा "اللهم اغفرلی" कहेंगे या "اللهم اغفرلی وارحمنی وعافنی واهدنی وارزقنی" पढ़ेंगे। ख़ुलासा ये कि हमें अपनी इंफ़िरादी नमाज़ों में इन दुआवों के पढ़ने को मामूल बना लेना चाहिए, इनको पढ़ना अगरचे सुन्नते ग़ैर मुअक्कदा है, मगर हमें तो हुज़ूरे अक़्दस (स.अ.व.) की इत्तिबा में इन दुआवों को अंजाम देना है, और इमाम चूंकि हलकी

नमाज़ पढ़ाने का पाबंद है क्योंकि इमाम के पीछे हर किस्म के मुक़्तदी होते हैं, कोई बीमार होता है, कोई कमज़ोर है कोई ज़रूरत मंद है, और इन दुआवों के पढ़ने की वजह से नमाज़ तवील हो सकती है, इसलिए अगर इमाम इन दुआवों को न पढ़े तो उसमें कोई हरज नहीं, लेकिन जब हम अपनी नमाज़ इंफ़िरादी (तन्हा) पढ़ें, चाहे वह फ़र्ज़ नमाज़ हो या वाजिब, सुन्नत हो या नफ़्ल, सब में इन दुआवों को पढ़ सकते हैं।

(माख़ूज़ अज़ नमाज़ की कोताहियाँ। अज़ मौलाना अब्दुर्रउफ़ सखरवी)

नमाज़ में जिन चीज़ों का ख़्याल रखना चाहिए

ये बातें याद रखिए, और इन पर अमल का इत्मीनान कर लीजिए:

(1) आप का रुख़ क़िब्ले की तरफ़ होना ज़रूरी है।

(2) आपको सीधा खड़ा होना चाहिए, और आपकी नज़र सज्दे की जगह पर होनी चाहिए, गर्दन को झुका कर ठोड़ी सीने से लगा लेना भी मक्रूह है, और बिला वजह सीने को झुका कर खड़ा होना भी दुरुस्त नहीं, इस तरह सीधे खड़े हों कि नज़र सज्दे की जगह पर रहे।

(3) आपके पाँव की उंगलियों का रुख़ भी क़िब्ले की जानिब रहे, और दोनों पाँव सीधे क़िब्ला रुख़ रहें। (पाँव को दाएँ बाएँ तिरछा रखना ख़िलाफ़े सुन्नत है) दोनों पाँव क़िब्ला रुख़ होने चाहिएँ।

(4) दोनों पाँव के दरमियान कम अज़ कम चार उंगल

का फ़ासिला होना चाहिए।

(5) अगर जमाअत से नमाज़ पढ़ रहे हैं तो आपकी सफ़ सीधी रहे, सफ़ सीधी करने का बेहतरीन तरीक़ा ये है कि हर शख़्स अपनी दोनों ऐड़ियों के आख़िरी सिरे सफ़ या उसके निशान के आख़िरी किनारे पर रख ले।

(6) जमाअत की सूरत में इस बात का भी इत्मीनान कर लें कि दाएँ बाएँ खड़े होने वालों को बाजुवों के साथ आपके बाज़ू मिले हुए हैं और बीच में कोई ख़ला नहीं है।

(7) पाजामे को टख़ने से नीचे लटकाना हर हालत में नाजाइज़ है, ज़ाहिर है कि नमाज़ में उसकी शनाअ़त और बढ़ जाती है, लिहाज़ा इसका इत्मीनान कर लें कि पाजामा टख़ने से ऊँचा है।

(8) हाथ की आसतीनें पूरी तरह ढकी हुई होनी चाहिएँ, सिर्फ़ हाथ खुले रहें, बाज़ लोग आस्तीनें चढ़ा कर नमाज़ पढ़ते हैं, ये तरीक़ा दुरुस्त नहीं है।

(9) ऐसे कपड़े पहन कर नमाज़ पढ़ना मकरूह है जिन्हें पहन कर इनसान लोगों के सामने न जाता हो।

(10) दिल में नीयत कर लें कि मैं फ़लाँ नमाज़ पढ़ रहा हूँ, जबान से नीयत के अलफ़ाज कहना जरूरी नहीं।

(11) हाथ कानों तक इस तरह उठाएँ कि हथेलियों का रुख़ किब्ले की तरफ़ हो, और अंगूठों के सिरे कान की लौ से या तो बिल्कुल मिल जाएँ या उसके बराबर आ जाएँ और बाक़ी उंगलियाँ ऊपर की तरफ़ सीधी हों, बाज़ लोग हथेलियों का रुख़ क़िब्ले की तरफ़ करने के बजाए कानों की तरफ़ कर लेते हैं। बाज़ लोग कानों को

हाथों से बिल्कुल ढक लेते हैं। बाज लोग हाथ पूरी तरह कानों तक उठाए बग़ैर हलका सा इशारा कर देते हैं। बाज़ लोग कान की लौ को हाथों से पकड़ लेते हैं। ये सब तरीक़े ग़लत और ख़िलाफ़े सुन्नत हैं इनको छोड़ना चाहिए।

(12) मज़कूरा बाला तरीक़े पर हाथ उठाते वक़्त अल्लाहुअकबर कहें, फिर दाएँ हाथ के अंगूठे और छोटी उंगली से बाएँ हाथ के पहुंचे के गिर्द हलक़ा बना कर उसे पकड़ लें और बाक़ी तीन उंगलियों को बाएँ हाथ की पुश्त पर इस तरह फैला दें कि तीनों उंगलियों का रुख़ कुहनी की तरफ़ रहे।

(13) दोनों हाथों को नाफ़ से ज़रा सा नीचे रख कर मज़कूरा बाला तरीक़े से बाँध लें।

(14) बग़ैर किसी ज़रूरत के जिस्म के किसी हिस्से को हरकत न दें, जितने सुकून के साथ खड़े हों, उतना बेहतर है। अगर खुजली वग़ैरा की ज़रूरत हो तो सिर्फ़ एक हाथ इस्तेमाल करें, और वह भी सिर्फ़ सख़्त ज़रूरत के वक़्त और कम से कम।

(15) जिस्म का सारा ज़ोर एक पाँव पर दे कर दूसरे पाँव को इस तरह ढीला छोड़ देना कि उसमें ख़म आ जाए नमाज़ के अदब के ख़िलाफ़ है। इससे परहेज़ करें, या तो दोनों पाँव पर बराबर ज़ोर दें, या एक पाँव पर ज़ोर दें तो इस तरह कि दूसरे पाँव में ख़म पैदा न हो।

(16) जमाई आने लगे तो उसको रोकने की पूरी कोशिश करें।

(17) खड़े होने की हालत में नज़रें सज्दे की जगह पर रखें, इधर उधर या सामने देखने से परहेज़ करें।

(18) रुकूअ़ से खड़े होते वक़्त इतने सीधे हो जाएँ कि जिस्म में कोई ख़म बाक़ी न रहे।

(19) इस हालत में भी नज़र सज्दे की जगह पर रहनी चाहिए।

(20) बाज़ लोग खड़े होते वक़्त खड़े होने के बजाए खड़े होने का सिर्फ़ इशारा करते हैं, और जिस्म के झुकाव की हालत ही में सज्दे के लिए चले जाते हैं, उनके ज़िम्मे नमाज़ को लौटाना वाजिब हो जाता है। लिहाज़ा इससे सख़्ती के साथ परहेज़ करें, जब तक सीधे होने का इत्मीनान न हो जाए सज्दे में न जाएँ।

(21) एक सज्दे से उठ कर इत्मीनान से दोज़ानू सीधे बैठ जाएँ, फिर दूसरा सज्दा करें। ज़रा सा सर उठा कर सीधे हुए बग़ैर दूसरा सज्दा कर लेना गुनाह है, और इस तरह करने से नमाज़ का लौटाना वाजिब हो जाता है।

माख़ूज़ "नमाज़ें सुन्नत के मुताबिक़ पढ़िये।" मुसन्नफ़ा हज़रत मौलाना मुहम्मद तक़ी साहब उस्मानी मद्दाज़िल्लहू।

जनाज़े की नमाज़ के मसाइल

नमाज़े जनाज़ा दरहक़ीक़त उस मैयत के लिए दुआ है "ارحم الراحمين" से।

मस्अला: नमाज़े जनाज़ा के वाजिब होने की वही सब शर्तें हैं जो और नमाज़ों के लिए हैं। हाँ उसमें एक शर्त और ज़्यादा है वह ये कि उस शख़्स की मौत का इल्म भी हो, पस जिसको ये ख़बर न होगी वह माज़ूर है नमाज़े जनाज़ा उस पर ज़रूरी नहीं।

मस्अला: नमाज़े जनाज़ा के सहीह होने के लिए दो क़िस्म की शर्तें हैं। एक क़िस्म की वह शर्तें हैं जो नमाज़ पढ़ने वालों से तअल्लुक़ रखती हैं वह वही हैं जो और नमाज़ों के लिए ब्यान हो चुकीं, यानी तहारत, सत्रे औरत, इस्तिक़बाले क़िब्ला, नीयत। हाँ वक़्त उसके लिए शर्त नहीं और उसके लिए तयम्मुम नमाज़ न मिलने के ख़्याल से जाइज़ है। मसलन नमाज़े जनाज़ा हो रही हो और वुज़ू करने में ये ख़्याल हो कि नमाज़ ख़त्म हो जाएगी तो तयम्मुम कर ले बख़िलाफ़ और नमाज़ों के कि उनमें अगर वक़्त के चले जाने का ख़ौफ़ हो तो तयम्मुम जाइज़ नहीं।

मस्अला: आज कल बाज़ आदमी जनाज़े की नमाज़ जूता पहने हुए पढ़ते हैं उनके लिए ये अम्र ज़रूरी है कि वह जगह जिस पर खड़े हुए हों और जूते दोनों पाक हों और अगर जूता पैर से निकाल दिया जाए और उस पर खड़े हों तो सिर्फ़ जूते का पाक होना ज़रूरी है। (यानी जूता का ऊपर से पाक होना ज़रूरी है ख़्वाह तला नीचे का हिस्सा नापाक हो)। अक्सर लोग इसका ख़्याल नहीं करते और उनकी नमाज़ नहीं होती। दूसरी क़िस्म की वह शर्तें हैं जिनका मैयत से तअल्लुक़ है वह छः हैं। शर्तः (1) मैयत का मुसलमान होना, पस काफ़िर और मुरतद की नमाज़ सहीह नहीं, मुसलमाना अगरचे फ़ासिक़ या बिदअ़ती हो उसकी नमाज़ सहीह है, सो उन लोगों के जो बादशाहे बरहक़ से बग़ावत करें या डाका ज़नी करते हों, बशर्तेकि ये लोग बादशाहे वक़्त से लड़ाई की हालत में मक़्तूल हों और अगर बाद लड़ाई के या अपनी मौत से मर जाएँ तो फिर उनकी नमाज़ पढ़ी जाएगी। इसी तरह

जिस शख़्स ने अपने बाप या माँ को क़त्ल किया हो और उसकी सज़ा में वह मारा जाए तो उसकी नमाज़ भी न पढ़ी जाएगी और उन लोगों की नमाज़ ज़जरन नहीं पढ़ी जाती। और जिस शख़्स ने अपनी जान ख़ुदकशी कर के दी हो उस पर नमाज़ पढ़ना, सहीह ये है कि दुरुस्त है।

मस्अला: जिस (नाबालिग़) लड़के का बाप या माँ मुसलमान हो वह लड़का मुसलमान समझा जाएगा और उसकी नमाज़ पढ़ी जाएगी।

मस्अला: मैयत से मुराद वह शख़्स है जो ज़िन्दा पैदा हो कर मर गया हो, और अगर मरा हुआ बच्चा पैदा हो तो उसकी नमाज़ दुरुस्त नहीं। शर्त (2) मैयत के बदन और कफ़न का नजासते हक़ीक़िया और हुकमिया से ताहिर होना। हाँ अगर नजासते हक़ीक़िया उसके बदन से (बाद गुस्ल) ख़ारिज हुई हो और उस सबब से उसका बदन बिल्कुल नजिस हो जाए तो कुछ मुज़ाएक़ा नहीं नमाज़ दुरुस्त है।

मस्अला: अगर कोई मैयत नजासते हुकमिया से ताहिर न हो यानी उसको गुस्ल न दिया गया हो या दर सूरत नामुमकिन होने गुस्ल के, तयम्मुम न कराया गया हो उसकी नमाज़ दुरुस्त नहीं, हाँ अगर उसका ताहिर होना मुमकिन न हो मसलन बेगुस्ल या तयम्मुम कराए हुए दफ़्न कर चुके हों और क़ब्र पर मिट्टी भी पड़ चुकी हो तो फिर उसकी नमाज़ उसकी क़ब्र पर उसी हालत में पढ़ना जाइज़ है। अगर किसी मैयत पर बेगुस्ल या तयम्मुम कर के नमाज़ पढ़ी गई हो और वह दफ़्न कर दिया गया हो और बाद दफ़्न के इल्म हो कि उसको गुस्ल न दिया

गया था तो उसकी नमाज़ दोबारा उसकी क़ब्र पर पढ़ी जाए, इसलिए कि पहली नमाज़ सहीह नहीं हुई। हाँ अब चूंकि गुस्ल मुमकिन नहीं है लिहाज़ा नमाज़ हो जाएगी।

मस्अलाः अगर कोई मुसलमान बेनमाज़ पढ़े हुए दफ़्न कर दिया गया हो तो उसकी नमाज़ उसकी क़ब्र पर पढ़ी जाए जब तक कि उसकी नाश के फट जाने का अंदेशा न हो। जब ये ख़्याल हो कि अब नाश फट गई होगी तो फिर नमाज़ न पढ़ी जाए और नाश फटने की मुद्दत हर जगह के एतेबार से मुख़्तलिफ़ है। उसकी तअयीन नहीं हो सकती, यही असह है। और बाज़ ने तीन दिन और बाज़ ने दस दिन और बाज़ ने एक माह मुद्दत ब्यान की है।

मस्अलाः मैयत जिस जगह रखी हो उस जगह का पाक होना शर्त नहीं। अगर मैयत पाक पलंग या तख़्त पर हो, और अगर पलंग या तख़्त भी नापाक हो या मैयत को बिदूने पलंग व तख़्त के नापाक ज़मीन पर रख दिया जाए तो इस सूरत में इख़्तिलाफ़ है, बाज़ के नज़दीक तहारते मकाने मैयत शर्त है, इसलिए नमाज़ न होगी, और बाज़ के नज़्दीक शर्त नहीं लिहाज़ा नमाज़ सहीह हो जाएगी। शर्त (3) मैयत के जिस्म वाजिबुस्सत्र का पोशीदा होना। अगर मैयत बिल्कुल बरहना हो तो उसकी नमाज़ दुरुस्त नहीं। शर्त (4) मैयत का नमाज़ पढ़ने वाले के आगे होना। अगर मैयत नमाज़ पढ़ने वाले के पीछे हो तो नमाज़ दुरुस्त नहीं। शर्त (5) मैयत का या जिस चीज़ पर मैयत हो उसका ज़मीन पर रखा हुआ होना। अगर मैयत को लोग अपने हाथों पर उठाए हुए हों या किसी गाड़ी या जानवर पर हो और उसी हालत में उसकी नमाज़ पढ़ी जाए तो

सहीह न होगी। शर्त (6) मैयत का वहाँ मौजूद होना अगर मैयत वहाँ न मौजूद हो तो नमाज़ सहीह न होगी।

मस्अला: नमाज़े जनाज़ा में दो चीज़ें फ़र्ज़ हैं। (1) चार मरतबा अल्लाहुअकबर कहना, हर तकबीर यहाँ क़ाइम मक़ाम एक रकअ़त के समझी जाती है। (2) क़याम यानी खड़े होकर नमाज़े जनाज़ा पढ़ना जिस तरह फ़र्ज़ वाजिब नमाज़ों में क़याम फ़र्ज़ है और बेउज़्र के उसका तर्क जाइज़ नहीं। उज़्र का ब्यान (नमाज़ के ब्यान में) ऊपर हो चुका है।

मस्अला: रुकूअ़, सज्दा, क़अ़दा वग़ैरा इस नमाज़ में नहीं।

मस्अला: नमाज़े जनाज़ा में तीन चीज़ें मस्नून हैं। (1) अल्लाह तआ़ला की हम्द करना (2) नबी (स.अ.व.) पर दुरूद पढ़ना (3) मैयत के लिए दुआ करना, जमाअ़त इसमें शर्त नहीं पस अगर एक शख़्स भी जनाज़े की नमाज़ पढ़ ले तो फ़र्ज़ अदा हो जाएगा ख़्वाह वह (नमाज़ पढ़ने वाला) औरत हो या मर्द बालिग़ हो या नाबालिग़।

मस्अला: हाँ यहाँ जमाअ़त की ज़रूरत ज़्यादा है इसलिए कि ये दुआ है मैयत के लिए और चंद मुसलमानों का जमा होकर बारगाहे इलाही में किसी चीज़ के लिए दुआ करना एक अजीब ख़ासियत रखता है नुज़ूले रहमत और कबूलियत के लिए।

मस्अला: नमाज़े जनाज़ा का मसनून व मुस्तहब तरीक़ा ये है कि मैयत को आगे रख कर इमाम उसके सीना के मुक़ाबिल खड़ा हो जाए और सब लोग ये नीयत करें: "نَوَيْتُ اَنْ اُصَلِّيَ صَلٰوةَ الْجَنَازَةِ لِلّٰهِ تَعَالٰى وَدُعَاءً لِلْمَيِّتِ" यानी मैंने ये

इरादा किया कि नमाज़े जनाज़ा पढ़ूँ जो ख़ुदा की नमाज़ है और मैयत के लिए दुआ है। ये नीयत कर के दोनों हाथ मिस्ले तकबीरे तहरीमा के कानों तक उठा कर एक मरतबा "اَللّٰهُ اَكْبَرُ" कह कर दोनों हाथ मिस्ले नमाज़ के बाँध लें फिर "سُبْحَانَكَ اللّٰهُمَّ" आख़िर पढ़ें। उसके बाद फिर एक बार "اَللّٰهُ اَكْبَرُ" कहें मगर इस मरतबा हाथ न उठाएँ बाद इसके दुरूद शरीफ़ पढ़ें और बेहतर ये है कि वही दुरूद पढ़ा जाए जो नमाज़ में पढ़ा जाता है, फिर एक मरतबा "अल्लाहुअकबर" कहें, इस मरतबा भी हाथ न उठाएँ, इस तकबीर के बाद मैयत के लिए दुआ करें। अगर वह बालिग़ हो ख़्वाह मर्द हो या औरत तो ये दुआ पढ़ें:

"اَللّٰهُمَّ اغْفِرْ لِحَيِّنَا وَ مَيِّتِنَا وَ شَاهِدِنَا وَ غَائِبِنَا وَ صَغِيْرِنَا
وَ كَبِيْرِنَا وَ ذَكَرِنَا وَ اُنْثَانَا اَللّٰهُمَّ مَنْ اَحْيَيْتَهٗ مِنَّا فَاَحْيِهٖ
عَلَى الْاِسْلَامِ وَ مَنْ تَوَفَّيْتَهٗ مِنَّا فَتَوَفَّهٗ عَلَى الْاِيْمَانِ"

और बाज़ अहादीस में ये दुआ भी वारिद हुई है:

"اَللّٰهُمَّ اغْفِرْ لَهٗ وَارْحَمْهُ وَعَافِهٖ وَاعْفُ عَنْهُ وَاَكْرِمْ نُزُلَهٗ وَوَسِّعْ مَدْخَلَهٗ
وَاغْسِلْهُ بِالْمَاءِ وَالثَّلْجِ وَالْبَرْدِ وَنَقِّهٖ مِنَ الْخَطَايَا كَمَا يُنَقَّى الثَّوْبُ الْاَبْيَضُ
مِنَ الدَّنَسِ وَاَبْدِلْ لَهٗ دَارًا خَيْرًا مِّنْ دَارِهٖ وَاَهْلًا خَيْرًا مِّنْ اَهْلِهٖ وَزَوْجًا خَيْرًا
مِّنْ زَوْجِهٖ وَاَدْخِلْهُ الْجَنَّةَ وَاَعِذْهُ مِنْ عَذَابِ الْقَبْرِ وَعَذَابِ النَّارِ"

और अगर इन दोनों दुआवों को पढ़ ले तब भी बेहतर है बल्कि अल्लामा शामी (रह.) ने रद्दुलमुहतार में दोनों दुआवों को एक ही मिला कर लिखा है। इन दोनों दुआवों के सिवा और दुआएँ भी अहादीस में आई हैं और उनको हमारे फ़ुक़हा ने भी नक़्ल किया है, जिस दुआ को चाहे इख़्तियार कर ले, और अगर मैयत नाबालिग़ लड़का हो तो ये दुआ पढ़े:

"اَللّٰهُمَّ اجْعَلْهُ لَنَا فَرَطًا وَّاجْعَلْهُ لَنَا اَجْرًا وَّ ذُخْرًا وَّاجْعَلْهُ لَنَا شَافِعًا وَّ مُشَفَّعًا"

और अगर नाबालिग़ लड़की हो तो भी यही दुआ है, सिर्फ़ इतना फ़र्क है कि तीनों "اِجْعَلْهُ" की जगह "اِجْعَلْهَا" और "شَافِعًا وَّ مُشَفَّعًا" की जगह "شَافِعَةً وَّ مُشَفَّعَةً" पढ़ें। जब ये दुआ पढ़ चुकें तो फिर एक मरतबा "अल्लाहुअकबर" कहें और इस मरतबा भी हाथ न उठाऐं और इस तकबीर के बाद सलाम फेर दें जिस तरह नमाज़ में सलाम फेरते हैं। इस नमाज़ में अत्तहीयात और कुरआन मजीद की क़िराअत वग़ैरा नहीं है।

मस्अला: नमजे जनाज़ा इमाम और मुक़्तदी दोनों के हक़ में यक्साँ है सिर्फ़ इस क़दर फ़र्क है कि इमाम तकबीरें और सलाम बुलंद आवाज़ से कहेगा और मुक़्तदी आहिस्ता आवाज़ से। बाक़ी चीज़ें यानी सना और दुरूद और दुआ मुक़्तदी भी आहिस्ता आवाज़ से पढ़ेंगे और इमाम भी आहिस्ता आवाज़ से पढ़ेगा।

मस्अला: जनाज़े की नमाज़ में मुस्तहब है कि हाज़िरीन की तीन सफ़ें कर दी जाएँ यहाँ तक कि अगर सिर्फ़ सात आदमी हों तो एक आदमी उनमें से इमाम बना दिया जाए और पहली सफ़ में तीन आदमी खड़े हों और दूसरी में दो और तीसरी में एक।

मस्अला: जनाज़ा की नमाज़ भी उन चीज़ों से फ़ासिद हो जाती है जिन चीज़ों से दूसरी नमाज़ों में फ़साद आता है। सिर्फ़ इस क़दर फ़र्क है कि जनाज़ा की नमाज़ में क़हक़हा से वुज़ू नहीं जाता और औरत की मुहाज़ात से भी इसमें फ़साद नहीं आता।

मस्अला: जनाज़े की नमाज़ उस मस्जिद में पढ़ना

मकरूहे तहरीमी है जो पंज वक़्ती नमाज़ों या जुमा या ईदैन की नमाज़ के लिए बनाई गई हो, ख़्वाह जनाज़ा मस्जिद के अन्दर हो या मस्जिद से बाहर हो और नमाज़ पढ़ने वाले अन्दर हों। हाँ जो ख़ास जनाज़ा की नमाज़ के लिए बनाई गई हो उसमें मकरूह नहीं।

मस्अला: मैयत की नमाज़ में इस ग़रज़ से ज़्यादा ताख़ीर करना कि जमाअत ज़्यादा हो जाए मकरूह है।

मस्अला: जनाज़े की नमाज़ बैठ कर या सवारी की हालत में पढ़ना जाइज़ नहीं जबकि कोई उज़्र न हो।

मस्अला: अगर एक ही वक़्त में कई जनाज़े जमा हो जाएँ तो बेहतर ये है कि हर जनाज़े की नमाज़ अलाहिदा पढ़ी जाए। और अगर सब जनाज़ों की एक ही नमाज़ पढ़ी जाए तब भी जाइज़ है और उस वक़्त चाहिए कि सब जनाज़ों की सफ़ क़ाइम कर दी जाए जिसकी बेहतर सूरत ये है कि एक जनाज़े के आगे दूसरा जनाज़ा रख दिया जाए कि सब के पैर एक तरफ़ हों और सब के सर एक तरफ़, और ये सूरत इसलिए बेहतर है कि इसमें सब का सीना इमाम के मुक़ाबिल हो जाएगा, जो मसनून है।

मस्अला: अगर जनाज़े मुख़्तलिफ़ असनाफ़ के हों तो इस तरतीब से उनकी सफ़ क़ाइम की जाए कि इमाम के क़रीब मर्दों के जनाज़े, उनके बाद लड़कों के और उनके बाद बालिग़ा औरतों के, उनके बाद नाबालिग़ लड़कियों के।

मस्अला: अगर कोई शख़्स जनाज़ा की नमाज़ में ऐसे वक़्त पहुंचा कि कुछ तकबीरें उसके आने से पहले हो चुकी हों तो जिस क़दर तकबीरें हो चुकी हों उनके एतेबार से वह शख़्स मस्बूक़ समझा जाएगा और उसको चाहिए

कि फ़ौरन आते ही मिस्ल और नमाज़ों के तकबीर तहरीमा कह कर शरीक न हो जाए बल्कि इमाम की तकबीर का इंतिज़ार करे। जब इमाम तकबीर कहे तो उसके साथ ये भी तकबीर कहे और ये तकबीर उसके हक़ में तकबीरे तहरीमा होगी। फिर जब इमाम सलाम फेर दे तो ये शख़्स अपनी गई हुई तकबीरों को अदा कर ले और उसमें कुछ पढ़ने की ज़रूरत नहीं। अगर कोई शख़्स ऐसे वक़्त पहुंचे कि इमाम चौथी तकबीर भी कह चुका हो तो वह शख़्स उस तकबीर के हक़ में मस्बूक़ न समझा जावेगा उसको चाहिए कि फ़ौरन तकबीर कह कर इमाम के सलाम से पहले शरीक हो जाए और नमाज़ ख़त्म करने के बाद अपनी गई हुई तकबीरों को इआदा कर ले।

मस्अला: अगर कोई शख़्स तकबीरे तहरीमा यानी पहली तकबीर या किसी और तकबीर के वक़्त मौजूद था और नमाज़ में शिरकत के लिए मुस्तइद था मगर सुस्ती या और किसी वजह से शरीक न हुआ तो उसको फ़ौरन तकबीर कह कर शरीके नमाज़ हो जाना चाहिए। इमाम की दूसरी तकबीर का उसको इंतिज़ार न करना चाहिए और जिस तकबीर के वक़्त हाज़िर था उस तकबीर का इआदा उसके ज़िम्मे न होगा बशर्तेकि क़ब्ल इसके कि इमाम दूसरी तकबीर कहे। ये उस तकबीर को अदा करे गो इमाम की मईयत न हो।

मस्अला: जनाज़े की नमाज़ का मस्बूक़ जब अपनी गई हुई तकबीरों को अदा करे और ख़ौफ़ हो कि अगर दुआ पढ़ेगा तो देर होगी और जनाज़ा उसके सामने से उठा लिया जावेगा तो दुआ न पढ़े।

मस्अला: जनाज़े की नमाज़ में अगर कोई शख़्स लाहिक़ हो जाए तो उसका वही हु[illegible] है जो और नमाज़ों के लाहिक़ का है।

मस्अला: जनाज़े की नमाज़ में इमामत का इस्तेहक़ाक़ सब से ज़्यादा बादशाहे वक़्त को है, गो तक़्वा और वरअ़ में उससे बेहतर लोग भी वहाँ मौजूद हों। अगर बदशाहे वक़्त वहाँ न हो तो उसका नाइब यानी जो शख़्स उसकी तरफ़ से हाकिमे शहर हो वह मुस्तहिक़्क़े इमामत है गो वरअ़ और तक़्वा में उससे अफ़ज़ल लोग वहाँ मौजूद हों, और वह भी न हो तो क़ाज़ी शहर, वह भी न हो तो उसका नाइब। इन लोगों के होते हुए दूसरे का इमाम बनाना बिला उनकी इजाज़त के जाइज़ नहीं, उन्हीं का इमाम बनाना वाजिब है। अगर इन लोगों में से कोई वहाँ मौजूद न हों तो उस मुहल्ले का इमाम मुस्तहिक़ है बशर्तेकि मैयत के अइज़्ज़ा में कोई शख़्स उससे अफ़ज़ल न हो वरना मैयत के वह अइज़्ज़ा जिनको हक़्क़े विलायत हासिल है, इमामत के मुस्तहिक़ हैं, या वह शख़्स जिसको वह इजाज़त दें। अगर बेइजाज़ते वलीए मैयत के किसी ऐसे शख़्स ने नमाज़ पढ़ा दी हो जिसको इमामत का इस्तेहक़ाक़ नहीं तो वली को इख़्तियार है कि फिर दोबारा नमाज़ पढ़े हत्ता कि अगर मैयत दफ़्न हो चुकी हो तो उसकी क़ब्र पर नमाज़ पढ़ सकता है, ता क़्वतेकि नाश के फट जाने का ख़्याल न हो।

मस्अला: अगर बेइजाज़त वलीए मैयत के किसी ऐसे शख़्स ने नमाज़ पढ़ा दी हो जिसको इमामत का इस्तेहक़ाक़ है तो फिर वलीए मैयत नमाज़ का इआदा नहीं कर सकता।

इसी तरह अगर वलीए मैयत ने बहालत ना मौजूद होने बादशाहे वक़्त वग़ैरा के नमाज़ पढ़ा दी हो तो बादशाहे वक़्त वग़ैरा को इआदा का इख़्तियार नहीं है बल्कि सहीह ये है कि अगर वलीए मैयत बहालते मौजूद होने बादशाहे वक़्त वग़ैरा के नमाज़ पढ़ ले तब भी बादशाहे वक़्त वग़ैरा को इआदा का इख़्तियार न होगा, गो ऐसी हालत में बादशाहे वक़्त के इमाम न बनाने से तर्के वाजिब का गुनाह औलियाए उम्मत पर होगा। हासिल ये कि एक जनाज़ा की नमाज़ कई मरतबा पढ़ना जाइज़ नहीं मगर वलीए मैयत को जबकि बे इजाज़त किसी ग़ैर मुस्तहिक़ ने नमाज़ पढ़ा दी हो दोबारा पढ़ना दुरुस्त है।

(बहिश्ती ज़ेवर हिस्सा–11 अज़–91 ता 96)

मस्अला: अगर जुमा के दिन किसी का इंतिक़ाल हो गया तो अगर जुमा की नमाज़ से पहले कफ़न, नमाज़ और दफ़्न वग़ैरा हो सके तो ज़रूर कर लें, सिर्फ़ इस ख़्याल से जनाज़ा रोके रखना कि जुमा की नमाज़ में मजमा ज़्यादा होगा, मकरूह है।

मस्अला: अगर जनाज़ा उस वक़्त आया जब कि फ़र्ज़ नमाज़ की जमाअत (जुमा या ग़ैर जुमा की) तैयार हो तो पहले फ़र्ज़ और सुन्नतें पढ़ लें, फिर जनाज़ा की नमाज़ पढ़ें। (दुर्रेमुख़्तार व शामी)

मस्अला: अगर नमाज़े ईद के वक़्त जनाज़ा आया है तो पहले ईद की नमाज़ पढ़ें फिर ईद का ख़ुत्बा पढ़ा जाए, उसके बाद जनाज़ा की नमाज़ पढ़ें।

(इमदादुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–505)

मस्अला: अगर मरने वाले ने वसीयत की कि मेरी

नमाज़े जनाज़ा फ़लाँ शख़्स पढ़ाए तो ये वसीअ़त मोतबर नहीं और शरअ़न इस पर अमल करना ज़रूरी नहीं, नमाज़े जनाज़ा पढ़ाने का जिन लोगों को शरीअ़त ने हक़ दिया है, उन्ही को इमाम बनाना चाहिए, अलबत्ता अगर वही किसी और को इमाम बनाना चाहें तो मुज़ाएक़ा नहीं।

(मराक़ियुलफ़लाह सफ़्हा–324)

मस्अला: जिस तरह पंजवक़्ता नमाज़ों के लिए औक़ात मुक़र्रर हैं, नमाज़ जनाज़ा के लिए इस तरह का कोई ख़ास वक़्त ज़रूरी या शर्त नहीं।

मस्अला: नमाज़े फ़ज्र के बाद तुलूए आफ़ताब से पहले और नमाज़े अस्र के बाद आफ़ताब के ज़र्द होने से पहले नफ़्ल और सुन्नतें पढ़ाना तो ममनूअ़ है मगर नमाज़े जनाज़ा उन औक़ात में भी बिला कराहत दुरुस्त है।

मस्अला: आफ़ताब के तुलूअ़, ज़वाल (ठीक दोपहर) और गुरूब के वक़्त दूसरी नमाज़ों की तरह नमाज़े जनाज़ा भी जाइज़ नहीं। तुलूअ़ का वक़्त आफ़ताब के ऊपर का किनारा ज़ाहिर होने से शुरू होकर उस वक़्त तक रहता है जब तक कि आफ़ताब पूरा निकल कर ऊँचा न हो जाए यानी जब तक नज़र उस पर जम सकती हो, और गुरूब का वक़्त आफ़ताब का रंग ज़र्द पड़ जाने से शुरू होता है यानी जब से उस पर नज़र जमने लगे और उस वक़्त तक रहता है जब तक कि आफ़ताब पूरा ग़ाइब न हो जाए।

मस्अला: नमाज़े जनाज़ा मज़कूरा बाला तीन औक़ात में पढ़ना उस सूरत में नाजाइज़ है जबकि जनाज़ा उन औक़ात से पहले आ चुका हो और अगर जनाज़ा ख़ास तुलूअ़, ज़वाल, या गुरूब ही के वक़्त आया हो तो उस

पर नमाज़े जनाज़ा उस वक़्त भी जाइज़ है।

(आलमगीरी, दुर्रेमुख़्तार, शामी)

ख़ुलासा ये कि नमाज़े जनाज़ा उन तीन औक़ात (तुलूअ, ज़वाल, ग़ुरूब) के अलावा हर वक़्त बिला कराहत जाइज़ है और उन तीनों औक़ात में भी उस सूरत में जाइज़ है जबकि जनाज़ा ख़ास उन्हीं औक़ात में आया हो।

मस्अला: अगर किसी को नमाज़े जनाज़ा की दुआ याद न हो तो सिर्फ़ "اَللّٰھُمَّ اغْفِرْ لِلْمُؤْمِنِیْنَ وَالْمُؤْمِنَاتِ" पढ़ ले, और अगर ये भी याद न हो तो सिर्फ़ चार तकबीरें कह देने से भी नमाज़ हो जाएगी, क्योंकि दुआ और दुरूद शरीफ़ फ़र्ज़ नहीं है।

(अहकामे मैयत सफ़्हा–65, बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–344, आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–52)

मुहम्मद रफ़अत क़ासमी मुअर्रख़ा 15–11–1418 हिजरी, मुताबिक़ 13–2–1998 ई०

मुहम्मद रफ़अत क़ासमी
15–11–1418
13–02–1998

---: समाप्त :---

कोशिशें कीं। झूट, दग़ा, फ़रेब, साजिश, धोखा सारे हथियार जमा किए परन्तु जब एक मुसलमान के दिल में जिहाद का जोश पैदा होता है तो ईमान की ताक़त के सामने ये सारे असत्य हथियार नाकाम हो जाते हैं।

फ़तहे मिस्र

हज़रत अम्र बिन अल आस के मुजाहिदाना कारनामों पर आधारित एक ऐसा नाविल जिसमें हक़ व बातिल की कशमकश में मिस्र के बादशाह अरसतलीस की हुकूमत का ख़ात्मा बड़े ही चमत्कारी तौर पर होता है। इस्लामी सरफ़रोशों की बहादुरी की अनोखी दास्तान............।

सुलतान फ़ीरोज़ शाह तुग़लक़

इस्लाम को मिटाने के लिए इस्लाम के दुश्मनों ने नए नए तरीक़े अपनाए। झूठे नबी हुए और झूठे मेहदी होने के दावे किए सुलतान फ़ीरोज़ शाह तुग़लक़ के कार्य काल में ऐसे ही एक इस्लाम दुश्मन ने इमाम मेहदी होने का दावा कर के इस्लाम में फूट डालने का प्रयास किया। सुलतान ने किस प्रकार इस फ़ितने को दबाया......? यह इस नाविल में पढ़िए............।

अरबी दोशीज़ा

इस्लाम से पहले अरब में औरत की कोई हैसियत न थी। इस्लाम ने औरत को न केवल इज़्ज़त दी बल्कि उसने उसे बहादुरी व स्वाभिमान भी दिया। जब समय आया तो अरब महिला ही ने इंस्लाम को बचाने के लिए अपना किरदार निभाया। ऐसी ही एक अरब दोशीज़ा के कमालात व ईमानी भावना की जीती जागती कहानी इस नाविल में है............।

ईरान की हसीना

ईरानी हुकूमत और अरब के शेरों के टकराव की एक लम्बी दास्तान हज़रत उमर रज़ि. के भेजे हुए लश्कर के मुजाहिदों के जंगी कारनामे जिन्होंने न केवल ईरानी हुकूमत को हराया बल्कि ईरानी हसीना के दिल को भी इस्लाम की रोशनी से मुनव्वर कर दिया............।

□□□

इस्लामी तारीख़ की जानकारी व मुजाहिदों के साहसिक कारनामों के लिए इन नाविलों का अध्ययन आपके लिए अत्यन्त ज़रूरी है।

मटिया महल, जामा मस्जिद, दिल्ली - 6

कलीसा और आग

कलीसा जैसे पवित्र नाम की आड़ में ज़ुल्म व अत्याचार का खेल खेलने वाले पादरियों की कहानी जिन्होंने मुसलमानों का नामों निशान मिटा देने का भरसक प्रयास किया...........

काफ़िल-ए-हिजाज़

कफ़िला–ए–हिजाज़ नसीम हिजाज़ी का ऐसा नाविल है जिसमें ईरान की सरकश व ज़ालिम हुकूमत को इस्लाम के जियालों व बे सरो सामान मुजाहिदों द्वारा तबाह व बर्बाद करने की घटना को बड़े ही प्रभावी व अच्छे ढंग से पेश किया गया है।

शाहीन

उस समय की कहानी है जब मुस्लिम हुक्मरां इस्लाम का रास्ता छोड़कर दुनियावी लज़्ज़तों में लगे थे उसी समय एक मुजाहिद उठा जिसने साबित किया कि इस्लामी जज्बा क्या है।

क़ैसर व किसरा

जब क़ैसर व किसरा आपसी जंग और सलतनतों की हवस में मशगूल थे उसी समय इस्लाम का बोल बाला हुआ और उसने इतने बड़े लश्कर को पीछे धकेल दिया आसिम ने भी इस्लाम क़बूल कर लिया और क़ैसर व किसरा को छोड़ कर सही रास्ता अख़्तियार किया।

❑❑❑

इस्लामी तारीख़ की जानकारी व मुजाहिदों के साहसिक कारनामों के लिए इन नाविलों का अधय्यन आपके लिए अत्यन्त ज़रूरी है।